QHD

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सामान्य हिन्दी

QHD

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सामान्य हिन्दी

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय

कोटा (राजस्थान)

संयोजक /समन्वयक एवं सदस्य

संयोजक

प्रो. (डॉ.) कुमार कृष्ण

विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग

हिमाचल विश्वविद्यालय, शिमला

सदस्य

1. **प्रो जबरीबल पारख (.डॉ) .**
   अध्यक्ष, मानविकी विद्यापीठ
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय खुला विवि.., दिल्ली
2. **प्रो सुदेश बत्रा (.डॉ) .**
   पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
   राजस्थान विश्वविद्याल, जयपुर
3. **प्रो नन्दलाल कल्ला (.डॉ) .**
   पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
   जयनारायण व्यास वि.वि जोधपुर .
4. **डॉ नवलकिशोर भाभड़ा .**
   प्राचार्य,
   राजकन्या महाविद्यालय ., अजमेर
5. **डॉ पुरुषोत्तम आसोपा .**
   पूर्व प्राचार्य,
   राज.महा ., वि(चुरू) सरदारशहर .
6. **डॉ(सदस्य सचिव) मीता शर्मा .**
   सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
   वर्धमान महावीर खुला विकोटा .वि.

सम्पादन एवं पाठ्यक्रम लेखन

सम्पादक

डॉ. पुरुषोत्तम आसोपा

पूर्व प्राचार्य,

राजकीय महाविद्यालय, सरदारशहर (चूरू)

पाठ - लेखक	इकाई सं.	पाठ लेखक-	इकाई सं.
डॉ लालचन्द कहर . व्याख्याता राजकीय महाविद्यालय, बून्दी	1	**डॉ परितोष आसोपा .** प्राचार्य, गुरमीत सिंह घनश्यामदास कन्या महाविद्यालय, पदमपुर,(श्रीगंगानगर)	2,3,4,5, 8,910
डॉ नवलकिशोर भाभड़ा . प्राचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर	6,7	**डॉशालिनी मूलच .ंदानी** व्याख्याता, राज स्नातकोत्तर डूंगर . महाविद्यालय, बीकानेर	11,12,13
डॉ सुदेश बत्रा . पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग राजविश्वविद्यालय ., जयपुर	16	**डॉकिरण चन्द नाहटा .** पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग एममहाविद्यालय .स्ना .एस ., बीकानेर	14,15,17, 18,19

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. विनय कुमार पाठक	**प्रो. (डॉ.) बी. के. शर्मा**	**प्रो. पवन कुमार शर्मा**
कुलपति	निदेशक, संकाय विभाग	निदेशक, क्षेत्रीय सेवा विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन : फरवरी 2013 ISBN - 13/978-81-8496-046-4

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.म.खु.वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी द्वारा (चक्रमुद्रण) या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड 1-

हिन्दी भाषा और लिपि का अभिज्ञान

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई -1	हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं विकास	9–34
इकाई -2	हिन्दी भाषा का शब्द भंडार	35–44
इकाई -3	देवनागरी लिपि का मानक स्वरूप	45–57
इकाई -4	हिन्दी भाषा की संवैधानिक स्थिति (राजभाषा)	58–73
इकाई -5	भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी (कम्प्यूटर/ मीडिया की हिन्दी एवं हिन्दी भाषा का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप)	74–87

खण्ड 2-

हिन्दी भाषा का व्यावहारिक व्याकरण

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई - 6	हिन्दी भाषा का व्यावहारिक व्याकरण मुहावरे -लोकोक्तियाँ पर्यायवाची शब्द - वाक्यांश सूचक शब्द उपसर्ग - प्रत्यय शब्द शुद्धि - वाक्य शुद्धि	90–111
इकाई - 7	हिन्दी भाषा : रचना कौशल संक्षेपण - पल्लवन पारिभाषिक शब्दावली	112–129

खण्ड 3-

पत्र लेखन एवं निबन्ध लेखन

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई -8	व्यक्तिगत पत्र एवं सामाजिक पत्र	131–145
इकाई - 9	सरकारी पत्र	146–154
इकाई - 10	निबन्ध लेखन	155–165

खण्ड 4-

पद्य भाग

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई - 11	कबीर	168–186
इकाई -12	तुलसीदास	187–206
इकाई - 13	मीराँबाई	207–220
इकाई -14	जयशंकर प्रसाद	221–231
इकाई -15	ताराप्रकाश जोशी	232–243

खण्ड 5-

गद्य भाग

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई - 16	कहानी : आकाशदीप (जयशंकर प्रसाद)	246–259
इकाई - 17	निबन्ध : सच्ची वीरता (अध्यापक पूर्णसिंह)	260–279
इकाई - 18	आत्मकथा (अंश) : (महात्मा गांधी)	280–292
इकाई -19	संस्मरण : सुभद्रा (महादेवी वर्मा)	293–313

खण्ड-1 का परिचय

अनिवार्य हिन्दी का यह पाठ्यक्रम पाँच खण्डों में विभाजित है। इनके खंड 4 में आपको हिन्दी साहित्य के पद्य अंश का परिचय करवाया गया है तथा खंड-5 में गद्य की विविध विधाओं के साहित्य में आपको रूबरू किया गया है। इस प्रकार पाठ्यक्रम के दो खंड साहित्य का आस्वादन करवाने हेतु रखे गये हैं।

आपके लिये हिन्दी साहित्य की जानकारी के साथ-साथ हिंदी भाषा की जानकारी प्राप्त करना भी आवश्यक है। प्रत्येक विद्यार्थी को अपने विचार प्रभावशाली ढंग से प्रकट करने के लिये भाषा पर अधिकार प्राप्त करना जरूरी है। इसके साथ ही हिन्दी के स्वरूप एवं उसकी वर्तमान स्थिति की जानकारी प्राप्त करना भी जरूरी है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए आपके पाठ्यक्रम के इस पहले खंड में हिन्दी भाषा के व्यावहारिक व्याकरण की जानकारी दी गई। इस खंड में आपके हिन्दी भाषा और लिपि का अभिज्ञान करवाया जा रहा है।

इस खंड की पहली इकाई में हिन्दी भाषा के स्वरूप एवं विकास की जानकारी दी गयी है। हिन्दी भाषा कब से अस्तित्व में आई, व्याकरण के हिसाब से उसकी रूप रचना कैसी है? हिन्दी भाषा का भौगोलिक क्षेत्र कौन -सा है तथा उसका प्रयोग देश- विदेश में कहाँ-कहाँ पर किया जा रहा है इत्यादि बातों को स्पष्ट किया गया है। इस इकाई का वास्तविक प्रयोजन हिन्दी भाषा के विकास के विविध चरणों को स्पष्ट करना है।

इस खंड की दूसरी इकाई हिन्दी भाषा के शब्द भंडार से संबंधित है। किसी भी जीवित भाषा को निरंतर विकास करने के लिये जीवन के विविध क्षेत्रों से संबंधित शब्दावली को अपनाना जरूरी होता है। हिन्दी भाषा ने अपने जन्म के समय से ही अधिकांशत: संस्कृत भाषा के शब्द ग्रहण किए हैं। संस्कृत से आए हुए ऐसे शब्द जो हिन्दी में भी संस्कृत की तरह ही प्रयुक्त किए जा रहे हैं 'तत्सम' शब्द कहलाते हैं। लेकिन संस्कृत के जिन शब्दों का रूप हिन्दी तक आते-आते बदल गया है उन्हें 'तद्भव' शब्द कहा गया है। इसके अलावा भारत की अन्य भाषाओं के शब्दों को ग्रहण करने के साथ-साथ हिन्दी में अनेक देशज भी आए है। मध्ययुग में मुगलशासन के दौरान हिन्दी में सैंकड़ों फारसी, अरबी, तुर्की भाषा के शब्द भी आ गए थे। अंग्रेजों के शासन के दौरान अंग्रेजी में शब्द भी बहुतायत में आयातित किए गए। अन्य विदेशी भाषाओं के भी अनेक शब्द हिन्दी में आए है। इस इकाई में हिन्दी के इसी समृद्ध शब्द भंडार की जानकारी आपको दी गयी है।

इस खंड की तीसरी इकाई हिन्दी भाषा की लिपि से संबंधित है। बहुत प्राचीन काल में मानव ने मुख से बोली जाने वाली भाषा की कमजोरियों को देखते हुए भाषा को लिखने की कला विकसित कर ली थी। लिखने की इसी प्रणाली को लिपि कहा जाता है। लिपि के विकास से भाषा में सुदीर्घता और विस्तार प्राप्त हो गया। लिपि के सहारे किसी एक व्यक्ति के विचारों को सैंकड़ों वर्षों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इसी कारण समस्त जीव जंतुओं में केवल मानव ही इतना विकास कर सका है हिन्दी भाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। आपके लिए इस इकाई में देवनागरी लिपि के गुण- दोषों को बतलाते

हुए उसके मानक रूप को भी स्पष्ट किया गया है। इसका अभ्यास करके आप शुद्ध हिन्दी भाषा का प्रयोग करना सीख सकते हैं।

इस खंड की चौथी इकाई राजभाषा हिन्दी से संबंधित है। अप इसे अच्छी तरह से जानते हैं कि संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में नहीं वरन राजभाषा के रूप में मान्यता दी गई है। प्रत्येक राष्ट्र का जैसे अपना राष्ट्रगीत, अपना झण्डा होता है उसी तरह सरकारी कामकाज के लिए उसकी एक मान्य भाषा भी हुआ करती है। राजकाज हेतु संसदीय कार्यों, न्यायालयों तथा प्रशासनिक कार्यों का संपादन जिस भाषा में किया जाता है उसे राजभाषा कहा जाता है। अत: आपके लिए यह जानना जरूरी है कि राजभाषा किसे कहते है और राजभाषा के रूप में हिन्दी कि क्या स्थिति है। इसी बात को ध्यान में हुए प्रस्तुत इकाई में राजभाषा हिन्दी संबंध संविधान में किए गए प्रावधानों से आपको परिचित करवाया जाएगा। संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा हिन्दी संबंधी प्रावधान किए गए हैं। राजभाषा के विकास के लिए विविध प्रकार के प्रावधान भी संविधान में किए गए है। उन सबकी जानकारी इस इकाई में दी गई है।

इसी खंड कि अंतिम इकाई में जीवन के विविध क्षेत्रों में हिन्दी भाषा कि वर्तमान दशा को स्पष्ट करते हुए भूमंडलीकरण के दौर में हिन्दी की चुनौतियों को प्रकट करती है। विदेशों में हिन्दी की क्या प्रगति है। मीडिया, फिल्म, व्यापार, विज्ञापन, खेलकूद, बैंक, बीमा इत्यादि आज के विविधता भरे कार्य क्षेत्रों के प्रत्येक मनुष्य की आवश्यकताओं को आज हिन्दी पूरा कर रही है। कम्प्यूटर दूरदर्शन, रेडियो ने इसके स्वरूप को बहुत कुछ बदल दिया है। उन सबकी जानकारी इस इकाई में दी गयी है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि पाठ्यक्रम का यह पहला खंड हिन्दी भाषा कि प्रगति और उसके विविध आयामों को स्पष्ट करता है। इनकी जानकारी प्राप्त कर आप हिन्दी भाषा में शुद्ध लेखन के साथ-साथ उसके स्वरूप के सभी पक्षों को आसानी से समझ जायेंगे।

इकाई - 1 हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं विकास

1.2.1 हिन्दी भाषा का आदिकाल

12.2 हिन्दी भाषा का मध्यकाल

1.2.3 हिन्दी भाषा का आधुनिक काल

(क) 19वीं शताब्दी से पूर्व की खड़ी बोली हिन्दी की विकास यात्रा

(ख) 19वीं शताब्दी में खडी बोली हिन्दी का विकास

(ग) 20वीं शताब्दी में खड़ी बोली हिन्दी का विकास

1.3 सारांश

1.4 शब्दावली

1.5 संदर्भ ग्रन्थ

1.6 बोध प्रश्न

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.0 उद्देश्य :

इस इकाई में हिन्दी भाषा के विकास का वर्णन है। इस इकाई को पढ़ कर आप-

- अपभ्रंश के बाद हिन्दी के विकास का वर्णन कर सकेंगे।
- खड़ी बोली हिन्दी के प्रारंभिक रूप का परिचय दे सकेंगे।
- दकनी हिन्दी (या दक्खिनी) के विकास-क्रम का वर्णन कर सकेंगे।
- आधुनिक काल में खड़ी बोली के विकास का वर्णन कर सकेंगे।
- देश की भाषा के रूप में हिन्दी की स्थिति का वर्णन कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना :

इस इकाई में आप पालि, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं के उद्भव एवं विकास को पढ़ चुके हैं। ईसा की दसवीं शताब्दी तक अपभ्रंश के सभी रूपों का अंत हो जाता है। देश के अलग- अलग क्षेत्रों के आधार पर इन अपभ्रंशों को पुकारा जाता था। उत्तर भारत. के शूरसेन प्रांत की अपभ्रंश "शौरसेनी अपभ्रंश" कहलाती थीं। इसी अपभ्रंश से हिन्दी का विकास हुआ है। ईसा की 11 वीं शताब्दी से आज तक का एक हजार सालों का समृद्ध इतिहास इस भाषा के पास है। हिन्दी की इस विकास यात्रा में आए प्रमुख परिवर्तनों को हम इस इकाई में पढ़ेंगे। अपभ्रंश से निकले हिन्दी के प्रारम्भिक रूप में प्राकृत, पालि और अपभ्रंश के शब्दों की भरमार रही है। विकास के आगामी वर्षों में हिन्दी ने इस

शब्दावली से मुक्ति प्राप्त कर ली। अब हिन्दी में अवधी, ब्रज, मैथिली, मगही, राजस्थानी आदि बोलियों के शब्दों का प्रयोग होने लगा। हिन्दी के स्वतंत्र अस्तित्व में आने के दो सौ वर्ष बाद भारत में मुस्लिम शासकों का साम्राज्य प्रारम्भ होता है। सुल्तानों एवं मुगलों का यह काल 650 वर्षों का रहा। इस काल में हिन्दी की शब्दावली में अरबी-फारसी के शब्दों की भरमार रही। इसी काल में अरबी-फारसी के शब्दों से युक्त हिन्दी की एक शैली "उर्दू" अस्तित्व में आई। लिपि का भेद होने के कारण कुछ लोग इसे अलग भाषा मानने लगे। मुगलों ने हिन्दी का व्यवहार अपने राजकाज, सामान्य प्रशासन एवं स्थानीय नागरिकों से संवाद स्थापित करने के लिए किया था। मुगल शासकों ने जब साम्राज्य को दक्षिण भारत तक विस्तारित किया तब दक्षिण भारत के प्रान्तों के संपर्क में आने पर हिन्दी का नवीन रूप सामने आया जो "दक्खिनी हिन्दी" कहलाया। मुगल साम्राज्य के पतन के बाद हिन्दी का एक परिष्कृत रूप सामने आया जिसे "खड़ी बोली" कहा जाता है। इसको "हिन्दुस्तानी", "सर हिन्दी" और "कौरवी" आदि नामों से भी पुकारा जाता है। आज की साहित्यिक हिन्दी "खड़ी बोली" में लिखी जा रही है। शौरसैनी अपभ्रंश से स्वतंत्र भाषा बनने से लेकर साहित्यिक हिन्दी, राष्ट्रभाषा हिन्दी, राजभाषा हिन्दी और अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी बनने तक के सफर का अध्ययन कर इकाई में करेंगे।

1.2 हिन्दी भाषा का स्वरूप एवं विकास

'हिन्दी' हिन्दुस्तान की भाषा का नाम है। प्रारम्भ में 'हिन्दी' शब्द का अर्थ हिन्दुस्तान के निवासियों के लिए प्रयोग होता था। बाद में यह हिन्दुस्तान के निवासियों की भाषा के अर्थ में रुढ़ हो गया। वर्तमान में 'हिन्दी' का अर्थ खड़ी बोली में लिखी जाने वाली भाषा, जो भारत के अधिकांश नागरिकों दारा बोली और समझी जाती है। संविधान में इसे 'राजभाषा' का सम्मान प्राप्त है।

'हिन्दी' शब्द फारसी भाषा का शब्द है। फारस के यात्रियों का सबसे पहला परिचय भारत के सिन्ध प्रान्त से हु आ। 'सिन्ध' शब्द का फारसी उच्चारण 'हिन्द' होता है। फारसी भाषा में 'स' ध्वनि का 'ह' और ' ध' ध्वनि का 'द' बन जाता है। यह परिवर्तन इस भाषा की प्रवृत्ति के अनुसार होता है। इस प्रकार से फारस के यात्रियों द्वारा दिया गया नाम 'हिन्द' चल पड़ा और भारत का एक नाम 'हिन्द' हो गया। 'हिन्द' के निवासी कहलाए 'हिन्द' और आगामी शताब्दियों में 'हिन्द' शब्द यहाँ के निवासियों की भाषा के अर्थ में प्रयोग होने लगा।

'हिन्दी' का अर्थ अलग-अलग कालों में अलग-अलग होता रहा है। छठी शताब्दी में हिन्दी का अर्थ संस्कृत लिया गया। तेरहवीं शताब्दी में इसका अर्थ अपभ्रंश से विकसित भाषाओं के लिए लिया गया। कई शताब्दियों तक ' भाषा' (भाषा) और 'हिन्दी' दोनों शब्द पर्यायवाची के रूप में प्रयोग होते रहे हैं। उत्तर भारत में भाषा का अर्थ 'वर्तमान खड़ी बोली' हिन्दी से ही है।

इस प्रकार 'हिन्दी' शब्द का अर्थ काल क्रमानुसार बदलता रहा है। वर्तमान समय में प्रचलित इसका अर्थ 'खड़ी बोली में लिखित भाषा' इसका नवीनतम अर्थ है। हिन्दी के स्वरूप विश्लेषण के क्रम में इसके लिए प्रयुक्त अन्य नाम भी सामने आए हैं। जैसे : - 'भाखा', 'हिन्दवी', 'दक्खिनी', 'हिन्दुस्तानी', 'देहलवी', 'रेख्ता', 'उर्दू, 'खड़ी बोली' आदि।

भाखा :- भारत के जन साधारण द्वारा प्रयोग की जाने वाली जनभाषा। यह शब्द 'हिन्दी' के लिए रूढ़ हो गया है।

हिन्दवी :- भारत की लोकभाषा में जब अरबी-फारसी-तुर्की के शब्दों का प्रयोग होने लगा, तब उसे 'हिन्दवी' कहा जाने लगा।

दक्खिनी :- दक्षिण भारत की जनभाषा के साथ अरबी-फारसी-तुर्की के संयोग से बनी भाषा दक्खिनी। उत्तर भारत में जिसे 'हिन्दवी' कहा गया दक्षिण भारत में वह 'दक्खिनी' कहलाई।

हिन्दुस्तानी :- भारत की जनभाषा जो सभी क्षेत्रों के निवासियों द्वारा प्रयोग की जाती है। इसमें संस्कृत, अरबी-फारसी-तुर्की, लोक भाषाएँ आदि के शब्दों का मिश्रण होता था।

देहलवी :- दिल्ली प्रदेश की जनभाषा 'देहलवी' कहलाई। दिल्ली 'हिन्दी' का मुख्य केन्द्र रही है।

रेख्ता :- एक मिश्रित भाषा रूप जिसका प्रयोग मुसलमान करते थे। हिन्दी और अरबी-फारसी के मिश्रण से इसका निर्माण हुआ। मुस्लिम महिलाओं द्वारा प्रयुक्त 'रेख्ती' कहताथी थी।

उर्दू :- 'रेख्ता' की तरह एक मिश्रित भाषा-रूप है। हिन्दी के ढाँचे पर अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग किया जाता है। वर्तमान में यह देवनागरी और अरबी दोनों लिपियों में लिखी जाती है।

खड़ी बोली :- दिल्ली और मेरठ के क्षेत्र की बोली जो आगे चलकर साहित्यिक हिन्दी का आधार बनी वह खड़ी बोली कहलाई। हिन्दी के विविध रूपों में खड़ी बोली का विशिष्ट स्थान है।

'हिन्दी' शब्द अब भारत की प्रमुख भाषा के लिए पूर्ण रूप से रुढ़ हो चुका है। यह भाषा भारत के अधिकांश नागरिकों द्वारा बोली, समझी और पढ़ी जाती है। जो भारत की राजभाषा है। अब यह अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकारिक भाषाओं में शामिल होने जा रही है।

हिन्दी भाषा के विकास को तीन कालखण्डों में विभक्त किया जाता है : -

1. हिन्दी भाषा का आदिकाल (1000 ई. से 1500 ई,)
2. हिन्दी भाषा का मध्य काल (1500 ई. से 1800 ई).
3. हिन्दी भाषा का आधुनिक काल (1800 ई. से आज तक)

हिन्दी भाषा के स्वरूप को समझने के लिए हमारे सामने हिन्दी का विपुल साहित्यिक भंडार है। इस साहित्य के आधार पर हिन्दी भाषा के विकास के प्रमुख काल खण्डों का

विवेचन करना होगा। इन काल खंडों के साहित्य के आधार पर ही भाषा-विकास की कहानी लिखी जाएगी।

1.2.1 हिन्दी भाषा का आदिकाल (1000 ई. से 1500 ई. तक)

हिन्दी का आदिकाल मिश्रित के उद्भव का काल है। हिन्दी भाषा का आदिकाल 1000 ई. से 500 ई. तक माना जाता है। इस काल से पूर्व की साहित्यिक कृतियों से इस काल को कुछ पीछे तक मानना होगा। सरहपाद के 'दोहा-कोश' से लेकर गोरखनाथ की 'गोरखबानी' तक की भाषा भी हिन्दी के प्रारम्भिक स्वरूप के निर्माण की सहयोगी है। किसी भी लोक भाषा को साहित्यिक भाषा बनने में कुछ वर्षों का समय लगता है। अत: बोलचाल की हिन्दी और साहित्यिक हिन्दी दोनों का उद्भव एक साथ होना असंभव है। हिन्दी जब अपभ्रंश से अलग होकर स्वतंत्र भाषा बनी तब वह एक लोक भाषा ही थी, उसका साहित्यिक रूप तो कई वर्षों बाद सामने आया। हिन्दी जब तक लोक भाषा रही, उस समय के प्रमाण मिलना असंभव है, अत: हमें हिन्दी के आदिकाल को समझने के लिए प्रारंभिक साहित्यिक प्रमाणों का ही सहारा लेना होगा।

सर्वप्रथम सिद्धों, नाथो और जैन मुनियों द्वारा रचित दोहे एवं चौपाइयाँ प्राप्त होते हैं। इन पदों में धार्मिक, साम्प्रदायिक एवं समाज सुधार के विचार प्रस्तुत किए गए हैं। सिद्धों ने बौद्ध धर्म के वज्रयान तत्व का प्रचार करने के लिये जो साहित्य लोक- भाषा में रचा, वही हिन्दी के आदिकाल के सिद्ध साहित्य के अन्तर्गत आता है। 'सहरपा' से सिद्ध साहित्य आरम्भ होता है। 'शबरपा, लुइपा, डोम्भिया, कण्हपा' आदि प्रमुख सिद्ध कवि हुए हैं। आदिकालीन हिन्दी भाषा के प्रमाण के रूप में सिद्धों की कविता को देखा जा सकता है -

'जिम वाहिर मि अब्भन्तरू।
चउदह भवयो ठिअउ निरन्तरू।' (सरहपा)
"उच्चा उच्चा परबत तहिं बसइ सबरी बाली" - (शबरपा)

सिद्धों की योग साधना के प्रतिक्रिया स्वरूप नाथ सम्प्रदाय अस्तित्व में आया। इसके संस्थापक 'गोरखनाथ' हैं। गोरख की कविता में हठयोग का उपदेश है। इनकी कविता तात्कालीन भाषा का एक पुष्ट प्रमाण है-

"नौ लख पातरी पातरी आगे नाचै, पीछे सहत अखाड़ा।
ऐसे मन लै जोगी खेले, तब अंतरि बसै भंडारा।। "

पूर्वी भारत के सिद्धों की तरह पश्चिमी भारत में जैन मुनियों ने अपने मत के प्रचार के लिए प्रारम्भिक हिन्दी को अपनाया। 'देवसेन, मुनिजिनविजंय, जिनधर्म सूरि, विजय सेन सूरि, सुभति गणि' आदि प्रमुख जैन मुनियों ने अपने मत के प्रचास्प्रसार के लिए हिन्दी भाषा का सहारा लिया। इनमें से प्रमुख आचार्य मुनि ' शालिभद्र सूरि' की कविता उदाहरणार्थ प्रस्तुत है-

"बोलह बाहुबली बलवंत। लोह खडितउ गरवीउ हंत।

चक्र सरीसउ द्‌वउ कीरउँ। सयलहँ गोत्रह कुल संहरउँ।।"

12 वीं शताब्दी में 'पं. दामोदर' के प्रसिद्ध ग्रंथ 'उक्ति व्यक्ति प्रकरणम्' में प्रयुक्त हिन्दी अपने पूर्ववर्ती नाथों और सिद्धों की हिन्दी से परिष्कृत रूप में दिखाई देती है। यह एक व्याकरण ग्रंथ है। इससे अवध, बनारस और आसपास के प्रदेशों की संस्कृति और भाषा के प्रमाण प्राप्त होते हैं। ब्रज क्षेत्र की भाषा को सामान्यत: ‘पिंगल' के नाम से पुकारा जाता था। ' पिंगल' नाम इसकी छंदबद्धता के कारण प्रचलित हु आ। ' प्राकृत पिंगलमू ' में अवधी, बंगला आदि के प्रारंभिक रूप के दर्शन होते हैं। 'संदेशरासक’(अब्दुल रहमान) ग्रंथ में भी ब्रज भाषा, खड़ी बोली, गुजराती, राजस्थानी आदि के पूर्व रूपों के प्रमाण मिलते हैं। 15वीं शताब्दी से 'पिंगल' ब्रजभाषा में समाहित हो गई। पिंगल के समानान्तर पश्चिमी भारत के राजपूताना क्षेत्र में प्रचलित भाषा रूप को 'डिंगल' के नाम से जाना जाता है। इसमें मुख्य रूप से रासो ग्रन्थों की रचनाएँ प्राप्त होती हैं। 'पृथ्वी राज रासो' (चन्दबरदाई) 'बीसलदेव रासो' (नरपति नाल्ह), 'परमाल रासो या आल्हाखंड' (जगनिक),'खुमान रासो' (दलपति विजय) आदि प्रमुख रासो ग्रंथ इस क्षेत्र की भाषा के प्रबल साक्ष्य है। 'जगनिक' के 'आल्हा खंड' का उदाहरण देखा जा सकता है -

“बारह बरस लौं कूकर जीवै, अरू तेरह लौं जियौ सियार।
बरस अठारह क्षत्रिय जीवै, आगे जीवन को धिक्कार।। "

इस काल खण्ड में उत्तर भारत पर मुसलमानों ने अपना शासन स्थापित कर लिया था। उनकी मातृभाषा व राजभाषा फारसी थी, किन्तु उन्होंने भारतीयों के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिए स्थानीय भाषा का सहारा लिया। 13 वीं शताब्दी के आसपास स्थानीय हिन्दी में अरबी-फारसी-तुर्की के शब्दों का मिश्रण होने लगा, इस मिश्रित भाषा का प्रयोग स्थानीय हिन्दुओं के साथ-साथ मुसलमान भी करते थे। आगे इसी भाषा में अमीर खुसरो की रचनाएँ बहु त लोकप्रिय हु ई। इस भाषा को'हिन्दवी' के नाम से पुकारा जाने लगा। डिंगल, पिंगल, अवधी, ब्रज की तरह 'हिन्दवी' भी हिन्दी का एक रूप बन गई। अमीर खुसरो (1255-1324) ने अपनी रचनाओं में जनभाषा का प्रयोग किया। जनता ने इनकी रचनाओं को खूब पसंद किया। खुसरो ने पहेलियाँ, मुकरनियाँ, दो सखुन आदि रूपों में रचनाएँ की हैं। उदाहरण लिए खुसरो की भाषा के कुछ नमूने प्रस्तुत हैं -

दोहा - “गोरी सोवे सेज पर, मुख पर डाले केश।
चल खुसरो घर आपने, रैन भई चहुं देश।।“

पहेली - "अरथ जो इसका बूझेगा।
मुँह देखो तो सूझेगा।। " (दर्पण)

मुस्लिम शासन के दौर में 1 यदी शताब्दी के कवि मुल्ला दाउद ने अपने प्रसिद्ध ग्रथ 'चंदायन' में अवधी, भोजपुरी, ब्रज और खडीबोली युक्त मिश्रित भाषा का प्रयोग किया है। जैसे -

“जेहि हिय चोट लगी सो जानी।

कई लोरिक, कई चंदा रानी।
सुखी न जान, दुख काहू केरा।
जानइ, सोई परई, जेलि बेरा,
प्रेम अचि जेहि हियरे लागइ।
नींद जाइ तपि तपि निसि जागइ
सात सागर जल बरिसहि आई।
प्रेम अगि कैसे हु न बुझाई। "

उत्तर भारत से दूर पूर्व के मिथिलाँचल में स्थानीय लोकभाषाओं और मागधी अपभ्रंश के मिश्रण से उपजी भाषा को, इसी भाषा के महाकवि 'विद्यापति' ने ' अवहट्ट' कहा है। 'विद्यापति' ने 'कीर्तिलता' नामक रचना इसी भाषा रूप में लिखी है। गद्यकार 'ज्योतिरीश्वर' की 'वर्णरत्नाकर' में इस भाषा के प्राचीनतम उदाहरण प्राप्त होते हैं-

“काम देवक नगर अइसन शरीर। निष्कलंक चाँद अइसन मुँह। कदल खंजीरीर अइसन लोचन। यमुना के तरंग अइसन भुजइ।"

'पूरबी' एवं अन्य बोलियों के मिश्रण से उपजे भाषा रूप को 'सधुक्खड़ी' भाषा के नाम से जाना जाता है। इसमें रचना करने वालों में 'कबीर' (1398-1518 ई.), 'नानक, रैदास, धन्ना, पीपा' आदि हैं। इन लोगों ने परिष्कृत भाषा के स्थान पर जन सामान्य की भाषा में अपनी रचनाएं प्रस्तुत कीं। कबीर भाषा का एक नमूना देखिए-

“कबीर कूता राम का, मुतिया मेरा नाउं।
गले राम की जेवरी, जित खैंचे तित जाउं।।"

14वीं शताब्दी में मुस्लिम शासकों के दक्षिण भारत पर आक्रमण के साथ उत्तर भारत की 'हिन्दवी' भाषा का परिचय दक्षिण के निवासियों से हुआ। इसमें दक्षिण भारतीय भाषाओं के शब्दों का प्रयोग बहुलता से होने लगा, तो हिन्दी का एक नया रूप सामने आया। जिसे 'दकिनी' या 'दक्खिनी' हिन्दी नाम दिया गया। हिन्दी के आदिकाल के 500 वर्षों में भाषा-मिश्रण की प्रवृत्ति आदि से अन्त तक बनी रही है। इससे हिन्दी के कई भाषा रूप सामने आये। ये सभी भाषा-रूप आरंभिक हिन्दी के आधार हैं। अत: कहा जा सकता है 'हिन्दी मध्य देश की सारी बोलियों का एक सामूहिक नाम है। '

1.2.2 हिन्दी भाषा का मध्यकाल (1500 ई. से 1800 ई. तक)

हिन्दी का यह काल उसकी सह भाषाओं के विकास का काल रहा है। इस काल में ब्रजभाषा, अवधी, राजस्थानी, खड़ीबोली, दक्खिनी पंजाब और उर्दू का विकास हुआ। मुगलों के शासन काल में ब्रज भाषा और अवधी में पर्याप्त साहित्य रचा गया। ब्रजभाषा में 'सूरदास' (1438-1566) और अवधी के 'जायसी' और राजस्थानी की 'मीरा' (1503-1548) का काव्य भी इस युग का महत्वपूर्ण साहित्य है। इस कालक्रम की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना ' भक्ति आन्दोलन' रहा है। ' भक्ति आन्दोलन' का उद्भव दक्षिणी भारत में हुआ। इसको उत्तर भारत में लाने वाले 'रामानुज' थे, भक्ति आन्दोलन में

संतों, सूफियों और वैष्णव कवियों ने अपनी रचनाओं से इस काल में भरपूर भक्ति काव्य की रचना की। सूरदास, तुलसी, जायसी, मीरा, कबीर, नानक आदि इस काल के प्रमुख कवि हैं। इनकी कविता के उदाहरण देखिए-

“बसहिं पाखि बोलहि बहु भाषा।
करहिं हुलास देखि के साखा।।
भौर होत बोलहि चुहचूही।
बोलहि पॉडुक ' एकै तू ही '।। " - जायसी

“कबीरा खड़ा बाजार में लिये लुकाठी हाथ।
जो घर फूंके आपना सो चले हमारे साथ।।" -कबीर

"थे तो पलक उघाड़ो दीनानाथ
मैं हाजिर-नाजिर कब की खडी।
सजनिया दुसमण होय बैठया
सब ने लगूँ कडी।।" - मीरा

भक्ति काल के अवसान के बाद हिन्दी में रीति साहित्य की रचना होने लगी। ब्रज भाषा इसकी प्रमुख भाषा रही है। इस काल के सभी प्रमुख कवियों की रचनाएँ इसी भाषा में प्राप्त होती हैं। इस काल के प्रमुख रीति कवि 'घनानंद, केशव, देव, बिहारी, मतिराम, भूषण' आदि हैं। यह काल ब्रज भाषा का 'स्वर्णयुग' रहा है। इस काल में ब्रज भाषा और अवधि में संस्कृत के तत्सम् शब्दों का खूब प्रयोग हुआ। शासन की भाषा 'फारसी' होने के कारण आम बोलचाल की भाषा में अरबी-फारसी-तुर्की भाषाओं के शब्द भी हिन्दी की सहभाषाओं में आ मिले। इसी दौर में हमें फारसी की क, ख, ग ज और फ ध्वनियों प्राप्त हुई। इसी काल में भारत का सम्पर्क यूरोप के देशों के साथ हुआ। यूरोपियों के साथ-साथ उनकी भाषाएँ पुर्तगाली, फ्रांसिसी, अंग्रेजी आदि से हमारा परिचय हुआ। इसी के परिणाम स्वरूप इन भाषाओं के शब्द हिन्दी में रच-बस गए।

हिन्दी भाषा के मध्यकाल पर गंभीरता पूर्वक चिन्तन करने पर यह स्पष्ट होता है कि इस काल में कई महान् ग्रंथों की रचना होने के बावजूद भी हिन्दी की घोर अपेक्षा हुई है। भारत के मुस्लिम शासकों ने भारतीयों से सम्पर्क स्थापित करने के लिये 'हिन्दवी' को अपनाया लेकिन राजभाषा 'फारसी' को ही बनाया। मुसलमानों के बाद में आये 'अंग्रेजों' ने भी हिन्दी की उपेक्षा करते हुए राजभाषा ' अंग्रेजी' को ही बनाया। फिर भी हिन्दी आम जन की भाषा के रूप में और साहित्यिक भाषा के रूप में निरंतर विकसित होती रही।

1.2.3 हिन्दी भाषा का आधुनिक काल (1800 ई. से आज तक)

हिन्दी भाषा का आधुनिक काल सर्वाधिक विविधताओं का काल है। इसके प्रारम्भ में कविता की भाषा तो ब्रज भाषा रही किन्तु नव विकसित गद्य की भाषा खड़ी बोली हो गई। 19वीं शताब्दी में गद्य-भाषा, खड़ी बोली का प्रारंभिक रूप हमारे सामने आता है। आगे चलकर यही खड़ी बोली हिन्दी का मुख्य शैली बन गई। बीसवीं शताब्दी के दूसरे

दशक तक कविता की भाषा भी खड़ी बोली बन गई। खड़ी बोली के क्रमिक विकास को हम निम्न उप शीर्षकों से समझेंगे : -

(क) 19वी शताब्दी से पूर्व की खड़ी बोली हिन्दी की विकास यात्रा

खड़ी बोली दिल्ली-मेरठ के आसपास बोली जाने वाली भाषा है। इसका प्राचीनतम प्रयोग कब और किरन रचना से प्रारम्भ होता है, यह निर्विवाद रूप से कहना असम्भव है। फिर भी खड़ी बोली का आरंभिक प्रमाण 'हिन्दवी' के रूप में 14वीं शताब्दी के अमीर खुसरों की रचनाओं में देखने को मिलता है। अमीर खुसरो की भाषा का एक उदाहरण देखिए-

"वन में पंछी भये बावरे
ऐसी बीन बजाई सांवरे
ताक ताक की तान निराली
झूम रही सब ब्रज की डाली।"

सन्त कवि 'कबीर' एवं इनकी मण्डली के सन्तों ने एक विशेष रूप वाली खड़ी बोली को अपनाया। भाषा समीक्षकों ने इनकी भाषा को 'साधुक्खडी' नाम दिया। कबीर की भाषा का एक नमूना प्रस्तुत है-

"कबीर कहता जात हूँ सुणता है सब कोई।
राम कहे भला होइगा, नहि तर भला न होई।।"

'कबीर' का यह दोहा पहली दृष्टि में आधुनिक खड़ी बोली का लगता है। मध्यकालीन महाराष्ट्रीय संतों 'नामदेव, ज्ञानेश्वर, एकनाथ, तुकाराम' आदि ने भी अपनी रचनाओं में खड़ी बोली के प्रयोग किये हैं। सन्त एकनाथ की कविता की पंक्तियाँ देखिये-

"मस्जिद ही में जो अल्ला खुदा।
तो और स्थान क्या खाली पड़ा।।"

अकबर के समकालीन कवि रहीम ने अपनी कविता में संस्कृत और खड़ी बोली के मिश्रण का प्रयोग किया है -

"इष्टा तत्र विचित्रतां तरुलतां मैं था गया बाग में।। "

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'मध्यकाल' में कविता की भाषा ब्रज भाषा और अवधि होने पर भी खड़ी- बोली बीज रूप में कविता का माध्यम बन रही थी। रीतिकालीन कविता दरबारी कविता रही है। रीतिकालीन कविता की ब्रज भाषा, सूरदास आदि की ब्रजभाषा से अलग प्रकार की ब्रज भाषा है। रीतिकाल की ब्रजभाषा में दरबारी आग्रह के कारण खड़ी बोली के तत्वों की झलक दिखाई देती है। इस दौर के 'घनानंद' की विरह लीला और 'कवि रघुनाथ' की 'इश्क महोत्सव' में खड़ी वाली के दर्शन होते हैं।

खड़ी बोली में गद्य का प्रारम्भिक रूप 'दक्खिनी' के गद्य के रूप में मिलता है। दक्षिणी भारत के गद्य लेखकों में 'ख्याजा बंदे नवाज गेसूदराज',' शाह मीराँजी, शम्मुल उश्शाक, शाह बुरहानुद्दीन जानम, मुल्ला वजही' आदि प्रमुख हैं। इनमें से 'ख्वाजा बंदे नवाज गेसूदराज' (1346-1423) ने 'दक्खिनी' में तीन ग्रंथ लिखे - 'मीराजुल आशकनि',

'हिदायतनामा' और 'रिसाला सेहराबा या बारहमासा'। 'मिराजुल आशकनि' की भाषा का एक उदाहरण देखिए-

"कौल नवी अले उल सलाम, कहे इन्सान के बुझने को पाँच तन, हर एक तन को पाँच दरवाजे हैं और पाँच दरबान है।"

इस भाषा पर फारसी का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है फिर भी दक्खिनी खड़ी बोली के इस प्राचीनतम रूप का विशेष महत्व है। दक्खिनी गद्य में 14वीं शताब्दी से लेकर 17वीं शताब्दी तक खड़ी बोली के विकास को स्पष्ट करने वाली अनेक रचनाएं गद्य में लिखी गई। जैसे- 'इरशाद नामा' (शाहजानम 1454-1583 ई.) 'सरबस' (मुल्ला वजही :1805-1660 ई.) रिसाला गफ्तार शाह अमीन (अमीनुद्दीन आला : मृत्यु 1675 ई.) आदि। इन सभी गद्यकारों का खड़ी बोली गद्य के विकास में बहुत महत्व है।

उत्तर भारत में खड़ी बोली गद्य की प्रथम रचना अकबर के दरबारी कवि 'गंग' दारा रचित 'चंद छंद बरनन की महिमा' मानी जाती है। इसका रचना काल 1570 ई. है। इसकी भाषा में संस्कृत के -तत्सम शब्दों और ब्रजभाषा के शब्दों का प्रयोग होते हुए भी यह खड़ी बोली के अधिक निकट है। इसकी भाषा का एक नमूना देखिए -

"इतना सुन के पात साहि जी भी अकबर साहिजी आद सेर सोना नरहर दास चारण को दिया इनके डेढ़ सेर सोना हो गया। "

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस ग्रंथ की भाषा को शिष्ट समाज में प्रयुक्त होने वाली भाषा कहा है। 18 वी शताब्दी में 'महामहोपपाध्याय वररुचि' ने 'पत्र-कौमुदी' नामक पुस्तक की रचना की थी। इसमें पत्र ले खन के पाँच प्रारूप दिये गये हैं। इन पत्रों की भाषा के सम्बन्ध डॉ. हजारी प्रसाद ने लिखा है कि 'इनकी भाषा हिन्दुस्तानी है।' 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ में खड़ी बोली को हिन्दुस्तानी के नाम से पुकारा जाने लगा था। 1 प्तवीं शताब्दी के खड़ी बोली गद्य का निखरा हुआ रूप हमें पटियाला निवासी रामप्रसाद निरंजनी के ग्रन्थ' भाषा योगवासिष्ठ' में प्राप्त होता है। इस ग्रन्थ का रचना काल 1741 ई. है। इसकी भाषा में संस्कृत की तत्सम, शब्दावली की बहुलता है। इसकी भाषा का उदाहरण देखिए-

"वशिष्ठ जी बोले, हे रामजी! यह जो वासना रूपी संसार है, उससे तुम मंकी ऋषि के सदृश्य तर जाओ। रामजी ने पूछा, हे भगवान! पंकी ऋषि का वृतांत सुनाओ, उसने महातीक्ष्ण तप किये थे। एक समय में आकाश में अपने गृह में था और तुम्हारे पितामह अज ने मेरा आह्वान किया।"

'निरंजनी' की भाषा आज के हिन्दी गद्य के समान प्रतीत होती है।

पंडित दौलतराम के 'पदम्-पुरांण' ग्रंथ में भी खड़ी बोली गद्य के नमूने प्राप्त होते हैं। 'पदम्-पुराण ' की भाषा का एक उदाहरण प्रस्तुत है -

'जम्बू द्वीप के भारत क्षेत्र विषै मगध नामा देश अति सुन्दर है जहाँ पुण्याधिकारी बसे हैं, इन्द्रलोक समान सदा भोगोपभोग करैं है और भूमि विषै सांठेन के बाड़े शोभायमान है।'

'पद्म-पुराण' के इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि इसका गद्य प्रारंभिक स्तर का ही था। 'रामप्रसाद निरंजनी' के गद्य के सामने इसकी भाषा कमजोर है।

इस प्रकार हमने देखा कि 19वीं शताब्दी से पूर्व भी दिल्ली-मेरठ के क्षेत्र में बोली जाने वाली खड़ी बोली पद्य और गद्य में छिट पुट रूप से प्रयोग होती रही है। डॉ. कापिल देव ने खड़ी बोली की प्राचीनता सिद्ध करते हुए लिखा है- ' खड़ी बोली उतनी ही प्राचीन. है जितनी अपभ्रंश से निकली हुई ब्रजभाषा आदि अन्य भाषाएं। अपभ्रंश काल (10वीं से 14वीं शती) के जैन आचार्यो बौद्ध सिद्धों, नाथपंयिं, चारण कवियों आदि की रचनाओं को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि उनमें खड़ी बोली का अस्तित्व बीज रूप मैं उसी प्रकार पाया जाता है जिस प्रकार ब्रज, अवधी, पंजाबी आदि अन्य भाषाओं का। '

(ख) उन्नीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली हिन्दी का विकास

19वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक भारत पर अंग्रेजों का शासन स्थापित हो गया था। अंग्रेजों को अपना शासन सुधारा रूप से चलाने के लिए हिन्दुस्तान की भाषा सीखने की आवश्यकता महसूस हुई। अंग्रेजों के सामने हिन्दुस्तानी की अरबी-फारसी मिश्रित उर्दू शैली के साथ-साथ आम जन में प्रयोग होने वाली भाषा भी मौजूद थी। अंग्रेजों ने अपने प्रशासन के लिए जन सामान्य की बोलचाल की खड़ी बोली को अपनाया। इस प्रकार खड़ी बोली हिन्दी को अंग्रेजों का समर्थन मिला और धीरे- धीरे खड़ी बोली हिन्दी विकास के पथ पर अग्रसर हुई। हिन्दी के लिए 'खड़ी बोली' शब्द का प्रयोग करने का श्रेय 1800 ई. में स्थापित 'फोर्ट विलियम कॉलेज', कलकत्ता के संस्थापक जॉर्ज गिलक्राइस्ट को जाता है। अंग्रेजों ने इस कॉलेज की स्थापना अपने अधिकारियों को भाषा-शिक्षा देने के लिए की थी। खड़ी बोली गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज के दो अध्यापकों 'लल्लूलाल और सदल मिश्र' का विशेष योगदान है। इन्हीं के समकालीन 'मुंशी सदासुखलाल नियाज और ईशा अल्ला खाँ' भी खड़ी बोली हिन्दी के गद्य विकास में याद किये जाते हैं।

लल्लू लाल ने फोर्ट विलियम कॉलेज के लिए चौदह रचनाएँ लिखी। लल्लूलाल की सबसे प्रमुख रचना 'प्रेमसागर' है। इराकी भूमिका में 'खड़ी बोली' संज्ञा का प्रयोग किया गया है। यह 'श्रीमद् भागवत' के दशम-स्कंद का खड़ी बोली हिन्दी में अनुवाद है। 'प्रेमसागर' की भाषा का एक नमूना प्रस्तुत है-

'हमसे अब तो इस अंध धृतराष्ट्र का दुःख सहा नहीं जाता क्योंकि वह दुर्योधन की पति से चलता है- इन पाँचों के मारने के उपाय में दिन-रात है कई देर तो विष घोल दिया सो मेरे भीमसेन ने पी लिया।'

लल्लू लाल की अन्य प्रमुख रचनाएँ - 'सिंहासन बत्तीसी', 'बैताल पच्चीसी', ' शकुन्तला नाटक', लतायफे हिन्दी है। लल्लूलाल की भाषा में अरबी-फारसी तथा ब्रज भाषा के शब्दों और रूपों का प्रयोग हुआ है।

फोर्ट विलियम कॉलेज के दूसरे अध्यापक 'सदल मिश्र' ने अपने प्रमुख ग्रंथ 'नासिकेतोपाख्यान' की रचना 1803 ई. में की। इसकी कथा का आधार 'कठोपनिषद् ' है। इनके दूसरे ग्रंथ 'रामचरित्र' (1805) का आधार ' अध्यात्म रामायण' है। 'नासिकेतोपाख्यान' की भाषा का नमूना देखिये -

'रानी बोली महाराज ! बड़ा अद्भुत वृत्तांत है। आपकी कन्या की बिना पुराष संसर्ग के गर्भ भया है। सो यह कुल को दूषन देने हारा और कीर्ति को नाश करनि हारा है। यह सुनि राजा क्षण भर तो चुप रहे। पीछे क्रोधित हो बोले, अरे पापिनी! तूने यह क्या किया? ऐसा कह वन में छोड़ आने की आज्ञा दी।'

सदल मिश्र की खड़ी बोली में भी ब्रज, अवधी, भोजपुरी का मिश्रण दिखाई देता है। उनकी भाषा सहज है। इससे कृत्रिमता का अभाव है।

फोर्ट विलियम कॉलेज के बाहर मुंशी सदासुख लाल ने खड़ी बोली हिन्दी गद्य के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इनकी रचनाओं में आम जनता की बोलचाल की भाषा का प्रयोग हुआ है। इनका सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'सुखसागर' है. जो 'विष्णु पुराण ' को आधार बना कर लिखा गया है। इनकी भाषा का एक उदाहरण देखिए-

"इससे जाना गया कि संस्कार का भी प्रमाण नहीं, आरोपित उपाधि है। जो क्रिया उत्तम हुई तो सौ वर्ष 'के चांडाल से ब्राहमण हुए और जो क्रिया भ्रष्ट हुई तो वह तुरंत ही ब्राहमण से चांडाल होता है। यद्यपि ऐसे विचार से हमें लोग नास्तिक कहेंगे, हमें इस बात का डर नहीं। जो बात सत्य होय उसे कहना चाहिये, कोई बुरा माने कि भला माने।"

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनकी भाषा शैली के विषय में लिखा है- 'उन्होंने हिन्दुओं की बोलचाल की जो शिष्ट भाषा चारों ओर-पूरबी प्रांत में भी प्रचलित पाई, उसी में रचना की। स्थान-स्थान पर शुद् तत्सम संस्कृत शब्दों का प्रयोग करके उन्होंने उसके भावी साहित्यिक रूप का पूर्ण आभास दिया। यद्यपि वे खास दिल्ली के रहने वाले जवान थे, पर उन्होंने अपने हिन्दी गद्य में कथा वाचकों, पंडितों और साधु-सन्तों के बीच दूर-दूर तक प्रचलित खड़ी बोली का रूप रखा, जिसमें संस्कृत शब्दों का पुट भी बराबर रहता था।'

उर्दू के शायर इंशा अल्ला खाँ खड़ी बोली की साहित्यिक प्रतिष्ठा में योगदान देने वाले एक प्रमुख लेखक है। इन्होंने शुद्ध 'हिन्दवी' में 'उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' (1803) की रचना की है। इनकी इस रचना को समीक्षकों ने हिन्दी की प्रथम कहानी घोषित किया है। इनकी भाषा में फारसी का प्रभार दिखाई देता है। भाषा को आकर्षक बनाने के लिए मुहावरों का खूब प्रयोग मिलता है। इनकी यह रचना विशुद्ध कलात्मक रचना है। इसकी भाषा का एक् उदाहरण देखिए-

'तुम्हारी जो कुछ अच्छी बात होती तो मेरे मुँह से जीते जी न निकलती, पर यह बात मेरे पेट में नहीं पच सकती। अभी तुम अल्हड हो, तुमने अभि कुछ देखा नहीं। जो ऐसी बात पर सचमुच ढुलाव देखूँगी तो तुम्हारे बाप से कहकर वह भभूत, जो वह मुआ निगोड़ा भूत, मुछंदर का पूत अवधूत दे गया है, हाथ मुरकवा कर छिनवा लूंगी। '

इस प्रकार 19वीं शताब्दी में इन चारों लेखकों ने खड़ी बोली गद्य को विकसित किया।

खड़ी बोली हिन्दी गद्य के विकास में ईसाई पादरियों का योगदान

खड़ी बोली गद्य के विकास में ईसाई पादरियों ने जाने-अनजाने में बहुत योगदान दिया। इन्होंने बारतीयों में धर्म प्रचार करने के लिए 'बाइबल' का हिन्दी अनुवाद करवा कर वितरित किया। 1801 ईस्वी में 'विलियम केरे' ने सबसे पहले 'न्यू टेस्टामेंट' का अनुवाद प्रकाशित करवाया। 1854 में 'हिस्ट्री ऑफ बाइबल' का अनुवाद खड़ी बोली में किया गया। इनके अलावा कई छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ समय-समय पर अनुवाद करके भारतीयों को ईसाई धर्म का पाठ पढ़ाया। ईसाई पादरियों ने 'प्रेस' स्थापित किया, जिसमें धार्मिक ग्रन्थों के अनुवाद, व्याख्यान, लेख तथा पाद्य पुस्तकें खड़ी बोली हिन्दी में प्रकाशित की गई, जिससे अप्रत्यक्ष रूप से खड़ी बोली गद्य का विकास हुआ। ईसाई मिशनरियों ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा देने के लिए स्कूल भी खोले। इन विद्यालयों में पढ़ाने के लिए विविध विषयों की पाद्य-पुस्तकों का प्रकाशन किया। इन पुस्तकों को लिखने के लिए कलकत्ता एवं आगरा के 'स्कूल-बुक-सोसायटी' की स्थापना की गई। जिसके द्वारा विभिन्न विषयों की पाद्य-पुस्तकें तैयार की गई। ईसाई पादरियों ने पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने में भारतीय लेखकों का सहयोग लिया तथा उन्हें गद्य लेखन के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार से जो कार्य ईसाइयों ने अपने हित के लिए किया उससे खड़ी बोली गद्य का बहुत हित हुआ। साहित्य की दृष्टि से इनका गद्य भले ही उत्कृष्ट न हो पर भाषा विकास और प्रचार की दृष्टि से इसका बहुत महत्व है। इनके द्वारा अनुदित 'न्यू टेस्टामेंट' के गद्य का एक् उदाहरण देखिए-

'हे तुम सब जो परिश्रम करते हो और बोझ वाले होते हो, मेरे पास आओ और मैं तुम्हें सुस्ता लूँगा। अपने यो पर मेरा जुआ लेवो और मुझसे सिखो जिसमें मैं नरम और मन में लघु हूँ और अपने जीवों से विश्रम्म पाओगे। क्योंकि मेरा जुवा सहज और मेरा भार हलका है। '

ईसाई मिशनरियों द्वारा 'प्रेस' (छापाखाना) का आविष्कार तो खड़ी बोली हिन्दी गद्य के लिए वरदान साबित हुआ। 'प्रेस' की सुविधा प्राप्त होने से अनेक भारतीय गद्य लेखकों ने अपनी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरम्भ कर खड़ी बोली हिन्दी गद्य के विकास में योगदान दिया।

19वीं शताब्दी में खड़ी बोली हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएँ

पंडित युगल किशोर शुक्ल ने हिन्दी की प्रथम पत्रिका 'उदन्त मार्तण्ड' का प्रकाशन कानपुर से सन् 1826 ई. में प्रारम्भ किया। खड़ी बोली हिन्दी के क्षेत्र में यह एक नए

युग का शुभारम्भ था। यह पत्रिका साप्ताहिक के रूप में प्रकाशित होती थी। इसमें विभिन्न विषयों-सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक आदि से संबंधित आलेख प्रकाशित होते थे। दुर्भाग्य से यह पत्रिका एक वर्ष बाद ही बन्द हो गई। इसके बाद अनेक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई। इनमें 'बंगदूत' (राजाराम मोहनराय; 9 मई 1829), 'प्रजामित्र' (1864) - 'बनारस अखबार' (राजा शिवप्रसाद; 1845 ई.) 'सुधाकर' (तारामोहनमित्र; 1850 ई.), 'बुद्धि प्रकाश' (मुंशी सदासुखलाल; 1852 ई.) इनके अलावा भी खड़ी बोली हिन्दी में प्रकाशित होने वाले पत्रों में-विद्यादर्शन, धर्मप्रकाश, 'ज्ञानदीपिका', वृतान्त. दर्पण, भारत खण्ड अमृत, ज्ञानप्रदायिनी पत्रिका आदि। 1884 में प्रकाशित 'समाचार सुधवर्षण' पत्र की कुछ पंक्तियाँ देखिए-

'यदि सत्य हम लोग अपनी आँखों से प्रत्यक्ष महाजनों की कोठियों में देखते हैं कि एक की लिखी हुई चिट्ठी दूसरा जल्दी बाँच सकता नहीं। '

इन सभी पत्र-पत्रिकाओं में खड़ी बोली हिन्दी गद्य का प्रयोग होता था। इन्होंने हिन्दी लेखकों को विविध विषयों पर गद्य लेखन के लिए प्रोत्साहित कर हिन्दी भाषा को विकसित किया।

हिन्दी-उर्दू संघर्ष : राजाशिवप्रसाद सितारेहिन्द और राजा लक्ष्मण सिंह

19वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक सम्पूर्ण भारत पर अंग्रेजों का राज्य स्थापित हो गया। अपना शासन चलाने के लिए कर्मचारियों की जरूरत महसूस हुई, तब उन्होंने भारतीयों को अंग्रेजी पद्धति से शिक्षित करना शुरू किया। 'लार्ड मैकाले' (1935) के नेतृत्व में सारे भारत में अंग्रेजी शिक्षा के स्कूल-कॉलेज खोले गए। 'लार्ड मैकाले' के इस कदम से अंग्रेजों को दोहरा फायदा हुआ। एक तो उन्हें कम्पनी के शासन संचालन के लिए कार्मिक प्राप्त हुए, दूसरा वे अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतीयों को नौकरियों का लालच देकर ईसाई धर्म की ओर आकर्षित करने लगे। भारत जैसे विशाल देश का शासन केवल अंग्रेजी की शिक्षा से नहीं चलाया जा सकता था, क्योंकि यहाँ की बहुसंख्यक जनता तो स्थानीय भाषा ही समझती थी। अत: अंग्रेजों ने हिन्दी (खड़ी बोली) को स्कूलों में अनिवार्य भाषा के रूप में पढ़ाना चाहा। उनके इस कदम का 'सर सैयद अहमद खाँ' द्वारा विरोध करने पर, अंग्रेजों को अपना विचार स्थगित करना पड़ा। मुसलमानों के प्रतिनिधि द्वारा खड़ी बोली हिन्दी का विरोध करने से, अंग्रेजों को एक कूटनीतिक सूत्र मिल गया। इस सूत्र से वे हिन्दू और मुसलमानों को आपस में उलझा कर अपना स्वार्थ सिद्ध करने लगे। अंग्रेजों ने अपनी इसी चाल के तहत 'उर्दू को अदालतों की भाषा घोषित कर दिया। अब नौकरियाँ प्राप्त करने के लिए 'उर्दू और 'फारसी' का शिक्षण अनिवार्य हो गया। 'उर्दू के मुकाबले हिन्दी केवल बोलचाल की भाषा मात्र रह गई। अंग्रेज 'उर्दू को विशेष प्रोत्साहन देते रहे। हिन्दी-उर्दू का यह संघर्ष चलता रहा। इस संघर्ष को समाप्त करने का प्रयास राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द ने किया।

1700 ई. में वली दकनी जब दक्षिण भारत से दिल्ली आए, तो उन्होंने यहाँ आकर एक भाषा का प्रचलन किया, जिसका नाम उन्होंने 'रेख्ता' दिया। इसका अर्थ होता है

'छितराया हुआ' यानि कि जिस भाषा में अरबी-फारसी के शब्द छितराए हुए मिलते हैं, वही भाषा 'रेख्ता' कहलाई। वली दकनी की यह भाषा काफी लोकप्रिय साबित हुई, क्योंकि इसे शासन तंत्र से जुड़े फारसी बोलने वाले मुसलमान भी समझते थे और जन सामान्य भी इसका देशी ढाँचा होने के कारण समझता था, धीरे-धीरे इस 'रेख्ता' में अरबी-फारसी के शब्दों की संख्या बढ़ती चली गई और यह उस समय प्रचलित देशी भाषा रूप से अलग हटकर एक नई भाषा के रूप में प्रसिद्ध हो गई। भाषा के इसी रूप को उर्दू कहा गया। हिन्दी-उर्दू संघर्ष को सूक्ष्मता से देखने पर हमें लगता है कि यह संघर्ष भाषाई न होकर साम्प्रदायिक अधिक था। दोनों भाषाओं की प्रकृति का परीक्षण करने पर पाते हैं कि 'हिन्दी' और 'उर्दू एक ही भाषा की दो शैलियाँ मात्र हैं। एक में संस्कृत के तत्सम शब्दों की बहुलता है, तो दूसरी में अरबी-फारसी के शब्दों की। एक समुदाय के लोग एक शैली से अपनी सामाजिक पहचान को निर्धारित करते हैं तो दूसरा समुदाय दूसरी शैली का पक्षधर है। लेखन के स्तर पर अवश्य दोनों शैलियों में अंतर है। हिन्दी, नागरी लिपि में लिखी जाती है, तो उर्दू की लिपि फारसी है। संरचना के स्तर पर दोनों भाषाएँ समान हैं।

'राजाशिवप्रसाद सितारेहिन्द' इस समय हिन्दी-उर्दू के समन्वयकारी लेखक के रूप में सामने आए।1856 ईस्वी में आप 'इंस्पैक्टर ऑफ स्कूल्स' के पद पर नियुक्त हुए। हिन्दी के समर्थन में अपने विचारों को प्रसारित करने के लिए आपन 'बनारस अखबार' नामक हिन्दी पत्र भी निकाला। 'शिवप्रसाद सितारेहिन्द' ने तथा इनकी मित्र मण्डली ने लोगों को बोलचाल की हिन्दी में लिखने के लिए प्रेरित किया। इसमें अरबी-फारसी शब्दों की अधिकता भी, जिसे देवनागरी लिपि में लिखा जाता था। लोगों ने इनको अंग्रेजों का पिट्ठू मानकर इनका विरोध किया गया। इनके विरोध में इनके विभागीय साथी 'वीरेश्वर चक्रवर्ती' ने भी इनकी अरबी-फारसी मिश्रित हिन्दी का विरोध किया। 'शिवप्रसाद सितारेहिन्द' द्वारा लिखित हिन्दी का एक नमूना देखिए-

'यहाँ जो नया पाठशाला कई साल से जनाब कप्तान किट साहब बहादुर के इहतिमाम और धर्मात्माओं की मदद से बनता हैं। इसका हल कई दफा जाहिर हो चुका है।'

शिवप्रसदि सितारेहिन्द की इस शैली का विरोध करने के लिए 'बाबू तारामोहन मिश्र' ने अपने साथियों के साथ काशी से 'सुधाकर' नामक शुद्ध हिन्दी का पत्र निकाला। 'मुंशी सदा सुखलाल' ने 1852 में आगरा से 'बुद्धि प्रकाश' नामक पत्र निकाल कर खड़ी बोली हिन्दी का प्रचार-प्रसार किया, इसी समय 'शिवप्रसाद सितारेहिन्द' की अरबी-फारसी मिश्रित शैली के विरोध में 'राजा लक्ष्मणसिंह' ने अरबी- फारसी के शब्दों से मुक्त हिन्दी भाषा का समर्थन किया। 'राजा लक्ष्मण सिंह' की मान्यता थी कि ' अरबी-फारसी शब्दों के बिना भी हिन्दी गद्य लिखा जा सकता है। ' इन्होंने अरबी-फारसी के शब्दों के स्थान पर संस्कृत के तत्सम शब्दों के व्यवहार पर जोर दिया। अपनी गद्य रचनाओं में इन्होंने संस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग किया। अपने पत्र ' प्रजाहितैषी' के माध्यम से

लोगों को शुद्ध भाषा (संस्कृत शब्दावली युक्त) लिखने के लिए प्रेरित किया। राजा लक्ष्मण सिंह की भाषा का एक नमूना प्रस्तुत है-

'महात्मा ! तुम्हारे मधुर वचनों के विश्वास में आकर मेरा जी यह पूछना चाहता है कि तुम किस राजवंश के भूषण हो। '

इनकी यह भाषा जनभाषा से अलग एक कठिन भाषा थी, जो लेखन तक ही सीमित रही बोलचाल में प्रयोग नहीं हो सकी। 'राजा लक्ष्मण सिंह' ने कालिदास के ' अभिज्ञानशाकुन्तल', 'मेघदूत' और 'रघुवंश' का हिन्दी अनुवाद भी किया है। रघुवंश के हिन्दी अनुवाद की भूमिका में हिन्दी-उर्दू के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए वे लिखते हैं-

"हिन्दी और उर्दू दो बोली न्यारी-न्यारी है। कुछ आवश्यक नहीं है कि अरबी-फारसी के शब्दों के बहाने हिन्दी न बोली जाये और न हम उस भाषा को हिन्दी कहते हैं जिसमें अरबी-फारसी के शब्द भरे हों।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'हिन्दी-उर्दू संघर्ष में खड़ी बोली ने हिन्दी गद्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। ' हिन्दी की दोनों शैलियों के पक्षधर राजा द्वय की शैलियाँ आगे चलकर 20वीं शताब्दी में समानान्तर रूप से हिन्दी में विकसित हुई। द्विवेदी युग में राजा 'शिवप्रसाद सितारेहिन्द' की शैली का प्रतिनिधित्व 'मुंशी प्रेमचन्द' ने किया। 'राजा लक्ष्मण सिंह' की शैली को 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, महावीर प्रसाद द्विवेदी' और इनके परवर्ती गद्य लेखकों ने अपनाया।

भारतेन्दु युग में खड़ी बोली हिन्दी गद्य का आरम्भ

'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' (1850-1885 ई.) ने हिन्दी गद्य के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया है। भारतेन्दु की गद्य- शैली हिन्दी की मूल प्रकृति के अनुकूल है। उन्होंने न तो संस्कृत के तत्सम शब्दों का अनावश्यक रूप से प्रयोग किया और न ही उनका बहिष्कार किया। इन्होंने अरबी-फारसी के शब्दों का संतुलित रूप में प्रयोग किया, वहीं इनकी भाषा में ब्रजभाषा का, देशज शब्दों का बड़ा स्वाभाविक ढंग से प्रयोग हुआ है। भारतेन्दु की हिन्दी का एक उदाहरण देखिए-

"प्यारे रात छोटी है और स्वांग बहुत है। जीना थोड़ा और उत्साह बड़। हाय मुझसी मोह में डूबी को कहीं ठिकाना नहीं। रात दिन रोते रोते ही बीतते हैं। कोई बात पूछने वाला नहीं, क्योंकि संसार में जी कोई नहीं देखता, सब ऊपर ही की बात देखते हैं। हाय मैं तो अपने पराये सबसे बुरी बनकर बेकाम गई।"

भारतेन्दु से पूर्व खड़ी बोली हिन्दी में कहीं ब्रज भाषा का प्रभाव दिखाई देता था तो कहीं पूर्वी हिन्दी की छाप, कहीं अरबी-फारसी के शब्द अधिक थे तो कहीं इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की भरमार थी। भारतेन्दु ने एक सर्वमान्य, सर्वस्वीकृत और सर्वग्राह्य रूप की खड़ी बोली का लेखन किया। इनके इसी रूप को आगे बीसवीं शताब्दी में भी अपनाया गया। भारतेन्दु युग को गद्य की विविध विधाओं-उपन्यास, निबंध, नाटक, इतिहास,

आलोचना, संस्मरण, यात्रा-विवरण आदि के प्रवर्तक युग के रूप में भी याद किया जायेगा। भारतेन्दु ने 'कविवचनसुधा' और 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' जैसी पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी गद्य का प्रचार-प्रसार किया। भारतेन्दु के सभी लेखक पत्रकारिता से भी जुड़े हुए थे। 'प्रतापनारायण मिश्र' ने 'ब्राह्मण' नामक पत्र खुद निकाला और 'हिन्दुस्तान' (1883 ई.) पत्र के कुछ समय तक संपादक रहे। 'बालखन्द गुप्त' ' भारतीय मित्र' नामक पत्र में नियमित रूप से लिखते रहे। 1887 ई. में इन्होंने 'हिन्दी-प्रदीप' नामक पत्र इलाहाबाद से निकाला। 'बालमुकुन्द गुप्त' जीवन भर पत्रकारिता से जुड़े रहें, इन्होंने 'चुनार', 'कोहनूर', 'हिन्दी-हिन्दोस्तान', 'हिन्दी बंगवासी' तथा ' भारत-मित्र' आदि पत्रों का सम्पादन किया। इस युग के प्रमुख लेखकों में 'प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, श्री निवासदास, राधाकृष्णदास, सुधाकर द्विवेदी, कार्तिक प्रसाद खत्री, राधाचरण गोस्वामी, बद्रीनारायण चौधरी, बालखन्द गुप्त, श्रद्धाराम फिल्लौरी, किशोरीलाल गोस्वामी' आदि ने हिन्दी गद्य के विकास में विभिन्न प्रकार से योगदान दिया। भारतेन्दु युग में 'देवकीनन्दन खत्री' एक लोकप्रिय उपन्यासकार के रूप में सामने आते हैं। इनके उपन्यासों को पढ़ने के लिए गैर हिन्दी भाषियों ने भी हिन्दी सीखी और इनके उपन्यासों की भाषा का रसास्वादन किया। देवकीनन्दन खत्री के 'चन्द्रकान्ता' (1882) और 'चन्द्रकान्ता सन्तति' (चौबीस भाग- 1886) इस काल के सर्वाधिक पड़े जाने वाले उपन्यास रहे हैं।

इसी युग में बांग्ला भाषी नवीनचंद्र राय (1837-1890) ने हिन्दी में 'ज्ञान-प्रदायिनी' (1867 ई.) पत्रिका निकाल कर हिन्दी गद्य के विकास में योगदान दिया। 'स्वामी दयानन्द सरस्वती' ने आर्य सभ्यता खड़ी बोली गद्य में की। हिन्दी के विकास, प्रचार और प्रसार में आर्य समाज की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। स्वामी जी की भाषा संस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त थी। उदाहरण के लिए स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित गद्य का एक उदाहरण देखिए-

"पुरुषों का और कन्याओं का ब्रह्मचर्याश्रम और विद्या जब पूर्ण हो जाये तब देश का राज होय और जितने विद्वान लोग वे सब उनकी परीक्षा यथावत करें। जिस पुरूष या कन्या में श्रेष्ठ गुण जितेन्द्रिय, सत्यवचन, निरभिमान, उत्तम बुद्धि, पूर्ण विद्या, मधुर वाणी, कृतज्ञता और गुण के प्रकाश में अत्यन्त प्रीति हो जिसमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोक, कृतघ्नता, कपट, ईर्ष्या, द्वेषादिक, दाव न होवै पूर्ण कृपा से लोगों का कल्याण चाहै उसका ब्राह्मण का अधिकार देवै।"

अगर 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से तुलना करें तो भारतेन्दु युग में भाषा के परिमार्जन की दिशा में अभूतपूर्व कार्य हुआ और साथ ही उसमें राष्ट्रीय भावना एवं नवोत्थान की चेतना भी जागृत हुई। बारतेन्दु युग के विद्वानों ने जहाँ भारतीय संस्कृति, राष्ट्रीयता एवं आर्थिक जागरुकता के प्रति सचेत किया वहीं दूसरी ओर खड़ी बोली के प्रचार एवं प्रसार के लिए भी महत्वपूर्ण कार्य किये। भारतेन्दु युग आधुनिक हिन्दी साहित्य का आरंभिक चरण था, जहाँ गद्य की विधाओं के लिए तो खड़ी बोली को आधार बनाया गया, परन्तु

कविता के क्षेत्र में लोगों का ब्रजभाषा से मोह नहीं छूटा था। कविता अभी भी ब्रजभाषा में ही लिखी जाती रही। सृजनात्मक साहित्य के अलावा इस युग में संस्कृत और अंग्रेजी के ग्रंथों का खड़ी बोली में अनुवाद भी हुआ। हिन्दी गद्य के स्वरूप को पूर्ण स्थिरता, परिमार्जन एवं परिष्कार करने की जो मुहिम भारतेन्दु ने शुरू की उसको आगे चलकर पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से द्विवेदी युग के लेखकों ने किया।

(ग) बीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली हिन्दी का विकास

बीसवीं शताब्दी में हिन्दी भाषा का विकास विविध आयामों में हुआ है। अब सिका क्षेत्र दिल्ली-मेरठ से निकल कर सम्पूर्ण उत्तर भारत हो गया। हिन्दी सारे उत्तर भारत में साहित्य की भाषा बन गई। भारतेन्दु युग तक कविता की भाषा ब्रजभाषा हुआ करती थी, किन्तु अब ब्रजभाषा सिकुड़ कर 'बोली' बन गई और कविता की भाषा भी खड़ी बोली 'हिन्दी' हो गई। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हिन्दी भाषा के क्षेत्र में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का आगमन होता है, वहीं राजनीति में महात्मा गाँधी का। इन दोनों ही महापुरुषों ने अराने-अपने ढंग से हिन्दी के विकास में अपना योगदान दिया। सर्वप्रथम हम पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा हिन्दी के उत्थान के लिए किए गए कार्यो को देखते हैं-

हिन्दी भाषा का परिष्कार-काल :

पंडित महावीर प्रसाद द्विवेद ने 1903 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक का दायित्व संभाला। सर्वप्रथम आपने इस पत्रिका के माध्यम से हिन्दी भाषा को परिष्कृत करने का कार्य प्रारम्भ किया। इस समय हिन्दी भाषा के सामने तीन प्रमुख समस्याएँ थी प्रथम समस्या थी भाषा की अस्थिरता, दूसरी समस्या 'हिन्दी के व्याकरण' का अभाव होना और तीसरी प्रमुख समस्या थी 'हिन्दी के शब्द भण्डार' की कमी। द्विवेदी जी ने इन समस्याओं को पहचान कर इनको दूर किया। उन्होंने अपनी पत्रिका 'सरस्वती' के माध्यम से अपने समकालीन लेखकों और कवियों की भाषा में काँट-छाँट करके भाषा को एकरूपता प्रदान की। इन्होंने लेखकों और कवियों को उनकी अस्थिर भाषा की ओर ध्यान दिलाया। लेखों में विराम चिह्नों के प्रयोग करने के प्रति सचेत किया। देशज शब्दों के स्थान पर व्यापक स्वीकृति वाले शब्दों के स्थान पर व्यापक स्वीकृति वाले शब्दों के प्रयोग पर बल दिया। हिन्दी गद्य को सरल रूप 'कहानी कहने के ढंग' में ढालकर एक निश्चित आकार प्रदान किया। कविता के लिए भी खड़ी बोली 'हिन्दी' को अपनाने के लिए समकालीन कवियों को प्रेरित किया। द्विवेदी जी के इन सभी प्रयासों के सार्थक परिणाम निकले। इस समय गद्य की कई विधाएँ विकसित हुई और खड़ी बोली हिन्दी में 'काव्य रचना' भी होने लगी। 'सरस्वती' पत्रिका इस दौर के लेखकों और कवियों के लिए प्रेरणादात्री बन गई। द्विवेदी जी अपने पास प्रकाशित होने के लिए आने वाली प्रत्येक रचना की वर्तनी और व्याकरण संबंधी गलतियों को सुधार करके लेखकों को आवश्यक सुझाव भी देते थे। इस समय के प्रमुख रचनाकारों- मैथिलीशरण गुप्त, बालमुकुन्द गुप्त आदि ने उनके सुझावों को मानकर हिन्दी को परिष्कृत करने में उनके सहयोगी बने। लम्बे समय से

हिन्दी को अनुशासित करने के लिए 'व्याकरण' की कमी महसूस हो रही थी। अत: द्विवेदी जी के प्रोत्साहन से 'कामता प्रसाद गुरा' ने 'हिन्दी व्याकरण' की रचना करके इस की पूर्ति की। गुरू का यह ग्रंथ आज भी हिन्दी के प्रथम व्याकरण के रूप में याद किया जाता है। हिन्दी की शब्दावली की समस्या को दूर करने के लिए द्विवेदी जी ने शब्द भंडार को समृद्ध करने के लिए एक 'शब्द ग्रहण नीति' को अपनाया। उन्होंने 'उर्दू और अंग्रेजी' के बहुत प्रचलित शब्दों को हिन्दी के लिए स्वीकार किया। संस्कृत के सरल एवं उपयुक्त तत्सम शब्दों को अपनाया और प्रान्तीय भाषाओं के हिन्दी में रच-बस गए शब्दों को ग्रहण करके हिन्दी के शब्द-भण्डार को बढ़ाया। इस नीति का पालन उन्होंने स्वयं भी किया और अपने समकालीन लेखकों और कवियों को भी इसकी पालना करने के लिए प्रेरित किया। द्विवेदी जी की इस शब्द ग्रहण नीति का सार्थक परिणाम सामने आया। अत: हिन्दी एक 'समृद्ध, परिष्कृत और अनुशासित भाषा बन गई। इन सभी गुणों से युक्त द्विवेदी युग के प्रमुख गद्यकार बालमुकुन्द गुप्त की व्यंग्यात्मक शैली का एक उदाहरण देखिए-

"दूज के चाँद के उदय का भी एक समय हैं। लोग उसे जान सकते हैं। माई लॉर्ड के मुख चन्द्र के उदय के लिए कोई समय भी नियत नहीं। अच्छा, जिस प्रकार इस देश के निवासी माई लॉर्ड का चन्द्रानन देखने को टकटकी लगाए रहते हैं या जैसे शिव शंभू के जी में अपने देश के माई लॉर्ड को भी इस देश के लोगों की सुध आती होगी।"

द्विवेदी जी की प्रेरणा से इस युग में कहानी, उपन्यास, आलोचना, निबंध, नाटक, जीवनी, यात्रावृत्त और पत्र साहित्य आदि विधाओं का भी विकास हुआ। इस काल के प्रमुख कहानीकारों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, बंग महिला, वृन्दावनलाल वर्मा, प्रेमचन्द, चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, जयशंकर प्रसाद आदि ने अपनी कहानियों से हिन्दी के विकास में योगदान दिया। इस युग की कहानी की भाषा के नमूने के रूप में प्रेमचनद की कहानी 'मुक्तिमार्ग' का उदाहरण प्रस्तुत है-

"अग्नि-मानव-संग्राम का भीषण दृश्य उपस्थित हो गया। एक पहर तक हाहाकार मचा रहा। कभी एक पक्ष प्रबल होता, कभी दूसरा। अग्निपक्ष से योद्धा मर-मर कर जी उठते थे और द्विगुणशक्ति से रणोन्मत होकर शस्त्र प्रहार करने लगते थे। मानव पक्ष में जिस योद्धा की किर्ति उज्ज्वल थी, वह बुद्धू था।"

इसी काल के प्रमुख उपन्यासकारों में 'देवकीनंदन खत्री, गोपाललाल गहमरी, किशोरीलाल गोस्वामी, गंगाप्रसाद गुप्त, मथुराप्रसाद शर्मा, लज्जाराम शर्मा' आदि ने उपन्यास विधा के माध्यम से हिन्दी भाषा को विकसित किया। इस युग के निबंधकारों में 'महावीर प्रसाद द्विवेदी, गोविन्द नारायण मिश्र, बालमुकुन्द रामचन्द्र शुक्ल' आदि ने निबंध विधा को स्थापित करके भाषा के नए प्रतिमान स्थापित किए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की विचारात्मक शैली का एक उदाहरण उनके प्रसिद्ध निबंध, 'लज्जा और ग्लानि' से प्रस्तुत है-

"ग्लानि में अपनी बुराई, मूर्खता, तुच्छता आदि के अनुभव से जो संताप होता है, वह अकेले में भी होता है, दस आदमियों के सामने प्रकट भी किया जाता है। ग्लानि अंतःकरण की शुद्धि का एक विधान है।"

आलोचना विधा के प्रमुख हस्ताक्षरों में 'मिश्रबन्धु, पद्म सिंह शर्मा, श्यामसुन्दर दास, राधकृष्ण दास और जगन्नाथ दास रत्नाकर' ने हिन्दी की भी श्री वृद्धि की। इन्हीं के साथ 'राधाचरण गोस्वामी, जयशंकर प्रसाद, गंगाप्रसाद गुप्त, मिश्रबन्धु' आदि ने नाटक विधा के माध्यम से हिन्दी की सेवा की। द्विवेदी युग में सबसे बड़ी क्रान्ति 'कविता' की भाषा के रूप में खड़ी बोली हिन्दी को अपनाया है। द्विवेदी जी की प्रेरणा से श्रीधर पाठक, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' मैथिलीशरण गुप्त जयशंकर प्रसाद, रामनरेश त्रिपाठी, सियाराम शरण गुप्त, नाथूराम शर्मा, 'शंकर' राय देवी प्रसाद 'पूर्ण', रामचरित उपाध्याय, गया प्रसाद शुक्ल 'स्नेही' और स्वयं महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली हिन्दी में काव्य रचना करके एक नये युग का सूत्रपात किया। इस युग में प्रबंध काव्य मुक्तक गीतिकाव्य आदि रूपों में रचनाएँ लिखी गई। खड़ी बोली हिन्दी का पहला महाकाव्य 'प्रिय-प्रवास' की रचना कवि 'हरिऔध' ने इसी युग में की है।

भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी का आगमन एक बड़ी घटना है। गाँधी ने भारत में अपना राजनीतिक जीवन 1916 से शुरू किया। गाँधी ने अंग्रेजों और अंग्रेजी के विरुद्ध आन्दोलन किया। गाँधी ने अंग्रेजो को उखाड़ने और भारतीयों को एक सूत्र में बाँधने के लिए सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिए 'खड़ी बोली हिन्दी' को अपनाने का आह्वान किया। भारतीय जनता ने इनके आसान को स्वीकार करके 'खडी बोली हिन्दी' के प्रचार, प्रसार और प्रयोग के लिए सारे भारत में आन्दोलन किया। यह ऐसा आन्दोलन था जिसमें देश के जाने-माने पत्रकार, शिक्षाशास्त्री, वैज्ञानिक, राजनेता सभी ने उत्साह से भाग लिया। हिन्दी की समृद्धि और प्रसिद्धी के लिए सारे भारत के लोगों ने अपनी भागीदारी निभाई। यहाँ तक कि अहिन्दी भाषी प्रान्तों के निवासियों ने भी हिन्दी के समर्थन में आवाज उठाई, क्योंकि वे जानते थे 'कि हिन्दी भाषा सारे भारत को एक सूत्र में बाँध सकती है। हमारी राष्ट्रीय भावना को प्रबल बनाकर अंग्रेजों से लड़ने की शक्ति दे सकती है। हिन्दी ने यह कार्य किया भी खूब। राष्ट्रीय आन्दोलन की सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार और प्रसार सारे भारत में हो गया। इसी के परिणामस्वरूप हिन्दी में प्रान्तीय भाषाओं के शब्दों की बहुलता हो गई। हिन्दी सभी प्रान्तों के लोगों को अपनी लगने लगी। इस काल में गाँधीवाद एवं राष्ट्रवाद से प्रभावित साहित्य की रचना हिन्दी में सर्वाधिक हुई। इस युग के प्रसिद्ध राष्ट्रकवि 'मैथिलीशरण गुप्त' की कविता 'भारत-भारती' से कुछ पंक्तियाँ देखिए-

"नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है,
सूर्य-चन्द्र युग खट मेखला रत्नाकर है।
नदियाँ प्रेम-प्रवाह, फूल तारे मंडल है,
बंदी जन खगवृन्द, शेष-फन सिंहासन है।

करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेष की,

हे मातृभूमि! तू सत्य ही सुगण मूर्ति सर्वेश की।।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि द्विवेदी युग हिन्दी गद्य की विभिन्न विधाओं के विकास में, भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन एवं महात्मा गाँधी ने प्रेरक का कार्य किया इस काल के साहित्य का उद्देश्य व्यापक जन समूह को प्रभावित करना रहा है। अत: इस दौर का साहित्य आम जनता का साहित्य बन गया। इसे द्विवेदी जी जैसे 'भाषाविज्ञ' ने परिष्कृत किया। इससे हिन्दी को व्यापक प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से द्विवेदी जी ने हिन्दी को परिष्कृत किया, वही राष्ट्रीय आन्दोलन में महात्मा गाँधी ने हिन्दी को प्रचारित और प्रसारित करके किया। इन दोनों विभूतियों को खड़ी बोली हिन्दी के विकास-स्तम्भ के रूप में याद किया जायेगा।

हिन्दी का उत्कर्ष काल- 1918 से 1947 तक :

द्विवेदी युग की समाप्ति पर खड़ी बोली में एक स्थिरता आ गई। हिन्दी व्याकरण के नियमों से अनुशासित होकर परिमार्जित हो गई। भाषा सभी दुर्बलताओं से मुक्त हो गई। द्विवेदी युग तक गद्य और पद्य के लिए अलग-अलग युग के नामकरण की परम्परा नहीं रही है। इसके बाद में काव्य (कविता) के लिए 'छायावाद' (1918-1936 ई.) 'प्रगतिवाद' (1936-1943 ई.) और 'प्रयोगराद' (1943-1955 ई.) नाम युग विशेष की काव्यगत विशेषताओं के आधार पर रखे गये। इसी प्रकार गद्य के लिए किसी युग का नामकरण नहीं हुआ। अत: द्विवेदी युग के उपरान्त खड़ी बोली हिन्दी गद्य के युग को 'उत्कर्ष-काल' कह सकते हैं। हिन्दी गद्य का यह काल बहुत विस्तृत है, विधाओं के रूप में और काल के रूप में। इसकी समय सीमा को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से स्वतंत्रता प्राप्ति तक मान सकते हैं। इसके बाद के गद्य साहित्य स्वातंत्रटयोतर हिन्दी गद्य साहित्य नाम दिया जा सकता है।

उत्कर्ष-काल में कहानी और उपन्यास साहित्य में प्रेमचन्द का प्रमुख स्थान है। प्रेमचन्द ने अपना लेखन उर्दू से प्रारम्भ किया, किन्तु अपनी राष्ट्रभाषा से प्रेम के कारण हिन्दी में लिखने लगे। प्रेमचन्द अपनी कहानियों और उपन्यासों में आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग करते हैं। इन्हीं के समकालीन कहानीकार जयशंकर प्रसाद की भाषा संस्कृत निष्ठ रही है। इन दोनों कथाकारों को अपनी भाषा- शैली के कारण 'स्कूल' का दर्जा प्राप्त है। इनके बाद के कथाकार या तो 'प्रेमचन्द-स्कूल' के कहलाये या 'जयशंकर- प्रसाद-स्कूल' के कहानीकार कहलाये। इस प्रकार कहानी में 'प्रेमचन्द' की परम्परा को 'विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, सुदर्शन, यशपाल, भगवती प्रसाद वाजपेयी' ने और 'जयशंकर प्रसाद' की परम्परा को 'चंडी प्रसाद 'हृदयेश' और राजा राधिकारमण सिंह' जैसे लेखकों ने आगे बढ़ाया।

निबंध के क्षेत्र में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी विशिष्ट भाषा- शैली से नये मानक स्थापित किये इनकी भाषा की विशेषताएँ- 'अभिव्यक्ति की मौलिकता और प्रौढ़ता, विचारों की गहनता, हास्य व्यंग्य का पुट, अवसरनुकूल वाक्य रचना' आदि है। आपने

निबंध-लेखन में व्यास शैली को अपनाया। जिसमें किसी विषय को प्रश्न के द्वारा उठाया जाता है। जैसे-प्रेम क्या है? देश प्रेम क्या है? आदि।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की परम्परा को आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और विद्यानिवास मिश्र जैसे निबंधकारों ने आगे बढ़ाया। इन सभी के अतिरिक्त जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द्र जोशी, हीरानंद सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', अमृत लाल नागर, रांगेय राघव, वृन्दावन लाल वर्मा आदि ने भी हिन्दी गद्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

हिन्दी के उत्कर्ष काल में छायावादी कविता का काल 1918 से 1936 ई. तक माना जाता है। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, महादेवी वर्मा और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' छायावादी कविता के चार स्तम्भ कहलाते हैं। इस युग की भाषा में व्याकरणिक स्थिरता दिखाई देती है। हिन्दी के शब्द भंडार को विकसित करने के लिए संस्कृत के उपसर्ग एवं प्रत्यय से नये-नये शब्दों का निर्माण हुआ। उदाहरण के लिए छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा का गीत प्रस्तुत है-

“दृगों में सोते हैं अज्ञात
निदाघों के दिन, पावस रात
सुधा का मधु, हाला का राग
व्यथा के घन, अतृप्ति की आग
छिपे मानस में पवि-नवगीत
निमिष की गति-निर्झर के गीत।"

छायावादी कविता के बाद हिन्दी में प्रगतिवादी कविता और प्रयोगवादी कविता का दौर आया। प्रगतिवादी कविता आन्दोलन से हिन्दी में आँचलिक शब्दों का पुन: प्रवेश होता है। भारतेन्दु और द्विवेदी युग के समान आम बोलचाल की भाषा को अपनाया गया। इस युग की भाषा ओजपूर्ण है। इसमें विद्रोह संघर्ष और असंतोष के भावों की अभिव्यक्ति की गई है। इस दौर के कवियों में 'निराला, रामधारी सिंह 'दिनकर', भगवतीचरण वर्मा, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', विश्वम्भरनाथ कौशिक, शिवमंगल सिंह सुमन, नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल ' अंचल', नागार्जुन' आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता है।

हिन्दी कविता में प्रयोगवाद का आरम्भ 'हीरानन्द सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने किया। आपने सन् 1943 में सात प्रमुख कवियों की कविताओं का संग्रह 'तारसप्तक' प्रकाशित करके इसका आरम्भ किया। इसके बाद भी ' अज्ञेय' ने दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक और चौथा सप्तक का भी प्रकाशन किया। इस आन्दोलन में ' अज्ञेय', गजानंद माधव मुक्तिबोध, शमशेर बहादुरसिंह, नरेश मेहता आदि प्रमुख कवि है। इस दौर की कविता की भाषा साधारण पाठक के लिए कठिन साबित हुई। इसमें सरल शब्दों का प्रयोग होते हुए भी कविता का भाव उलझा हुआ है जिससे यह कविता आम जनता को समझ नहीं आई। कवियों ने नयेपन के लिए मुक्त छंद को अपनाया। नए प्रतीकों का

प्रयोग किया। कवियों के इन्हीं प्रयोगों से कविता की भाषा नीरस हो गई। कवि 'अज्ञेय' की कविता की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं-

“वह चुकी हवाएँ चैत की
कट गई फूलें हमारे खेत की
कौठरी में ली बढ़ा कर दीप की
गिन रहा होगा महाजन सेंत की।।"

इस प्रकार हमने देखा कि हिन्दी का उत्कर्ष-काल विविधताओं का काल रहा है। इससे गद्य की विविध शैलियाँ विकसित हुई, वहीं कविता की भाषा के कई रूप देखने को मिलते हैं।

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी की समृद्धि :

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी एक समर्थ साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई। भाषा और साहित्य के स्तर पर यह विश्वस्तरीय भाषा बन गई है। स्वतंत्रता के उपरान्त हिन्दी में कविता के मुकाबले गद्य की विधाओं का विकास अधिक हुआ है। अत इस काल को 'गद्य का काल' भी कहा जाता है। 15 अगस्त, 1947 के बाद भारतीय जनता ने खुली हवा में साँस ली। अपने देश का शासन चलाने के लिए भारतीय संविधान बनाया। संविधान बना 1949 में परन्तु लागू हुआ 28 जनवरी, 1950 को। इसके अनुसार भारत अब 'प्रभुत्व सम्पन्न लोकतांत्रिक गणराज्य' बन गया। आजादी के समय की राजभाषा 'अंग्रेजी' थी।

संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दरजा मिला। अंग्रेजी को भी 15 वर्षों तक सहराजभाषा बने रहने दिया। इसकी अवधि बढ़ती गई और आज तक अंग्रेजी, हिन्दी के साथ राजकाज की भाषा बनी हुई है। हिन्दी भारत संघ की राजभाषा भी है और उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेश छत्तीसगढ़, हरियाणा, राजस्थान आदि राज्यों की राज्यभाषा भी है। खड़ी बोली हिन्दी का व्यवहार सम्पूर्ण भारत में हो रहा है। भारत के बाहर, जहाँ भारतीय जाकर बस गये, वहाँ भी यह भाषा बोली, पढ़ी और समझी जाती है। भारत के लगभग 200 विश्वविद्यालयों में स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर पर हिन्दी को पढ़ाया जाता है। सम्पूर्ण भारत में हिन्दी में साहित्य रचना की जा रही है। अहिन्दी भाषी और हिन्दी का विरोध करने वाले प्रान्तों के निवासी भी अब हिन्दी को अपना रहे हैं। आजादी के बाद हिन्दी को प्रचारित, प्रसारित और लोकप्रिय बनाने में हिन्दी फिल्मों और गीतों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिन्दी सिनेमा की पहुँच देश के हर प्रान्त तक है। इनको सामान्य भाषा ज्ञान रखने वाला व्यक्ति भी समझ सकता है। उनके पश्चिम गीत तो भारतीयों के कंठों के हार बन गये है। भारत के पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण सभी क्षेत्रों में हिन्दी फिल्मों के चाहने वाले मिल जायेंगे। 'फिल्मों' के माध्यम से करोड़ों लोगों ने हिन्दी सीखी, जो कार्य सरकार नहीं कर सकी, उसे हिन्दी फिल्मों ने साठ सालों में कर दिखाया है। ' आज की हिन्दी' के अखिल भारतीय स्तर पर दो रूप दिखाई देते हैं-पहला 'हिन्दी' का ' अन्तर- प्रान्तीय सम्पर्क भाषा का रूप' जैसे-

'कलकतिया हिन्दी', 'बंबइया हिन्दी', 'दिल्ली की हिन्दी' आदि। हिन्दी के इतने रूपों का होना हिन्दी के लिए कमजोरी की बात न होकर यह उसकी प्रगति एवं समृद्धि का प्रमाण है। हिन्दी भाषा का दूसरा रूप 'साहित्यिक रूप' है। यह सारे भारत में समान रूप से व्यवहार में लिया जाता है। हिन्दी में लिखने वाले साहित्यकार सम्पूर्ण भारत में फैले हुए है।

आजादी के बाद हिन्दी भारत की सीमा के बाहर भी प्रचारित और प्रसारित हुई है। दुनिया के 50 देशों में हिन्दी का पठन-पाठन हो रहा है। हिन्दी को प्रचारित करने के लिए आठ विश्व हिन्दी सम्मेलन हो चुके हैं। ' आठवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन' जुलाई, 2007 में न्यूयॉर्क में सम्पन्न हुआ है। इसी सम्मेलन में 'हिन्दी' को संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यालयों की मान्यता प्राप्त भाषा बनाने का प्रस्ताव पारित किया है। अत: हिन्दी अब भारत की राजभाषा, जनभाषा और सम्पर्क भाषा से विश्व भाषा बनने की ओर अग्रसित हो गई है।

1.3 सारांश

इस इकाई में हमने हिन्दी भाषा के 1000 वर्षों के इतिहास को समझा। अपभ्रंश से निकल कर एक समृद्ध भाषा बनने के सफर को हमने तीन कालों के माध्यम से अध्ययन किया। हिन्दी का प्रारम्भिक काल या आदिकाल 1000 से 1500 ई. तक माना गया है। इसी अवधि में हिन्दी को अपने रूप के निर्माण में सर्वाधिक संघर्ष करना पड़ा। इस समय 'डिंगल और पिंगल' जैसे अनेक रूप विकसित हुए।

हिन्दी का मध्यकाल 1500 ई. से 1800 ई. तक माना गया। इसी काल में 'हिन्दी की विविध बोलियों' का विकास हुआ। इस काल में साहित्य- 'ब्रजभाषा, अवधी और खड़ी बोली' आदि में हुई। खड़ी बोली गद्य का आरम्भ इसी काल में हुआ।

हिन्दी का आधुनिक काल 19वीं शताब्दी से शुरू होता है। इसी समय ब्रज भाषा के स्थान पर खड़ी बोली में साहित्य रचना हुई। इसी युग में गद्य की विविध विधाओं का विकास हुआ। बीसवीं शताब्दी में खड़ी बोली गद्य और पद्य दोनों की भाषा बनी। हिन्दी के विकास में अंग्रेजों ने, ईसाइयों ने, ब्रह्मसमाजियों ने और आर्यसमाजियों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। खड़ी बोली हिन्दी को विकसित करने में 19वीं शताब्दी के चार लेखकों- 'लल्लूलाल, सदासुख लाल, सदल मिश्र और इंशा अल्ला खाँ' का विशिष्ठ योगदान है। ' भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और महावीर प्रसाद द्विवेदी' ने हिन्दी के प्रचार, प्रसार, परिष्कार और अनुशासनबद्ध करने में विशेष योगदान दिया। इन्हीं के प्रयासों से खड़ी बोली एक व्यवस्थित मानक रूप ग्रहण कर सकी। इनके बाद 'प्रेमचन्द, प्रसाद, अमृतलाल नागर, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, विद्यानिवास मिश्र, सुमित्रानंदन पंत 'निराला' आदि कवि और लेखकों ने हिन्दी के साहित्यिक भंडार को समृद्ध किया। आजादी के उपरान्त हिन्दी राजभाषा का सम्मान प्राप्त करती है। सारे देश में बोली, समझी व पढ़ी जाने लगी है। विपुल मात्रा में साहित्य लिखा गया, विशेष तौर पर गद्य की विधाएँ खूब फली-फूली।

आजादी के बाद हिन्दी के विकास के लिए जो कार्य सरकारी स्तर पर नहीं हो सका उसको हिन्दी-प्रेमी जनता ने कर दिया। हिन्दी को भारत की सीमा से बाहर सारे विश्व में प्रसारित कर दिया। हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में हिन्दी सिनेमा का योगदान भी अभूतपूर्व है। वर्तमान में हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की 'मान्यता प्राप्त भाषा' बनाने के लिए प्रयास शुरू हो चुके हैं।

1.4 शब्दावली

आदिकालीन हिन्दी की शब्दावली :

जिम, चउदह, बसई, सरीसउ, गरवीउ, बरस, चहुँ हिय, तपि, निसि

मध्यकालीन हिन्दी की शब्दावली :

बसहि, पंखि एकै, लुकाठी, हाजिर-नाजिर, दुसमण, उघाडो, दीनानाथ, बैठ्या

आधुनिक हिन्दी की शब्दावली :

भया, करनिहारा, सुनि, पाई, पाठशला, इहतिमाम, मदद, भूषण, ब्रहमचर्याश्रम यथावत मुखचन्द्र, चन्द्रानन, मूर्खता, तुच्छता, परिधान, मुकुट, मेखला, वे, प, सर्वेश, दृग, निदाघ, सुधा, मधु, निमिष,, निर्झर, अतृप्ति

1.5 संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी भाषा-डॉ. हरदेव बाहरी
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास-डाँ. नगेन्द्र
3. हिन्दी भाषा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य-डाँ. रामकिशोर शर्मा
4. हिन्दी का गद्य साहित्य-डाँ. रामचन्द्र तिवारी

1.6 बोध प्रश्न

1. निर्देश : सही कथनों पर सही लिखें और गलत कथनों पर गलत लिखिए-
   1. हिन्दी भाषा का आदि काल 1000 ई. से माना जाता है।
   2. अमीर खुसरो अपने समय के लोकप्रिय जन कवि थे।
   3. खड़ी बोली के विकास में ईसाई मिशनरियों ने अप्रत्यक्ष रूप से भूमिका निभाई।
   4. 'उर्दू का विकास भारत से बाहर हुआ है।
   5. 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' खड़ी बोली के प्रथम कवि है।
   6. भारत की स्वतंत्रता के समय हिन्दी भारत की राजभाषा थी।
2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-
   1. मुसलमानों ने अपनी राजभाषा................................ को बनाया था।
   2. कबीर की भाषा................................ भाषा कही जाती है।
   3. फोर्ट विलियम कॉलेज के संस्थापक............................. थे।
   4. महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सन्................. से सरस्वती पत्रिका का संपादन प्रारम्भ किया।

5. भारतेन्दु युग का समय

3. मिलान कीजिए-

लेखक	पुस्तकें
1. चन्दबरदाई	कीर्तिलता
2. दलपतिविजय	आल्हाखंड
3. गोरखनाथ	रामचरित्र
4. स्वामी दयानंद सरस्वती	उदयभान चरित
5. लल्लूलाल	सुखसागर
6. सदा सुखलाल	प्रेमसागर
7. इंशा अल्ला खाँ	सत्यार्थ प्रकाश
8. सदल मिश्र	गोरखबाणी
9. जगनिक	पृथ्वीराज रासो
10. विद्यापति	खुमाणरासो

4. सही उत्तर को चुनिए-

1. हिन्दी की 'संस्कृत निष्ठ शैली' के समर्थक कौन थे?
   (अ) शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' (ब) राजा लक्ष्मण सिंह
   (स) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (द) लल्लूलाल
2. 'चन्द-छंद बरनन की महिमा' किस भाषा की रचना है?
   (अ) ब्रज भाषा (ब) अवधी
   (स) खड़ी बोली (द) राजस्थानी
3. 'भाषा योगवासिष्ठ' कि सदी की रचना है?
   (अ) दसवीं (ब) बारहवीं
   (स) पन्द्रहवीं (द) अइठारहवीं
4. 'पद्म-पुराण' के लेखक कौन है?
   (अ) दौलत राम (ब) रामप्रसाद निरंजनी
   (स) घनानन्द (द) भारतेन्दु
5. 'बनारस अखबार' काशी से किसने निकाला?
   (अ) राजा लक्ष्मण सिंह (ब) भारतेन्दु
   (स) लस्ल्लूलाल (द) शिवप्रसाद 'सितारहिन्द'

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) (i) सही (ii) सही (iii) सही (iv) सही (v) गलत (vi) गलत (vii) गलत
2) (i) फारसी (ii) सधुक्खडी (iii) जॉन गिलक्राइस्ट (iv) 1903 (v) 1850-1900
3) (i) ट (ii) ठ (iii) झ (iv) छ (v) च

(vi) च (vii) घ (viii) ग (ix) ख (x) क

4) (i) ब (ii) स (iii) द (iv) अ (v) द

1.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर 100 शब्दों में लिखिए -

   (i) हिन्दी भाषा के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज के योगदान को स्पष्ट कीजिए।

   (ii) खड़ी बोली हिन्दी के विकास में 19 वीं शताब्दी की पत्र- पत्रिकाओं के योगदान को रेखांकित कीजिए।

   (iii) हिन्दी के विकास में भक्ति आन्दोलन की भूमिका की विवेचना कीजिए।

   (iv) 'हिन्दी' शब्द के उद्भव एवं विकास को स्पष्ट कीजिए।

2. संक्षेप में टिप्पणी लिखिए-

   (i) भाखा (ii) हिन्दवी (iii) दक्खिनी

   (iv) उर्दू (v) खड़ी बोली

इकाई - 2 हिन्दी भाषा का शब्द भंडार

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 हिन्दी भाषा के शब्दों के विविध स्रोत
2.2.1 तत्सम शब्द
2.2.2 अर्द्ध तत्सम शब्द
2.2.3 तद्भव शब्द
2.2.4 देशज शब्द
2.2.5 बाहरी शब्द
2.2.6 विदेशी शब्द
2.2.7 शाब्दिक अनुवाद
2.2.8 संकर शब्द
2.2.9 अनुकरणात्मक शब्द
2.3 सारांश
2.4 संदर्भ ग्रन्थ
2.5 बोध प्रश्न एवं उत्तर
2.6 अभ्यास हेतु प्रश्न

2.0 उद्देश्य

अब तक आप हिन्दी भाषा के स्वरूप एवं उसके विकास की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। इस इकाई में अब आप हिन्दी भाषा के शब्द भंडार के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। हिन्दी में लगभग पाँच लाख शब्द हैं। सभी शब्द विविध स्रोतों से हिन्दी में आए हैं। इस इकाई में हमें उन सभी शब्द स्रोतों की चर्चा करेंगे जिससे आप हिन्दी के शब्द भंडार के समझ सकेंगे।

इस इकाई को पढ़ कर आप-

- भाषा में शब्दों के महत्व को समझा सकेंगे।
- हिन्दी भाषा के विविध शब्द स्रोतों को समझ सकेंगे।
- तत्सम, तद्भव शब्दों के अन्तर को समझा सकेंगे।
- हिन्दी भाषा में किन-किन भाषाओं के शब्द हैं जान सकेंगे।
- हिन्दी के अपने शब्द कौन से है? इसे जान सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

प्रत्येक भाषा में शब्दों का ही सर्वाधिक महत्व होता है। जब कोई व्यक्ति भाषा के माध्यम से अपने विचार प्रकट करना चाहता है तब वह दरअसल अपने किसी भाव या

अर्थ को दूसरे तक पहुँचाना चाहता है। यह कार्य बेशक वाक्यों द्वारा सम्पन्न होता है लेकिन वाक्य पूरी तरह से शब्दों पर निर्भर करते हैं। शब्दों से प्रकट होने वाले अर्थ ही वक्ता के विचारों के वाहक होते हैं। शब्द और अर्थ के सम्बन्ध को समझाते हुए तुलसीदास ने कहा है-

गिरा अरथ जल वीचि सम।
कहियत भिन्न न भिन्न।।

अर्थात् शब्द और अर्थ दोनों अलग अलग प्रतीत होते हैं पर वे वास्तव में उसी तरह भिन्न नहीं होते हैं जिस तरह जल और लहर दोनों अलग दिखते हुए भी भिन्न नहीं होते हैं।

इस इकाई में हम हिन्दी भाषा के शब्द भंडार की चर्चा करेंगे। हिन्दी भाषा में लगभग पाँच लाख शब्द हैं। यहाँ भाषा के मामले में एक जरूरी बात की जानकारी प्राप्त कर लेना अनिवार्य है। किसी भी भाषा के प्रयोग का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होता है। एक समृद्ध भाषा को उसका प्रयोग करने वाले सभी मनुष्यों की भाषायी आवश्यकताओं को पूरा करना जरूरी होता है। एक देहाती व्यक्ति की भाषा शहरी व्यक्ति से भिन्न होती है। किसान, मजदूर, वैज्ञानिक, अध्यापक, इंजीनियर, गृहिणी, व्यापारी, उद्योगपति आदि के रूप में जीवन के सैकड़ों क्रिया क्षेत्र होते हैं। उन सभी क्षेत्रों में सार्थक ढंग से जिस भाषा में लोग विचार व्यक्त कर सकें वही भाषा जीवन्त और विकासमान बनी रहती है। अत: किसी भी भाषा को जीवित बने रहने के लिए सैकड़ों शब्दों को दूसरी भाषाओं से आयातित करना पड़ता है। जो शब्द उस भाषा में नहीं होते उन्हें या तो नये सिरे से बनाना पड़ता है या दूसरी भाषाओं से ग्रहण करना पड़ता है। इसी कारण प्रत्येक भाषा के शब्द भंडार के विविध स्रोत होते हैं। जैसे गंगा में अनेक छोटे -बड़े नदी-नाले आकर समाहित हो जाते हैं उसी तरह भाषा में भी दूसरी भाषाओं के शब्द आते रहते हैं। हिन्दी भाषा का जन्म ई.1000 के लगभग माना जाता है तब से लेकर आज तक उसमें अनेक देशी-विदेशी भाषाओं के शब्द आकर, घुल-मिल गए है। यहाँ हम हिन्दी भाषा के शब्द भण्डार के उन समस्त स्रोतों की जानकारी प्राप्त करेंगे जहाँ से आकर वे हिन्दी में समाहित हुए हैं। हिन्दी भाषा का इतना बड़ा भंडार मुख्यत: संस्कृत भाषा से विकसित हुआ है। इसके अलावा इसमें गुजराती, पंजाबी, मराठी, बंगाली जैसी देशी भाषाओं के शब्द भी हैं तो अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं के शब्द भी इसमें अलग- अलग समयों में आकर मिल गये हैं। इसके अतिरिक्त आवश्यकताओं के अनुसार नित्य नए-नए शब्दों को भी निर्मित किया जाता है। आइए, हम हिन्दी भाषा के शब्द स्रोतों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करते हैं।

2.2 हिन्दी भाषा के शब्दों के विविध स्रोत

किसी भी विकासमान भाषा के लिए उसके शब्द भंडार का सम्पन्न होना अनिवार्य है। हिन्दी भाषा का विकास संस्कृत भाषा से हुआ है। अत इसमें सर्वाधिक मात्रा में या तो

संस्कृत के ही शब्द है या वे संस्कृत शब्दों से ही विकसित हुए शब्द हैं। अलम्‍ अलग समयों में हिन्दी भाषा की श्रीवृद्धि होती रही है।

स्रोतों के आधार पर हिन्दी भाषा के शब्दों के ये प्रमुख वर्ग हे-

1. तत्सम	2. तद्भव	3. देशज
4. विदेशी	5. पारिभाषिक शब्द	6. शाब्दिक अनुवाद
7. संकर शब्द		

2.2.1 तत्सम शब्द

यह तत् (उसके) और सम (समान) शब्दों से बना है। व्यूत्पति के आधार पर तत्सम शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'उसके' शब्द 'संस्कृत' के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार तत्सम शब्द का सामान्य अर्थ होता है 'संस्कृत के समान। ' अत: वे शब्द जो संस्कृत से लिये गए हैं और जो हिन्दी भाषा में भी संस्कृत की तरह ही प्रयुक्त किए जाते हैं उन्हें 'तत्सम' कहा जाता है। जैसे-बालक, नदी, पर्वत, गृह, पुस्तक आदि संस्कृत शब्द हिन्दी भाषा में भी ज्यों के त्यों प्रयुक्त किए जाते हैं।

तत्सम शब्दों के बारे में एक बात जान लेना जरूरी है कि हिन्दी में सारे तत्सम शब्द यथावत् नहीं लिये गए है, बल्कि उनके रूप में थोड़ा बहुत परिवर्तन किया गया है। यह परिवर्तन अर्थ या ध्वनि के धरातल पर किया गया है। संस्कृत के मूल शब्द और हिन्दी में स्वीकार किए गए तत्सम शब्दों में सूक्ष्म अंतर को इस तालिका से समझा जा सकता है : -

मूल संस्कृत शब्द	–	**हिन्दी तत्सम शब्द**	–	**किया गया परिवर्तन**
बालक:	–	बालक	–	(:) विसर्ग छोड़ दिया गया है।
पुस्तकम्	–	पुस्तक	–	“म” छोड़ दिया गया है।

इस प्रकार हिन्दी में तत्सम शब्द थोड़े बहुत परिवर्तन के बाद ही स्वीकार किए गए हैं। उनमें छोड़े गये चिह्न संस्कृत में शब्दों के वचन तथा लिंग के सूचक हैं। हिन्दी में लिंग और वचन के दूसरे चिह्न हैं। अत: इन शब्दों को तो अपना लिया गया किन्तु उनके लिंग, वचन संबंधी चिह्नों को छोड़ दिया गया।

वैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर हिन्दी तत्सम शब्द पूरी तरह से संस्कृत के अनुरूप न होने के कारण शुद्ध तत्सम शब्द नहीं कहे जा सकते हैं। इस संबंध में डॉ. भोलानाथ तिवारी का भी मानना है कि वैज्ञानिक ढंग से इन्हें तत्सम कहना उचित नहीं है क्योंकि ' 'जब शब्द आत्मा और शरीर अर्थात् अर्थ और ध्वनि के धरातल पर ज्यों के त्यों रूप में प्रयुक्त हो तो ही उसे तत्सम कहा जा सकता है। जबकि हिन्दी के अधिकांश शब्द या तो ध्वनि के धरातल पर या अर्थ के धरातल पर कुछ परिवर्तन के साथ प्रयुक्त होते दिखाई देते हैं। "

2.2.2 अर्द्ध तत्सम शब्द

ये वे शब्द हैं जो तत्सम और तद्भव के बीच की स्थिति में हैं अर्थात् ये वे शब्द हँ जो न तो पूरी तरह से तत्सम हैं और न पूरी तरह से तद्भव ही हैं। डॉ. ग्रीयर्सन, डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी जैसे भाषा वैज्ञानिकों ने इन्हें अर्द्ध तत्सम कहा है। आधुनिक काल में आकर कुछ तत्सम शब्दों के रूप बदल गए हैं अर्थात् प्राकृत या अपभ्रंश के समय तक तो ये शब्द संभात के तत्सम शब्दों की ही तरह प्रयुक्त होते रहे किन्तु हिन्दी में आकर इनका प्रयोग बदले हुए (घिसे हुए) रूप में दिखाई देता है। कुछ विद्वान् अर्द्ध तत्सम के रूप में इन्हें अलग श्रेणी में रखना चाहते हैं।

अर्द्ध तत्सम के उदाहरण-

संस्कृत तत्सम	–	**हिन्दी अर्द्ध तत्सम**
चन्द्रमा	–	चंदरमा
कर्म	–	करम
कृष्ण	–	किशन या क्रिसन

अधिकांश विद्वान अर्द्ध तत्सम शब्दों को भी तद्भव ही कहना पसंद करते हैं। अर्द्ध तत्सम शब्द बहुत ही कम हैं और इन्हें तद्भव से हमेशा अलग करना आसान भी नहीं हैं।

2.2.3 तद्भव शब्द

तत् का अर्थ है 'वह' और भव का अर्थ है 'उत्पन्न'। वे शब्द जो संस्कृत से उत्पन्न या विकसित हुए हैं तद्भव कहलाते हैं। अनेक कारणों से संस्कृत शब्दों की ध्वनियों घिसपिट कर हिन्दी तक आते-आते परिवर्तित हो गई हैं। इसके परिणाम स्वरूप संस्कृत के कई शब्द हिन्दी तक आते-आते बदले हुए रूप में हिन्दी में आए हैं। हिन्दी के ऐसे शब्द जो संस्कृत शब्द से बदल कर नए रूप' में प्रयुक्त हो रहे है 'तद्भव' कहलाते है

संस्कृत भाषा के बाद क्रमश: पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, भाषाएँ विकसित हुई। अपभ्रंश से हिन्दी भाषा विकसित हुई। इन भाषाओं में ध्वनि परिवर्तन के कारण शब्दों के रूप भी बदल गए हैं। तद्भव शब्द भी मूलत: संस्कृत के ही हैं, लेकिन ये संस्कृत के मूल रूप में नहीं लिए गए हैं बल्कि ऐतिहासिक क्रम में उनके बदले हुए या विकसित रूप में हिन्दी में आये हैं। जैसे संस्कृत का 'गृह' शब्द हिन्दी तक आते-आते 'घर' बन गया। 'सत्य' शब्द 'सच' बन गया, 'हस्त' शब्द 'हाथ' बन गया। यह परिवर्तन अचानक नहीं हुआ बल्कि धीरे- धीरे हुआ। इनके कुछ उदाहरण इस प्रकार देखे जा सकते हैं : -

संस्कृत तत्सम शब्द	–	**हिन्दी में बना उसका तद्भव रूप**
सर्प	–	साँप
सूर्य	–	सूरज
आम्र	–	आम
मयूर	–	मोर
संध्या	–	साँझ

चन्द्र	–	चाँद
अंधकार	–	अँधेरा
उज्जवल	–	उजला
अक्षि	–	आँख

हिन्दी में सबसे अधिक संख्या तद्भव शब्दों की ही है। जन भाषा के रूप में प्रयुक्त हिन्दी में तद्भव शब्दों की प्रधानता होती है। तत्सम से तद्भव शब्द बनने में कभी-कभी अर्थ में भी परिवर्तन हो जाता है। जैसे 'वार्ता' से 'बात' में या 'पत्र' से 'पत्ता' शब्द में अर्थ बदल गया है।

2.2.4 देशज शब्द

देशज या देशी का अर्थ है अपने देश में उत्पन्न शब्द। वे शब्द जो न तो विदेशी हैं न तत्सम या तद्भव हैं वे देशज शब्द कहलाते हैं। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने इन्हें 'अज्ञात व्युत्पत्तिपरक' शब्द कहा है। 'देशज' के नामकरण की ही भाँति इनकी परिभाषा को लेकर भी विद्वानों में मतभेद हैं : -

1. चण्ड के अनुसार-जो शब्द संस्कृत या प्राकृत के न हो उन्हें 'देशज' कहा जाता है।
2. कामता प्रसाद गुरू के अनुसार- 'देशज' वे शब्द हैं जो किसी संस्कृत मूल से निकले हुए नहीं जान पड़ते हैं और उनकी व्युत्पत्ति का पता नहीं लगता है। जैसे तेंदुआ, खिड़की, दुआ, ठेस आदि।
3. डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार- जिन्हें संस्कृत से सिद्ध या संदर्भित नहीं किया जा सकता उन्हें 'देशज' कहते हैं।
4. डॉ. रामेश्वर दयालु अग्रवाल के अनुसार-जिन शब्दों के स्रोत का पता नहीं (अर्थात् जो अज्ञात व्युत्यत्तिक शब्द हों) तथा जो किसी भाषा-भाषी जन समाज द्वारा समय-समय पर सहज भाव से गढ़े गए हों, वे सभी 'देशज' शब्द हैं।
5. डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार जो शब्द न विदेशी हैं, न तत्सम और तद्भव हैं, उन्हें 'देशज' कहा जाता है।

देशज हिन्दी भाषा के अपने शब्द हैं। इन शब्दों का प्रयोग हिन्दी भाषा-भाषी समाज में ही प्रारम्भ हुआ। ये सही मायने में हिन्दी भाषा के अपने शब्द हैं।
देशज के उदाहरण- खिड़की, घूँट, उतावला, बेटा, बेटी, डाँवाडोल, नाना, नानी, जीजी, बादल, घाघरा, रूई, बुहारी, धंधा, बैंगन, लड्डू आदि।

2.2.5 बाहरी शब्द

जब दो या अधिक भाषाएँ सम्पर्क में आती हैं तो वे एक दूसरे को अवश्य प्रभावित करती हैं। यह प्रभाव सर्वाधिक मात्रा में शब्दों के आदान-प्रदान के रूप में सामने आता है। ऐसे में जो शब्द बाहर के स्रोतों से आए हैं उन्हें बाहरी शब्द कहते हैं। इस शब्द स्रोतों के प्रमुखतः तीन भेद हैं : -

1. **आर्य परिवार की भाषाओं से आए हुए शब्द-** ये शब्द हिन्दी की ही तरह विकसित भारतीय आर्य भाषा परिवार की किसी अन्य भाषा से हिन्दी में आए हैं। मराठी, पंजाबी, गुजराती, बंगाली इत्यादि उत्तर भारत की सभी प्रादेशिक भाषाएँ आधुनिक भारतीय आर्य भाषा परिवार की भाषाएँ हैं। इनसे जो शब्द हिन्दी में आए हैं वे इस वर्ग के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। उदाहरण : -

   बंगाली से – गल्प, गमछा, रसगुल्ला, उपन्यास, छाता

   मराठी से – चालू लागू वाङ्मय, कामगार, अड़चन

   गुजराती से – हड़ताल, गरबा

   पंजाबी से – सिक्स, छोले, भंगड़ा, खोखा

2. **भारतीय अनार्य (द्रविड़) भाषाओं से आगत शब्द-** दक्षिण भारत की भाषाएँ (तमिल, तेलुगु, कन्नड, मलयालम) द्रविड़ परिवार की भाषाएँ कहलाती हैं। मुण्डा, संथाली आदि आदिवासियों की भाषाएं भी अनार्य परिवार की भाषाएं। इनसे जो शब्द हिन्दी में आए हैं उन्हें इस परिवार में रखा जा सकता हैं।

   (1) द्रविड़ भाषाओं के शब्द-पिल्ला, इडली, उड़द, कटोरी, कज्जल, सूजी, डोसा, सांभर, झूठ, टोपी, डंका, नीर, पापड़।

   (2) मुण्डा भाषाओं के शब्द-दाडिम, कदम्ब, हलाहल, कपोत

   (3) संथालुई भाषाओं के शब्द-कोड़ी, टुंडा

   (4) आग्नेय भाषाओं के शब्द-ताम्बूल, कदली।

2.2.6 विदेशी भाषाओं के शब्द

किसी भी भाषा में विदेशी भाषाओं के आने के कई कारण होते हैं। राजनीतिक, धार्मिक, व्यापारिक, औद्योगिक, सांस्कृतिक एवं दो भाषाओं की निकटता के कारण एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा में आ जाते हैं। शब्दों के आदान-प्रदान की यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार 'संपर्क में आने पर भी आवश्यक विदेशी शब्दों को अछूत-सा मानकर न अपनाना अस्वाभाविक है। यत्न करने पर भी यह कभी संभव नहीं हो सका है। अनावश्यक विदेशी शब्दों का प्रयोग करना दूसरी अति है। मध्यम मार्ग यही है कि अपनी भाषा के ध्वनि समूह के आधार पर विदेशी शब्दों के रूप में परिवर्तन करके उन्हें आवश्यकतानुसार सदा मिलते रहना चाहिए। इस प्रकार शुद्धि करने के उपरान्त लिए गए विदेशी शब्द जीवित भाषाओं के शब्द भंडार को बढ़ाने में सहायक होते हैं। '

हिन्दी भाषा का विकास 10वीं, 11वीं शती से प्रारम्भ होता है और लगभग तभी से भारत के विभिन्न भागों पर विदेशियों का प्रभुत्व प्रारम्भ हो जाता है। विदेशियों का यह प्रभुत्व 1947 ई. में देश की आजादी के समय तक बना रहा। 17वीं शताब्दी तक अरबों, ईरानियों, तुर्कों और पठानों का प्रभुत्व रहा। इसके बाद यूरोप के देशों का प्रभुत्व प्रारम्भ हो गया इसी बीच यहाँ डच, पुर्तगाली, फ्रांसीसी और अंग्रेजों का भी शासन रहा। पराधीनता के कारण यहाँ की जनता को न्यायालय, शासन व्यवस्था व्यापार, विज्ञान,

शिक्षा, धार्मिक इत्यादि क्षेत्रों के सैकड़ों बाहरी भाषा के शब्द हिन्दी भाषा में अपनाने पड़े। इसी भाँति विदेशी भाषा के सम्पर्क में आने के कारण खान-पान, पहनावा, दैनिक उपयोग की वस्तुएं, खेलकूद, ज्ञान-विज्ञान, आवागमन के साधन, सुख-सुविधाओं के साधनों के भी सैकड़ों शब्द हिन्दी में आए हैं। सबसे अधिक अंग्रेजी भाषा के शब्द हिन्दी में आए हैं। इनमें से कुछ विदेशी भाषाओं के शब्दों के उदाहरण यहाँ दिए जा रहे हैं -

1. **अरबी-फारसी के शब्द :** डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार हिन्दी में लगभग छह हजार फारसी अरबी के शब्द हैं। इनमें से 3500 फारसी के तथा 2500 अरबी भाषा के शब्द है।

धर्म संबंधी शब्द	–	पैगम्बर, खुदा, मजहब, रोजा, कुरान, नमाज, हज, सुन्नी,
शासन संबंधी	–	सरकार, चपरासी, वकील, दरोगा, गवाह, पेशी, कानून
शिक्षा संबंधी	–	दवात, कलम, स्याही, कागज,
कला संबंधी	–	ढोल, शहनाई, सितार, नौबत, नगाड़ा, तस्वीर
पोशाख संबंधी	–	जुराब, दस्ताना, साफा, कुरता, रूमाल, सलवार
आभूषण श्रृंगार संबंधी	–	हमाम, सुरमा, आईना, इत्र, पाजेब,
खाद्य पदार्थ संबंधी	–	कोफ्ता, कोरमा, मसाला, बरफी, तन्दूर, समोसा
फर्नीचर	–	कुर्सी, संदूक, तख्त, परदा, चिक, शामियाना
व्यावसायिक	–	हलवाई, कारखाना, सर्राफ, कसाई, दस्तकार,
चिकित्सा संबंधी	–	हकीम, मलहम, दवा, चेचक, जुकाम, मरीज, नवज
बर्तन संबंधी	–	प्याला, चमचा, तवा, सुराही, रकाबी
शरीर संबंधी	–	दिल, कलेजा, कमर, बगल, जिगर
पशु-पक्षी के नाम	–	शेर, बाज, खच्चर, मुर्गा, कबूतर
रंगों के नाम	–	सफेद, स्याह, गुलाबी, बादामी, सुर्ख

2. **तुर्की शब्द :** तुर्की के लगभग 125 शब्द हिन्दी में आए हैं। जैसे- उर्दू गलीचा, गनीमत, लाश, चाकू, कैंची, बीबी।
3. **पश्तो शब्द :** अफगानिस्तान का भारत से बहुत प्राचीनकाल संबंध है। उसके प्रभाव से लगभग 100 पश्तो के शब्द हिन्दी में आए हैं।
4. **पुर्तगाली शब्द :** पुर्तगाली भाषा के लगभग 100 शब्द हिन्दी में आए हैं। जैसे- अन्नानास, अलमारी, काजू कमरा, सन्तरा, पगार, मिस्त्री, यीशू पीपा, गोभी, पीता, गोदाम, तौलिया, तम्बाकू, पपीता, परात।
5. **अंग्रेजी शब्द :** अंग्रेजी के लगभग तीन हजार शब्द हिन्दी में आए हैं। वैज्ञानिक क्षेत्रों में आज भी आ रहे हैं। उदाहरण-

प्रशासन संबंधी	–	गवर्नर, कलेक्टर, अफसर, जज, रजिस्ट्री, बजट।
सेना संबंधी	–	जनरल, बैड, बिगुल, परेड, मेजर, कर्नल।
यातायात संबंधी	–	रेल, स्टेशन, मोटर, ट्रक, स्कूटर, गार्ड।
चिकित्सा संबंधी	–	इंजेक्शन, डॉक्टर, हॉस्पिटल, सर्जन, ड्रेसिंग।
शिक्षा संबंधी	–	स्कूल, कॉलेज, मास्टर, प्रोफेसर, हॉस्टल।
पोशाख संबंधी	–	कोट, पेंट, शर्ट, टाई, टी-शर्ट, फ्रॉक, टेरीलिन, हैण्डलूम।
खान-पान संबंधी	–	काफी, सिगरेट, केक, होटल, लेमन, सूप, ऑमलेट।
खेल संबंधी	–	क्रिकेट, हॉकी, फुटबॉल, कैरमबोर्ड, बैट, टेनिस।
कृषि, उद्योग संबंधी	–	ट्रेक्टर फैक्ट्री, बैंक, डिपो, फार्म, यूनियन।
कला, मनोरंजन	–	फोटोग्राफी, कैमरा, रेडियो, टी. वी., फिल्म, स्केच।
श्रृंगार संबंधी	–	वैसलीन, क्रीम, स्नो पाउडर, सेंट, ब्यूटी पार्लर।
अन्य शब्द	–	गैलेरी, दिनों, रंगों, प्रेस आदि।

6. फ्रांसीसी शब्द – कार्तुस अंग्रेज, कूपन, लैंप, टेबुल, मेम, पिकनिक।
7. उच्च भाषा के शब्द – बम, तुरूप।
8. रूसी भाषा के शब्द – रूबल, वोदका, सोवियत, स्तुतनिक, मेट्रो, जार।
9. जापानी शब्द – निक्सा, हारकिरी, हायकू।
10. अफ्रीकी शब्द – चिपैंज़ी, जेबरा।
11. आस्ट्रेलिया शब्द – कंगारू।
12. जर्मन शब्द – डॉक, वैगन, ट्रेन, सेमिनार, किंडर गार्डेन।

2.2.7 शाब्दिक अनुवाद

इसके अन्तर्गत वे शब्द आते हैं जो किसी भाव को स्पष्ट करने के लिए अपनी भाषा में शब्द उपलब्ध न होने पर विदेशी भाषा के किसी शब्द का अनुवाद कर बना लिए जाते हैं। हिन्दी में ऐसे शाब्दिक अनुवादों की भरमार है। कुछ उदाहरण-

Red tapism	–	लाल फीताशाही
White parer	–	श्वेत पत्र
Golden Jublee	–	स्वर्ण जयंती
Post office	–	डाक खाना
Air Conditioned	–	वातानुकूलित
Full stop	–	पूर्ण विराम

2.2.8 संकर शब्द

हिन्दी में ऐसे अनेक शब्द हैं जो हिन्दी के साथ किसी अन्य भाषा के शब्द को जोड़ कर बना लिए गए हैं। दो भाषाओं के मिलने के कारण इन्हें 'संकर' शब्द कहा जाता है।

कटोरदान	–	(हिन्दी + अरबी)
छायादार	–	(संस्कृत + ईरानी)
डबल रोटी	–	(अंग्रेजी +हिन्दी)
फिल्मोत्सव	–	(अंग्रेजी + संस्कृत)
मालगाड़ी	–	(अंग्रेजी + हिन्दी)

2.2.9 अनुकरणात्मक शब्द

विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों की आवाजों तथा वस्तुओं से निकलने वाली ध्वनियों के आधार पर हिन्दी में अनेक प्रकार के शब्द बनाए गए हैं। जैसे-

पशु-पक्षियों की आवाजें-चींची, भौं-भौं, चिंघाड़ना, रंभाना, दहाड़ना,

अन्य अनुकरणात्मक शब्द-तड़तड़ाहट, कड़कड़ाहट, चकाचौंध, लपलपाना, कड़क, ऊटपटाँग, खर्राटा, चुटकी, झंकार, टंकार, भोंपू किलकारी, खटपट, फुसफसाना।

2.3 सारांश

इस प्रकार हिन्दी भाषा का शब्द भण्डार अत्यन्त समृद्ध है। प्रारम्भ में हिन्दी में संस्कृत के तत्सम शब्दों को आयातित किया गया। तत्सम से निकले या विकसित हुए तद्भव शब्द हिन्दी में सबसे अधिक हैं। विदेशी जातियों के आगमन के बाद सैकड़ों विदेशी भाषाओं के शब्द भी हिन्दी में आ गए हैं। हिन्दी भाषा की यह खूबी है कि इसमें अन्य भाषाओं के शब्दों को पचा कर अपना बना लेने की अद्भुत क्षमता है। किसी भी भाषा के जीवन्त विकास के लिए यह जरूरी है कि वह नवीनतम शब्दों का विकास करे। हिन्दी में आज भी विदेशी भाषाओं के शब्दों को मूल विचारों के साथ ग्रहण करने की परम्परा प्रचलित है। इसी कारण हिन्दी अत्यन्त समृद्ध और जीवन्त भाषा बनी हुई है।

2.4 संदर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी भाषा – डॉ. धीरेन्द्र वर्मा
2. हिन्दी भाषा – डॉ. भोलनाथ तिवारी
3. हिन्दी भाषा – डॉ. हरदेव बाहरी

2.5 बोध प्रश्न एवं उत्तर

1. इनमें से सही उत्तर छाँटिए-
    1. ग्रामीण भाषा के शब्द 'तत्सम' कहलाते हैं।
    2. दो भाषाओं के मेल से बने शब्द 'संकर' शब्द कहलाते हैं।
    3. हिन्दी में सबसे ज्यादा अंग्रेजी भाषा के विदेशी शब्द हैं.
    4. संस्कृत तत्सम से विकसित हुए शब्द 'तद्भव' कहलाते हैं।
    5. ध्वनि के अनुसरण पर बने हुए शब्द 'देशज' कहलाते हैं।
2. इन शब्दों के सही उत्तर को छाँटिए-
    1. कृष्ण – तत्सम / तद्भव

2. खिड़की – देशज / विदेशी
3. रसगुल्ला – गुजराती /बंगाली
4. पिल्ला – फारसी द्रविड़
5. चंदरमा – तत्सम / तद्भव

3. इनमें तद्भव शब्द कौन से हैं?
सर्प, मोर, अँधेरा, उज्ज्वल, अक्षि
4. पोशाख संबंधी पाँच फारसी शब्द बतलाइये-

बोध प्रश्नों के उत्तर :-

1. सही 2, 3, 4
2. 1. तत्सम, 2. देशज, 3. बंगाली, 4. द्रविड़, 5. तद्भव
3. 1. सूरज-तद्भव, बेटा-देश, दाड़िम-मुण्डा, गृह-तत्सम, हड़ताल-गुजराती
4. सर्प, मोर, अँधेरा
5. जुराब, दस्ताना, साफा, कुरता, पायजामा

2.6 अभ्यास हेतु प्रश्न

1. तत्सम और तद्भव शब्दों का अंतर बतलाइए।
2. अनुकरणात्मक और संकर शब्दों को स्पष्ट कीजिये।
3. हिन्दी भाषा के विविध शब्दों स्रोतों को बतलाइये।
4. यूरोपीय भाषाओं के कुछ शब्दों को बदलाइये।
5. अंग्रेजी में हिन्दी में किन-किन क्षेत्रों में शब्द आए हैं?
6. हिन्दी में संस्कृत से व विदेशी भाषा में आए हुए शब्दों की तुलना कीजिए।
7. देशज शब्द किसे कहते हैं? उनके विविध रूपों को बतलाइये।

इकाई - 3 देवनागरी लिपि का मानक स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 लिपि का स्वरूप एवं विकास
3.2.1 लिपि की परिभाषा
3.2.2 लिपि के फायदे
3.2.3 लिपि के गुण
3.3. देवनागरी लिपि का विकास
3.3.1 देवनागरी लिपि की विशेषताएँ
3.3.2 देवनागरी लिपि के दोष एवं त्रुटियाँ
3.3.3 देवनागरी लिपि में सुधार
3.3.4 हिन्दी भाषा का मानकीकरण
3.4 देवनागरी लिपि का मानकीकरण
3.5 सारांश
3.6 संदर्भ ग्रन्थ
3.7 बोध प्रश्न एवं उत्तर
3.8 प्रश्न एवं अभ्यास

3.0 उद्देश्य

हिन्दी भाषा के लिखित और मौखिक रूपों में एकरूपता लाने के लिए देवनागरी लिपि का मानकीकरण किया गया है। इस इकाई में देवनागरी लिपि के मानक स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। इस इकाई को पढ़ कर आप-

- लिपि के स्वरूप के बारे में जान सकेंगे।
- देवनागरी लिपि के विकास को जान सकेंगे।
- देवनागरी लिपि की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- देवनागरी लिपि के दोषों और कमजोरियों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- देवनागरी लिपि के मानक रूप को जान सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

आज के युग में लिखित भाषा का महत्व मौखिक भाषा से अधिक हो गया है। मानव जाति के विकास का एक बहुत बड़ा कारण भाषा के लिखित रूप का विकास है। मुँह से बोली गई भाषा के विचार तो बोलने के साथ ही समाप्त हो जाते हैं लेकिन लिख लिये जाने पर वे विचार शताब्दियों तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं। लिखने का यह कार्य लिपि के विकास से संभव हो सका है। प्रत्येक मनुष्य के मन में यह स्वाभाविक प्रश्न रहता है

कि लिपि का विकास कैसे हुआ? लिपि आखिर है क्या? इस संबंध में समस्त प्रकार की जानकारी देने का प्रयास इस इकाई में किया गया है।

लिपि की परिभाषा एवं लिपि से होने वाले लाभ को स्पष्ट करते हुए लिपि के गुणों को स्पष्ट किया गया है। भारतीय संविधान में हिन्दी को राजभाषा घोषित करते हुए देवनागरी लिपि को उसकी लिपि के रूप में मान्यता दी गई है। देवननागरी लिपि का विकास भारत की प्राचीन ब्राह्मी लिपि से हुआ है। ब्राह्मी लिपि से क्रमशः गुप्तलिपि और कुटिल लिपि का विकास हुआ। नवीं दसवीं शताब्दी तक आते-आते देवनागरी लिपि का विकास हो गया था। विद्वानों में इसके नामकरण को लेकर पर्याप्त मतभेद है। लेकिन इस बात को लेकर सभी विद्वान एकमत है कि देवनागरी लिपि विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि है। इसमें स्वरों और व्यंजनों का स्पष्ट विभाजन है। स्वर भी ह्रस्व और दीर्घ के रूप में तो व्यंजन घोष- अघोष अल्पप्रमाण-महाप्राण और अनुनासिक रूप में स्पष्टत: विभाजित हैं। इस लिपि की सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसमें संसार भर की किसी भी भाषा की ध्वनियों को लिखा जा सकता है। इसके अलावा इस लिपि में जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है और जो बोला जाता है वही लिखा जाता है। इसके बावजूद टाईपिंग, प्रिंटिंग तथा कम्प्यूटर की दृष्टि से इस लिपि में कुछ दोष और त्रुटियां दिखाई देती हैं। इसके सुधार के लिए अनेक प्रयास किए गए हैं। भारत सरकार के मानव संसाधन मत्रांलय की ओर से देवनागरी के मानक स्वरूप को निर्धारित किया गया है। किन्तु जब तक आम नागरिक उनका पालन करने का अभ्यास नहीं कर लेता है तब तक देवनागरी का मानक रूप सबके लिए हितकारी नहीं बन सकता है। अत: विद्यार्थियों को देवनागरी के मानक रूप को समझ कर उसके प्रयोग को शुरू कर देना चाहिए। इस इकाई में देवनागरी लिपि से संबंधित सभी बातों को स्पष्ट करते हुए आपके लिए उसके मानक रूप को भी प्रकट किया गया है।

3.2 लिपि का स्वरूप एवं विकास

लिपि किसे कहते हैं?

आप यह अच्छी तरह से जानते हैं कि अपने विचारों को प्रकट करने के लिए हम भाषा का प्रयोग किया करते हैं। जब हम किसी भाषा में बोल रहे होते हैं तो दरअसल हम अपने मुँह से कुछ ध्वनियाँ निकाल रहे होते हैं। इन सार्थक ध्वनियों से हम शब्द और वाक्य बनाते हुए अपनी बात आसानी से प्रकट कर देते हैं। भाषा के इस रूप को मुख से बोली जाने वाली या 'मौखिक भाषा' कहा जाता है। लेकिन मौखिक भाषा की अनेक सीमाएँ होती हैं। जैसे मौखिक भाषा बोलने के साथ ही समाप्त भी हो जाती है। हम दस मिनट पहले बोली हुई बात को दुबारा नहीं सुन सकते हैं। मौखिक भाषा की दूसरी कमजोरी यह है कि इसमें बोलने वाले की आवाज कुछ दूरी तक के लोग ही सुन सकते हैं। उससे अधिक दूरी होने पर मौखिक भाषा का कोई अस्तित्व ही नहीं रहता है। मौखिक भाषा में न तो काट-छाँट की जा सकती है और न उसमें किसी तरह का सुधार ही किया जा सकता है। मौखिक भाषा अपनी इन्हीं कमजोरियों के कारण अल्पजीवी और सीमित दायरे तक ही प्रयुक्त की जा सकती है।

मौखिक भाषा की सीमाओं के कारण ही लिखित भाषा का विकास सम्भव हो सका। इसके लिए मौखिक भाषा में मुँह से उच्चरित की जाने वाली ध्वनियों को लिखने के लिए उनके प्रतीकात्मक चिह्न बनाए गए। इस तरह जो ध्वनियाँ हम मुँह से निकालते हैं उन्हें अलग-अलग चिह्नों के द्वारा प्रकट करना ही भाषा को लिखित रूप देना है। जैसे मुँह से हम 'अ' ध्वनि बोलते हैं तो उसके लिए बनाया गया निश्चित चित्र देखकर हम उसी ध्वनि को पुन: बोल सकते हैं। ये लिखे हुए चिह्न ही लिपि कहलाते हैं।

3.2.1 लिपि की परिभाषा

हम जिस क्रम से मुँह से ध्वनियाँ निकालते हैं उसी क्रम में उन्हें प्रतीक रूप में स्वीकारे गए चित्रात्मक चिह्नों के द्वारा प्रकट करना ही लिपि कहलाता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि भाषा का मूर्त रूप लिपि है। भाषा मौखिक है और उसका लिखित रूप लिपि है।

डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार- 'भाषा' शब्द 'भाष्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है बोलना। भाषा का आधार ध्वनि है जो मानव सुख से निकलती है। और अर्थवान् हो। भाषा श्रव्य और कर्णगोचर (कानों से सुनी जाने वाली) होती है। लिपि का आधार लिखित संकेत होते हैं। लिपि दृश्य और दृष्टिगोचर होती है। एक ही भाषा को लिखने के लिए कई लिपि चिह्न हो सकते हैं। जैसे हिन्दी भाषा सामान्यत: देवनागरी लिपि में लिखी जाती है किन्तु उसे रोमन या उर्दू लिपि में भी लिखा जा सकता है।

भाषा और लिपि के संबंध को यदि प्रतीक से समझा जाए तो कहा जा सकता है कि यदि भाषा को एक मनुष्य समझा जाए तो लिपि को उस मनुष्य का फोटो कहा जा सकता है। जो अंतर एक मनुष्य और उसके चित्र में होता है वही अंतर भाषा और लिपि में समझा जा सकता है। भाषा असल है तो लिपि उसकी नकल है।

3.2.2 लिपि से फायदे

लिपि मौखिक या उच्चरित भाषा की कमियों को दूर कर देती है। लिपि भाषाको अमरता प्रदान कर देती है। लिपि में लिखा हुआ साहित्य युगों-युगों तक सुरक्षित रहता है। कालिदास और शेक्सपीयर का लिपिबद्ध साहित्य आज भी सुरक्षित होने से पढ़ा जाता है। जबकि खुद कालिदास ने मुँह से बोल कर जो विचार प्रकट किये होंगे वह तो उनके बोलने के साथ ही समाप्त भी हो गये। इसलिए ध्वनि पर आधारित मौखिक भाषा नश्वर होती है जबकि लिखित भाषा अमर हो जाती है। एक बार बोली गई ध्वनि को हम दुबारा नहीं सुन सकते हैं लेकिन लिखित विषय को हम बार-बार देख पढ़ सकते है, उस पर चिन्तन- मनन कर सकते हैं। लिपि देश और काल से परे आने वाली सैकड़ों पीढ़ियों तक एक व्यक्ति के भावों और विचारों को दूसरों तक पहुँचा देती है।

मानव समाज की उन्नति में लिपि का ही सर्वाधिक योगदान रहा है। हमारी वैज्ञानिक, साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक विचारधाराएं लिपि के कारण ही पीढ़ियों से होती हुई हम तक पहुँचती हैं और उसके आधार पर ही मानव जाति ने इतना विकास किया है।

आदिम मनुष्य सिर्फ बोलता था लिखता नहीं था। मानवीय सभ्यता के विकास के साथ लिपि का विकास हुआ जिससे मनुष्यों ने लिखना भी प्रारम्भ कर दिया। शुरूशुरू में ताड़ के पत्तों पर या भोजपत्र पर लिखा जाता था। पत्थरों पर भी खोद-खोद कर शिलालेख लिखे जाते थे। ताम्रपत्र का प्रयोग भी किया जाता था। लेकिन इस तरह से अत्यन्त सीमित मात्रा में ही लिखा जा सकता था। मानवीय सभ्यता के मध्य युग तक आते आते कागज का विकास हुआ तब लिखना बहुत आसान हो गया और अधिक मात्रा में लिखा जाने लगा। आधुनिक युग में प्रेस की स्थापना के बाद तो सैकड़ों-हजारों की संख्या में पत्र- पत्रिकाएँ, पुस्तकें लिखी जाने लगी हैं।

आज प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित करने का प्रयास किया जा रहा है। वह सिर्फ इसलिए कि प्रत्येक व्यक्ति लिख-पढ़ सके। जो ऐसा नहीं कर पाता उसे अनपढ़ कहा जाता है और समाज में उसकी कोई खास प्रतिष्ठा नहीं होती है। आज यह सिद्ध हो चुका है कि जो भाषाएँ लिखी जाती हैं वे ही प्रगति कर पाती हैं और उनका प्रयोग करने वाला समाज उतनी ही अधिक उन्नति कर जाता है।

3.2.3 लिपि के गुण

लिपि की अनेक विशेषताएँ हैं जो इन बिन्दुओं में देखी जा सकती है : -

1. लिपि मानवीय विचारों को दीर्घायु प्रदान करती है। लिपि विचारों को आगे बढ़ाती है। लिखते समय हम व्यवस्थित ढंग से अपने विचार प्रकटकर सकते हैं कारण चिन्तन और विचारों का विकास होता
2. लिपि भाषा सुरक्षा प्रदान करती। पुराने समय की लिखित सामग्री आगामी पीढ़ियों के लिए भी उपयोग हो जाती है। इसी कारण लिपि से सामाजिक विकास को तीव्रता और गति मिलती है।
3. लिपि एक व्यक्ति के भावों-विचारों को सैकड़ों तो क्या करोड़ों लोगों तक पहुँचा देती है। दुनिया के किसी भी कौन में बैठे हुए व्यक्ति तक लिपि की पहुँच लोन से लिपि संसार के मानवों को एक सूत्र में पिरो सकती है।

3.3 देवनागरी लिपि का विकास

हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। यह भारतीय लिपि है जिसका विकास भारत की प्राचीन ब्राह्मी लिपि से हुआ है। भारत की प्राचीन प्रमुख दो लिपियाँ थीं। **1. खरोष्ठी लिपि और 2. ब्राह्मी लिपि।** इनमें से देवनागरी लिपि का विकास प्राचीन 'ब्राह्मी लिपि' से हुआ है। प्रसिद्ध लिपि वैज्ञानिक डॉ राजबाली पाण्डेय के विचारानुसार ब्राह्मी लिपि का आविष्कार 'ब्रह्म या वेद' की रक्षा के लिए हुआ था। कुछ लोग ब्रह्मा से तो कुछ अन्य लोग ब्राह्मण से ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति मानते हैं। ईसा की तीसरी शताब्दी तक ब्राह्मी लिपि का भारत में प्रचार रहा। चौथी शताब्दी के आरम्भ से ही उत्तरी और दक्षिणी ब्राह्मी लिपि में अंतर दिखाई देने लगा। आगे चलकर उत्तरी ब्राह्मी लिपि को 'गुप्त लिपि' कहा गया। गुप्तवंश के राजाओं के समय इसका व्यापक रूप में चलन होने के

कारण ही इसे 'गुप्त लिपि' कहा गया. कुटिल या टेढे अक्षरों के कारण इसका 'कुटिल लिपि' नाम पड़ा। नवीं दसवीं शताब्दी तक आते आते कुटिल लिपि से ही 'देवनागरी लिपि' का विकास हु आ।

देवनागरी लिपि का नामकरण :

इस लिपि का नाम देवनागरी लिपि क्यों पड़ा इसको लेकर विद्वानों में मतभेद है। इस संबंध में कुछ प्रचलित विचार इस प्रकार हैं : -

1. नागर ब्राह्मणों में प्रचलित होने के कारण देवनाग़री कहलाई।
2. 'नगर' की लिपि होने के कारण नागरी लिपि कहलाई।
3. देवनागरी के रूप में मंत्रों के बीच लिखे जाने वाले अक्षरों के कारण देवनागरी नाम पड़ा।

3.3.1 देवनागरी लिपि की विशेषताएँ

संसार में प्रचलित तीन प्रमुख लिपियों रोमन, उर्दू और देवनागरी में देवनागरी लिपि ही अधिक वैज्ञानिक लिपि मानी जाती है। इसकी अनेक विशेषताएँ हैं जिनमें से कुछ इस रूप में देखी जा सकती हैं : -

1. एक ध्वनि एक सांकेतिक चिह्न :- आदर्श लिपि का यह गुण माना जाता है कि एक ध्वनि के लिए एक ही चिह्न हो। देवनागरी लिपि में यह गुण विद्यमान है। अंग्रेजी, उर्दू में ऐसा नहीं है।
2. एक ध्वनि के लिए एक ही वर्ण :- आदर्श लिपि में दूसरी खूबी यह होती है कि उसमें एक ध्वनि के लिए एक ही वर्ण हो। यह केवल देवनागरी लिपि में ही मिलता है।
3. देवनागरी का प्रत्येक अक्षर उच्चरित होता है। अंग्रेजी में कई शब्दों में अक्षर मूक है जैसे Half में 1, knife में k बोला नहीं जाता है। देवनागरी में ऐसा नहीं है।
4. देवनागरी में व्यंजनों का संयोग जैसे-ज्य, प्र, त्य, न्न, त्त आदि को अंकित करने की सुचारु और स्पष्ट पद्धति है इसके कारण लिखते समय देवनागरी के शब्द कम जगह घेरते हैं।
5. देवनागरी वर्णमाला का क्रम वैज्ञानिक है। स्वर पहले बाद में व्यंजन है। स्वरों में भी पहले ह्रस्व है फिर दीर्घ स्वर है। इसी तरह व्यंजन भी मुँह से हवा बाहर निकलने के क्रम से क्रमश: कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य और ओष्ठ्य इस क्रम से वैज्ञानिक ढंग से संयोजित हैं। प्रत्येक वर्ग के व्यंजनों में अघोष-सघोष तथा अल्पप्राण-महाप्राण एवं नासिक्य वर्ण का स्थान और उच्चारण स्थिर है।
6. देवनागरी वर्णों के नाम उच्चारण के अनुरूप हैं। तुलना कीजिए कि उर्दू क च ल को काफ, चे और लाम कहते हैं, अंग्रेजी में G H I J सब के नाम निराले ढंग से रखे गये हैं।

7. देवनागरी जिन भाषाओं के लिए व्यवहृत होती है, उनकी सभी ध्वनियों को अंकित करने में समर्थ है। अब तो इसका विस्तार करके भारत भर की भाषाओं की ध्वनियों के उपयुक्त बनाया जा रहा है। इसमें नये चिह्न जोड़े गये हैं।
8. इस लिपि के लेखन और मुद्रण के अक्षर एक रूप है।
9. कलाविद् बताते हैं कि सीधी रेखा की अपेक्षा वक्ररेखा अधिक सुन्दर होती है। 'वक्र' से ही 'बाँका' शब्द बना है। देवनागरी का प्रत्येक अक्षर वक्र है, इसलिए बाँका है, सुन्दर है। यह लिखावट सुगठित भी है।
10. देवनागरी लिपि स्वदेशी लिपि है। उर्दू रोमन लिपि विदेशी हैं।
11. देवनागरी लिपि का प्रयोग बहुत व्यापक है। संस्कृत नेपाली, हिन्दी, मराठी की तो यह एकमात्र लिपि है, परन्तु पंजाबी और गुजराती के लिए भी इसका प्रयोग होता रहा है।
12. यह लिपि भारत की अनेक लिपियों के निकट है, इसीलिए सबको सुलभ है। इसी से यदि भारत की भाषाओं की एक लिपि हो तो वह देवनागरी ही हो सकती है।

3.3.2 देवनागरी लिपि के दोष एवं त्रुटियाँ

यद्यपि देवनागरी लिपि संसार की अन्य लिपियों की अपेक्षा अधिक पूर्ण, स्पष्ट तथा वैज्ञानिक है, फिर भी अभी तक इस में कई त्रुटियाँ दिखलाई पड़ती हैं। वे सभी इस लिपि के दोष कहलाये जाते हैं। उनमें से कुछ प्रमुख दोष इस प्रकार हैं : -

1. **अक्षरात्मक लिपि :-** रोमन लिपि के समर्थकों के अनुसार देवनागरी अक्षरात्मक लिपि होने से इसके प्रत्येक सांकेतिक चिह्न में स्वर और व्यंजन मिले हुए रहते हैं। अतएव संयुक्त व्यंजनों को लिखने के लिए कभी-कभी व्यंजनों का आधा रूप लिखना पड़ता है, जैसे कि विद्या, खाद्य, संयुक्त, धर्म आदि शब्दों के लिखने में व्यंजन का रूप बदल जाता है। इन शब्दों में न तो 'द' अपने मूल रूप में है और न 'क्त' एवं 'र्' ही। डॉ. चटर्जी के अनुसार वैज्ञानिक लिपि की दो विशेषताएँ हैं-उसमें शुद्ध लिखा जाए और उसमें ध्वनि-विश्लेषण सरलता से हो सके। देवनागरी में शुद्ध तो लिखा जाता है किन्तु यह अर्द्ध- अक्षरात्मक है, इसलिए ध्वनि-विश्लेषण सरलता से नहीं हो सकता। जैसे- देवनागरी में ' धर्म' में दो अधर ' ध' और 'र्म' हैं। इनमें न तो स्वर वर्ण स्पष्ट है, न धातु और प्रत्यय। इसके विपरीत रोमन लिपि में "DHARMA" दो स्वर भी स्पष्ट हैं और साथ ही धातु 'घर्' और प्रत्यय 'म' भी।
2. **लम्बी वर्णमाला : -** देवनागरी के अक्षरों की संख्या अधिक हैं। स्वरों की मात्राओं, आधे अक्षरों, द्वित्व अक्षरों तथा विभिन्न अक्षरों के नीचे अथवा ऊपर लगाने वाले चिह्नों की संख्या इससे पृथक है। इतनी बड़ी वर्णमाला को स्मरण रखना, समझना और ठीक-ठीक प्रयोग करना छात्र के लिए तथा मुद्रण टंकण के लिए असुविधाजनक है।

3. **अवैज्ञानिक संयुक्त ध्वनि-चिह्न :-** वैज्ञानिक लिपि में एक ध्वनि के लिए एक ही ध्वनि-चिह्न होना चाहिए। देवनागरी लिपि में श्र, क्ष, त्र, ज्ञ आदि ऐसे ध्वनि चिह्न हैं, जिन में दो ध्वनियों का संयोग है।
4. **लेखन और उच्चारण में भेद :-** देवनागरी की कुछ ध्वनि में लेखन-उच्चारण में अन्तर आता है। जैसे-कि शब्द को लें इसमें 'इ' का उच्चारण 'क' के बाद होता है लेकिन 'इ' की मात्रा 'क' के पहले लगायी जाती है। यही स्थिति 'र' के संयुक्त अक्षर की है। जैसे- 'धर्म'। इसमें 'र' का उच्चारण 'म' के पहले होता है, लेकिन 'र' का ध्वनि चिह्न 'म' के ऊपर लगाया जाता है। कहीं-कहीं उच्चारण जिस ध्वनि का आधार हो उसे पूर्ण रूप में लिखा जाता और उच्चारण पूर्ण हो उसका अर्द्ध-ध्वनि चिह्न। जैसे 'द्वंद्व' - इसमें 'द्' का उच्चारण आधा और 'व' का उच्चारण पूरा हो जाता है, जबकि ठीक इसके विपरीत लिखा जाता है। (इस दोष के निराकरण के लिए खड़ी पाई रहित व्यंजनों के साथ हलंत् लगाकर संयुक्त अक्षर लिखा जाने लगा है। (जैसे-द्वंद्व) इस संदर्भ में 'ऋ' ध्वनि पर भी विचार किया जाता है। तत्सम शब्दों में इसे लिखा 'स्वर' के रूप में जाता है लेकिन उच्चारण व्यंजन 'रि' के रूप में होता है।
5. **अनावश्यक ध्वनि-चिह्न :-** हिन्दी में कुछ ध्वनियों का उच्चारण ही नहीं होता, फिर भी उसके लिए ध्वनि चिह्न वर्णमाला में है। जैसे ङ, त्र, ष, ज्ञ आदि। कुल ध्वनि के लिए दो-दो ध्वनि चिह्न हैं। जैसे- अ- अ, ण-णा, झ-झ, ल-ल, श- श आदि। अर्द्ध 'र' के लिए (क्रम), (कर्म), (गृह), तीन चिह्न हैं।
6. **ध्वनि-चिह्नहीन ध्वनियाँ :-** देवनागरी में जहाँ कुछ ध्वनियों के लिए दो-दो ध्वनि-चिह्न हैं, तो दूसरी ओर 'म्ह' 'न्ह' अब हिन्दी में संयुक्त व्यंजन न होकर मूल महाप्राण व्यंजन है, परन्तु उनके लिए कोई स्वतंत्र ध्वन्नि-चिह्न नहीं है।
7. **अस्पष्टता : -** देवनागरी के कुछ ध्वनि-चिह्नों की आकृतियाँ ऐसी हैं, जिससे भ्रम हो सकता है। जैसे- घ-ध, म-भ, शिरोरेखा के न होने पर इनमें भेद करना मुश्किल हो जाता है। ठीक यह बात 'ख' और 'र' 'व' की है। शिरोरेखा के न होते 'खाना' एवं 'रवाना' में अंतर करना दुष्कर हो जाता।
8. **शीघ्र-लेखन की दृष्टि से असुविधाजनक :-** देवनागरी लिपि के हर ध्वनि चिह्न उसकी मात्राओं तथा शिरोरेखाओं को लिखने के लिए बराबर हाथ उठाना पड़ता है, जिसके चलते लिखने में श्रम अधिक पड़ता है और गति भी मन्द रहती है। इसकी तुलना में रोमन लिपि अधिक सुविधाजनक है। रोमन वर्णो के परस्पर मिलने से जो शब्द बनता है उसे बिना हाथ उठाए लिखा जा सकता है। इससे लेखन की गति में तीव्रता आती है और हाथ को श्रम भी कम पड़ता है।

3.3.3 देवनागरी लिपि में सुधार

मुद्रण एवं लेखन की दृष्टि से देवनागरी लिपि में जो दोष हैं उनकी ओर कई विद्वानों का ध्यान गया है। इसके दोषों के निराकरण के अनेक प्रयास किए गए हैं। इस हेतु बनाई गई कई समितियों के प्रयास इस प्रकार हैं : -

1. सर्वप्रथम 1935 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में काका कालेतकर के संयोजकत्व में देवनागरी लिपि में सुधार के प्रयास किये गए।
2. 1945 काशी नगरी प्रचारिणी सभा के द्वारा सुधार के सुझाव दिये गये।
3. 1947 या उत्तर प्रदेश सरकार के द्वारा आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में समिति का गठन किया गया। इस समिति ने भी अनेक सुधार किये।
4. शिक्षा मंत्रालय ने इस दिशा में कई स्तरों पर प्रयास किया है। सन् 1966 में 'मानक देवनागरी वर्णमाला' प्रकाशित को गई। इसके अनुसार देवनागरी के जो वर्ण एक से अधिक रूपों में लिखे जाते थे, उनके स्थान पर प्रत्येक वर्ण का एक ही मानक रूप निर्धारित किया गया। लिपि की समस्या वर्तनी से और वर्तनी की भाषा के मानकीकरण की समस्या से जुड़ी हुई है।
5. शिक्षा मंत्रालय ने कई भाषाविदों के सहयोग से वर्तनी की विभिन्न समस्याओं पर विचार करने के बाद 1967 में हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण नामक पुस्तिका प्रकाशित की। बाद में इनके सुझावों पर विस्तृत चर्चा होती रही जिसमें भाषाविदों, लेखकों, पत्रकारों और हिन्दी सेवा संस्थाओं ने भाग लिया।

3.3.4 हिन्दी भाषा का मानकीकरण

मानकीकरण से क्या अभिप्राय है? :

किसी भी भाषा का प्रयोग लाखों-करोड़ों व्यक्ति करते हैं। उसका क्षेत्र भी अत्यन्त विस्तृत होता है। फलत: उस भाषा में अलग-अलग क्षेत्रों की बोलियों के प्रभाव से ध्वनि रूपों, वर्तनी आदि में अनेक रूप विकसित हो जाते हैं। इसी कारण उसके प्रयोग को लेकर अनेक रूपताएँ दिखाई देने लगती हैं। इनसे उसके प्रयोग को लेकर अनेक प्रकार की कठिनाईयाँ आने लगती हैं। भाषा की इतनी विविधता के कारण विद्वानों के द्वारा किसी एक रूप को मानक या पैमाने के रूप में मान्यता दी जाती है। भाषा के इसी रूप को मानक भाषा कहा जाता है। डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार-शिक्षित वर्ग के द्वारा भाषा का जो एक सामान्यीकृत आदर्श होता है उसे भाषा का मानक रूप कहते हैं। जिसका स्वरूप शिक्षा संचार माध्यमों और सरकारी कामकाज में प्रतिष्ठित होता है। मानक भाषा को व्यापक रूप से सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है।

हिन्दी का विकास मूलत: मेरठ के आसपास बोली जाने वाली कौरवी बोली से हुआ। आज इसकी छह उप भाषाएँ और सत्तरह बोलियाँ हैं। यह विश्व की तीसरी सबसे बड़ी भाषा है। इसी कारण इसमें उच्चारण और लेखन को लेकर अनेक प्रकार की विविधताएँ विद्यमान हैं। उन्हें दूर करने के लिए ही इसके मानकीकरण का प्रयास किया गया।

3.4 देवनागरी लिपि का मानकीकरण

1973 में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की ओर से 'देवनागरी' लिपि तथा हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण का प्रकाशन हुआ। इसके सुझावों का संक्षेप इस प्रकार हैं

1. देवनागरी वर्णमाला तथा अंकों का स्वरूप

(इनमें अ, ख, छ, झ, ण, ध, भ और श का रूप ध्यान में रहे।)

स्वर-अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ए ओ औ

मात्राएँ- ा,ि,ी,ु,ू,ृ,े,ै,ो,ौ

अनुस्वार- (अं), अनुनासिक, विसर्ग : (अः)

व्यंजन- क ख ग घ ङ   च छ ज झ ञ

ट त ड ढ ण   त थ द ध न

प फ ब भ म   य र ल व

श ष स ह

परम्परागत संयुक्त व्यंजन- क्ष त्र ज्ञ श्र

हलू चिहन- (्), गृहीत वर्ण - ऑ, ख़, ज़, फ़

देवनागरी अंक - १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ ०

अन्तर्राष्ट्रीय अंक - 1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

(संविधान के अनुसार संघ के राजकार्य के लिए अन्तर्राष्ट्रीय अंकों का प्रयोग होगा, परन्तु राष्ट्रपति संघ के किसी भी राजकीय प्रयोजन के लिए भारतीय अंकों के देवनागरी रूप के प्रयोग को भी प्राधिकृत कर सकते हैं।)

2. संयुक्त वर्ण

(क) खड़ी पाई वाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटा कर ही बनाया जाना चाहिए। जैसे-

ख् + य - ख्य (व्याख्या)   ग् + ध - ग्ध (मूग्ध)

घ् + - घ्न (कृतघ्न)   च् + छ - च्छ (अच्छा)

ज् + य - ज्य (राज्य)   ण् + य - ण्य (पुण्य)

त् + य - त्य (सत्य)

(नोट - त् + र - त्र दोनों रूप मान्य है।)

थ + य - थ्य (तथ्य)   ध् + व - ध्व (ध्वनि)

न् + द - न्द (कन्द)   प् + त - प्त (प्राप्त)

ब् + ध - ब्ध (प्रारब्ध)   भ् + य - भ्य (सभ्यता)

म् + य - म्य (रम्य)   य् + य - य्य (शय्या)

ल् + ल - ल्ल (उल्लेख)   व् + य - व्य (व्यक्ति)

श् + ल - श्ल (श्लोक)   ष् + ट - ष्ट (कष्ट)

स् + व - स्व (स्वयं)   क्ष् + म - क्ष्म (यक्ष्मा)

त्र + य - त्र्य (त्र्यंबक)।

(नोट- श् का र के साथ संयोग श्र होगा; जैसे-श्री, श्रुति, श्रम।)

(ख) क् और फ् के अंत का अंकुड़ा हटा दें; जैसे-

क् + ख - क्य (मक्खन) फ् + त - फ्त् (दफ्तर)।

(ग) र् पहला व्यंजन हो तो उसके लिए रेफ ही होना चाहिए; जैसे-धर्म, आर्य, कर्ता।

(रेफ अगले व्यंजन के ऊपर होगा, और यदि उस व्यंजन के बाद कोई मात्रा होगी तो उस मात्रा के ऊपर डाला जायेगा; जैसे- धर्म, वार्ता, विद्यार्थी।

(घ) र दूसरा अर्थात् पूरा व्यंजन होगा तो पाई के साथ होगा; जैसे- प्रकार, क्रम, ग्राम, स्त्रोत; और पाई न हो तो छ्, ट्, ड्, द्र, ह्र - ये दो रूप होंगे, जैसे-कृच्छ, ट्राम, ड्रामा, ब्रह्म।

(ङ) ट्, ड्, द्, ढ को हलन्त चिह्न के साथ लिखा जाये; जैसे-पट्टी, टिड्डम, विद्या, ब्रह्म।

नोट- ठ और संयोग में पहले व्यंजन नहीं होते। (2) ट् ड् द् ह् वाले संयोग में यदि इ की मात्रा हो, वो वह दूसरे व्यंजन से पहले आएगी; जैसे-कुट्टीम, बुद्धिमान, चिह्नित।

3. (कबि) अनुस्वार (ंदी दोनों का प्रयोग होना (चंद्रबिन्दु) और अनुनासिक चिह्न (चाहिए। जहाँ पंचमाक्षर (ङ, ञ्, ण्, न्, म्) के संयुक्त व्यंजन में आता हों, वहाँ एकरूपता और मुद्रण-लेखन की सुविधा के लिए अनुस्वार का ही प्रयोग होना चाहिए; जैसे-गंगा, चंचल, ठंडा, संध्या, संपादक। परन्तु जहाँ पंचमाक्षर का संयोग अपने वर्ग के पहले चार व्यंजनों से भिन्न व्यंजन के साथ हो रहा हो, तो वहाँ पंचमाक्षर ही होगा, अनुस्वार नहीं; जैसे-वाङ्मय, अन्य, अन्त, उन्मत्त।

(ख) चन्द्रबिन्दु के बिना अर्थ में भ्रम की गुंजाइश रहती है। जैसे- अनुस्वार व्यंजन का गुण है, वैसे अनुनासिक स्वर का गुण है, अतएव चन्द्रबिन्दु का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। जैसे- हँसना, मुँह, लाँघना, मूँदना सँवारना। जहाँ शिरोरेखा के ऊपर मात्रा आती हो वहाँ अनुस्वार लगाना चाहिए क्योंकि मात्रा के साथ चन्द्रबिन्दु लगाने में छपाई में कठिनाई होती है जैसे-नहीं का (नहीं), में का (मैं), जोंक का (जोंक) ठीक नहीं लगता है।

4. विदेशी ध्वनियाँ :

विदेशी शब्दों का लिप्यंतरण इतना क्लिष्ट नहीं होना चाहिए कि उसके लिए वर्तमान देवनागरी वर्णमाला में अनेक नये संकेत-चिह्न जोड़ने पड़े। परन्तु लिप्यंतरण मानक अंग्रेजी या अरबी- फारसी उच्चारण के अधिक से अधिक निकट होना चाहिए।

(क) डॉक्टर, फॉर्म, पॉकेट आदि में ऑ के ऊपर अर्धचन्द्र लगाना चाहिए।

(ख) अंग्रेजी और फारसी दोनों भाषाओं से हिन्दी ने बहु त से शब्द लिये हैं। जिस तरह हम चाहते हैं कि संस्कृत के शब्दों के ध्वनि संकेत तत्सम रूप में रहें, उसी तरह ज फ इन दोनों विदेशी भाषाओं में उच्चरित होते हैं। इनका प्रयोग करना

चाहिए, जैसे-फेल, फारसी, फजल, जोर, जीरो, फौरन, फोटो। क, ग का उच्चारण हिन्दी में क, न हो गया है, इसलिए इनके नीचे नुक्ता (.) लगाने की आवश्यकता नहीं है। ख हिन्दी में लगभग ख हो गया है, परन्तु जो शुद्धता का ख्याल रखना चाहें वे ख का प्रयोग चला सकते हैं।

5. भारत की अन्य भाषाओं की ध्वनियाँ

हिन्दी सार्वदेशिक भाषा तभी हो सकती है, जब उसमें अन्य भारतीय भाषाओं की विशिष्ट ध्वनियों को भी स्थान दिया जाये। इन भाषाओं का सही-सही लिप्यंतरण करने के लिए निम्नलिखित चिह्न देवनागरी में जोड़े गए हैं-

कश्मीरी- अ॑, ऑ उ, ऊ, छ, ज

सिंधी- ग, जं, ड, ब

बँगला- असमिया-य

दक्षिण- भारतीय र, ल, प, न

उर्दू- अ (जैसे आबदत आदत में)

6. विराम चिन्ह

अंग्रेजी का फुलस्टाप (.) ग्रहण नहीं किया जायेगा। खड़ी पाई ही पूर्ण विराम का चिह्न है। (परन्तु आजकल पत्र-पत्रिकाओं में (.) का प्रयोग हो रहा है, इससे स्थान की बचत होती है।

ऐ औ (मात्राएँ) दो-दो ध्वनियों के संकेत है। यही प्रचलित रहें। संशोधन की कोई आवश्यकता नहीं है। ऐ के बाद य हो तो अई, औ के बाद व हो तो अऊ स्वत: बोलने में नियमबद्धता आ जाती है जैसे-मैया, भैया, कौवा, हौवा।

7. संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है, उन तत्सम शब्दों में विसर्ग अवश्य रहना चाहिए जैसे दुःख। तद्भव शब्द में आवश्यकता नहीं है, जैसे-दुखिया।

8. संस्कृतमूलक तत्सम शब्दों में जहाँ हलू चिह्न होता है, वहाँ रहना ही चाहिए, परन्तु जहाँ व्यवहार में सामान्यत: उसे लुप्त कर दिया गया है, वहाँ उसका पुनराद्धार करने की आवश्यकता नहीं है, जैसे जगत् महान् भगवान् विद्वान् में।

9. हाइफन या योजक-चिह्न का प्रयोग स्पष्टता के लिए किया जाता है।

(क) द्वंद्व समास में पदों के बीच में योजक-चिह्न रखा जाए, जैसे- माँ-बाप, रात-दिन, देख- रेख, राम-लक्ष्मण, चाल-चलन, खेल-कूद, चलना-फिरना, पढ़ना-लिखना, लेन-देन।

(ख) बहुब्रीहि समास में हाइफन बिल्कुल नहीं लगाना चाहिए जैसे-घनश्याम, नंददुलारे, लंबकर्ण शूर्पनखा, सिरफिरा, बारहसिंगा, पतझड़, इकतारा।

(ग) सामान्यत: तत्पुरुष समास में हाइफन लगाने की आवश्यकता नहीं है, जैसे-रामराज्य, राजकुमार, गंगाजल, ग्रामवासी, आत्महत्या। यदि संयोग में भ्रम की संभावना हो या समास के पद बड़े-बड़े हों, तो योजक चिन्ह लगाना चाहिए,

जैसे-ब्राहमण-कन्या, भू-तत्व। हाइफन के बिना भूतत्व (भूत होने का भाव) भ्रम उत्पन्न करता है। इसी प्रकार अनति (थोड़ा) और अ-नति (नम्रता का अभाव), अनख (क्रोध) और अ-नख (बिना नख का)।

(घ) कठिन संधि से बचने के लिए भी हाइफन का प्रयोग किया जाता है, जैसे-द्वि-अर्थक, स्त्री- उपयोगी ।

3.5 सारांश

पिछले एक सौ वर्षों से हिन्दी भाषा के मानकीकरण की प्रक्रिया चल रही है। परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से इसकी गति तेज हुई है और भाषा का बहुत सारा स्वरूप मानक हो गया है। फिर भी कई मुद्दों में द्विरूपता शेष है। इसके निवारण के लिए भी कुछ नियम निर्धारित कर लिये गए हैं। कुछ मुद्दे ऐसे हैं जिनके बारे में विद्वानों में मतभेद हैं। संसार की बड़ी-बड़ी भाषाओं में भी प्रयोग की नितान्त एकरूपता नहीं है। आचार्यो और वैयारणों में मतभेद बने ही रहते हैं। इसके अलावा भाषा जब आगे बढ़ती है तो उसके सामने नयी नयी समस्याएँ आती रहती हैं। यह सिलसिला कभी खत्म नहीं होता। हिन्दी में मानकीकरण के व्यावहारिक पक्ष में रेडियो, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाओं और विद्यालयों के सहयोग की आवश्यकता है। नियम तो हैं परन्तु ये अभिकरण इन नियमों से अच्छी तरह परिचित नहीं है।

3.6 संदर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी भाषा का इतिहास - डॉ. धीरेन्द्र वर्मा
2. हिन्दी भाषा - डॉ. भोलानाथ तिवारी
3. हिन्दी व्याकरण - कामता प्रसाद गुरु।
4. हिन्दी शब्दानुशान - किशोरीदास वाजपेयी
5. हिन्दी भाषा - डॉ. हरदेव बाहरी

3.7 बोध प्रश्न एवं उत्तर

1. सही उत्तर छाँटिए-
    1. लिपि मौखिक भाषा के दोषों को दूर कर देती है।
    2. देवनागरी लिपि का विकास खरोष्ठी लिपि से हुआ है।
    3. देवनागरी लिपि में वर्णमाला का क्रम वैज्ञानिक है।
    4. देवनागरी अक्षरात्मक लिपि है।
    5. देवनागरी लिपि टाईप के लिए अत्यन्त सुगम लिपि है।
2. इनमें से लिपि के गुणों को छाँटिए-
    1. लिपि भाषा को सुरक्षा प्रदान करती है।
    2. देवनागरी लिपि में शब्दों का प्रत्येक अक्षर बोला जाता है।
    3. देवनागरी की वर्णमाला बहुत लम्बी है।

4. देवनागरी लिपि में कई वर्ण दो तरह से लिखे जाते हैं।
5. देवनागरी लिपि शीघ्र लेखन की दृष्टि से असुविधाजनक लिपि है।

3. देवनागरी लिपि के मानकीकरण संबंधी सही रूप को छाँटिए-
   1. इन विदेशी ध्वनियों को स्वीकार किया गया- ऑ, ख, ज, फ़
   2. संविधान में भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप को स्वीकार किया गया है।
   3. खड़ी पाई वाले व्यंजनों का संयुक्त रूप पाई को हटा कर किया जाता है।
   4. चन्द्रबिन्दु और अनुस्वार में कोई अन्तर नहीं है।
   5. अंग्रेजी के कुल स्टॉप (.) को हिन्दी में खड़ी पाई की जगह स्वीकार किया गया है।
4. इन ध्वनियों के मानक रूप को बतलाइये :-
   1. अ, झ, जोंक, डाँक्टर, दु:खिया
5. इन समासों के शुद्ध रूप को कैसे लिखा जाता है?
   राम-राज्य, चलना-फिरना, ग्राम-वासी, गंगा-जल, दहीबड़ा।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सही - 1, 3, 4
2. 1. गुण, 2. गुण, 3. दोष, 4. दोष, 5. दोष
3. सही- 1, सही-2, सही-3, गलत-4, गलत-5
4. अ, झ, जोंक, डॉक्टर, दुखिया
5. शुद्ध रूप- रामराज्य, चलना-फिरना, ग्रामवासी, गंगाजल, दही-बड़ा।

3.8 अभ्यास प्रश्न

1. भाषा में शब्दों के महत्व को समझाइये।
2. हिन्दी भाषा के विविध स्त्रोतों को स्पष्ट कीजिये।
3. तत्सम और तद्भव शब्दों के अंतर को स्पष्ट कीजिए।
4. हिन्दी भाषा में किन-किन विदेशी भाषाओं के शब्द हैं? बतलाइये।
5. लिपि किसे कहते हैं? यह बतलाते हुए स्पष्ट कीजिये कि हिन्दी भाषा किस लिपि में लिखी जाती है।
6. देवनागरी लिपि के विकास को बतलाइये।
7. देवनागरी का नामकरण किस आधार पर हुआ है?
8. देवनागरी लिपि की विशेषताओं को बतलाइये?
9. देवनागरी लिपि के दोषों को बताइए।
10. देवनागरी लिपि के मानक स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

इकाई - 4 हिन्दी भाषा की संवैधानिक स्थिति (राजभाषा हिन्दी)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 राजभाषा का स्वरूप

4.2.1 हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता

4.3. संविधान में राजभाषा संबंधी प्रावधान

4.3.1 अनुच्छेद 343

4.3.2 अनुच्छेद 344

4.3.3 अनुच्छेद 345

4.3.4 अनुच्छेद 346

4.3.5 अनुच्छेद 347

4.3.6 अनुच्छेद 348

4.3.7 अनुच्छेद 349

4.3.8 अनुच्छेद 350

4.4 राजभाषा नीति का कार्यान्वयन

4.5 राजभाषा के प्रयोग की प्रगति का इतिहास

4.5.1 राष्ट्रपति का पहला आदेश 1952

4.5.2 राष्ट्रपति का दूसरा आदेश 1955

4.5.3 राष्ट्रपति का तीसरा आदेश 1960

4.6 राजभाषा आयोग

4.7 संसदीय राजभाषा समिति

4.8 राजभाषा अधिनियम

4.9 राजभाषा संकल्प 1968

4.10 राजभाषा नियम 1976

4.11 राजभाषा समितियों

4.12 राजभाषा हेतु प्रेरणा तथा प्रोत्साहन

4.13 राजभाषा में पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तकें, वृत्तचित्र

4.14 सारांश

4.15 संदर्भ ग्रन्थ

4.16 बोध प्रश्न एवं उत्तर

4.17 अभ्यास प्रश्न

4.0 उद्देश्य

अब तक आप हिन्दी भाषा के स्वरूप एवं विकास की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। इस इकाई में अब आप हिन्दी भाषा की संवैधानिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। संविधान में हिन्दी भाषा को राजभाषा की मान्यता दी गई है। इस इकाई में राजभाषा संबंधी संविधान में दिए गए सभी प्रकार के प्रावधानों की जानकारी दी गई है। इस इकाई को पढ़ कर आप-

- राजभाषा के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- संविधान में हिन्दी की क्या स्थिति है, उसे समझ सकेंगे।
- संविधान के किस-किस अनुच्छेद में राजभाषा के प्रावधान है जान सकेंगे।
- राजभाषा हिन्दी के प्रयोग के इतिहास की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- राजभाषा संबंधी राष्ट्रपति के आदेशों, संसदीय समितियों की रिपोर्टों, राजभाषा अधिनियमों को जान सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

देश की आजादी की लड़ाई में हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रोत्साहित किया जा रहा था। लेकिन संविधान निर्माताओं ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता न देकर राजभाषा के रूप में मान्यता प्रदान की।

राष्ट्रभाषा और राजभाषा में पर्याप्त अंतर है। राष्ट्र भाषा सारे नागरिकों की भाषा होती है जबकि राजभाषा सिर्फ राजकाज में प्रयुक्त की जाती है। राजभाषा संसद में, विधान सभाओं में, न्यायालयों में तथा सरकारी, अर्द्ध-सरकारी कार्यालयों में प्रयुक्त्त होती है। इसमें पारिभाषिक शब्दों की भरमार होती है। इसमें पर्यायवाची शब्द नहीं होते हैं। इसमें साहित्य की रचना नहीं की जा सकती है। राजभाषा दरअसल सरकारी पत्राचार और दफ्तरों में दैनिक कामकाज में ही प्रयुक्त की जाती है। इस कारण इसका स्वरूप राष्ट्रभाषा से भिन्न होता है।

संविधान में राजभाषा संबंधी प्रावधान अनुच्छेद 343 से 350 तक किये गए हैं। इनमें देश की राजभाषा हिन्दी होगी और वह देवनागरी लिपि में लिखी जायेगी। इसका प्रावधान करने के उपरान्त उसके विकास के विविध आयामों को बतलाया गया है। देश की आजादी से पहले अंग्रेजी राजभाषा थी। यह समस्त भारत में राजकाज के लिए प्रयुक्त्त की जा रही थी। आजादी के बाद हिन्दी को राजभाषा तो बना दिया गया लेकिन उसमें तब तक वह शब्दावली विकसित नहीं हो पाई थी जिससे अंग्रेजी की जगह हिन्दी का प्रयोग तत्काल शुरू किया जा सके। अत: संविधान में राजभाषा संबंधी यह प्रावधान किया गया कि संविधान लागू होने के 15 वर्ष तक अंग्रेजी ही राजभाषा रहेगी। इस अवधि में हिन्दी को इतना विकसित कर लिया जाएगा कि वह अंग्रेजी के स्थान पर सच्चे अर्थों में देश की राजभाषा बन सके। तब तक हिन्दी के विकास के लिए संसदीय समितियों का गठन किया गया। उनके सुझावों के आधार पर हिन्दी भाषा का इस रूप में विकास करने की

योजना बनाई गई कि वह देश के सांस्कृतिक स्वरूप के अनुरूप विकास करते हुए राजभाषा बन सके। इस संबंध में राष्ट्रपति जी ने क्रमश: 1952, 1955 एवं 1960 में विविध क्षेत्रों में आयोग बनाए गए। सरकारी कर्मचारियों के लिए राजभाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विविध योजनाएँ बनाकर कई तरह की परीक्षाओं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। प्रत्येक नगर में राजभाषा विकास समितियाँ बनाकर उसके अनुसार कार्य किया गया। कर्मचारियों के लिए कई तरह की प्रोत्साहन योजनाएँ भी बनाई गईं। अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन शुरू हुआ, विविध प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित की गई, वृत्तचित्र बनाए गए।

इतना होने पर भी 1965 तक हिन्दी का पूरी तरह से राजभाषा के रूप में विकास नहीं किया जा सका। तब पहले 1963 में तथा फिर 1976 में संविधान के राजभाषा अधिनियम को संशोधित किया गया। आज अंग्रेजी को अनिश्चित काल तक के लिए पूर्ववर्ती स्वरूप में अपनाया जा रहा है।

राजभाषा हिन्दी से संबंधित ये समस्त जानकारियाँ प्रत्येक हिन्दी भाषी व्यक्ति के लिए प्राप्त करना अनिवार्य है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए राजभाषा की संवैधानिक स्थिति की संक्षिप्त जानकारी इस इकाई में दी गई है। इसका अध्ययन करके आप संविधान में हिन्दी की दशा तथा उसके स्वरूप विकास की योजनाओं की जानकारी प्राप्त करते हुए उसकी वर्तमान अवस्था की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

4.2 राजभाषा का स्वरूप

राजभाषा सरकार द्वारा प्राधिकृत भाषा है, जिसे संविधान द्वारा सरकारी काम-काज, प्रशासन, संसद और विधान मण्डलों तथा न्यायिक कार्यकलाप के द्वारा स्वीकृत किया गया है। राजभाषा शब्द का प्रयोग अधिक पुराना नहीं है। इस शब्द का प्रयोग भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही शुरू हुआ। भारतीय संविधान निर्मात्री सभा में राष्ट्रभाषा (नेशनल लैंग्वेज) से पृथक स्टेट लैंग्वेज या राजभाषा शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग राजगोपालाचारी ने किया। इस शब्द का प्रयोग इस उद्देश्य से किया गया कि राष्ट्रभाषा से सरकारी काम-काज की भाषा के स्वरूप को अलग से स्पष्ट करते हुए उसे परिभाषित किया जा सके। सरकारी काम-काज में प्रयुक्त होने के कारण इसका शाब्दिक अर्थ हुआ राजा (शासक) या राज्य (सरकार) द्वारा प्राधिकृत भाषा।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पहले पूरे भारत को एक सूत्र में बाँध कर रखने वाली भाषा की तलाश होती रही थी। इस सम्बन्ध में हिन्दी का पक्ष सबसे प्रबल था। मुगलकाल में राजभाषा फारसी होते हुए भी हिन्दी से उसका संघर्ष कभी नहीं हुआ और सही बात यह है कि अपने उदयकाल से लेकर आज तक हिन्दी को इतने विवादों का विषय कभी नहीं बनाया गया, जो आज विरोधी शक्तियों द्वारा बनाया जा रहा है। ग्यारहवीं शती से लेकर आज तक हिन्दी ने राष्ट्रभाषा के रूप में ही कार्य किया है, चाहे उसे इसके लिये औपचारिक स्वीकृति न मिली हो।

4.2.1 हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता

राजकाज चलाने के लिए किसी न किसी भाषा की आवश्यकता पड़ती है। भारत में अपने-अपने समय पर संस्कृत, पाली, प्राकृत अथवा अपभ्रंश राजभाषा रही हैं। स्वतन्त्रता के बाद राजसत्ता जनता के हाथ में आई। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में यह आवश्यक हो गया कि देश का राज-काज, लोकभाषा में हो, अत: राजभाषा के रूप में हिन्दी को एकमत से स्वीकार किया गया।

इसी आधार पर 14 सितम्बर, 1949 ई. को संविधान निर्मात्री सभा द्वारा भारतीय संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता प्रदान की गई। तब से समस्त राजकार्यों में हिन्दी के प्रयोग का विकास हो रहा है।

इसका अभिप्राय यह है कि शासनतन्त्र, सरकारी कार्यालयों में काम-काज की भाषा 'राजभाषा' है। राजभाषा संविधान दारा स्वीकृत वह भाषा है, जो संघ और राज्य या राज्यों के बीच शासन एवं प्रशासन सम्बन्धी कार्यविधियों को सम्पन्न करती है। सारा सरकारी काम-काज राजभाषा के माध्यम से ही सम्पन्न करने का प्रावधान है।

4.3 संविधान में राजभाषा सम्बन्धी प्रावधान

संविधान में राजभाषा सम्बन्धी प्रावधान उसके भाग संख्या 5, 8 तथा 17 में दिये गये हैं। संविधान में राजभाषा के सम्बन्ध में दिए गए प्रावधानों को इन चार वर्गों में बाँटकर देखा जा सकता है-

(i) संघ की राजभाषा

(ii) संसद में प्रयुक्त होने वाली भाषा

(iii) विधि निर्माण एवं न्यायालयों में प्रयुक्त होने वाली भाषा

(iv) विधान मण्डलों में प्रयुक्त होने वाली भाषा

इन सबसे सम्बन्धित अलग-अलग अनुच्छेदों में राजभाषा हिन्दी सम्बन्धी प्रावधानों का निरूपण किया गया है जिन्हें इस प्रकार देखा जा सकता है-

4.3.1 अनुच्छेद 343

343 (1) – संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी।

343 (2) – खण्ड (1) में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के आरम्भ के पन्द्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उपप्रशासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा का और भारतीय अंकों के अन्तरराष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेंगे।

343 (3) – इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी संसद उक्त पन्द्रह वर्ष की अवधि के पश्चात् विधि द्वारा (क) अंग्रेजी भाषा का या (ख) अंकों के देवनागरी रूप का ऐसा प्रयोजनों के लिए प्रयोग का

उपलब्ध कर सकेगी जो ऐसी विधि में बताए जाएं।

4.3.2 अनुच्छेद 344

344 (1) – राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारम्भ में पाँच वर्ष की समाप्ति पर (अर्थात् 26 जनवरी1955 को) और तत्पश्चात् ऐसे प्रारम्भ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा एक आयोग का गठन करेंगे। इस आयोग के एक अध्यक्ष तथा आठवीं अनुसूची में बताई गई विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य प्रतिनिधि होंगे जिन्हें राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाएगा। राष्ट्रपति के इस आदेश में आयोग द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया भी निर्दिष्ट की जायेगी।

344 (2) – उपर्युक्त आयोग के पाँच कर्तव्य बताये गये हैं-

(क) संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग की सिफारिश

(ख) संघ के सभी या किसी शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग की जाने वाली भाषा की सिफारिश।

(ग) अनुच्छेद- 348 में उल्लिखित सभी या किसी प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा की सिफारिश।

(घ) संघ के किसी एक या अधिक विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा की सिफारिश।

(ङ) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की भाषा के सम्बन्ध में सिफारिश।

344 (3) – आयोग अनुच्छेद 344 (2) के अधीन अपनी सिफारिशें करते समय भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक प्रगति का और लोक सेवाओं के सम्बन्ध में अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों के व्यक्तियों के न्यायसंगत दावों और हितों का सम्यक् ध्यान रखेगा।

344 (4) – राजभाषा समिति के गठन का स्वरूप इस प्रकार बतलाया गया है- समिति में कुल तीस सदस्य होंगे जिनमें से बीस लोकसभा के और दस राज्यसभा के सदस्य होंगे। इन सदस्यों का निर्वाचन क्रमश: लोकसभा और राज्यसभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा किया जायेगा।

344 (5) – समिति अनुच्छेद 344 (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की जाँच करके, उस पर अपनी राय राष्ट्रपति को देगी।

344 (6) – अनुच्छेद- 343 में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति अनुच्छेदों 344 (5) के अधीन समिति की रिपोर्ट पर विचार करने के उपरान्त इस सारी रिपोर्ट या उसके किसी भाग के अनुसार आदेश जारी कर

सकेगी।

4.3.3 अनुच्छेद- 345

किसी राज्य या विधान मण्डल अनुच्छेद 346 और 347 के उपरान्त के आधीन रहते हुए, विधि द्वारा उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिन्दी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगा।

परन्तु जब तक राज्य या विधान मण्डल विधि द्वारा कोई अन्य उपलब्ध न करे तब तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए वह इस संविधान से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा है।

4.3.4 अनुच्छेद 346

संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किये जाने हेतु जो भाषा उस समय प्राधिकृत होगी, वही एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच और किसी राज्य या संघ के बीच पत्रादि की भाषा होगी। परन्तु दो या अधिक राज्य यह करार करते हैं कि उन राज्यों के बीच पत्रादि की राजभाषा हिन्दी भाषा होगी तो ऐसे पत्रादि के लिए उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा।

4.3.5 अनुच्छेद 347

यदि किसी राज्य के जन-समुदाय का कोई भाग अपने द्वारा बोली जाने वाली भाषा के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध की माँग करता है और राष्ट्रपति को तसल्ली हो जाती है कि वह माँग संगत है तो राष्ट्रपति यह निदद्रश कर सकते हैं कि ऐसी भाषा को भी राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजनों के लिए, जिसे वे निर्दिष्ट करें, शासकीय मान्यता दी जाए।

4.3.6 अनुच्छेद 348

348 (1) – जब तक संसद विधि द्वारा कोई और उपबन्ध न करे तब तक नीचे बताई गई कार्यवाहियों के प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी में होंगे-

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक न्यायालय में सभी कार्यवाइयाँ

(ख) (i) संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मण्डल के सदन में प्रस्तुत किये जाने वाले सभी विधेयक या उनके प्रस्तावित संशोधन।

(ii) संसद या किसी राज्य के विधान मण्डल के सभी अधिनियम और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल के द्वारा जारी किये गए सभी अध्यादेश।

(iii) संविधान के अधीन अथवा संसद या किसी राज्य विधान मण्डल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन जारी किये गये सभी आदेश, नियम, विनियम और उपाधियाँ।

348 (2) – किसी राज्य के राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से,

सम्बद्ध राज्य के उच्च न्यायालयों की कार्यवाईयों में हिन्दी भाषा या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली किसी अन्य भाषा के प्रयोग को प्राधिकृत करने का अधिकार दिया गया है। परन्तु यह बात सम्बद्ध उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, डिक्री या आदेश पर लागू नहीं होगी।

348 (3) – किसी राज्य के विधान-मण्डल में प्रस्तुत विधेयकों तथा उनसे सम्बन्धित संशोधनों में यदि राज्यपाल की अनुमति से अंग्रेजी भाषा के अलावा किसी अन्य भाषा के प्रयोग की अनुमति है तो उसका अंग्रेजी प्राधिकृत पाठ वही माना जाएगा जो राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया गया होगा।

4.3.7 अनुच्छेद 349

इस संविधान के प्रारम्भ में पन्द्रह वर्ष की अवधि के दौरान, अनुच्छेद- 348 (1) में उल्लेखित किसी प्रयोजन के लिए प्रयोग किया जाने वाला भाषा-सम्बन्धी कोई विधेयक या संशोधन राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना संसद के किसी सदन में प्रस्तुत नहीं किया जा सकेगा।

4.3.8 अनुच्छेद- 350

इसमें शिकायतों को दूर करने के लिए दी जाने वाली अर्जी में प्रयोग की जाने वाली भाषा के सम्बन्ध में कहा गया है कि ऐसी अर्जी संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भी भाषा में (जैसी स्थिति हो) दी जा सकेगी।

4.4 राजभाषा नीति का कार्यान्वयन

संविधान के उपर्युक्त उपबन्धों के अनुसार हिन्दी को राजभाषा बनाए जाने के समस्त प्रावधान कर दिए गए। 26 जनवरी, 1950 को संविधान के लागू हो जाने से राजभाषा अधिनियम भी लागू हो गया। भारतीय गणतन्त्र में राजभाषा हिन्दी के चहुँमुखी विकास के प्रयास किए गए। सरकारी स्तर पर ये प्रयास दोनों रूपों में दिखाई दिए-

1. संवैधानिक प्रयासों के रूप में
2. प्रशासनिक प्रयासों के रूप में

आगे इन्हीं के आधार पर आजादी के बाद राजभाषा हिन्दी सम्बन्धी संवैधानिक प्रावधानों को जिस रूप में लागू किया गया उसका विवरण दिया जा रहा है।

राजभाषा का विविध क्षेत्रों में प्रयोग :

हमारे संविधान निर्माता हिन्दी का महत्व जानते थे इसी कारण इसे राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया। हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करते समय संविधान सभा के अध्यक्ष ने भाव-विभोर होकर कहा था कि आज हम पहली बार संविधान में एक भाषा स्वीकार कर रहे हैं जो भारत संघ के प्रशासन की भाषा होगी और जिसे समय के अनुसार

अपने आपको ढालना और विकसित करना होगा। संविधान में राजभाषा के विविध क्षेत्रों में प्रयोग सम्बन्धी विविध प्रावधान किए गए-

1. संसद के कार्य संचालन के लिए प्रयुक्त की जाने वाली भाषा।
2. संघ की राजभाषा।
3. कानून बनाने के लिए और उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों में प्रयुक्त की जाने वाली भाषा।
4. एक राज्य और संघ के बीच पत्राचार के लिए राजभाषा।
5. हिन्दी भाषा के विकास के निर्देश।

इन सभी बातों के लिए और संविधान सभा के अध्यक्ष की भावनाओं के आधार पर हिन्दी को प्रशासन की भाषा बनाए जाने के लिए विविध प्रयास शुरु हुए।

4.5 राजभाषा के प्रयोग की प्रगति का इतिहास

1950 से आज तक राजभाषा के विकास की प्रगति के इतिहास को इस प्रकार देखा जा सकता है-

4.5.1 राष्ट्रपति का पहला आदेश 1952

राजभाषा हिन्दी के सम्बन्ध में राष्ट्रपति जी का पहला आदेश श-ऽ- 1952 को जारी किया गया। इसमें राज्यों के राज्यपालों, उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशो की नियुक्ति अधिपत्रों के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी को अधिकृत किया गया।

4.5.2 राष्ट्रपति का दूसरा आदेश 1955

राष्ट्रपति जी का राजभाषा सम्बन्धी दूसरा आदेश 3-12-1955 को जारी किया गया जिसमें निम्नलिखित पत्राचारों, प्रतिवेदनों में भी हिन्दी का प्रयोग किए जाने का उल्लेख था-

(क) जनता के साथ पत्राचार

(ख) प्रशासनिक रिपोर्ट, सरकारी पत्रिकाएँ और संसद में प्रस्तुत की जाने वाली रिपोर्टे।

(ग) सरकारी संकल्प और विधायी अधिनियमितता।

(घ) हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता देने वाले राज्यों के साथ पत्राचार।

(ङ) सन्धियाँ और करार।

(च) अन्य देशों की सरकारों और उनके दूतों के साथ पत्र-व्यवहार।

(छ) राजनयिक को जारी किए जाने वाले औपचारिक दस्तावेज।

4.5.3 राष्ट्रपति का तीसरा आदेश 1960

इसी अनुक्रम में राष्ट्रपति जी द्वारा दिनांक 27-4-1960 को तीसरा आदेश जारी किया गया। यह मुख्यतया वैज्ञानिक, प्रशासनिक और विधिक प्रयोजनों के लिए हिन्दी

शब्दावली के विकास और प्रशासनिक तथा कार्यविधि सम्बन्धी सामग्री के लिए हिन्दी अनुवाद और भारत सरकार के कर्मचारियों के हिन्दी प्रशिक्षण से सम्बन्धित था। इसमें वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के गठन, मानक विधि शब्द-कोश बनाने, हिन्दी में विधि के पुन: अधिनियम बनाने और विधि शब्दावली निर्माण के लिए विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले कानून के विशेषज्ञों का आयोग गठित करने का निर्देश था। इसमें संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में अंग्रेजी के साथ हिन्दी को भी वैकल्पिक माध्यम के रूप में अपनाए जाने के निर्देश दिये गये।

राष्ट्रपति जी के ये आदेश खेर आयोग की सिफारिशों और उस पर पंत समिति की राय को ध्यान में रखकर जारी किए गए थे।

4.6 राजभाषा आयोग 1955

संविधान के अनुच्छेद 344 में यह व्यवस्था की गई है कि संविधान लागू होने के पाँच वर्ष पश्चात् तथा फिर दस वर्ष पश्चात् एक आयोग का गठन किया जाए जो कि एक अध्यक्ष तथा आठवीं अनुसूची में उल्लिखित विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करे। जून 1955 में इसी आधार पर श्री बी.जी. खेर की अध्यक्षता में आयोग का गठन किया गया। आयोग को अंग्रेजी के स्थान पर राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयुक्त किए जाने सम्बन्धी सिफारिशें करनी थी। आयोग ने 31-7-1956 को अपना प्रतिवेदन राष्ट्रपति को प्रस्तुत किया।

4.7 संसदीय राजभाषा समिति 1956

आयोग की सिफारिशों पर संविधान के अनुच्छेद 344 (2) के अनुसार विचार करने के लिए तत्कालीन गृहमंत्री गोविन्द वल्लभ पंत की अध्यक्षता में समिति गठित की गई। इसमें बीस लोकसभा के तथा दस राज्यसभा के सदस्य थे। समिति ने 1959 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। आयोग और संसदीय समिति दोनों का यह विचार था कि 1965 के बाद भी अंग्रेजी का प्रयोग सहभाषा के रूप में चालू रखा जाना चाहिए।

राष्ट्रपति के 1960 के आदेश से यह स्पष्ट हो गया था कि 1965 के बाद हिन्दी को लागू करना सरकार की सक्रिय चिन्ता और कार्यकलाप का अंग होगा। इसी कारण संघ के कार्यकलाप में गतिशीलता आई और सरकारी काम-काज में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को सुनिश्चित करने के लिए एक कार्य योजना तैयार की जाने लगी। विभिन्न आयोगों का गठन किया गया। हिन्दी शिक्षण योजना की स्थापना की गई और सरकारी खर्च पर कर्मचारियों को हिन्दी सिखाने का काम शुरू हुआ। लेकिन ज्यों-ज्यों अंग्रेजी की जगह हिन्दी को 26-1-1965 से पूरी तरह राजकाज की भाषा बनाए जाने का दिन निकट आने लगा, दक्षिण भारतीयों के मन में चिन्ताएँ बढ़ने लगीं। उन्हें लगा कि हिन्दी उन पर थोप दी जाएगी। हालांकि 7-8-1959 को ही तत्कालीन प्रधानमंत्री पं, जवाहरलाल नेहरु लोकसभा में यह घोषणा कर चुके थे कि अहिन्दी- भाषी लोगों पर हिन्दी थोपी नहीं जायेगी।

4.8 राजभाषा अधिनियम 1963

अहिन्दी-भाषियों की चिन्ता को दूर करने के लिए तथा मार्ग में आने वाली समस्त अड़चनों को दूर करने के लिए 10 मई, 1963 को राजभाषा अधिनियम पारित किया गया। लेकिन इस अधिनियम से देश की जनता के सभी वर्गों की अपेक्षाएँ पूरी नहीं हुई।

1963 का संशोधित रूप 1967 :

1963 के अधिनियम से उपजी भ्रान्तियों को दूर करना जरूरी हो गया। 27 नवम्बर, 1967 को संसद में सरकार के राजभाषा संकल्प के साथ-साथ 1963 के अधिनियम को संशोधित करने के लिए संसद में एक विधेयक प्रस्तुत किया गया। 8 जनवरी 1968 को इसे अधिनियम का रूप दे दिया गया। 1967 के इस संशोधन के द्वारा यह व्यवस्था कर दी गई कि जब तक अहिन्दी- भाषी राज्यों की विधान सभाएँ अपनी सहमति न दे दें और संसद के दोनों सदनों द्वारा उक्त सहमति की पुष्टि न हो जाए तब तक हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी का प्रयोग संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए जारी रहेगा।

4.9 राजभाषा संकल्प 1968

दिनांक 18-1-1968 को राजभाषा संकल्प पारित किया गया। इसके अनुसार यह निर्देश दिया गया कि हिन्दी के प्रचार एवं विकास की गति बढ़ाने के लिए तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए उत्तरोत्तर प्रयोग हेतु भारत सरकार एक गहन एवं व्यापक कार्यक्रम तैयार करे और उसे कार्यान्वित करे।

हिन्दी की प्रगति की रिपोर्ट भी संसद में रखे जाने का प्रावधान किया गया। इसके अलावा त्रिभाषा-सूत्र को सभी राज्यों में पूर्णत: कार्यान्वयित करने के लिए प्रभावी कदम उठाए जाने का प्रावधान भी क्यिा गया।

4.10 राजभाषा नियम 1976

डॉ. कृष्णकुमार ग्रोवर के अनुसार वर्ष '1976' राजभाषा नीति के इतिहास में एक मोड़ लाने के लिए याद किया जाता रहेगा। क्योंकि इस वर्ष न केवल राजभाषा नियम बने, बल्कि संसदीय राजभाषा समिति और राजभाषा विभाग का गठन भी हुआ। और वर्ष के अन्त में उच्चतम न्यायालय ने अपना ऐतिहासिक निर्णय भी दिया कि भारत सरकार के अधिकारियों-कर्मचारियों के लिए हिन्दी पढ़ना अनिवार्य है।

डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार 'हिन्दी सम्बन्धी राष्ट्रपति के आदेशों, संसद की सिफारिशों और राजभाषा अधिनियम उपबन्धो को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व भारत सरकार के गृहमंत्रालय को सौंपा गया जिसके अधीन एक राजभाषा अनुभाग की स्थापना हुई। बाद में यह अनुभाग स्वतन्त्र राजभाषा विभाग हो गया।

राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा नियमावली 1976 के रूप में 12 नियम बनाए गए। ये नियम अत्यन्त महत्व के हैं तथा आज भी इन्हीं नियमों के अनुसार सरकार की

द्विभाषिक-नीति का अनुपालन हो रहा है। इन प्रसिद्ध 12 नियमों का संक्षेप इस प्रकार है-

1. ये नियम केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों, केन्द्रीय सरकार के नियमों और कम्पनियों पर लागू होते हैं।
2. देश भर के केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को तीन वर्गों में बाँटा गया है-
   (क) वर्ग के क्षेत्र- उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, बिहार, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा और दिल्ली-यह सारा हिन्दी क्षेत्र है।
   (ख) वर्ग के क्षेत्र- पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र और केन्द्रशासित चण्डीगढ़ तथा अण्डमान- निकोबार।
   (ग) वर्ग के क्षेत्र- शेष सब राज्य, अर्थात् पं. बगाल, उड़ीसा, उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र, द्रविड़भाषी (दक्षिण के) राज्य।
3. (कके किसी का क्षेत्र के केन्द्रीय सरकार के अथवा राज्य सरकार (र्यालय को या व्यक्ति को हिन्दी में ही पत्र लिखे जाएँ। यदि किसी को अंग्रेजी में पत्र भेजा जाए तो उसका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाए।
   (ख) क्षेत्र के कार्यालयों को सामान्यत: हिन्दी में पत्र भेजे जाएँ। यदि कोई पत्र अंग्रेजी में भेजा जाए तो हिन्दी अनुवाद अवश्य संलग्न किया जाए। यदि कोई किसी अन्य भाषा में पत्र- व्यवहार चाहे तो पत्र के साथ हिन्दी अनुवाद भेजे जाएँ।
   (ग) क्षेत्र के कार्यालयों को पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाएँ।
4. (क) क्षेत्र के कार्यालयों में पत्रादि हिन्दी में भेजने का अनुपात सरकार निर्धारित करती रहेगी।
5. हिन्दी में कहीं से प्राप्त पत्रों के उत्तर हिन्दी में ही देने होंगे।
6. सभी दस्तावेज हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में साथ-साथ निकाले जाऐंगे और इसका उत्तरदायित्व दस्तावेजों पर हस्ताक्षर हैं तब उसका उत्तर भी हिन्दी में देना अनिवार्य है।
7. कोई कर्मचारी फाइल में टिप्पणी हिन्दी या अंग्रेजी में लिख सकता है। उससे दूसरी भाषा में उसका अनुवाद नहीं माँगा जाएगा। जिन कार्यालयों में 80% कर्मचारी हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर चुके हैं वहाँ हिन्दी में नोटिंग और ड्राफ्टिंग करने का आदेश दिया जा सकता है।
8. जिस कर्मचारी ने मैट्रिक आदि परीक्षा में हिन्दी ली थी, अथवा वह यह घोषणा करे कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, तो उसको हिन्दी में प्रवीण माना जाएगा।
9. जिस कर्मचारी ने प्राज्ञ या प्राज्ञ के समकक्ष परीक्षा पास की हो, उसे हिन्दी में कार्यसाधक समझा जाए। ऐसे कर्मचारी 80% हों तो उस कार्यालय का नाम राजपत्र में अधिसूचित किया जायेगा।

10. केन्द्रीय सरकार के सभी मैन्युल, संहिताएँ, नियम, रजिस्टर, फार्म, नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्रशीर्ष लिफाफे और स्टेशनरी की मद्दें हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में होंगी।
11. सरकारी नियमों और आदेशों का अनुपालन कराने और भाषा-प्रयोग की जाँच-पड़ताल करते रहने का उत्तरदायित्व प्रत्येक कार्यालय के प्रधान का होगा।

4.11 राजभाषा सम्बन्धी समितियाँ

राजभाषा-नीति को लागू करने के लिए उनकी समीक्षा करने तथा विविध प्रकार के सुझाव देने के लिए भारत सरकार के द्वारा विभिन्न स्तरों पर समितियों का गठन किया गया। इनमें से समितियाँ प्रमुख हैं-

(क) केन्द्रीय हिन्दी समिति
(ख) संसदीय राजभाषा समिति
(ग) हिन्दी सलाहकार समितियाँ
(घ) केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समितियाँ
(ङ) नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियाँ
(च) विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समितियाँ

इनमें सर्वप्रमुख 5 सितम्बर,1967 को गठित केन्द्रीय हिन्दी समिति है। यह समिति हिन्दी के विकास और प्रसार के लिए विभिन्न सुझाव देने के लिए गठित की गई। विभिन्न समयों में इस समिति का पुनर्गठन किया गया। प्रधानमन्त्री इसके अध्यक्ष होते है तथा केन्द्र सरकार के गृह, वित्त, विधि, सूचना और प्रसारण, विदेश, संचार, पर्यटन, विज्ञान प्रौद्योगिक, मन्त्रालयों के प्रभारी मन्त्री, 'क', 'ख', 'ग' वर्ग- क्षेत्रों के सभी प्रतिनिधि आदि इस समिति के सदस्य होते हैं।

संसदीय समिति के प्रतिवेदनों के चार खण्डों के अनुसार इन वर्षों में हिन्दी के विकास हेतु प्रयास किये गये। ये सारी समितियाँ राजभाषा अधिनियम के अन्तर्गत बनाए गए नियमों के अनुसार राजकीय प्रयोजनों के लिए, राजभाषा हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग, केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के हिन्दी प्रशिक्षण आदि और इस सम्बन्ध में राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी किये गए अनुदेशों- आदेशों के अनुपालन की समीक्षा करती है। इनके अनुपालन में पाई गई कमियों और कठिनाइयों को दूर करने के लिए सुझाव देती है।

4.12 राजभाषा हेतु प्रेरणा तथा प्रोत्साहन

सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने की प्रेरणा देने के लिए कई प्रकार के प्रोत्साहन दिए जा रहे हैं। हिन्दी शिक्षण लेने वालों से पढ़ाई और परीक्षा के लिए कोई फीस नहीं ली जाती है। पाठ्य पुस्तके मुफ्त दी जाती हैं। कार्यालय समय में कक्षाएँ लगाई जाती हैं। आने-जाने का मार्ग व्यय दिया जाता है। हिन्दी टंकण का पत्राचार से भी

प्रशिक्षण दिया जा रहा है परीक्षा पास करने पर सेवा-पुस्तिका में प्रविष्टि की जाती है। नकद और पुरस्कार राशि दी जाती है। इस राशि पर टैक्स नहीं लगता है।

हिन्दी में काम करने के लिए ये पुरस्कार दिए जाते हैं-

1. इन्दिरा गाँधी राजभाषा शील्ड
2. इन्दिरा गाँधी राजभाषा पुरस्कार
3. नकद पुरस्कार योजनाएँ- 60 रु., 40 रु. प्रतिमाह

4.13 राजभाषा में पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन

राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा साहित्य का प्रकाशन और वितरण किया जाता है। इस सम्बन्ध में अनेक पत्र-पत्रिकाओं का भी प्रकाशन किया जा रहा है। इनमें से प्रमुख पत्रिकाएँ ये हैं-

1. राजभाषा भारती (त्रैमासिक)
2. राजभाषा पुष्पमाला (मासिक)
3. उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका (मासिक)
4. उच्च न्यायालय निर्णय पुस्तिका (मासिक)
5. आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका (मासिक)
6. वैज्ञानिक (मासिक)
7. खेती (मासिक)
8. इलेक्ट्रानिक भारती (मासिक)
9. आजकल (मासिक)
10. योजना (मासिक)
11. बाल-भारती (मासिक)
12. कुरुक्षेत्र (मासिक)

श्री कृष्णकुमार ग्रोवर के अनुसार हिन्दी में वैज्ञानिक पत्रिकाओं की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई है। सामान्य विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, कृषि और पशुपालन, अभियान्त्रिकी और प्रौद्योगिकी, भूगोल- भूविज्ञान, वनस्पति विज्ञान, गणित, रसायन विज्ञान, भौतिकी और प्राणी विज्ञान आदि से सम्बन्धित लगभग 350 पत्र-पत्रिकाएँ इस समय हिन्दी भाषा में प्रकाशित की जा रही हैं।

राजभाषा में पुस्तक प्रकाशन :

राजभाषा हिन्दी में विविध सरकारी संस्थाएँ, ट्रस्ट आदि पुस्तकें प्रकाशित कर रहे हैं। इनमें से प्रमुख ये हैं।

1. केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय
2. नेशनल बुक ट्रस्ट
3. केन्द्रीय साहित्य अकादमी
4. प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय (7000 पुस्तकें प्रकाशित)

राजभाषा में हिन्दी वृत्तचित्र :

भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय के फिल्म प्रभाग द्वारा राजभाषा हिन्दी के विभिन्न पहलुओं एवं हिन्दी के विकास हेतु अनेक वृत्तचित्र तैयार किये गये हैं। इनमें प्रमुख ये हैं-

1. उदयांजलि
2. एकता का पर्व
3. हिन्दी सब संसार
4. देश की वाणी
5. हिन्द की वाणी
6. भारत की वाणी
7. सितम्बर 1949
8. एकता की वाणी
9. पूर्वांजलि
10. संविधान के साक्षी
11. अरुणांजलि
12. मेघांजलि
13. नागांजलि
14. मणिपुर गाथा
15. केरलांजलि

राजभाषा हेतु हिन्दी दिवस / सप्ताह का आयोजन :

विभिन्न सरकारी विभागों के द्वारा 14 सितम्बर को प्रतिवर्ष हिन्दी दिवस, हिन्दी सप्ताह, हिन्दी पखवाड़ा भी मनाया जाता है। इनमें हिन्दी के विकास की अनेक प्रतियोगिताएँ, चर्चाएँ इत्यादि आयोजित की जाती हैं। हिन्दी के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों पर विचार-विमर्श कर उन्हें दूर करने का प्रयास भी किया जाता है।

4.14 सारांश

इस प्रकार राजभाषा घोषित किए जाने के बाद हिन्दी ने पर्याप्त प्रगति की है। सरकारी स्तर पर इस सम्बन्ध में भरपूर योगदान दिया गया। डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार 'इसमें कोई सन्देह नहीं कि राजकाज में हिन्दी के व्यवहार को बढ़ाने के लिए बहुत कुछ किया जा रहा है। 'इन्हीं के अनुसार (यह बात अच्छी तरह से समझ में आती है कि 1963-67 का अधिनियम हिन्दी के लिए घातक सिद्ध हुआ है, इसे निरस्त कर देना अभीष्ट है) इसी के कारण अंग्रेजी को अनिश्चितकाली के लिए लाद दिया गया। लेकिन इसका अच्छा परिणाम यह निकला कि बाद में हिन्दी के विकास के लिए चौतरफा महत्वपूर्ण प्रयास किए गए । 1976 के राजभाषा के बारह नियम तो हिन्दी को अधिकारिक रूप में राजभाषा बनाए जाने के लिए मील के पत्थर की तरह सिद्ध हुए। उसके उपरान्त तो प्राय:

सभी कार्य अंग्रेजी-हिन्दी में द्विभाषिक रूप में या पूर्णत: हिन्दी में किया जाने लगा। कार्यालयों में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए भरसक प्रयत्न किए गए हैं और राजभाषा सम्बन्धी विभिन्न समितियों के माध्यम से तथा निरीक्षण व्यवस्था से राजभाषा नीति के कार्यान्वयन पर सतत नजर रखी जा रही है। इसी कारण हिन्दी धीरे- धीरे अपना निर्धारित स्थान प्राप्त करने की दिशा में बढ़ रही है? महेशचन्द्र गुप्त का कहना है-

'लोकतन्त्र में लोकभाषा में कार्य करना गौरव की बात होनी चाहिए। देश के लोक को जागृत होकर हिन्दी में काम कराने के लिए संघर्ष करना पड़ेगा जिसके लिए अब समय आ गया है।

4.15 संदर्भ ग्रन्थ

1. राजभाषा हिन्दी-हरदान हर्ष
2. राजभाषा हिन्दी संघर्षो के बीच - हरिबाबू कसल
3. हिन्दी भाषा - हरदेव बाहेती
4. हिन्दी भाषा - डॉ. भालोनाथ तिवारी

4.16 बोध प्रश्न एवं उत्तर

1. सही उत्तर चुनिए :
   1. राजभाषा और राष्ट्रभाषा में अन्तर होता है।
   2. संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता दी गई है।
   3. संविधान का अनुच्छेद 343 राजभाषा हिन्दी एवं देवनागरी लिपि संबंधी है।
   4. संविधान के अनुसार हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी का प्रयोग भी अनिश्चितकाल तक के लिए होता रहेगा।
   5. 'क' क्षेत्र के राज्य सिर्फ हिन्दी में ही पत्राचार कर सकते हैं।
2. सुमेल कीजिये

अनुच्छेद		
1. 345	–	(क) राष्ट्रपति के आदेश संबंधी
2. 349	–	(ख) संघ की राजभाषा हिन्दी होगी
3. 348	–	(ग) पन्द्रह वर्ष तक कोई भाषा संबंधी विधेयक नहीं लाया जा सकता है।
4. 343	–	(घ) राज्य के विधान मण्डल की राजभाषा संबंधी प्रावधान

3. राजभाषा के प्रयोग की प्रगति के इतिहास संबंधी सही/गलत बताओ-
   1. राष्ट्रपति का पहला आदेश 1952 में निकला।
   2. राजभाषा आयोग का गठन 1955 में किया गया।
   3. राष्ट्रपति के सिर्फ दो आदर्श ही निकले।
   4. संविधान में अंग्रेजी को राजभाषा बनाया गया है।

4. संविधान में राजभाषा संबंधी प्रावधान किस-किस भाग में है?
5. संविधान में राजभाषा संबंधी प्रमुख अनुच्छेद कहाँ से कहाँ तक है?

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सही - 1, 3, 5
2. 1. और ध, 2 और न, 3 और (ख), 4 और क
3. 1. सही, 2 सही, 3. गलत, 4. गलत
4. भाग संख्या 5, 6 एवं 17 में
5. अनुच्छेद संख्या 343 से 350 तक

4.17 अभ्यास प्रश्न

1. संविधान में हिन्दी को किस रूप में मान्यता दी गई है?
2. राजभाषा हिन्दी की संवैधानिक स्थिति को स्पष्ट कीजिये।
3. राजभाषा के संबंध में अनुच्छेद 343 एवं 344 को स्पष्ट कीजिये।
4. राजभाषा में प्रयोग के इतिहास को स्पष्ट कीजिये।
5. राजभाषा अधिनियम 1983 एवं 1976 को स्पष्ट कीजिये।
6. राजभाषा के विकास के संबंध में राष्ट्रपति के आदेश बतलाइये।
7. राजभाषा समितियों के कार्य को स्पष्ट कीजिये।
8. राजभाषा के विकास हेतु किये जाने वाले कार्यों की संक्षिप्त रूपरेखा बनाइये।

इकाई - 5 भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी की नई चुनौतियाँ

5.3 मीडिया के क्षेत्र में हिन्दी

5.3.1 रेडियो में हिन्दी

5.3.2 टेलीविजन में हिन्दी

5.4 विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में हिन्दी

5.4.1 कम्प्यूटर में हिन्दी

5.5 व्यापार के क्षेत्र में हिन्दी

5.5.1 बैंकों में हिन्दी

5.5.2 बीमा क्षेत्र में हिन्दी

5.6 विज्ञापनों में हिन्दी

5.7 खेल जगत में हिन्दी

5.8 फिल्मों में हिन्दी

5.9 विदेशों में हिन्दी

5.10 विश्व हिन्दी सम्मेलन

5.11 संयुक्त राष्ट्र संघ (यू.एन.ओ) में हिन्दी

5.12 सारांश (आजादी के बाद हिन्दी भाषा की उपलब्धियाँ)

5.13 संदर्भ ग्रन्थ

5.14 बोध प्रश्न एवं उत्तर

5.15 प्रश्न एवं अभ्यास

5.0 उद्देश्य

अनिवार्य हिन्दी का यह खंड हिन्दी भाषा एवं लिपि के अभिज्ञान से संबंधित है। इस खंड की यह इकाई भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी भाषा की चुनौतियों से संबंधित है। स्वाधीनता की अर्द्धशती के इस दौर में देश में हिन्दी से जिन विविध प्रयोजनों से संबंधित अपेक्षाएं की गई; उनकी पूर्ति हिन्दी के इस नवीन विकासमान स्वरूप में की जा सकी हैं या नहीं इसे जान लेना जरूरी है।

इस इकाई को पढ़ कर आप-

- भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी की भूमिका को जान सकेंगे।
- सचार माध्यमों (रेडियो, टीवी.) के क्षेत्र में हिन्दी के स्वरूप को जान सकेंगे।

- विज्ञान, तकनीक के साथ-साथ कम्प्यूटर के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग की दशा एवं दिशा की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- व्यवसाय एवं बैंकिंग तथा बीमा के क्षेत्र में हिन्दी की प्रगति की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- विज्ञापन में, खेलों में, फिल्मों में हिन्दी की दशा की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- विदेशों में हिन्दी की प्रगति की जानकारी भी प्राप्त कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

किसी भी भाषा की जीवन्तता और सार्थकता इस बात से होती है कि अन्तत: उसमें आधुनिक ज्ञान को समेटने तथा अपने आपको युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप विकास मान ढंग से अनुकूल बनाने की कितनी क्षमता है। हिन्दी भाषा लगभग एक हजार वर्ष पहले अस्तित्व में आई थी। अपने हजार वर्षों की विकास यात्रा में हिन्दी ने अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं। आदिकालीन साहित्य में उसने अपने आपको अपभ्रंश के प्रभाव से मुक्त करते हुए एक स्वतंत्र भाषा का रूप ग्रहण किया। मध्यकाल में अवधी, ब्रजभाषा आदि बोलियों के सहारे आत्मविकास किया। आधुनिक काल के शुरू में हिन्दी ने युगीन परिवर्तनों के रूप में बोलियों की दासता को छोड़ दिया। खड़ी बोली के रूप में त्वरित किन्तु प्रभावशाली विकास करते हुए हिन्दी ने तब आधुनिक मानवीय चेतनाओं के अनुरूप आत्म विकास किया। देश के स्वाधीन आन्दोलन में हिन्दी ने अपनी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

देश के आजादी के उपरान्त लोकतंत्र की स्थापना के साथ ही ज्ञान-विज्ञान, तकनीक के अत्यधिक विस्तार से हिन्दी के लिए सर्वथा नवीन चुनौतियाँ उपस्थित हुई है। हिन्दी अपने अधिकार को पा सकी है या नहीं यही बतलाना इस इकाई का उद्देश्य है।

5.2 भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी की नई चुनौतियाँ

भूमण्डलीकरण के इस दौर में भाषा के सामने आन्तरिक चुनौतियों के साथ-साथ बाहरी दबावों की भी प्रबलता हो गई है। आज जिस तेजी से चहुंमुखी विकास हो रहा है उसमें भाषा के सरोकारों को भी बहुत व्यापक आयाम प्राप्त हुए हैं। आज हिन्दी को अपने आपको साहित्य या दैनन्दिन बोलचाल की भाषा के सीमित दायरे तक ही सीमित नहीं रखना है। उसे विज्ञान की भाषा के रूप में, संसदीय भाषा के रूप में, विधि एवं न्यायालयों की भाषा के रूप में, कम्प्यूटर की भाषा के रूप में, व्यवसाय-व्यापार-बैंक-बीमा के साथ-साथ विज्ञापन की भाषा के रूप में भी अपने आपको प्रतिष्ठित करने की बड़ी भारी चुनौती है। इसके अलावा हिन्दी को राजभाषा के रूप में, खेलों, फिल्मों की भाषा के रूप में, मीडिया की भाषा के रूप में स्वयं को प्रतिष्ठित करने के लिए अनेकानेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

भूमण्डलीकरण के इस नवीन दौर में हिन्दी भाषा को भारत के अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में संपर्क भाषा के रूप में भी अपने आपको स्थापित करना पड़ रहा है। आज हिन्दी भाषी लोग देश की सीमाओं को लांघ कर विश्व के अनेक देशों में जा बसे हैं। विदेशों में स्वयं

प्रतिष्ठित करने की नवीन चुनौती भी हिन्दी के सामने है। संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा के रूप में भी हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के प्रयास करने हैं। इस संबंध में विश्व हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन उस ओर दृढ़ता से कदम बढ़ाए जाने का अच्छा संकेत है।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में हिन्दी भाषा की समस्त चुनौतियों को तथा जीवन के अलग- अलग क्षेत्रों में हिन्दी भाषा की वर्तमान प्रगति की दशा और दिशा को इस इकाई में प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी भाषा की वर्तमान प्रगति की जानकारी यहां आपको दी जाएगी।

5.3 मीडिया के क्षेत्र में हिन्दी

आज के युग में संचार माध्यमों का मानव जीवन में बहुत महत्व हो गया है। ये सामाजिक परिवर्तन लाने के अत्यन्त महत्वपूर्ण साधन हैं। इलेक्ट्रानिक युग में प्रवेश करते ही सूचना क्रान्ति और जन-संचार माध्यम, एक-दूसरे से इतनी गहराई से जुड़े हुए हैं कि दोनों को अब अलग कर पाना असम्भव है। इन संचार माध्यमों ने विश्व की दूरियों को समाप्त कर दिया है। संचार माध्यमों ने जनता के रुचिभेद को अत्यधिक विस्तार दिया है। सामान्यत: आम जनता में रुचिभेद बहुत होता है। उसकी जरूरतों के स्तर-भेद भी अधिक हैं। इसलिए संचार माध्यमों ने अपने कंटेंट के हिसाब से अलग-अलग हिस्सों में बदलाव किया है। आज का व्यक्ति फुरसतिया मनोरंजन में विश्वास नहीं करता है यही कारण है कि वह देर तक अपनी आँखें किसी एक विषय या वस्तु पर टिकाए नहीं रखता। टेलीविजन तो हर पन्द्रह सैकिंडों में ही अपनी दिशा बदल लेता है। यही कारण है कि ऐसे तीव्र परिवर्तनों वाले संचार माध्यमों ने लोगों की पढ़ने की आदतों और रुचियों को ज्यादा स्पष्ट बना दिया है। आज चाहे अखबार हो या अन्य मीडिया माध्यम, प्रत्येक पाठक की रुचि के अनुरूप सामग्री, विज्ञापन आदि को प्रस्तुत कर रहा है। संचार माध्यमों से इस कारण आज के लोगों की जीवन- शैली सीधे तौर पर प्रभावित हो रही है।

संचार माध्यम भावों तथा विचारों को सामूहिक रूप में आदान-प्रदान करते हैं। भाषा जबकि व्यक्ति को व्यक्ति के बीच का सेतु है वहीं मीडिया समूह से समूह के बीच का सम्पर्क माध्यम है। इसी कारण न सिर्फ इसका फैलाव ही विस्तार लिए हुए नहीं है वरन् इसका प्रभाव भी अधिक विस्तृत और मारक बना हुआ है।

5.3.1 रेडियो में हिन्दी

रेडियो जैसे श्रव्य संचार माध्यम में भाषा में एक ओर समाचारों की भाषा में शुद्धता पर अधिक जोर दिया जाता है वहीं इसके मनोरंजनपरक रूपों में भाषा अपेक्षाकृत अधिक खिचड़ी रूप लिए रहती है। वहाँ इसमें फर्राटेदार रूप दिखाई देता है जिसमें अंग्रेजी भाषा का पर्याप्त सम्मिश्रण रहता है। मनोरंजन की अपेक्षाएँ रेडियो में जितनी ही प्रबल होती जाती है उसकी हिन्दी भाषा का खिचड़ी रूप उतना ही उभर कर सामने आता रहता है। एफ.एम. रेडियो ने तो निर्णायक ढंग से हिन्दी भाषा का स्वरूप ही बदल दिया है।

5.3.2 टेलीविजन में हिन्दी

टेलीविजन अब अत्यधिक विषयों को समेटने को तत्पर दिखाई देता है। इसमें संस्कृति, खेलकूद, विज्ञान, व्यापार, फिल्म, पर्यटन, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि विविध विषयों को एक साथ प्रस्तुत किया जा रहा है। इन सभी की भाषायी अपेक्षाएँ अलग-अलग होती हैं। सांस्कृतिक विषयों में संस्कृत की तत्सम शब्द बहुला भाषा की अपेक्षा होती है तो विज्ञापनों में अंग्रेजी-हिन्दी के मिले-जुले 'हिंग्रेजी' रूप का। हिन्दी भाषा टेलीविजन की अपेक्षाओं के अनुरूप बदलते हुए बड़ी तेजी से इन सभी क्षेत्रों के प्रतिपाद्य को अभिव्यक्त करने का सामर्थ्य प्राप्त करती चली जा रही है। दूसरी ओर टेलीविजन ने हिन्दी भाषा का प्रसार चहुँओर कर दिया है। विद्वानों के अनुसार टीवी. में प्रयुक्त की जाने वाली हिन्दी अब किताबी हिन्दी नहीं रह गई है बल्कि जबर्दस्त, तुरन्त चटपट हाजिर-जवाबी हिन्दी हो गई है। यह अधिकतर मिश्रित भाषा होती है। जिसे ग्लोबल हिन्दी का नया रूप कहा जा सकता है जो नए मार्केट, नए मीडिया और नए मध्यवर्ग के लिए बनाई गई है।

संचार माध्यम तेजी से बदलते सामाजिक परिदृश्यों के कारण हिन्दी भाषा के समक्ष तरह-तरह की नई- नई समस्याएँ खड़ी कर रहे हैं। उनसे जूझने के लिए हिन्दी भाषा भी इन तीव्र परिवर्तनों को आत्मसात् कर रही है-

1. दूसरी भाषा से शब्दों का आयात-हिन्दी बड़ी तेजी से संचार की भाषा की अनुरूपता को ग्रहण करने के लिए दूसरी भाषाओं के शब्दों को जस का तस स्वीकार कर रही है। इसका मूल कारण यह है कि सम्पूर्ण भावों -विचारों की अभिव्यक्ति के लिए अब अनुवाद अपर्याप्त है और मामला सिर्फ शब्दकोश का या किताबी भाषा का नहीं है बल्कि समाज में हो रहे जबर्दस्त रद्दोबदल का है। इसलिए अंग्रेजी के शब्दों का बेरोकटोक आयात यह बतला रहा है कि समाज में उनकी जरूरत है और उनका कोई विकल्प नहीं है। वह यह भी बतलाता है कि उपलब्ध हिन्दी भाषा में वांछित अर्थ देने वाले शब्द नहीं है। अनुवादों की असम्भाव्यता के कारण भी अन्य भाषा के तत्सम शब्दों का आयात हो रहा है।
2. संचार माध्यमों की भाषा में खासतौर से लीड स्टोरी या शीर्षकों में जबर्दस्त तुकबन्दियों का प्रयोग किया जा रहा है।
3. संचार माध्यमों को देहाती शब्दों, ग्रामीण बोलचाल की शब्दावली, रोजाना जिन्दगी के अति प्रचलित चलताऊ शब्दों को अपनाने से भी परहेज नहीं है।
4. संचार माध्यमों की हिन्दी में बहुमुखीपन अश्लीलता और अस्थिरता भी है।

संचार माध्यमों में इस तरह की अंग्रेजी का पिछलग्गू बनने की प्रवृत्ति का विरोध भी किया जा रहा है। कुछ लोग मीडिया की हिन्दी को अनुवादी हिन्दी मानते हुए सारे भारत को व्यंग्य में 'अनुवादीलाल' कहने लगे हैं।

इस प्रकार संचार माध्यमों के क्षेत्र में हिन्दी के अब नित्य नवीनतम रूप सामने आते जा रहे हैं। उसमें बहुमुखीपन अनुवाद की प्रधानता, आयातित शब्दों का प्राधान्य, अस्थिरता दिखाई देती है जो उसकी गतिशीलता एवं जीवन्तता को प्रमाणित करते हैं।

5.4 विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी

आजादी के बाद भारत में विज्ञान और तकनीक में जबर्दस्त प्रगति हुई है। इसी कारण अन्यान्य क्षेत्रों की तरह विज्ञान-तकनीक के क्षेत्र में भी हिन्दी भाषा के सामने अनेक चुनौतियाँ उपस्थित की गई। प्रारम्भ में इस सच्चाई को महसूस किया गया कि वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली के बिना विज्ञान के क्षेत्र में अंग्रेजी के प्रयोग को हटा कर हिन्दी को स्थापित किया जाना असम्भव है। ज्यादातर वैज्ञानिक इस बात का दृढ़ता से विरोध कर रहे थे कि विज्ञान के क्षेत्र की सार्थक भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग किया जाए। वे सिर्फ अंग्रेजी को ही समर्थ भाषा मानते थे इस कारण राजभाषा हिन्दी में कार्य करना एक प्रकार से उनके लिए निषिद्ध था। लेकिन अन्य क्षेत्रों की तरह विज्ञान के क्षेत्र में भी हिन्दी ने तेजी से पर्याप्त विकास किया है।

सर्वप्रथम हिन्दी पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण की चेष्टाएँ की गई। 1950 में केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के द्वारा वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण का कार्य हाथ में लिया गया और 1971 तक इसे पूरा कर लिया गया। पारिभाषिक शब्दों के निर्माण का कार्य भी आसान नहीं था। इस सम्बन्ध में तीन-तीन विचारधाराएँ सामने थीं। पहली विचारधारा वाले लोग शुद्धतावादी थे जो संस्कृत के शब्दों से विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली बनाना चाहते थे। दूसरे वर्ग के अन्तरराष्ट्रीयतावादी विचारधारा वाले लोग थे जो अंग्रेजी के शब्दों को ज्यों-का-त्यों स्वीकार करना चाहते थे। तीसरे वर्ग में मध्यमार्गी विचारधारा के लोग थे। इनकी मान्यताओं के अनुरूप ही हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली का संस्कृत-अंग्रेजी के मिले-जुले रूप में विकास किया गया। शब्दावली के निर्माण से ही सारी समस्याएँ समाप्त नहीं हो गई क्योंकि उनका प्रयोग ही यह सिद्ध करने वाला था कि बनाया गया शब्द उचित है या नहीं। इस सम्बन्ध में इस बात पर ध्यान दिया जाना जरूरी है कि जब लाखों शब्दों का निर्माण किया जाता है तब उनमें से कुछ शब्द सन्तोषप्रद न हो। वैसे भी शब्दों के गुणों-दोषों की परीक्षा उनके प्रयोग सिद्ध रूप में सफल हो जाने से ही प्रकट होती है ।

दूसरी कठिनाई हिन्दी में विज्ञान लेखन की। ज्यादातर विद्वान् अंग्रेजी में ही लिखने के अभ्यस्त थे अत: हिन्दी में कार्य करने के विरोधी थे। किन्तु गुणाकर मुले जैसे लेखकों ने कड़े संघर्ष के बाद यह प्रमाणित कर दिया कि हिन्दी में भी बड़ी आसानी से वैज्ञानिक विषयों पर लिखा जा सकता है। विश्वविद्यालय की उच्च स्तरीय कक्षाओं तक के लिए इसी कारण इस दौर में हिन्दी में विज्ञान सम्बन्धी पाद्य-पुस्तकें सन्दर्भ-पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। इस प्रकार अब हिन्दी भाषा में विज्ञान-तकनीक सम्बन्धी सभी तरह के विषयों पर कार्य किया जा रहा है। हिन्दी इस दृष्टि से पूर्ण समर्थ हो चुकी है।

5.4.1 कम्प्यूटर में हिन्दी

कम्प्यूटर के अनुरूप अपने आपको हिन्दी के लिए अधिक कठिनाई भरा कार्य था। कम्प्यूटर को लेकर दो तरह की समस्याएँ आ रही थी-इनमें से पहली देवनागरी लिपि की कम्प्यूटर की अनुरूपता को लेकर थी। देवनागरी लिपि विश्व की वैज्ञानिक लिपियों में

गिनी जाती है। लेकिन यह वर्णात्मक न होकर अक्षरात्मक लिपि है, इस कारण इसका प्रत्येक वर्ण एक स्वतन्त्र ध्वनि इकाई न होकर व्यंजन और संयुक्त व्यंजन ध्वनियों में 'एक से अधिक ध्वनियों का समूह' हुआ करता है। स्वाभाविक है इसके लिए बहुत सारे ध्वनि चिह्न, मात्रा चिह्न, स्वतन्त्र संयुक्त व्यंजन चिह्नों की जरूरत पड़ती है। इसलिए प्रारम्भ में हल्के-फुल्के ढंग से की-बोर्ड में परिवर्तन की चेष्टाएँ की गई। किन्तु अब तो कम्प्यूटर के लिए देवनागरी को ही सर्वाधिक उपयोगी लिपि स्वीकार किया जाने लगा है। कम्प्यूटर ने हिन्दी के लिए दूसरी चुनौती भाषा के स्वरूप को लेकर उपस्थित की। लेकिन इन सारी समस्याओं का 'सिद्धार्थ', 'अक्षर', 'शब्दमाला', 'शब्दरत्न' जैसे अनेक सॉफ्टवेयर प्रोग्राम हिन्दी में आ जाने से निराकरण हो गया। इसी भाँति 'वर्डस्टार', 'लोटस' जैसे पैकेजों के समान सुविधाएँ अब कम्प्यूटर के लिए हिन्दी में भी सुलभ हो गई हैं। हिन्दी में कम्प्यूटर का प्रयोग अब आसानी से किया जा सकता है।

5.5 व्यापार के क्षेत्र में हिन्दी

व्यापारिक क्षेत्रों में तो हिन्दी का प्रयोग राजस्थान में बहुत पहले से किया जा रहा है। आजादी के उपरान्त ज्यों-ज्यों व्यापार-व्यवसाय जगत् में विस्तार होता चला गया त्यों-त्यों हिन्दी के लिए नवीनतम चुनौतियाँ उपलब्ध होती रही। व्यापार जगत् के लिए अपनी अनुकूलता सिद्ध करने के लिए हिन्दी वाक्य विन्यास में कर्ता का लोप किया जाने लगा। शब्दों को नए अर्थ दिए गए-जैसे सोना उछला जीरा डूबा, चाँदी में तेजी इत्यादि प्रयोग।

व्यवसाय जगत् के पत्राचारों में अब हिन्दी का प्रयोग अधिक किया जाने लगा है। इसके लिए अपेक्षित समस्त औपचारिक शब्दावली, वाक्य गठन और विन्यास के वैशिब्य्ड़ को हिन्दी ने तेजी से आत्मसात् कर लिया है।

लेखाकर्म तथा वही-खातों के अंकन का कार्य भी अब हिन्दी में किया जाने लगा है। हिन्दी में ये कार्य इतनी सुगमता से किये जा रहे हैं कि अकाउटिंग के कार्यो में अंग्रेजी के वर्चस्व को तेजी से चुनौतियाँ उपस्थित की जाने लगी हैं।

5.5.1 बैंकों में हिन्दी

राजभाषा सम्बन्धी अनुच्छेद 351 में बैंकों में भी हिन्दी में कामकाज किए जाने का प्रावधान किया गया था। राजभाषा आयोग एवं संसदीय समितियों के प्रतिवेदनों में अन्य क्षेत्रों की ही भाँति बैंकों में भी हिन्दी में कार्य किये जाने के लिए विविध निर्देश जारी किए गए थे। इसके लिए बैंक कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने का प्रशिक्षण कार्यक्रम चालू किया 'गया। यही कारण है कि बैंकों में हिन्दी के पत्राचार का अनुपात निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप ही अब पूरा किया जा रहा है।

अब सभी बैंकों की चैक बुकें, पास बुकें, माँग ड्राफ्ट, सावधि जमा रसीदें, नए खाते खोलने के प्रपत्र इत्यादि अंग्रेजी की ही तरह हिन्दी में छपा कर तैयार की जा चुकी है। कोई भी ग्राहक इन सभी का हिन्दी के माध्यम से आसानी से उपयोग कर सकता है। बैंकों में हिन्दी में लिखे गए चैक भी स्वीकार किए जाते हैं। हिन्दी में लिखे गए प्रार्थना-

पत्रों पर बैंकों में सम्बन्धित कार्यवाही की जाने लगी है। यद्यपि ड्राफ्ट, जमा-खर्च विवरण-पत्र इत्यादि के कार्य अभी तक अंग्रेजी में ही किए जा रहे हैं। कुल-मिलाकर बैंकों में हिन्दी की प्रगति आशाजनक कही जा सकती है।

5.5.2 बीमा क्षेत्र में हिन्दी

बैंकों की ही भाँति बीमा के क्षेत्र में भी हिन्दी के प्रयोग को राजभाषा अधिनियम 351 में अधिसूचित किया गया था। राजभाषा हिन्दी का बैंकों की तरह ही द्विभाषिक रूप में बीमा क्षेत्र में भी प्रयोग किया जा रहा है। आजादी के बाद समस्त बीमा कम्पनियाँ राजभाषा नियम 10 (4) के प्रावधानों की अनुपालना कर रही हैं। बीमा पॉलिसियाँ, बीमा सब्लधी समस्त प्रपत्र हिन्दी में भरे जाने लगे हैं।

5.6 विज्ञापनों में हिन्दी

आज देश में अंग्रेजी से कई गुना अधिक लोग हिन्दी भाषा जानते-प्रयोग करते हैं। हिन्दी अब देश के अहिन्दी भाषी व्यक्तियों के लिए भी 'सम्पर्क भाषा' बन चुकी है। इस कारण बाजारवाद की माँग अब अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को अधिक महत्व देने लगी हैं। वैसे भी विज्ञापनों का उद्देश्य भी अधिक-से- अधिक लोगों तक अपनी बात पहुँचाना होता है। इसके अलावा लोगों की अपनी जुबान में कही गई बात ही उसके दिमाग पर असर करती है इसलिए अब विज्ञापनों में हिन्दी का प्रयोग अधिकता से किया जाने लगा है।

विज्ञापनों की हिन्दी प्रयोजनमूलक होने के कारण उसमें भाषा का चलताऊ रूप अधिक प्रयुक्त किया जाता है। यह अभिधा प्रधान होती है। इसमें लक्षणाओं-व्यंजनाओं के लिए कोई अवसर नहीं रहता है। विज्ञापनों की हिन्दी जन सामान्य में प्रचलित बहुधा से प्रयुक्त हिन्दी होती है। इसलिए इसमें शब्दों को किताबी या कोशगत अर्थों के प्रयोग में न लाकर वांछित प्रयोजन के अनुरूप अर्थ को नया संस्कार दिया जाता है। यह हिन्दी मनोविज्ञान की आधारभूमि पर टिकी होती है। इस हिन्दी की सबसे बड़ी खूबी 'नागर में सागर' जैसे विचार भरने की होती है। कम से कम शब्दों में ग्राहक की मानसिकता को प्रोत्साहित करने का प्रयास इसमें किया जाता है।

वैसे भी विज्ञापनदाताओं को भाषा से कोई मतलब नहीं होता। उनका मुख्य लक्ष्य अपनी बात को येन- केन प्रकारेण अधिक-से- अधिक लोगों तक पहुँचा भर देना होता है। उन्हें सिर्फ संचार से मतलब होता है भाषा से नहीं। यही कारण है कि विज्ञापनों की माँग के अनुरूप हिन्दी सूत्रशैली में, मिश्रित भाषा में थोड़े में बहुत कहने की कला को आत्मसात् कर रही है। रेडियो, टीवी. पर हिन्दी. भाषा के नवीनतम प्रयोग नए समाज के प्रचलित मुहावरे बन गए हैं- जैसे- 'ढूँढते रह जाओगे', 'ये अन्दर की बात है' इत्यादि।

अंग्रेजी के मिश्रित प्रयोगों से विज्ञापनों में चमत्कार के साथ नवीनता पैदा करने के प्रयास किए जा रहे हैं। 'ठण्डा-ठण्डा कुल-कूल', 'ये दिल माँगे मोर' जैसे मिश्रित प्रयोग हिन्दी को अब विज्ञापन जगत् में अंग्रेजी की समानधर्मा और बराबरी वाली भाषा बना रहे हैं। हिन्दी के विज्ञापन इसी कारण शिक्षित-अशिक्षित, महानगरीय-देहाती सभी क्षेत्रों, मानसिकताओं

के लोगों के लिए समान रूप से स्वीकार्य हो चले हैं। विज्ञापन के क्षेत्र में हिन्दी का यह परिवर्तित रूप ही उसकी अतिलोकप्रियता का आधार बन सका है।

5.7 खेल जगत् में हिन्दी

अन्य क्षेत्रों की तरह आजादी के बाद हिन्दी भाषा ने खेलकूद के क्षेत्र में भी अपनी नई पहिचान बनाई है। इस क्षेत्र में हिन्दी ने बड़ी तेजी से विकास किया है। इसका सूत्रपात जसदेवसिंह द्वारा हॉकी की हिन्दी कमेंटरी से किया गया। लोगों को तब महसूस हुआ कि हिन्दी में दिया गया खेलों का आँखों-देखा हाल अधिक रोमांचक, अधिक उत्तेजक और अधिक मनोरंजन करने वाला हुआ करता है। हिन्दी भाषा में उपसर्गों की बहुतायत तीव्रता के साथ भाषा की मारक क्षमता को बनाए रखती है। यही कारण है कि हिन्दी कमेंटरी में खेल की चपल गति के साथ-साथ उसका विवरण बडी आसानी से दिया जा सकता है। हिन्दी ने खेलों का भी बहुत बड़ा उपकार किया है उसने अशिक्षितों, गृहिणियों, किसानों, मजदूरों तक खेलों को पहुँचा दिया है। क्रिकेट कमेंटरी के जिज्ञासु श्रोताओं में अब सभी कार्य क्षेत्रों, मानसिकता के लोगों की सहभागिता हिन्दी कमेंटरी के माध्यम से हिन्दी भाषा ने ही सुनिश्चित की है।

5.8 फिल्मों में हिन्दी

भारत में सिनेमा का प्रवेश 1913 में हुआ और 1931 में हिन्दी की पहली फिल्म 'आलमआरा' बनी। इतनी कम अवधि में ही हिन्दी ने फिल्मों में इतनी गहरी पैठ बना ली है कि अंग्रेजी के बाद अब विश्व में सबसे अधिक फिल्में हिन्दी में बन रही हैं। 'बॉलीवुड' के रूप में फिल्मी दुनिया की पहिचान दुनिया भर में आकर्षण का कारण बन चुकी है।

फिल्मी गीतों ने तो रेडियो सीलोन के माध्यम से चालीस साल पहले ही हिन्दी को चारों तरफ पहुँचा दिया था। विश्व के अनेक देशों में हिन्दी फिल्मों के गीत लोगों के मनोरंजन का आधार बन रहे हैं। इसी भाँति हिन्दी फिल्मों के संवादों ने हिन्दी भाषा को सबके आकर्षण का केन्द्र बना दिया है। राजनीतिक कारणों से भले ही तमिलनाडु में हिन्दी का विरोध किया जाता हो पर आर्थिक कारणों से वहाँ पर भी बहुत बड़ी संख्या में हिन्दी फिल्में बन रही हैं। हिन्दी फिल्मों के लिए लोग हिन्दी सीख रहे हैं और स्वयं हिन्दी फिल्में लोगों को हिन्दी भाषा सिखा रही है। इस प्रकार हिन्दी भाषा ने फिल्मों के माध्यम से एक व्यापक क्षेत्र तक विस्तार किया है। विदेशों में भी फिल्मों की राह से ही हिन्दी अधिकाधिक लोकप्रिय भाषा बनती जा रही है।

फिल्मों में हिन्दी भाषा की शब्दावली 'खिचड़ी' भाषा के रूप को अपनाए हुए हैं। इनमें एक साथ देशी- विदेशी भाषाओं-बोलियों के शब्दों को बेरोकटोक प्रयोग किया जाता है। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने फिल्मों में प्रयुक्त बम्बइया हिन्दी को 'पिजिन' कहा है। अर्थात् यह बोली तो है पर किसी की मातृभाषा नहीं है। पात्रों की अनुरूपता भी हिन्दी फिल्मों की भाषा की बहुत बड़ी विशेषता है। पंजाबी, बंगाली, मराठी, सिंधी, मारवाड़ी, पठानी, दक्षिण भारतीय, विदेशी आदि सभी तरह के पात्र अपने- अपने ढंग से अपने निजी भाषा के

संस्कारों में हिन्दी का प्रयोग करते हैं। एक ही भाषा के ये अनगिनत भाषा रूप ही फिल्मी हिन्दी की लोकप्रियता के साथ-साथ इस भाषा के अत्यन्त लचीलेपन का पुष्ट प्रमाण हैं। और विलेन या दादा पात्रों की हिन्दी भाषा तो अलग पहिचान से आकर्षण और अनूठे मनोरंजन का कारण बनी हुई है। गब्बरसिंह का 'कितने आदमी थे' या शान के प्रतिनायक 'मोगेम्बो खुश हुआ' या मुन्नाभाई एम.बी.बी.एस. की भाषा हिन्दी के चलताऊ किन्तु सबका ध्यान आकर्षित कर सकने वाले सामर्थ्यवान रूप को प्रस्तुत करती है।

इस प्रकार लोक जीवन के प्राय: सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में हिन्दी भाषा ने इस भूमण्डलीकरण के दौर में अलग- अलग प्रयोजनों के अनुरूप अपनी विविधापूर्ण चहुँमुखी पहिचान बनाई है।

5.9 विदेशों में हिन्दी

'हिन्दी है भारत की भाषा तो अपने आप पनपने दो' का आजादी के पूर्व का प्रसिद्ध नारा हिन्दी को सिर्फ देश की सीमाओं तक ही सीमित देखता था। उसी चिन्तनधारा की छाया में हिन्दी ने अब तक देश की सीमाओं के भीतर ही अपना विकास किया था। किन्तु आजादी के बाद के समय में जब भूमण्डलीकरण का दौर शुरू हुआ, तब ग्लोबलाइजेशन के दौर की समर्थ भाषा के रूप में हिन्दी के समक्ष एक सर्वथा नवीन प्रकार की चुनौती उपस्थित हुई। हिन्दी के सामने विश्व स्तर पर फैलाव लिए हुए अंग्रेजी आदि अन्य भाषाएँ थीं जो सर्व प्रकारेण सभी क्षेत्रों में अपनी योग्यता प्रमाणित कर रही थीं। हिन्दी बड़ी तेजी से विश्व स्तर पर भी अपने सामर्थ्य को प्रमाणित करने में समर्थ रही है।

यों तो मजदूरों के रूप में मॉरीशस, त्रिनिदाद, गुयाना इत्यादि क्षेत्रों में ले जाए गए हिन्दी भाषी लोगों के प्रवास के साथ ही भारत के बाहर हिन्दी का प्रसार शुरू हो चुका था। लेकिन व्यवस्थित रूप में विदेशों में हिन्दी का फैलाव पिछली अर्द्धशती में ही शुरू हुआ। इधर के दौर में लाखों हिन्दी भाषी लोग व्यापार या नौकरी के लिए अन्य देशों में जा बसे है। उनको अपनी सन्तति के लिए तथा अपनी संस्कृति की पहिचान को बनाये रखने के लिए हिन्दी भाषा को सम्पर्क भाषा बनाए रखना जरूरी हो गया। शिक्षा व राजनैतिक कारणों से भी अन्य देशों के लिए भारतीय भाषाओं के एक अंग के रूप में हिन्दी भाषा के अध्ययन को अपनाया जाना जरूरी हो गया।

भारत के बाहर आज मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम, गयाना, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका, उज्बेकिस्तान आदि में हिन्दी का प्रयोग उस देश की मुख्य या द्वितीय भाषा के रूप में किया जा रहा है। इन देशों में हिन्दी केवल भारतीयों के बीच ही प्रचलित नहीं है वरन् वहाँ के मूल निवासियों के द्वारा भी अच्छी तरह से बोली-समझी जाती है। फीजी में हिन्दी को संवैधानिक मान्यता प्राप्त है। इन देशों में हिन्दी में पत्र- पत्रिकाएँ भी प्रकाशित की जा रही है। हिन्दी के लिए इन देशों में हिन्दी की जगह निम्नानुसार शब्द प्रयुक्त किए जा रहे हैं-

1. फीजी में हिन्दी को 'फीजी' ही कहते हैं।
2. सूरीनाम में हिन्दी को 'सरनामी' कहा जाता है।

3. दक्षिणी अफ्रीका में हिन्दी को 'नेताली' कहा जाता है।

4. उज्बेकिस्तान, तजाकिस्तान में हिन्दी को 'पार्या' कहा जाता है।

भारतीय मूल के इन तीन शताब्दियों पूर्व किये हुए हिन्दी भाषी लोगों में आज भी उसके प्रति लगाव है। मॉरीशस में तो दो बार विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया जा चुका है। लेकिन अन्य देशों के गैर हिन्दी भाषी लोगों के द्वारा भी हिन्दी पर व्याकरण, शोध आदि का कार्य इस दौर में शुरू हुआ। इसका सूत्रपात इंग्लैण्ड के फ्रेडरिक पिंकॉट के द्वारा किया गया। जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन, फादर कामिल बुल्के, लोठार लुत्से इत्यादि अन्य विदेशी विद्वानों ने विदेशों में हिन्दी को फैलाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

विदेशों में लगभग 135 कॉलेजों, विश्वविद्यालयों में हिन्दी शिक्षण का कार्य किया जा रहा है।

हिन्दी साहित्य की प्रसिद्ध रचनाओं का अन्य भाषाओं में अनुवाद का कार्य भी तेजी से किया जा रहा है। रूस में तो हिन्दी की अनेक रचनाओं का रूसी अनुवाद हुआ है। हिन्दी के प्राचीन साहित्य में तुलसी के 'रामचरितमानस' का तो बाईबिल के बाद सर्वाधिक भाषाओं में अनुवाद हुआ है। इसके अलावा सूरदास, कबीर, मीरा जैसे प्राचीन कवियों-कवयित्री की रचनाओं के साथ आधुनिक कवि अज्ञेय और प्रेमचन्द की रचनाओं के अनुवाद भी किए गए हैं।

5.10 विश्व हिन्दी सम्मेलन

आजादी के पश्चात् के दौर में हिन्दी की एक अन्य उपलब्धि विश्व हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन किया जाना है। विश्व स्तर पर हिन्दी को सम्मान दिलाने के लिए, विश्व भर के हिन्दी भाषा-भाषियों को एक साथ ही मंच पर खड़ा करने के लिए तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिन्दी भाषा को भी मान्यता दिलाए जाने के लिए विश्व हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन किया गया। अब तक निम्नानुसार छह विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित किए जा चुके हैं-

1.	पहला सम्मेलन	–	1975	–	नागपुर में
2.	दूसरा सम्मेलन	–	1976	–	मॉरीशस में
3.	तीसरा सम्मेलन	–	1983	–	दिल्ली में
4.	चौथा सम्मेलन	–	1993	–	मॉरीशस में
5.	पाँचवां सम्मेलन	–	1996	–	त्रिनिदाद में
6.	छठा सम्मेलन	–	1999	–	लन्दन में
7.	आठवाँ सम्मेलन	–	2007	–	अमेरिका में

इन सम्मेलनों से हिन्दी भाषा को विश्व सन्दर्भ में प्रस्तुत किए जाने से वर्तमान दौर में हिन्दी भाषा को नई पहिचान प्राप्त हुई है।

विश्व हिन्दी विश्वविद्यालय :

पहले विश्व हिन्दी सम्मेलन में पारित प्रस्ताव के आधार पर वर्धा में 1997 में विश्व हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। देश-विदेश में हिन्दी को विस्तार देने के लिए इस विश्वविद्यालय में प्रयास किया जा रहा है।

5.11 यू.एन.ओ. में हिन्दी

संयुक्त राष्ट्रसंघ में अंग्रेजी, फ्रेंच, चीनी, रूसी, स्पेनिश को प्रारम्भ से ही मान्यता दे दी गई थी। बाद में छठी भाषा के रूप में अरबी को मान्यता प्रदान की गई। अब विश्व स्तर पर हिन्दी भाषा के प्रचार को देखते हुए हिन्दी को भी यूएन.ओ. की मान्यता प्राप्त भाषा के रूप में स्वीकार किए जाने के प्रयास किए जा रहे हैं। प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में मॉरीशस के राष्ट्रपति सर शिवसागर रामगुलाम ने यह प्रस्ताव रखा। रूसी विद्वान् ई.पी चेलिशेव और जर्मन विद्वान् लोठार लुत्से ने भी इसका समर्थन किया। वैसे संयुक्त राष्ट्रसंघ के ही एक अंग यूनेस्को में हिन्दी भाषा को मान्य भाषा का दर्जा मिला हुआ है। भारत के दो भू.पू. विदेश मन्त्रियों श्री अटल बिहारी वाजपेयी तथा श्री पी.वी. नरसिंहराव यू.एन.ओ. में हिन्दी भाषा में भाषण दे चुके हैं। इनके माध्यम से हिन्दी को प्रमुख अन्तरराष्ट्रीय मंच पर अपने आपको प्रतिष्ठित करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

5.12 सारांश

आजादी से पहले तक का लगभग हजार वर्षो का इतिहास मोटे तौर पर हिन्दी के सिर्फ साहित्य की भाषा के रूप में किए गए विकास का ही इतिहास रहा है। अब तक हिन्दी सिर्फ साहित्य की भाषा के रूप में ही विकास पाती रही। विविधतापूर्ण जीवन व्यापारों में हिन्दी का प्रयोग कम किया जाता था। इसका कारण यही था कि उसे कभी देश की प्रधान भाषा के रूप में या सरकार द्वारा अधिकृत रूप में मान्यता नहीं प्रदान की गई थी। वह जन-जन की भाषा तो थी किन्तु प्रशासन और सरकार की भाषा नहीं मानी गई। इसी कारण जीवन के अलग- अलग क्षेत्रों में उसका विकास अवरुद्ध सा रहा।

हिन्दी भाषा का नवीन प्रस्थान बिन्दु-आजाद भारत में राजभाषा के पद प्रतिष्ठित कर दिये जाने के साथ ही पहली बार हिन्दी को प्रशासनिक भाषा के रूप में गरिमामय स्थान प्राप्त हुआ। यही वह प्रस्थान बिन्दु बना जिसने आजादी के बाद हिन्दी भाषा को एक साथ जीवन के समस्त प्रयोजनों के लिए अधिकृत भाषा के रूप में विकास प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया। इसी कारण विगत पचास वर्षों में हिन्दी भाषा के विकास की यात्रा क्रान्तिकारी परिवर्तनों के साथ उपस्थित हुई।

साहित्य की नई भाषा के रूप में हिन्दी :

जिन्हें इन रूपों में देखा जा सकता है-

साहित्य की भाषा के रूप में इस दौर में हिन्दी ने जबर्दस्त विकास किया। नवलेखन के दौर में ही पूर्ववर्ती सारे अलंकारों, प्रतिमानों को छोड़ दिया गया। मुलम्मा उतार चुके उपमानों को एक झटके से बदल दिया गया। नई शब्दावली, नए प्रयोग, नए प्रतीक, नए उपमान, नए विश्व आदि के रूप में हिन्दी भाषा का सर्वथा नवीन संस्कार हुआ। हिन्दी अधिक ऊर्जावान और क्षमतावान् भाषा बन गई। इसी कारण आजादी के बाद के साहित्य

की हिन्दी युगानुरूप और अधिक प्राणवान् दिखाई देती है। यह हिन्दी के लिए इस दौर की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

राजभाषा के रूप में हिन्दी :

राजभाषा के रूप में हिन्दी ने अपने को बड़ी तेजी से संस्कारित करते हुए एक समर्थ कार्यालयी भाषा का अभिनव रूप ग्रहण कर आत्मविस्तार किया। राजभाषा के रूप में हिन्दी का यह सर्वथा नवीन स्वरूप आजाद भारत में हिन्दी के विकास की अभूतपूर्व उपलब्धि कहा जा सकता है। अब हिन्दी भाषा पर यह आरोप नहीं लगाया जा सकता है कि यह केवल कविता, कहानी, उपन्यास मात्र लिखे जाने की भाषा है। आज हिन्दी समस्त संसदीय, प्रशासकीय एवं न्यायालयीय आवश्यकताओं को पूरा करने में पूर्ण समर्थ है। इसके आधार पर हिन्दी की भविष्य में प्रकट होने वाली गरिमामय सम्भावनाओं का आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी-जीवन का क्षेत्र जितना विविधापूर्ण होता जाता है उनकी क्रियाशीलता के वैविध्य के आधार पर भाषा से भी बहुआयामी अपेक्षाएँ की जाने लगती हैं। हिन्दी ने पिछली अर्द्ध शताब्दी में जीवन के विविध प्रयोजनों को पूरा करने के लिए अधिकाधिक ढंग से कदम बढ़ाए हैं। यही कारण है कि आज हिन्दी विज्ञान हो या तकनीक, व्यापार हो या व्यवसाय, बैंक हो या बीमा, संचार माध्यम हो या विज्ञापन, खेलकूद हों या फिल्म, कम्प्यूटर हो या अन्य यान्कि उपकरण सभी के लिए अंग्रेजी समानान्तर भाषा के रूप में विकसित हो चुकी है। आज की हिन्दी भाषा जीवन के प्राय: समस्त क्षेत्रों में अभिव्यक्तियों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने के लिए एक समर्थ भाषा बन चुकी है।

पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण-वर्तमान जीवन प्रणाली में प्रत्येक विषय, गतिविधि और ज्ञान-विज्ञान के लिए सैकड़ों की संख्या में पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकता पड़ रही है। केवल कोशगत शब्दावली से इन सबके विविध विषयों को प्रकट नहीं किया जा सकता है। हिन्दी भाषा ने आजादी के बाद विकासमान सभी क्षेत्रों की पारिभाषिक शब्दावली का विकास किया है। इस दौर में विज्ञान, विधि, वाणिज्य, मनोरंजन आदि सभी क्षेत्रों में लाखों पारिभाषिक शब्दों का हिन्दी भाषा में विकास किया गया है। यह प्रगति इस दौर की हिन्दी भाषा की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में देखी जा सकती है ।

भाषा का मानकीकरण :

हिन्दी भाषा में लिपि एवं शब्द प्रयोगों में अनेकरूपता हमेशा से रही है। साहित्य के क्षेत्र में इस प्रवृत्ति को खूबी के रूप में देखा जा सकता है किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से किसी भी भाषा के विकास में ऐसी बहुरूपता कई तरह की बाधाएँ खड़ी कर देती है। आजादी के बाद हिन्दी की देवनागरी लिपि की वर्णमाला और प्रयोगों के मानकीकरण के सार्थक प्रयोग किए गए। अनेक प्रयासों के बाद केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा देवनागरी का मानकीकरण कर दिया गया है। वर्णमाला के मानकीकरण के तो स्पष्ट परिणाम नवीन प्रकाशित पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं में परिलक्षित होने लगे हैं। शब्द रूपों में भी भविष्य में इन मानकीकृत रूपों के प्रयोग से हिन्दी भाषा में एकरूपता हासिल की जा सकेगी इसमें कोई सन्देह नहीं है।

हिन्दी की यन्त्रानुकूलता :

आजादी के बाद हिन्दी भाषा ने यान्त्रिक दृष्टि से भी पर्याप्त विकास किया है। आज टाइपराइटर, इलेक्ट्रोनिक टाइपराइटर, फैक्स, तार, टेलीप्रिन्टर, प्रिन्टिंस प्रेस आदि सभी उपकरणों-मशीनों में हिन्दी का बेरोकटोक प्रयोग किया जा रहा है। कम्प्यूटर के लिए तो हिन्दी और उसकी देवनागरी लिपि मानो नवीन सम्भावनाओं को लेकर उपस्थित हुई है।

विदेशों में हिन्दी :

आजाद भारत में हिन्दी की एक और अत्यन्त महत्वपूर्ण उपलब्धि विदेशों में हिन्दी का जर्बदस्त प्रचार- प्रसार है। आज के विश्व के लगभग 135 विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा का अध्ययन- अध्यापन किया जा रहा है। विदेशों में हिन्दी भाषा के प्रसार का महत्व विश्व हिन्दी सम्मेलनों एवं यू.एन.ओ में हिन्दी की दस्तक से, आसानी से समझा जा सकता है। आज हिन्दी विश्व की तीसरी सबसे बड़ी भाषा बन गई है।

सम्पर्क भाषा हिन्दी :

इस दौर में हिन्दी की एक और उल्लेखनीय उपलब्धि सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी भाषा का विकास है। आज सम्पूर्ण भारत में गैर हिन्दी भाषी लोग अंग्रेजी की जगह सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग कर रहे हैं। यही नहीं अब भारत के पड़ौसी देशों पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बांग्ला देश में भी हिन्दी सम्पर्क भाषा बन चुकी है।

आजाद भारत में हिन्दी की इतनी अल्प अवधि में ही की गई ये उपलब्धियाँ इसके उज्ज्वल भविष्य की ओर संकेत करती हैं। इनको देखते हुए शकुन्त माथुर के शब्दों में हिन्दी भाषा के भविष्य की सम्भावनाओं के लिए अधिकाधिक तौर पर यह कहा जा सकता है

फूलेंगे फूल लाल लाल
करूँगी प्रतीक्षा अभी
पौधा है वर्तमान।

5.13 संदर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी राजभाषा से राष्ट्रभाषा तक - भारत सरकार प्रकाश
2. हिन्दी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ - डॉ. भोलानाथ तिवारी
3. विश्व हिन्दी का भविष्य - नर्भदेश्वर चतुर्वेदी
4. भारतीय गणतंत्र में हिन्दी दशा एवं दिशा - भारत सरकार प्रकाशन

5.14 बोध प्रश्न एवं उत्तर

1. सही उत्तर को छँटिए : -
    1. भूमण्डलीकरण के दौर में हिन्दी ने अनेक चुनौतियों का सामना किया है।
    2. संचार माध्यमों की हिन्दी में बहुमुखीपन अश्लीलता और अस्थिरता होती है।
    3. हिन्दी की वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली में सिर्फ संस्कृत के तत्सम शब्द ही है।

4. व्यापार जगत् में हिन्दी के वाक्य विन्यास में कर्ता का लोप किया जाता है।
5. विज्ञापनों की हिन्दी ने समाज को नए मुहावरे दिए है।

2. सुमेल कीजिये-

1. पिजिन	–	(क) दक्षिण अफ्रीका में बोली जाने वाली हिन्दी का नाम।
2. सरनामी	–	(ख) हिन्दी-अंग्रेजी का मिला-जुला रूप।
3. न्यूयॉर्क	–	(घ) सूरीनाम में प्रचलित हिन्दी का नाम।
4. हिंग्रेजी	–	(ड़) आठवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन यहाँ आयोजित हुआ।

3. किन-किन देशों में हिन्दी उस देश की मुख्य या द्वितीय भाषा के रूप में प्रयुक्त की जा रही है?
4. भारत के दिन-किन विदेश मंत्रियों ने संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी में भाषण दिया है?

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सही - 1, 2, 4, 8 गलत-3
2. 1 और (न), 2 और (घ), 3 और (क), 4 और (ड़), 5 और (ख)
3. 3 मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम, गयाना, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका, उजबेकिस्तान
4. अटल बिहारी वाजपेयी, वी. पी. नरसिंहराव

5.15 प्रश्न एवं अभ्यास

1. संचार माध्यमों में हिन्दी भाषा की वर्तमान दशा को स्पष्ट कीजिए।
2. विदेशों में हिन्दी की दशा को बतलाते हुए यू.एन.ओ. में हिन्दी की स्थिति को स्पष्ट कीजिये।
3. कम्प्यूटर के क्षेत्र में हिन्दी की प्रगति को स्पष्ट कीजिए।
4. व्यवसाय एवं विज्ञापन जगत में हिन्दी की प्रगति को बतलाइये।
5. विश्व हिन्दी सम्मेलनों की संक्षिप्त रूपरेखा बतलाइये।
6. फिल्मों में हिन्दी पर अपने विचार प्रकट कीजिये।
7. मीडिया में हिन्दी के प्रयोग की नई दिशाओं को बतलाइये।

खण्ड 2 का परिचय

अनिवार्य हिन्दी पाठयक्रम का यह दूसरा खंड हिन्दी भाषा के व्यावहारिक व्याकरण से संबंधित है। साहित्य की जानकारी के साथ साथ हिन्दी भाषा के स्वरूप एवं उसके व्यावहारिक व्याकरण का अभिज्ञान प्राप्त करना भी जरुरी है। दैनिक जीवन में हम भाषा का प्रयोग अपने भावों और विचारों को आकर्षक ढंग से प्रकट करना पंसद करते हैं। हम चाहते हैं कि हमारी भाषा ऐसी हो कि उसे पढ़कर हर कोई व्यक्ति हमसे अच्छी तरह से प्रभावित हो जाए। ऐसा करने के लिए भाषा के व्यावहारिक पक्ष पर हमारी अच्छी पकड़ होना जरुरी है।

हिन्दी भाषा का व्यावहारिक पक्ष मुहावरों, लोकोक्तियों, पर्यायवाची शब्दों, युग्म शब्दों से समृद्ध हुआ है। इन सबकी जानकारी प्राप्त करना जरुरी है। मुहावरे या लोकोक्तियाँ भाषा के अलंकार कहे जा सकते हैं। इनके प्रयोग से भाषा की व्यंजना शक्ति बढ़ जाती है। चूंकि लोकोक्तियाँ या कहावतें जनता के अपने प्रत्यक्ष अनुभवों से बनाई गई हैं इसलिए इनका प्रयोग करने में अर्थ की व्यंजना और भी गहरी हो जाती है। संस्कृत के समय से ही हिन्दी में पर्यायवाची शब्द के प्रयोग की विशेषता विकसित हुई है। हिन्दी में एक ही शब्द के अनेक पर्यायवाची शब्द हैं। इनसे प्रसंग एवं विषय के अनुरूप किसी भी शब्द का अलग- अलग रूपों में प्रयोग किया जा सकता है। अर्थ वही रहता है शब्द बदल जाता है। इसके विपरीत युग्म शब्दों में एक से दिखाई देने वाले दो शब्दों के अर्थों की भिन्नता प्रकट होती है।

संस्कृत में उपसर्ग एवं प्रत्यय लगाकर एक शब्द से अनेक शब्द बनाए जा सकते हैं। हिन्दी में संस्कृत के अलावा उर्दू और अंग्रेजी के उपसर्गों या प्रत्ययों से भी शब्द निर्माण की प्रक्रिया अपनाई जाती है। हिन्दी के कुछ अपने भी उपसर्ग व प्रत्यय प्रचलित हैं। इन्हें सीखकर शब्द निर्माण कला को समझा जा सकता है।

शुद्ध भाषा के अभिज्ञान के लिए शब्दों और वाक्यों के शुद्ध प्रयोगों की जानकारी प्राप्त करना अनिवार्य है। शब्दों या वाक्यों का अशुद्ध प्रयोग हमारी भाषा के प्रभाव को कम कर देता है। इसीलिए इस इकाई में आपको अशुद्ध शब्द कौन से हैं? शब्दों का शुद्ध रूप कौन सा है? शुद्ध वाक्य रचना किस तरह से की जाती है इत्यादि बातों की जानकारी दी गई है। इन्हें समझकर आप शुद्ध भाषा के प्रयोग को सीख सकेंगे।

आज के युग में हमें जीवन के अनेक अवसरों पर अपने विचारों को प्रकट करना पड़ता है। कहीं अपनी बात संक्षेप में कहनी पड़ती है तो कहीं विस्तार से। एक अच्छा विचारक बात के संक्षेपण में भी उतना ही पारंगत होता है जितना कि वह छोटी सी उक्ति को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से पव्रवित करने में समर्थ रहता है। जीवन की ऐसी ही आवश्कयताओं को ध्यान में रखकर इस इकाई में संक्षेपण कला एवं पल्लवन की जानकारी दी गई है। संक्षेपण में जहाँ मूल बात को संक्षेप में कहने का प्रयास किया जाता है तो पन्नवन में उसे विस्तार से प्रकट क्या जाता है। इन्हें सीखकर आप अपनी बात को आवश्यकतानुसार संक्षिप्त करके या विस्तार देकर प्रकट कर सकते हैं।

भूमण्डलीकरण के वर्तमान दौर में ज्ञान विज्ञान के अनेक विषय तेजी से हिन्दी भाषा तक पहुँच रहे हैं। राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किए जाने के कारण हिन्दी को अनेक पारिभाषित शब्दों को अंग्रेजी से लेना पड़ रहा है। अनेक ऐसे विषय भी हैं जिनकी पुस्तकें हिन्दी में नहीं हैं उनका हिन्दी में अनुवाद किया जाना जरुरी है। आज हिन्दी को विश्व की अत्यन्त समृद्ध भाषा बनना है इसलिए यह आवश्यक है कि इसमें अधिक से अधिक दूसरी भाषा में व्यक्त विचारों का अनुवाद किया जाय। इसी कारण आज अनुवाद का भी अत्यंत महत्त्व हो गया है। इस इकाई में आपको अनुवाद कला से परिचित करवाते हुए प्रशासनिक, वैज्ञानिक, न्यायालयीय, संसदीय और अंग्रेजी शब्दावली के हिन्दी अनुवाद दिए गए हैं। इनका अभ्यास कर आप अनुवाद कला को आसानी से सीख सकेंगे।

इस प्रकार इस खंड में आपको हिन्दी भाषा के व्यावहारिक व्याकरण के सभी प्रमुख अंगों की जानकारी दी जा रही है। भाषा के शुद्धतम व्यावहारिक प्रयोग को आत्मसात करने के लिए इन सबको सीखना अनिवार्य है। निरन्तर अभ्यास से आप इन सबके आधार पर अपनी भाषा को असरदार बना सकते हैं।

इकाई-6 हिन्दी भाषा का व्यवहारिक व्याकरण

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 मुहावरे
6.3 मुहावरे - अर्थ एवं प्रयोग
6.4 लोकोक्तियाँ
6.5 पर्यायवाची शब्द
6.6 युग्म शब्द
6.7 अनेकार्थी शब्द
6.8 वाक्यांश सूचक शब्द
6.9 उपसर्ग
6.10 प्रत्यय
6.11 शब्द शुद्धि
6.12 वाक्य शुद्धि
6.13 संदर्भ ग्रन्थ
6.14 बोध प्रश्न
6.15 बोध प्रश्न / अभ्यासों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

आधार पाठ्यक्रम का खण्ड 2 हिन्दी भाषा के व्यावहारिक व्याकरण से सम्बन्धित है। इस खण्ड की इकाई 6 में हिन्दी भाषा के व्याकरण एवं प्रयोग से सम्बन्धित बिन्दु दिये जारहे हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप हिन्दी भाषा के व्यावहारिक प्रयोग के इन बिन्दुओं से परिचित हो सकेंगे : -

- मुहावरों, लोकोक्तियों का अर्थ एवं प्रयोग।
- पर्यायवाची शब्दों का सार्थक ज्ञान।
- युग्म शब्दों का अर्थ एवं प्रयोग।
- अनेकार्थी शब्दों की जानकारी एवं व्यवहार।
- एक वाक्यांश के लिए एक सार्थक शब्द का प्रयोग।
- हिन्दी उपसर्गो एवं प्रत्ययों की जानकारी।
- शब्द-शुद्धि एवं वाक्य-प्रयोग-शुद्धि के जरिए शुद्ध लेखन का अभ्यास।

6.1 प्रस्तावना

खण्ड 1 में हिन्दी भाषा के स्वरूप और लिपि ज्ञान का अध्ययन करने के बाद इस खण्ड में हिन्दी व्याकरण के व्यावहारिक रूपों एवं प्रयोगों से आपको परिचित कराया जा रहा है।

मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग में भाषा में प्रभावशाली सार्थकता एवं स्फूर्त लाक्षणिकता आ जाती हँ। पर्यायवाची, युग्मशब्दों अनेकार्थक एवं वाक्यांश सूचक शब्द-प्रयोग में आपको शब्द भण्डार-ज्ञान एवं उपयुक्त शब्द चयन की अभिव्यक्ति क्षमता बढ़ेगी। वर्तनी एवं वाक्य सम्बन्धी शुद्ध लेखन भाषा कौशल की प्राथमिक आवश्यकता है। उपसर्ग-प्रत्यय का ज्ञान शब्द निर्माण में सहायक होगा।

6.2 मुहावरे/लोकोक्तियाँ

तात्पर्य एवं स्वरूप :

मुहावरों और लोकोक्तियों/कहावतों के उपयुक्त प्रयोग से भाषा में रोचकता और चुटीलापन आ जाता है। मुहावरे का मूल आधार है लाक्षणिक अर्थ, जबकि लोकोक्ति किसी प्रसिद्ध या लोक प्रचलित कथन या सूक्ति के रूप में होती है। जैसे ' अंगारे उगलना' मुहावरे का अर्थ होता है 'क्रोध में कठोर शब्द बोलना' शाब्दिक अर्थ में अंगारे उगलना नहीं। ऐसे ही 'काला अक्षर भँस बराबर' लोकोक्ति का अर्थ है 'अनपढ़ होना'।

6.3 मुहावरे : अर्थ एवं प्रयोग

अंगूठा दिखाना : मना कर देना

प्रयोग : अवसरवादी नेता जनता को झूठे आश्वासन देकर भी काम पड़ने पर अंगूठा दिखा देते हैं।

नौ दो ग्यारह होना : भाग जाना

प्रयोग : सिपाही को देखते ही चोर नौ दो ग्यारह हो गया।

आँख बचाना : छिपकर निकलना

प्रयोग : कई छात्र शिक्षक से आँख बचाकर कक्षा से बाहर चले जाते हैं।

सीने पर साँप लोटना : ईर्ष्या करना

प्रयोग : अपने दुश्मन की तरक्की देखकर भला किसके सीने पर साँप नहीं लोटते?

कलई खुलना : भेद खुलना

प्रयोग : पुलिस का छापा पड़ने से भ्रष्ट अधिकारी की कलई खुल गयी।

गुड गोबर करना : सब किया कराया नष्ट कर देना।

प्रयोग : खुले प्रांगण में समारोह की खूब सजावट की पर अचानक बरसात ने सब गुड़-गोबर कर दिया।

सिर पीटना : पछताना

प्रयोग : पहले पढ़े नहीं, अब फैल होकर सिर पीटने से क्या होगा?

कमर कसना : तैयार रहना

प्रयोग : हमारे सैनिक दुश्मन से मुकाबले के लिए कमर कसकर बैठे हैं।

दाँतों तले उंगली दबाना : आश्चर्य करना

प्रयोग : ताजमहल की सुन्दरता देखकर सभी पर्यटक दाँतों तले उंगली दबाते हैं।

मुहावरे : अर्थ

- **बाल भी बांका न होना :** कुछ न बिगड़ना

- **कान भरना :** चुगली करना
- **दाँत पीसना :** क्रोध करना
- **नाक कटना :** प्रतिष्ठा भंग होना
- **उल्टी गंगा बहाना :** नियम विरुद्ध कार्य करना
- **घड़ों पानी पड़ना :** लज्जित होना
- **चूड़ियाँ पहनना :** कायरता दिखाना
- **उल्लू बना :** मूर्ख बनाना
- **उल्लू सीधा करना :** स्वार्थ सिद्ध करना।
- **लोहा लेना :** युद्ध करना
- **मुँह की खाना :** हार मानना
- **पहाड़ टूटना :** कठोर विपत्ति आना
- **नाक में दम करना :** बहुत परेशान करना
- **आस्तीन का साँप होना :** विश्वासघाती होना
- **लाल पीला होना :** क्रोधित होना

6.4 लोकोक्तियाँ : अर्थ एवं प्रयोग

- **अब पछताये होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गई खेत :** काम बिगड़ जाने पर पछताना व्यर्थ है।

  प्रयोग : राजन ने पहले तो पढ़ाई नहीं की, अब असफल होने पर रो रहा है। अब पछताये होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गई खेत।
- **अन्धों में काना राजा :** मूर्खों में थोड़े गुणों वाला ही सम्मान पाता है।

  प्रयोग : भारतीय ग्राम अब भी अशिक्षा के केन्द्र हैं। वहाँ के साक्षर या अल्पशिक्षित लोग अन्यों में काने राजा बने हुए हैं।
- **अधजल गगरी छलकत जाय :** ओछा व्यक्ति इतराता अधिक है।

  प्रयोग : किसी मजदूर को राजस्थान लाटरी में दो हजार का इनाम मिलने से वह अब धरती पर पैर नहीं रखता है। सच है - अधजल गगरी छलकत जाय।
- **आधा तीतर आधा बटेर :** अनमेल वस्तुओं का संयोग।

  प्रयोग : कमल नेधोती के ऊपर बुशर्ट पहन रखी थी और पैरों में जुर्राब और जूते। उसको इस प्रकार देखकर उसके मित्र प्रदीप ने कहा कि आज तो तुम आधा तीतर आधा बटेर बने हुए हो।
- **आम के आम गुठली के दाम :** दूना लाभ होना।

  प्रयोग : शरद ने जयपुर में पढ़ाई के साथ साथ उसी संस्था में पार्ट टाइम नौकरी भी कर ली। उसने तो यह कहावत चरितार्थ कर दी कि आम के आम गुठली के दाम।
- **आँख के अन्धे नाम नयनसुख :** गुण के विरुद्ध नाम।

  प्रयोग : हजारीलाल ने अपने पुत्र का नाम तो रख दिया करोड़ीमल, पर नौकरी उसे चपरासी की भी नहीं मिली। गरीबी में ही बाप-बेटों के दिन बीतने लगे तो एक मित्र ने कहा, ये है आँख के अन्धे नाम नयनसुख।

- **दुविधा में दोऊ गये माला मिली न राम :** अस्थिर चित्त से किये गये काम सर्वथा असफल होते है।

  प्रयोग : रोहन ने कॉलेज में तो नाम लिखा ही लिया था, वह नौकरी की भी तलाश में था। पूरा वर्ष बीत गया, न पढ़ाई की, न नौकरी ही मिली। फलत: परीक्षा में भी सफलता नहीं मिली। सच ही है दुविधा में दोऊ गये माया मिली न राम।
- **कंगाली में आटा गीला :** आपत्ति पर आपत्ति आना

  प्रयोग : रमेश के घर में पिछले सप्ताह चोरी हुई थी और इस सप्ताह में उसे रिश्वत लेते हुआ पकड़ लेने से मोअत्तिल कर दिया गया। बेचारे के साथ यही कहावत चरितार्थ हुई कि कंगाली में आटा गीला।
- **काला अक्षर भैंस बराबर :** बिल्कुल अनपढ़ होना।

  प्रयोग : भारत को स्वतन्त्र हुए इतने वर्ष हो गये पर अब भी गाँवों में ऐसे-ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके लिए काला अक्षर भैंस बराबर है।
- **अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता :** एक आदमी कुछ नहीं कर सकता।

  प्रयोग : अकेला दीपक जब भ्रष्टाचार का विरोध करने का प्रयास लगा तो उसके मित्र ने कहा कि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। आज तो सर्वत्र भ्रष्टाचार है।

अर्थ :

- **ऊधो का लेना न माधो का देना :** निश्चित होकर रहना।
- **काठ की हाँडी बार-बार नहीं चढ़ती :** धोखा एक् ही बार दिया जा सकता है।
- **कोयले की दलाली में हाथ काले :** कुसंग में रहने से कलंक लगता ही है।
- **घर का भेदी लंका ढाये :** आपसी फूट में अपना ही बुरा होगा।
- **जिसकी लाठी उसकी भैंस :** बल प्रधान है।
- **तबेले की बला बन्दर के सिर :** अपराध किसी का दण्ड किसी को।
- **धोबी का कुत्ता घर का न घाट का :** कहीं भी मान-सम्मान न होना।
- **न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी :** झगड़े की जड़ ही नष्ट कर देना।
- **नौ नकद न तेरह उधार :** अधिक उधार से नकद कम भी अच्छा।
- **मुँह में राम बगल में छुरी :** मित्रता का छलपूर्ण दिखावा।
- **समरथ कोक नहीं दोष गुसाई :** बड़े आदमी के सब दोष माफ होते हैं।
- **साँप मरे ना लाठी टूटे :** काम भी हो जाये, हानि भी नहीं हो।
- **सावन सूखे न भादों हरे :** सदा एक सी दशा में रहना।
- **सीधी उंगली घी नहीं निकलता :** सीधेपन से काम नहीं चलता।
- **हाथ कंगन को आरती क्या :** प्रत्यक्षको प्रमाण की आवश्यकता नहीं।
- **हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और :** कथनी और करनी में अन्तर होना।
- **आगे नाथ न पीछे पगहा** : स्वच्छंद होना।
- **एक पन्थ दो काज :** एक प्रयत्न से दोहरा फल मिलना।
- **जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ :** गहन परिश्रम का फल अवश्य मिलता है।
- **थोथा चना दाबने घना :** तथ्य कम, आडम्बर अधिक

- **दूध का जला छाछ को भी फूँक-फूँक कर पीता है :** एक बार धोखा खाने पर सावधानी से काम करना पड़ता है।
- **दूध का दूध पानी का पानी :** सच्चा न्याय करना।
- **बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद :** मूर्ख गुण की परख नहीं कर सकता।
- **चोरी और सीना जोरी :** अपराध करने पर भी अकड़ना।
- **सिर मुँडाते ही ओले पड़ना :** कार्य के आरम्भ में ही विघ्न पड़ना।
- **ओस चाटे प्यास नहीं बुझती :** थोड़ी वस्तु से तृप्ति नहीं होती।

6.5 पर्यायवाची शब्द

तात्पर्य : भाषा में समान अर्थ रखने वाले शब्दों को पर्यायवाची या समानार्थक शब्द कहा जाता है, हालांकि उनकी अर्थ-व्यंजना में प्रयोगगत अंतर होता है।

अश्व : वाजि, तुरंग, हय, सैंघव।

आँख : नयन, नेत्र, लोचन, वसु, दृग, अक्षि।

अग्नी : अनल, पावक, ज्वाला, वहि, वैश्वानर, हु ताशन।

इच्छा : कामना, वांछा, अभिलाषा, आकांक्षा, मनोरथ, स्पृहा।

इंद्र : देवराज, मघवा, शक, सुरपति, वासव।

कमल : जलज, पंकज, पद्‌य, उत्पल, अरविन्द, नलिन, कंज, सरोज।

कपड़ा : वस्त्र, वसन, चीन, दुकूल, अम्बर, पट।।

किरण : रश्मि, कर, अंशु, मयूख, मरीचि।

गंगा : सुरसरि, जाही, त्रिपथगा, भागीरथी, देवापगा।

गुरु : आचार्य, अध्यापक, शिक्षक, उपाध्याय।

घर : गृह, सदन, धाम, नित्हेत, निवास, आवास, अयन, आलय।

चन्द्र : इन्दु, शशि, विधु, सुधाक्।र, कलानिधि, सोम, मयंक।

जल : नीर, सलिल, तोय, वारि, जीवन, उदक, अम्बू पय।

पेड़ : वृक्ष, तरु विटप, महीरूह, द्रुम।

दिन : दिवस, वासर, वार, दिवा, अह।

दूध : पय, क्षीर, दुग्ध, गोरस।

नदी : सरिता, तटिनी, सीरत् स्रोतस्विनी, तरंगिणी, शैवालिनी।

रात : रात्रि, रजनी, निशा, निशि, यामिनी, विभावरी।

पक्षी : विहग, विहंग खग, पतंग, द्‌विज, नभचर, शकुंत।

पवन : हवा, वायु, समीर, अनिल, बया, वात।

पृथ्वी : भू भूमि, धरा, धरिणी, अवनी, अचला, वसुधा, वसुन्धरा।

बादल : मेघ, जलधर, पयोधर, नीरद, पयोद, घन।

विधृत : चपला, तड़ित, सौदामिनी, चंचला, बिजली।

भमर : भौंरा, मधुकर, अलि, षट्‌पद, चंचरीक।

सर्प : भुजंग, नाग, अहि, पका, उरग, विषधर, व्याल, फणी।

सिंह : केसरी, मृगपति, मृगेन्द्र, हरि, केहरी।

स्त्री : नारी, महिला, अंगना, ललना, अबला, वनिता।

सोना : स्वर्ण, कनक, कंचन, सुवर्ण, हेम, हिरण्य।

6.6 युग्म शब्द

उन्हें समोचरित शब्द भी कहते हैं। ये वे शब्द युग्म हैं जिनका उचारण एक जैसा होने पर भी अर्थ भिन्न होता है।

युग्म शब्द	–	**अर्थ**	**युग्म शब्द**	–	**अर्थ**
अर्चन	–	पूजा	अर्जन	–	संग्रह
अनल	–	वायु	अनिल	–	अग्नि
अपेक्षा	–	आवश्यकता	उपेक्षा	–	निरादर
अभिराम	–	सुन्दर	अभिराम	–	लगातार
अंश	–	हिस्सा	अंस	–	कन्धा
अम्बुज	–	कमल	अम्बुज	–	बादल
आकर	–	खान	आकार	–	रूप
आदि	–	प्रारम्भ	आदी	–	आदत
आमरण	–	मृत्युपर्यन्त	आभरण	–	आभूषण
इति	–	समाप्ति	ईति	–	देवी आपत्ति
ओर	–	तरफ	और	–	अन्य
कुल	–	वंश	कूल	–	किनारा
गृह	–	घर	ग्रह	–	नक्षत्र
छात्र	–	विद्यार्थी	क्षात्र	–	क्षत्रिय
जलज	–	स्मल	जलद	–	बादल
तरणि	–	सूर्य	तरणी	–	नाव
तरंग	–	लहर	तुरंग	–	घोड़ा
दिन	–	दिवस	दीन	–	गरीब
द्रव	–	पतला	द्रव्य	–	धन
निधन	–	मृत्यु	निर्धन	–	गरीब
निर्माण	–	रचना	निर्वाण	–	मोक्ष
पाणि	–	हाथ	पानी	–	जल
प्रकार	–	ढंग	प्राकार	–	प्रकोट
प्रसाद	–	कृपा, नैवेद्य	प्रासाद	–	महल
पावस	–	वर्षा काल	पायस	–	खीर
पुरुष	–	नर	परूष	–	कठोर
लक्ष्य	–	निशाना, उद्देश्य	लक्ष	–	लाख
विष	–	जहर	विस	–	कमलनाल

व्रत	–	उपवास	वृत	–	घेरा
शकल	–	खण्ड	सकल	–	सब
शंकर	–	शिव	संकर	–	मेल
सुर	–	सूर्य	शूर	–	वीर
सुत	–	पुत्र	सूत	–	सारथी
सम्मान	–	इज्जत	समान	–	बराबर

6.7 अनेकार्थक शब्द

एकाधिक अर्थ वाले श्लिष्ट शब्दों को अनेकार्थक कहते हैं।

अर्थ : धन, हेतु, प्रयोजन, ऐश्वर्य, अभिप्राय।

अज : बकरा, ब्रह्म, दशरथ के पिता, शिव।

अर्क : आक, सूर्य, मंदार, वृक्ष, स्फटिक।

अक्षर : वर्ण, परमात्मा।

अंक : गोद, चिन्ह, गिनती, नाटक का अध्याय।

अम्बर : आकाश, वस्त्र।

अवस्था : आयु, दशा।

आलि : पंक्ति, सखी।

अरुण : लाल, सूर्य।

ईश्वर : परमात्मा, स्वामी, धनी।

उत्तर : दिशा का नाम, जवाब।

कृष्ण : देवकी-पुत्र, काला।

कनक : धतूरा, सोना।

कल : मशीन, चैन, बीता दिन, आने वाला दिन।

कर : हाथ, किरण, हाथी की सूंड, टैक्स।

काल : समय, मृत्यु।

कर्ण : कान, कुन्ती का पुत्र

काम : कार्य, कामदेव।

कला : कौशल (हुनर), 16 वाँ भाग।

गौ : पशु, पृथ्वी, वाणी, किरण, नेत्र, वज।

गुरु : आचार्य, भारी श्रेष्ठ।

गुणा : रस्सी, गुना, विशेषता, तीन तत्त्व, (सत्त्व, रज, तम)।

ग्रहण : लेना, पकड़ना, चन्द्र और सूर्य का ग्रसित होना।

धन : बादल, गाढ़ा, दृढ़।

घट : घड़ा, कम, देह।

चरण : पाँव, श्लोक का एक अंश।

जलज : कमल, मछली, मोती।

जलधर : बादल, सागर।

जीवन : जल, जीना।

ताल : जलाशय, स्वर-ताल (संगीत), ताड़, वृक्ष।

तात : पिता, पुत्र, भ्राता, मित्र (अवधी भाषा में)।

तीर : बाण, नदी का किनारा।

द्विज : ब्राह्मण, दाँत, पक्षी, चन्द्रमा।

दल : सेना, पत्ता, हिस्सा।

नाग : हाथी, साँप।

नाक : स्वर्ग, नासिका, आकाश।

नव : नया, नौ।

नग : पहाड़, नगीना, संख्या।

निशाचर : उल्लू राक्षस, चक्रवाक, श्रृगाल।

पय : दूध, पानी।

पद : चरण. चिह्न, स्थान, छन्द।

पत्र : चिट्ठी, पंख, पृष्ठ पत्ता।

पक्ष : पंख, पखवाड़ा, तरफ।

प्रत्यय : ज्ञान, विश्वास, शब्दांश जो शब्द के पीछे लगता है।

पतंग : पक्षी, सूर्य, गुड्डी।

पात्र : बर्तन, उपयुक्त व्यक्ति।

फल : परिणाम, तलवार की धार, आम आदि फल।

भव : होना, संसार, शिव, जन्म।

मान : आदर, अभिमान, नाप-तोल, नायिका का रूठना।

मुद्रा : सिक्का, मोहर, शारीरिक अंगों की स्थिति।

मित्र : दोस्त, सूर्य।

रश्मि : किरण, रस्सी, घोड़े की लगाम।

रस : काव्यानन्द, प्रेम, पारा, जल, आनन्द।

राग : संगीत विद्या, प्रेम लाल रंग।

लगन : ली, धुन, प्रेम, मुहूर्त

6.8 वाक्यांशसूचक शब्द

एक पूरे वाक्यांश या विस्तृत आशय वाले कथन की सूत्रबद्ध एवं सार्थक अभिव्यक्त करने वाले शब्द वाक्यांश सूचक शब्द कहलाते है। सारगर्भित लेखन एवं संक्षेपण में ये शब्द बहु त उपयोगी होते हैं।

कर्मठ	:	कार्य में संलग्र रहने वाला।
आलोचक	:	जो किसी अच्छे एवं बुरे कार्य का वर्णन करता हो, समीक्षक
इच्छित	:	जिसकी चाह हो
कुलीन	:	जिसका जन्म अच्छे कुल में हुआ हो
उर्वरा	:	ऐसी जमीन जो उत्पादक हो।
ऐच्छिक	:	स्वयं की इच्छा पर ही निर्भर
उपकृत	:	जिसके ऊपर किसी का उपकार हो
आपादमस्तक	:	सिर से लेकर पैरों तक
इतिहासज्ञ	:	इतिहास से सम्बन्धित ज्ञान रखने वाला
इन्द्रियातीत	:	जहां इन्द्रियाँ न पहुँच सके
अग्रगण्य	:	जो सर्वप्रथम गिना जाता हो
आस्तिक	:	जिसे ईश्वर एवं धर्म र्म विश्वास हो
आद्यन्त	:	आरम्भ से अन्त तक
अमर	:	जिसकी मृत्यु न हो
अलौकिक	:	इस लोक. में अलग, लोकोत्तर
अविभक्ति	:	जिसका विभाजन न किया गया हो।
अज्ञ	:	जिसमें कुछ भी ज्ञान न हो।
आजेय	:	जिस पर विजय प्राप्त न की जा सके।
अल्पज्ञ	:	जिसे थोड़ा ज्ञान हो।
आतीन्द्रिय	:	जिसे इन्द्रियों से अनुभव न किया जा सके।
आक्रान्त	:	जिसके ऊपर हमला किया गया हो।
अवध्य	:	जिसका वध करना अनुचित हो।
अपव्ययी	:	बेकार तथा फिजूल व्यय करने वाला
अनिमेष, निर्निमेष	:	अपलक, एकटक, बिना पलकें गिराये
अभेद्य	:	जिसका भेद न किया जा सके।
अनावृत्त	:	जो ढका न हो।
अजातशत्रु	:	जिसका कोई शत्रु न हो।
अनुपम	:	उपमा से रहित
अनुपम	:	उपमा से रहित
अवर्णनीय	:	जिसका वर्णन न हो सके।
अपरिहार्य	:	जिसका त्याग न क्यिा जा सके।
अनाथ	:	जो स्वामी से रहित हो।
अधित्यका	:	पहाड़ के ऊपर समतल जमीन
अदृश्य	:	जिसे देखा न जा सके
अगणित	:	जिसकी गिनती न कि जा सके
अग्रज	:	जो पहले जन्मा हो

अनुज	:	जो पीछे जन्मा हो
अकथनीय	:	जिसके विषय में कुछ न कहा जा सके
अतिथि	:	बिना तिथि बताकर आने वाला
अध्यादेश	:	निश्चित समयावधि में कार्यान्वित होने वाला त्वरित आदेश
अपराह्	:	वह समय जो दोपहर के बाद आता है।
अनुगृहीत	:	जिस पर कृपा की गयी हो।
अनुकरणीय	:	अनुकरण किये जाने के योग्य
हस्तलिखित	:	हाथ से लिखा गया
हास्यारयद	:	जिस पर हँसी आ जाए
स्वावलम्बी	:	स्वयं के ऊपर ही जो निर्भर रहता हो
सर्वज्ञ	:	जिसे सबके विषय में जानकारी हो
सार्वभौम	:	सारे स्थानों से सम्बन्धित
सार्वजनिक	:	जन सामान्य से सम्बन्धित
हितैषी	:	जो किसी का हित चाहता हो
साहित्यिक	:	साहित्य से सम्बन्ध रखने वाला
सहोदर	:	वे भाई जिनकी एक ही माँ से उत्पत्ति हो
विदुषी	:	वह स्त्री जो अधिक पढ़ी लिखी हो
शरणागत	:	शरण में आया हुआ
सजातीय	:	एक ही जाति से सम्बन्धित
स्वाधीन	:	जो अपने अधिकार में हो
विश्वसनीय	:	जिस पर विश्वास किया जा सके
वयसन्धि	:	यौवन एव बाल्यकाल के मध्य की आयु
विवेकशील	:	अच्छे और बुरे को पहचानने वाला
विशेषज्ञ	:	विषय विशेष में अधिक जानकार
विकलांग	:	वह जिसके शरीर के किसी भाग में कमी हो
मर्मज्ञ	:	किसी चीज के तत्त्व या मर्म का ज्ञाता
बडवानल	:	सागर में लगने वाली अग्नि
निर्वासित	:	जिसको देश से निकाल दिया गया हो
भौगोलिक	:	जिसका भूगोल से सम्बन्ध हो
मितभाषी	:	जो कम बोलता हो
बहुमूल्य	:	अधिक कीमत का
फलदायी	:	वह जो फल देता है
माँसाहारी	:	वह जो माँस खाता है
यथाशक्ति	:	शक्ति के अनुसार
मिथ्यावादी	:	वह जो असत्य बोलता हो
बहुभाषाविद्	:	एक से अधिक भाषाओं का ज्ञाता
मितव्ययी	:	सीमा के अन्दर खर्च करने वाला

मुमूर्षा	:	मृत्यु की इच्छा
युयुत्यु	:	युद्ध के लिए इच्छुक
पाशविक	:	जिसका व्यवहार पशुओं के समान हो
प्रार्थी	:	वह जो प्रार्थना करता है
पेय	:	वह जो पीये योग्य हो
प्राकृतिक	:	जो प्रकृति से सम्बन्धित हो
निष्ठुर, निर्दय	:	जो दया से रहित हो
परोपकारी	:	जिसमें दूसरे का हित करने की प्रवृत्ति हो
पराधीन	:	जो दूसरे के अधिकार में हो
वैज्ञानिक	:	जिसको विज्ञान का ज्ञान हो
वैयाकरण	:	जिसको व्याकरण का ज्ञान हो
पिपासु	:	जिसका पीने की अभिलाषा हो
नारकीय	:	जिसका नरक से सम्बन्ध हो
नवजात	:	नवीन उत्पत्ति वाला
निर्णायक	:	जो निर्णय करने वाला हो
दावानल	:	वह आग जो जंगल में लग जाती है
दुर्जेय	:	जिसे जीतना आसान न हो
दुष्कर	:	वह कार्य जिसे करना सरल न हो
हिज	:	जो दो बार जन्म लेता हो
तत्त्वज्ञानी	:	जिसे तत्त्व का ज्ञान हो
दुर्वह	:	जिसे कठिनता से धारण किया जा सके
निस्संतान	:	जो सन्तान से रहित हो।
निरक्षर	:	पढ़ने लिखने के ज्ञान से रहित हो
त्यक्त, परित्यक्त	:	जिसका त्याग कर दिया हो
द्रुतगामी	:	जल्दी चलने वाला
निराकार	:	जो आकार से रहित हो
दुर्लंध्य	:	जिसे लाँधा या फाँदा न जा सके
दुःसाध्य	:	जिसे सरलता से सिद्ध न किया जा सके
त्रैमासिक	:	जिसकी आवृत्ति तीन महीन में एक बार हो
नभचर	:	जो आसमान में भ्रमण करता हो
दूरदर्शी	:	दूर की बातों को सोच लेने वाला व्यक्ति
नश्वर	:	वह वस्तु जो नाशवान् हो
नास्तिक	:	जिसे ईश्वर व धर्म में अविश्वास हो
क्षणभंगुर	:	क्षण में नष्ट होने वाला
चतुर्भज	:	चार भुजाओं वाला
चक्रपाणि	:	जो हाथों में चक्र रखता हो

जिज्ञासु	:	जिसे ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हो
छिद्रान्वेषी	:	जो हर समय बुराइयाँ खोजते हैं
तितीर्षु	:	जिसे तैरकर पार होने की अभिलाषा हो
चतुष्पद	:	चार पैरों वाला
गणितज्ञ	:	जिसे गणित का ज्ञान हो
गोचर	:	इन्द्रियों के द्‌वारा जानी जाने वाली वस्तु
ज्ञेय	:	जो जानने योग्य हो
ययुत्सा	:	लड़ने की इच्छा
भीवा	:	भविष्य में घटित होने वाला
प्रत्युत्पन्नमति	:	ऐसी बुद्धि वाला जो किसी बात का हल तुरन्त निकाल सके
अद्‌वितीय	:	वह जिसकी बराबरी न हो सके, अनन्य
अतुलनीय	:	किसी से भी जिसकी तुलना न की जा सके
अपठनीय	:	जो पढ़े जाने के योग्य न हो
अन्तर्कथा	:	मूल कथा में आने वाला प्रसंग
कृतघ्न	:	जो किसी के द्‌वारा किए उपकार को न मानता हो
दम्पति	:	पुरुष व स्त्री का जोड़ा

6.9 उपसर्ग

उपसर्ग वे शब्दांश हैं जो किसी शब्द के पहले जुड़कर उसका अर्थ बदल देते हैं या उसे विशिष्ट अर्थ प्रदान करते हैं। जैसे वि+मान=विमान (अर्थ परिवर्तन) वि+जय= विजय (विशिष्ट अर्थ)। उपसर्ग और प्रत्यय भाषा में नये शब्दों के निर्माण के प्रमुख उपकरण हैं।

संस्कृत उपसर्ग :

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
अति	अधिक, परे	अतिवृष्टि, अत्याचार, अत्यन्त, अतिक्रमण, अतिशय
अधि	ऊपर, अधिक	अध्यक्ष, अध्यादेश, अधिकरण, अधिगम, अधिनायक, अधिसूचना, अधीक्षण।
अनु	पीछे, समान	अनुरूप, अनुगामी, अनुवाद, अनुकरण, अनुकूल, अनुज, अनुराग अनुभव अनुसार
अप	बुरा, विपरीत	अपकार, अपशकुन, अपमान, अपयश, अपराध, अपहरण, अपव्यय, अपकर्ष, अपशब्द।
अभि	सामने, पास	अभिमुख, अभिभाषण, अभिवादन, अभ्यागत, अभिलाषा अभिषेक, अभिभूत, अभिसार, अभिप्राय, अभ्युदय, अभियान, अभिनय, अभिज्ञान, अभिशंसा, अभिनव, अभीष्ट।
अव	नीचा, बुरा, हीन	अवनति, अवतीर्ण, अवगुण, अवतार, अवबोध, अवधारणा, अवलेह, अवसाद, अवगत, अवकाश,

		अवसर, अवलोकन, अवस्था, अवज्ञा, अवधारणा, अवधान।
आ	तक संपूर्ण	आजन्म, आक्रमण, आयात, आगमन, आकार, आचार, आदान, आधार, आगार, आमोद, आहार, आभार, आलम्बन, आशंका, आतंक, आरम्भ, आचरण, आबालवृद्ध, आकांक्षा।
उत्	ऊपर, श्रेष्ठ	उन्नति (उत्+नति), उद्घाटन (उत् + घाटन), उच्छ्वास (उत् + श्वास), उत्कृष्ट, उत्तम, उत्थान, उत्कर्ष, उल्लेख (उत् +लेख) उद्बोधन, उत्पन्न, उन्मत्त, (उत् + मत्त), उत्सर्ग, उद्धत (उत् न+ हत), उज्जयिनी (उत्+ जयिनी)
उप	पास, सहायक	उपसर्ग, उपमन्त्री, उपनाम, उपस्थिति, उपसमिति, उपवास, उपयोग, उपदेश, उपनिवेश, उपबन्ध, उपमान, उपराम, उपवन, उपहार, उपचार, उपभेद, उपनेत्र, उपकृत।
दुः/दुस्/दुर	कठिन, बुरा	मूल उपसर्ग दु : है। सन्धि के कारण इसी के दूर, दुस् दुश् दुष आदि रूप बनते है। दुर्लभ, दुस्तर, दुराचार, दुश्चरित्र (दु : फ़ चरित्र), दुष्कर्म (दु : न् कर्म), दुस्साध्य, दुस्साहस, दुर्दशा, दुराशा, दुर्भिक्ष, दुर्गम, दुर्जन, आ‍ण, दुष्प्राय, आद्धि, दुर्गति, दुर्योधन, दुर्गन्ध, दुर्जेय, दुर्भावना, दुर्भेद्द, दुर्लध्य, दुर्दिन।
निः/निर्/निस्	बाहर, बिना	निस्तेज, निरादर, निर्यात, निर्मम, निर्णय, निर्भीक, निर्वाह, निर्दोष, निराधार, निरंकुश, निरन्तर, निरामिष, निराकार, निर्गुण, निरनुनासिक, निरस्त, निरतिशय, निराश्रय, निरीश्वर, निरूत्साह, निरूपाय, निर्बल, नीरोग, निर्जल।
परा	परे विपरीत पीछे, अधिक	पराकाष्ठा, पराभाव, पराजय, पराक्रम, परामर्श, परावर्तन, पराविद्या
परि	चारों ओर, पास	परिक्रमा, परिवार, परिवर्तन, परिपूर्ण, परिकल्पना, परिमाण, परिश्रम, परिजन, परिधान, परितोष, परिचारिका, परिणय, परिमार्जन, परिसर, परिज्ञान, परिधि, पर्याप्ता
प्र	आगे,	प्रबन्ध, प्रगति, प्रचुर, प्रसिद्ध, प्रपौत्र, प्रभाव, प्रचार,

	अधिक	प्रणीत, प्रदान, प्रगाढ, प्रमाद, प्रणयन, प्रबुद्ध, प्रगीत, प्रस्तुत, प्रमुख, प्रश्रय, प्रकोप, प्रबल।
प्रति	विपरीत प्रत्येक, ओर	प्रतिवादी, प्रतीक्षा, प्रतिध्वनि, प्रतिदिन, प्रतिरूप, प्रतिकूल, प्रतिहिंसा, प्रतिक्षण, प्रतिज्ञा, प्रतिघात, प्रतिवाद, प्रतिक्रिया, प्रतिकार, प्रतिनिधि, प्रतिस्पर्धा, प्रतिबन्ध, प्रत्येक।
वि	विशेष, भिन्न अभाव	विदेश, विज्ञान, विख्यात, विपक्ष, विकार, विनाश, विजय, विघटन, वितान, विदीर्ण, विधान, विपाक, विहार, विभेद, विशेष, विक्रम, विनय, विलोचन, विपर्यय, विप्लव।
सम्	अच्छी तरह पूर्ण, साथ	सम्पूर्ण, सम्बन्ध, सन्तोष (सम् + तोष), संगीत (सम् + गीत) शुद्ध सम्मान, संचार, सन्देश, संलग्न, संसार, सहारा, सन्धान, सम्पर्क, सम्भव, संयन्त्र, सम्मुख, समाचार, समन्वय, संगम, संघटन, संचय, संगत, संजत, सम्मोह, संक्षेपण, संज्ञा, संवहन।
सु	अच्छा, सरल विशद	सुपुत्र, सुकर्म, सुमार्ग, सुअवसर, सुचरित्र, सुशिक्षित, सुगति, सुपाच्य, सुगन्ध, सुलभ, सुदिन, सुजन, सुमन, सुशील, सुदृढ़, सुशिक्षित, सुपरिचित।
हिन्दी उपसर्ग :		
अ	नहीं	अजान, अलग, अकाज, अछूता, अपच, अचेत, अथाह, अवेर।
अन	बिना	अनपढ़, अनदेखा, अनसुना, अनबन, अनमोल, अनगिनत, अनहित, अनमेल, अनजान, अनहोनी।
अध	आधा	अधमरा, अधकचरा, अधपका, अधसीजा, अधगला, अधखिला, अधनंगा।
नि	रूप	(सं. नि : का तद्भव निकम्मा, निहत्था, निधड़क, निडर, निपूता, निठल्ला, निपट)।
स	सु	अच्छा सपूत, सुघड़, सुडौल, सुजान।
बिन	निषेध या अभाव	बिनखाया, बिनव्याहा, बिनबोया, बिनजाया, बिनजाने, बिनमाने, बिनबुलाया।
भर	पूरा या भूरा हुआ	भरपेट, भरकम, भरपुर, भरसक, भरपाई।

6.10 प्रत्यय

वे शब्दांश जो शब्दों के अंत में जुड़कर उनका अर्थ एवं रूप बदल देते हैं। जैसे सोना, गुर।, ताँगा, बचा आदि शब्दों उसमें आर, ता, वाला एवं पन प्रत्यय जोड़ने से क्रमश: सुनार, गुरुता, ताँगेवाला एवं बचपन आदि शब्द बनते हैं।

प्रत्ययों के दो प्रकार हैं कृत् और तद्धित। 'कृत्' प्रत्यय क्रियाओं, धातुओं के बाद लगते हैं और 'तद्धित' प्रत्यय संज्ञा, विशेषण आदि के बाद।

संस्कृत प्रत्यय

भाववाचक तद्धित प्रत्यय :

त्व महत्व, गुरात्व, देवत्व, मनुष्यत्व, लधुत्व।

ता महत्ता, गुराता, मनुष्यता, समता, कविता।

इमा महिमा, गरिमा, अणिमा, लघिमा, नीलिमा।

इक धार्मिक, लौकिक, वार्षिक, ऐतिहासिक।

इम स्वर्णिम, अन्तिम, अंतरिम, रक्तिम।

इत पीड़ित, लजित, प्रचलित, दु : खित, मोहित।

इल धूमिल, जटिल, फेनिल, पीकल।

ईय नगरीय, मानवीय, भारतीय, राष्ट्रीय।

वान् धनवान, बलवान् विद्वान, गुणवान।

मान् बुद्धिमान, आयुष्मान्, गतिमान, शक्तिमान।

त्य पाश्चात्य, पौर्वात्य, उदाक्षिणात्य, अमात्य।

य काव्य, हास्य, ग्राम्य, बाल्य।

तारतम्यवाचक तद्धित प्रत्यय :

तर अधिकतर, गुरातर, लघुतर

तम सुन्दरतम, अधिकतम, महत्तम, लघुतम।

ईष्ठ गिरष्ठ, वीरष्ठ, लघिष्ठ।

कर्तुत्वाचक प्रत्यय :

तृ (ता) कर्ता, निर्माता, नेता, माता, भ्राता।

अक पाठक, लेखक, विचारक, पालक।

भाववाचक प्रत्यय :

अ जय, लाभ, काम, लेख, विचार, अर्थ।

अन लेखन, सम्पादन, गमन, हवा, भ्रमण, चरण g मरण, पालन।

ति गति, गति, रति।

विशेषणवाचक प्रत्यय :

त आगत, पठित, लिखित, कृत, ज्ञात।

तव्य कर्तव्य, ज्ञातव्य, गन्तव्य आदि।

य	योग्य, पूज्य, प्राप्य, खाद्य, लेख्य, स्तुत्य।
अनीय	पठनीय, पूजनीय, रमणीय, उल्लेखनीय।

हिन्दी प्रत्यय :

भाववाचक :

आ	प्यासा, भूखा।
आई	मिठाई, सफाई, रंगाई, सिलाई, पढाई।
आका	धमाका, घड़ाका, झड़ाका।
आपा	मोटापा, बुढ़ापा।
आहट	चिकनाहट, कड़वाहट, घबड़ाहट।
आस	मिठास, खटास, निरास।
ई	गर्मी, सर्दी, मजदूरी, पहाड़ी, खेती, हँसी, बोली।
आड़ी	खिलाड़ी, पहाड़ी, अनाड़ी, अगाड़ी, पिछाड़ी।
पा	बुढ़ापा, मोटापा रंडापा।

कर्तृवाचक :

आर	सुनार, लुहार, चमार, कुम्हार।
ओरा	चटोरा, नदोरा खदोरा।
इया	मुखिया, दुखिया, रसिया, गड़रिया, नदिया, बुढ़िया, डिबिया,।
इयल	मरियल, सड़ियल, डढियल।
गर	जादूगर, बाजीगर, कारीगर।
वाला	गोवाला, मोटरवाला, झाड़ूवाला।
वैया	गवैया, रखवौय, विवैया, रमैया।
एरा	लुटेरा, कसेरा, ममेरा, चचेरा।
हारा	लकड़हारा, पनिहारा, राखनहारा।
ची	चिलमची, अफीमची, नकलची, तबलची।

लघुतावाचक :

आ	बबुआ, लटुआ, मनुआ रंडुआ
ई	रस्सी, टोकरी, डोरी, कटोरा, ढोकी।
इया	खटिया, लुटिया, डिबिया, बिटिया, पुड़िया।
ड़ा	मुखड़ा, दुखड़ा, कपड़ा, चमड़ा।

संख्यावाचक :

ला	पहला, नहला, दहल
रा	दूसरा, तीसरा।
था	चौथा।
वाँ	पाँचवा, सातवाँ, नवाँ, दसवाँ।

ठा	छठा।

सम्बन्धवाचक :

ओई	बहनोई, ननदोई, रसोई।
आड़ी	खिलाड़ी, पहाड़ी, अनाड़ी, अगाड़ी, पिछाड़ी।
एरा	अचेरा, ममेरा, कसेरा, अंधेरा, लखेरा, चचेरा, फुफेरा।
एड़ी	भंगेड़ी, गंजेडी, तसेड़ी, नशेड़ी।
आरी	लुहारी, सुनारी, मनिहारी, पुजारी।

गुणवाचक :

आ	भूखा, प्यासा, म्य, दुलारा, बैचारा, मैला, मेला।
ऐला	मटमैला, कसैला, विषैला।
ईला	रंगीला, रसीला, छबीला, चमकीला।
आऊ	बटाऊ, पंडिताऊ, नामघराऊ, दिखाऊ, चलाऊ।

सादृश्यवाचक :

सा	मुझ-सा, नीला-सा, चाँद-सा, गुलाब-सा
हरा	सुनहरा, रुपहरा, तहत, चौहरा।

स्थानवाचक :

ई	पंजाबी, गुजराती, मराठी।
इया	अमरतसरिया, जयपुरिया।
आल	ननिहाल, ससुराल।
री	अजमेरी, बीकानेरी।
आना	हरियाना, राजपूताना।

6.11 शब्द शुद्धि

शुद्ध लेखन भाषिक अभिव्यक्ति की अनिवार्यता है। शुद्ध लिखने के लिए शुद्ध और सही बोलना आवश्यक है। वर्तनी एवं मात्रा संबंधी त्रुटियों को दूर करने हेतु निम्नांकित अशुद्ध शब्दों के शुद्ध रूपों का ध्यान रखिए एवं उनका सही उच्चारण एवं लेखन कीजिए।

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
युधिष्ठर	युधिष्ठिर	कवियत्री	कवयित्री
केकयी	कैकेयी	परिणित	परिणत
मैथली	मैथिली	देहिक	दैहिक
द्रष्टी	दृष्टि	आधीन	अधीन
दृष्टा	द्रष्टा	व्यहारक	व्यावहारिक
शत्रुधन	शत्रुघ्न	प्रोढ़	प्रौढ़
विभत्स	वीभत्स	द्रष्टि	पैतृक
बहु ब्रिही	बहु ब्रीहि	अनुगृह	दृष्टि
वाल्मीकी	वाल्मिकी	अकाश	अनुग्रह

तदन्तर	तदनन्तर	सप्ताहिक	आकाश
निरावलंब	निरवलंब	अनुग्रहीत	साप्ताहिक
संग्रठित	संगृहीत	चहिये	अनुगृहीत
अनुग्रहित	अनुगृहीत	जाग्रती	चाहिये
कृप्या	कृपया	प्रथक	जागृति
तत्व	तत्व	आखरी	पृथक्
कर्त्ता	कर्ता	पुज्य	आखिरी
चिन्ह	चिह्न	परिक्षा	पूज्य
ब्रम्ह	ब्रह्म	स्त्रीयाँ	परीक्षा
आव्हान	आह्वान	निरिक्षण	स्त्रियाँ
आल्हाद	आह्लाद	ऋषी	निरीक्षण
विक्रत	विकृत	जै	ऋषि
आर्शिवाद	आशीर्वाद	निरापराध	जय
सम्मुख	सम्मुख	कठीन	निरपराध
सृष्टी	सृष्टि	रात्री	कठिन
शिघ्र	शीघ्र	मुर्ख	रात्रि
अती	अति	प्रापती	मूर्ख
तैय्यार	तैयार	लक्षमी	प्राप्ति
वायू	वायु	गुरु	लक्ष्मी
अतिथी	अतिथि	व्यहारक	गुरु

6.12 वाक्य- शुद्धि :

वाक्य-रचना में व्याकरण, वर्तनी, संधि-समास एवं एक ही अर्थ के शब्दों की पुनरावृत्ति एवं अनुपयुक्त शब्द-प्रयोग संबंधी अशुद्धियाँ होती हैं। निम्नांकित अशुद्ध वाक्यों के शुद्ध वाक्य-रूपों का अभ्यास करें।

अशुद्ध	**शुद्ध**
पद्यिनी की सौंदर्यता प्रसिद्ध है।	पद्यिनी का सौंदर्य प्रसिद्ध है।
मुझको घर जाना है।	मुझे घर जाना है ।
तेरे को क्या काम है।	तुझे क्या काम है?
शुद्ध गाय का दूध अच्छा होता है।	गाय का शुद्ध दूध अच्छा होता है।
बच्चे को प्लेट में रखकर खाना दो।	प्लेट में खाना रखकर बचे को दो।
बहु त से भारत के विद्वान विदेश गये।	भारत के अनेक विद्वान विदेश गये।
दोनों छात्रों में महेश श्रेष्ठतम है।	दोनों छात्रा में महेश श्रेष्ठतर है।
सारा राज्य उसके लिये थाती था।	सारा राज्य उसके लिये ती थी।
वृक्षों पर कौआ बोल रहा है।	वृक्षों पर कौए बोल रहे हैं।
यह विषय बड़ा छोटा है।	यह विषय बहु त छोटा है।
कुत्ते रात भर चिल्लाते हैं।	कुत्ते रात भर भौंकते हैं।

यह तो केवल आप पर ही निर्भर करता है।	यह तो केवल आप पर निर्भर है।
व्यक्ति यौवनावस्था में अनेकों भूलें करता है,	व्यक्त युवावस्था यौवन में अनेक भूले करता है।
छात्रों को प्रेमचंद की कहानियों का अध्ययन करना उपयोगी रहेगा।	छात्रों के लिये प्रेमचंद की कहानियों का अध्ययन करना उपयोगी सिद्ध होगा।
बच्चों ने मंत्री महोदय को एक फूलों की माला पहनाई।	बच्चों ने मंत्री महोदय को फूलों की एक माला पहनाई।
सुरक्षा के लिये बंदूक आवश्यक शस्त्र है।	सुरक्षा के लिये बंदूक आवश्यक अस्त्र है।
अब तो दो देशों की टक्कर हो गई है।	अब तो दो देशों में टक्कर हो गई है।
हमें परस्पर में एकता से रहना चाहिये।	हमें परस्पर एकता से रहना चाहिये।
मदन पत्र लिखने को बैठा।	दन पत्र लिखने बैठा।
शीला घर नहीं है।	शीला घर पर नहीं है।
सीमा विद्वान् और कवि है।	सीमा विदुषी और कवयित्री है।
सबों ने यही कहा कि उसका भाग्य फूट गया।	सब ने यही कहा कि उसके भाग्य फूट गये।
दमयंती राजा नल की स्त्री थी।	दमयंती राजा नल की पत्नी थी।
नेहरु के निधन से देश में दुख छा गया।	नेहरु के निधन से देश में शोक छा गया।
कोहनूर एक अमूल्य हीरा है।	कोहनूर एक बहूमूल्य हीरा है
मेरे पास केवल मात्र एक पैन है।	मेरे पास केवल एक पेन है।
गाय का बच्चा बहुत अच्छा लगता है।	गाय का बछड़ा बहुत अच्छा लगता है।
मैंने अनेकों कहानियाँ पढ़ी हैं।	मैंने अनेक कहानियाँ पढ़ी हैं।
आप समय पर उपस्थित होवे।	आप समय पर उपस्थित हों।
मैंने तुम्हारा हस्ताक्षर पहचान लिया है।	मैंने तुम्हारे हस्ताक्षर पहचान लिये हैं।

6.13 संदर्भ ग्रन्थ

हिन्दी भाषा, व्याकरण व रचना - डॉ. अर्जुन तिवारी

व्यावहारिक हिन्दी - पं. रमापति शुक्ल

हिन्दी व्याकरण की सरल पद्धति - डॉ. बदरीनाथ कपूर

6.14 बोध प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए एवं अपने उत्तरों को इकाई के अतं में दिये उत्तरों से मिलाइए

1. मुहावरे और लोकोत्ति में क्या अतंर है?
2. निम्नलिखित मुहावरों का अर्थ एवं वाक्य-प्रयोग लिखिए-

   (क) श्री गणेश करना (ख) घी के दीये जलाना

(ग) रंग में भग होना (घ) दाँत खट्टे करना

3. निम्नलिखित लोकोक्तियों का अर्थ बताइए-

(क) हाथ कंगन को आरसी क्या (ख) जिसकी लाठी उसकी भैंस

(ग) आम के आम गुठलियों के दाम (घ) नाच न जाने आँगन टेढ़ा।

4. निम्नलिखित पर्यायवाची शब्दों को उपयुक्त क्रम में रखिए :

(क) अनल : हवा

(ख) अनिल : अग्नि

(ग) जलद : समुद्र

(घ) जलधि : बादल

5. निम्नांकित युग्म शब्दों में अर्थगत अंतर बताइए :

(क) अलि - आलि

(ख) अपेक्षा - उपेक्षा

(ग) अंस - अंश

(घ) शुक्ल - शुल्क

6. निम्नांकित शब्द-समूहों के अनेकार्थी शब्द लिखिए :

(क) संख्या, गोद, चिह्न (ख) वस्त्र, आकाश

(ग) लक्ष्मी - बिजली (घ) पहले, एक दिशा

7. निम्नालिखित वाक्यांशों के लिए एक शब्द लिखिए :

(क) जो कानून के विराद्ध हो (ख) वर्षा न होना

(ग) जिसके पास कुछ न हो (घ) जो पहले न पढ़ा हो

8. प्र, वि, सम् उपसर्गों से तीन-तीन शब्द बनाइए।

9. निम्नलिखित शब्दों में उपसर्ग और मूल शब्द को पृथक् कीजिए :

(क) अभ्यास (ख) अध्ययन (ग) निर्भर (घ) दुर्बल

10. आई, आर और ची प्रत्ययों से तीन-तीन शब्द बनाइए।

11. निम्नांकित मूल शब्दों में प्रयुक्त प्रत्यय बताइए :

चटनी, कमाऊ, लड़की, गुरात्व

12. निम्नलिखित अशुद्ध शब्दों के शुद्ध रूप लिखिए :

अतिथी, सदोपदेश, चातुर्यता, तदन्तर, निरावलब, एक्य

13. निम्नलिखित वाक्यों के शुद्ध रूप लिखिए :

(क) मेरा भाग फूट गया।

(ख) वह प्रातःकाल के समय घूमने जाता है।

(ग) घोड़ा चिल्ला रहा है।

(घ) सीमा बुद्धिमान् छात्रा है।

6.15 बोध प्रश्न / अभ्यासों के उत्तर

1. मुहावरों का अर्थ लक्षण पर आधारित होता है, लोकोक्ति लोकप्रचलित कहावत या अनुभव पर आधारित होती है। मुहावरे के अंत में क्रिया रूप होता है, लोकोक्ति में सम्पूर्ण वाक्य होता है।
2. (क) कार्य आरम्भ करना : उसने कल दुकान का श्री गणेश कर दिया।
   (ख) प्रसन्न होना : उनके घर पुत्र प्राप्ति पर घी के दिये जलाये गये।
   (ग) मजा किरकिरा होना : कवि सम्मेलन में बिजली चले जाने से सारा रंग में भंग हो गया।
   (घ) पराजित करना : भारतीय सेना ने शत्रु सेना के दांत खट्टे कर दिये।
3. (कप्रत्यक्ष को प्रमाण नहीं (चाहिये।
   (ख) शक्तिशाली की ही चलती है।
   (ग) दुहरा लाभ।
   (घ) अपनी अयोगयता छिपाने के लिए बहाने बनाना।
4. (क) अनल : अग्नि
   (ख) अनिल : हवा
   (ग) जलद : बादल
   (घ) जलधि : समुद्र
5. (कभ्रमर : अलि ((ख) अपेक्षा : इच्छा, उम्मीद
   आलि : सखि उपेक्षा : अवहेलना
   (ग) आत कंधा (घ) श्याक्ल : सफेद
   अंश : हिस्सा शुल्क : फीस, कर
6. (क) अंक (ख) अम्बर (ग) चपला (घ) पूर्व
7. (क) अवैध (ख) अनावृष्टि (ग) अकिंचन (घ) अपठित
8. प्र : प्रकाश, प्रकार, प्रचुर
   वि : विकास, विजय, विमान
   सम् : सम्मान, सम्पूर्ण, संभाग
9. (कआस+ अभि ((ख) आधि न+ अयन
   (ग) निर् + भर (घ) पुट् + बल
10. आई पढ़ाई :, चढ़ाई, लिखाई
    आर : सुनार, लुहार, कुम्हार
    ची : चिलमची, तबलची खंजाची
11. नी, आऊ, ई, त्व।
12. अतिथि, सदुपदेश, चातुर्थ, चतुरता, तदनन्तर, निरवलंब, ऐक्य।
13. (क) मेरे भाग फूट गये। (ख) वह प्रातःकालाप्रात: के समय घूमने जाता है।

(ग) घोड़ा हिनहिना रहा है। (घ) सीमा बुद्धिमती छात्रा है।

इकाई - 7 हिन्दी भाषा : रचना कौशल (संक्षेपण, पल्लवन और पारिभाषिक शब्दावली)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 संक्षेपण

7.3 पलवन

7.4 पारिभाषिक शब्दावली (अनुवाद)

7.5 संदर्भ ग्रन्थ

7.6 अभ्यासार्थ बोध प्रश्न

7.7 बोध प्रश्न के उत्तर

7.0 उद्देश्य

खण्ड 2 की इकाई संख्या 7 हिन्दी भाषा में रचना अभ्यास से सम्बन्धित है। इकाई 6 में आपने हिन्दी भाषा के व्यावहारिक व्याकरण के प्रमुख पक्षों की जानकारी प्राप्त की है। इकाई 7 में हम हिन्दी भाषा के व्यावहारिक ज्ञान से सम्बद्ध रचना - कौशल बढ़ाने का अभ्यास करेंगे। इस इकाई को पढ्ने के बाद आप भाषिक रचना के निम्नांकित बिन्दुओं से परिचित होकर स्वयं रचनात्मक अभिव्यक्ति कर सकेंगे-

- किसी मूल अवतरण को समझकर उनके मूल भाव को केन्द्र में रखकर उसके सार तत्त्व को अपने शब्दों में संक्षिप्त करने लिखना या संक्षेपण करना।
- किसी कवि की प्रसिद्ध काव्य पंक्ति या किसी प्रसिद्ध सूक्ति या किसी प्रचलित कहावत का मूल भाव समझकर उसे अपने शब्दों में पल्लिवित करना या उसके वृद्धीकरण /पल्लवन की रचना करने का अभ्यास।
- अंगरेजी से हिन्दी या हिन्दी से अंगरेजी में अनुवाद करने में सहायक वैज्ञानिक, आर्थिक, प्रशासनिक, न्यायिक एवं संसदीय पारिभाषिक शब्दावली का ज्ञान प्राप्त करके अनुवाद करने की सामर्थ्य बढ़ाना।

7.1 प्रस्तावना

संक्षेपण की रचना प्रक्रिया एवं रचना के अभ्यास से आपको किसी गद्दांश के मूल अवतरण के मुख्य या केन्द्रीय भाव से सम्बन्धित आवश्यक तथ्यों या बातों को अपने शब्दों में ढालकर संक्षिप्त रूप प्रस्तुत करने के रचना-कौशल का अभ्यास कराया जा रहा है।

'पल्लवन' या वृद्धीकरण की रचना-प्रक्रिया 'संक्षेपण' के बिल्कुल विपरीत है। इसमें किसी प्रसिद्ध कथन, सूक्ति या कहावत को समझकर उसे उदाहरण, उन्दरण, दृष्टांत एवं

निदर्शनों से पुष्टकर सम्यक् रूप से समझाते हुए उसके सार्थक एवं सुस्पष्ट पल्लवन का ज्ञान कराया गया है।

अनुवाद एक कला है जो निरन्तर अभ्यास से सिद्ध होती है। अनुवाद के लिए अंगरेजी एवं हिन्दी के शब्द-भण्डार का ज्ञान होना बहुत आवश्यक है। इसीलिए यहाँ प्रशासनिक-वैज्ञानिक आदि पारिभाषिक शब्दावली आपके उपयोगार्थ प्रस्तुत की गयी है। इन सबसे आपकी रचनात्मक क्षमता में निखार आयेगा।

7.2 संक्षेपण / संक्षिप्तीकरण

संक्षेपण का तात्पर्य है किसी भी गद्यांश या पद्यांश के मूल अवतरण के सभा आवश्यक तथ्यों, एवं बात के अर्थ या मूलभाव सारगर्भित, सूत्रबद्ध, संक्षिप्त, सुसंबद्ध एवं स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करना। दूसरे शब्दों में किसी विस्तृत अवतरण को लगभग एक तिहाई शब्दों में इस प्रकार लिख देना कि उसका संपूर्ण आशय स्पष्टत: समझा जा सके, संक्षेपण कहलाता है।

मंक्षेपण-रचना के लिए आवश्यक बिंदु :

- संक्षपण मूल अवतरण का लगभग एक तिहाई होना चाहिए।
- शीर्षक अनिवार्य रूप से देना चाहिए।
- वाक्य रचना स्पष्ट एवं सुसंबद्ध हो।
- मूल अवतरण के पुनरावृत्ति, उदाहरण, दृष्टांत, उद्धरण या अलंकरण आदि अंशों को संक्षेपण में नहीं लेना चाहिए।
- संक्षेपण यथासंभव परोक्ष कथन एवं अन्य पुरुष में लिखा जाना चाहिए।
- मूल भाव से असंबद्ध अनावश्यक विस्तार को संक्षेपण में स्थान न दें।
- संक्षेपण प्रस्तुत अवतरण के मूल भाव की संक्षिप्त, सत्रबद्ध एवं सुबोध रचना करने वाला हो।

संक्षेपण : अभ्यासार्थ उदाहरण

1. विद्यार्थी का कार्य है अध्ययन करते रहना। यदि वह अध्ययन नहीं करता हैं तो वह विद्यार्थी नहीं है। अधिक से अधिक विषयों पर अधिक से अधिक पुस्तकें उसे पढ़ते रहना चाहिए तथा विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन का विषय बनाना चाहिए। इससे उसके सोचने विचारने की दिशाएं विस्तृत होंगी और संकीर्णता समाप्त होगी। उसमें ज्ञान गरिमा का विस्तार, सहिष्णुता, आदि का विकास होगा एवं मौलिक चिन्तन का मार्ग खुलेगा। अनेक विद्वानों और विचारकों के दृष्टिकोणों से परिचय होगा तथा जीवन की सत्यता का पता चलेगा। अध्ययन के द्वारा ही विद्यार्थी का सही व सम्पूर्ण विकास होता है और उसका जीवन अनुकूल व आदर्श बनता है।

संक्षेपण :

विद्यार्थी और अध्ययन एक दूसरे के पूरक है। अध्ययन-रहित विद्यार्थी नहीं होता। इससे ही उसके ज्ञान का विकास होता है व अनेकों विद्वानों के विचारों से परिचय मिलता है। इससे जीवन में शालीनता आती है और व्यक्तित्व निखरता है।

शीर्षक :

"विद्यार्थी और अध्ययन"

2. मेरा समझ में केवल मनोरंजन काव्य का साध्य नहीं है। कविता पढ़ते समय मनोरंजन अवश्य होता है पर उसके उपरान्त कुछ और होता है। मनोरंजन करना कविता का प्रधान गुण है, जिससे वह मनुष्य के चित्त को अपना प्रभाव जमाने के लिए वश में किए रहती है, उसे इधर उधर जाने नहीं देती। यही कारण है कि नीति और धर्म-सम्बन्धी उपदेश चित्त पर वैसा असर नहीं करते, जैसा कि काव्य या उपन्यास से निकली हुई शिक्षा असर करती है। कविता अपनी मनोरंजन- शक्ति के द्वारा पढ़ने या सुनने वाले के चित्त को उचटने नहीं देती, उसके हृदय के मर्म-स्थानों का स्पर्श करती है और सृष्टि में मानवीय गुणों का प्रसार करती है ।

संक्षेपण :

कविता मनोरंजन के साथ-साथ व्यक्ति के जीवन में शिक्षा और नीति का भी संचार करती है तथा यह व्यक्ति के मर्म को सीधा स्पर्श करके प्रभाव जमाती है। इसका सहज प्रभाव धर्म से भी अधिक तीव्रतर होता है तथा मानवीय गुणों के उन्मेष से युक्त होता है।

शीर्षक :

"काव्य का प्रयोजन"

3. समस्त भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता उसके मूल में स्थित समन्वय की भावना है। उसकी यही विशेषता इतनी प्रमुख तथा मार्मिक है कि केवल इसी के बल पर संसार के अन्य साहित्यों के सामने वह अपनी मौलिकता की पताका फहरा सकता है। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा समन्वय की प्रसिद्धि है तथा जिस प्रकार वर्ण एवं आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में सामाजिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकारसाहित्य तथा अन्य कलाओं में भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुःख, उतथान-पतन, हर्ष-विषाद, आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा अलौकिक आनन्द में उसके विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय दिखाई देगा। भारतीय नाटकों में ही सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाये गये हैं, पर सबका अवसान आनन्द में ही हे। इसका प्रधान कारण यह है कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके, उसका उत्कर्ष बढ़ाने और उसे उन्नत बनाने का रहा है।

संक्षेपण :

भारतीय साहित्य की महती विशेषता समन्वय-भावना है। इसी विशेषता के बल पर यह साहित्य संसार के साहित्यों में अनुपम कहला सकता है। भारत में ज्ञान, भक्ति, और कर्म द्वारा धार्मिक तथा वर्णाश्रम- व्यवस्था द्वारा जैसे सामाजिक-समन्वय हुआ है, उसी

प्रकार सुख-दुःख आदि विरोधी भावों के साहित्य के विभिन्न अंगों तथा कलाओं में चित्रण द्वारा साहित्यिक-समन्वय हुआ है। भातरीयों का उद्देश्यों जीवन का आदर्श चित्रण कर उसे उन्नत बनाना रहा है।

शीर्षक :

" भारतीय साहित्य और समन्वय"

4. गीता मानव-जीवन के लिये रचनात्मक कार्यक्रम है। यह मानव- धर्म का सुन्दर महाकाव्य है, जो जीवन को उत्साह, आनन्द और कर्म की प्रेरणा से भर देता है। मानव मात्र की उन्नत और उदार आवश्यकताओं की पूर्ति गीता से होती है। गीता योगेश्वर श्रीकृष्ण की बंशी का वह संगीत है, जिसकी प्रत्येक ध्वनि, सत्यं-शिवं और सुन्दरता से सम्पन्न आध्यात्मिक जीवन को जगाने वाली है। गीता का अमृत संदेश जीवन को स्कूर्ति और श्रेष्ठ रूप देकर उभरता है। सत्य को सुन्दर बना कर व्यवहार में लाना और विश्व के भोग भोगते हुए भी सच्चिदानन्द से दूर न जाना, गीता के कर्मयोग की विलक्षणता है। इस दुखी संसार मेंवही सुखी है जो कर्म करते हुए भी गीता के गीत गुनगुनाता रहता है। कर्तव्यबोध के लिए गीता, ज्ञान की कामधेनु है।

संक्षेपण :

गीता मानव-जीवन को उत्साह, आनन्द और कर्म की प्रेरणा देने वाला महाग्रन्थ है। गीता में श्रीकृष्ण का सत्यं, शिवं, सुन्दरम् से सम्पन्न आध्यात्मिकता से संबलित संदेश है। गीता के कर्मयोग में भोग और योग का समन्वय है। गीता में कर्तव्य-बोध कराने की अनूठी शक्ति है।

शीर्षक :

"गीता का महत्त्व या गीता का सन्देश"

5. वैर-भाव, शान्ति व प्रसन्नता का घातक है क्योंकि वैर-भाव की उत्पत्ति का मूल है- दूसरे में बुराई या दोष देखना। दूसरों के दोष दर्शन, उनके द्वारा अपने प्रति किये गये आघात व अपकार का स्मरण करने से प्रतिशोध के भाव पैदा होते हैं। पर-दोष-दर्शन से द्वेष, अपकार और आघत के स्मरण से प्रत्यपकार व प्रत्याघात रूप वैर-भाव की ज्वालाएँ ज्वलित होती है। ऐसा हृदय वृक्ष जो वैर की आग से पज्वलित हो रहा हो, शान्ति व प्रसन्नता के पक्षियों का निवास या विश्राम-स्थल नहीं बन सकता है। वैर-भाव ऐसा तीव्र विष है जिस का सीधा प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है। मस्तिष्क के मर्म स्थलों में आंदोलन, उद्वेलन, असंतुल व अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है जिसका सार शरीर के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। बैर- भाव की आग में मस्तिष्क की सर्जनकारी शक्तियों की आहुति लग जाती है फलतः ऐसा निर्बल मन वाला व्यक्ति जीवन में महान् देन नहीं दे सकता। उसका जीवन हीन कर्मों में ही व्यतीत हो जाता है।

संक्षेपण :

वैर-भाव का जन्म पर दोष-दर्शन से होता है। वैर-भाव से सुख- शांति का नाश और प्रतिशोध की भावना उत्पन्न होती है। वैर-भाव ऐसा जहर है जो मस्तिष्क और हृदय दोनों को विषाक्त करके स्वास्थ्य की भी हानि करता है। वैर- भाव की आग मनुष्य की सृजनात्मक-सामर्थ्य को नष्ट करके जीवन को हीन और उपलब्धि शून्य बना देती है।

शीर्षक :

"वैर-भाव"

6. हमें स्वराज्य तो मिल गया, परन्तु सुराज्य हमारे लिए एक सुखद स्वप्न ही है। इसका प्रधान कारण यह है क् देश को समृद्ध बनाने के उद्देश्य से कठोर परिश्रम करना हमने अब तक नहीं सीखा। श्रम का महत्त्व और मूल्य हम जानते ही नहीं। हम अब भी आराम तलब है। हमें हाथों से यथेष्ट काम करना रुचता ही नहीं। हाथों से काम करने को हम हीन लक्षण समझते हैं। हम कम से कम काम क्षरा जीविका चाहते हैं। हम यही सोचते हैं कि किस तरह काम से बचा जाए। यह दूषित मनोवृत्ति राष्ट्र की आत्मका में जा बैठी है और वहां से हटती नहीं। यदि हम इससे मुक्त नहीं होते और आज समाज में हम जितना पा रहे हैं या लेना चाहते हैं, उसमें कई गुना अधिक उसे अपने कठोर श्रम से नहीं देते तो देश आगे नहीं बढ़ सकता और स्वराज्य सुराज्य में परिणत नहीं हो सकता।

संक्षेपण :

हमको स्वराज्य मिल जाने पर भी अभी तक सुराज्य नहीं मिला, क्योंकि हम कठोर परिश्रम नहीं करते। हाथे से काम करना बुरा समझते हैं। आराम तलब इतने हो गए हैं कि कम से कम काम और अधिक से अधिक दाम चाहते हैं। काम से बचने की दूषित मनोवृत्ति ने ही अभी तक हमें सुराज्य से वंचित कर रखा है।

शीर्षक :

"स्वराज्य और सुराज्य"

7.3 पल्लवन

तात्पर्य : पल्लवन या वृद्धीकरण की रचना-प्रक्रिया संक्षेपण के बिल्कुल विपरीत है। किसी कवि या विचारक के प्रसिद्ध कथन, सूक्ति या लोकप्रचलित कहावत के मूल भाव या मर्म को समझकर विस्तारपूर्वक उसके अर्थ एवं आशय को स्पष्ट एवं प्रभावशाली ढंग से समझाना ही 'पल्लवन' है। इसमें अपने समस्त अर्जित ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर उदाहरण सम्मत, प्रमाणपुष्ट तथा सोद्धरण अभिव्यक्ति क्षमता की आवश्यकता होती है। 'पल्लवन' से प्रस्तुत उक्ति की समस्त अर्थ - गंभीर बारीकियाँ एवं अर्थ छवियाँ पूर्ण रूप से व्यंजित होनी चाहिए।

पल्लवन : रचना प्रक्रिया के उल्लेख्य बिन्दु :

- वृद्धीकरण के लिए दिये गये कथन को ध्यान पूर्वक पढ़कर उसका मूल आशय (विचार-सूक्ति, कहावत, काव्य-पंक्तियाँ आदि) अच्छी तरह समझ ले। यदि कोई उक्ति किसी सन्दर्भ से उठाई गई है तो उक्त संदर्भ का आशय भली प्रकार जान लें।

- मूल भाव के का एक मोटा-मोटा प्रारूप बन जाने के बाद फिर उसे क्रमानुसार लिखें। आवश्यकता हो तो एक से अधिक अनुच्छेद भी बनाएं।
- वृद्धीकरण में अनर्गल बातें बिल्कुल न लिखें। अनावश्यक उदाहरणों से अपना ज्ञान प्रदर्शित करने का प्रयास न करें। जो कुछ लिखें उस उक्ति को स्पष्ट करने एवं विकसित करने की आवश्यकता से ही लिखें।
- वृद्धीकरण की भाषा हसज, सरल हो। उसे अनावश्यक रूप से अलंकृत न करें। अपनी मौलिक अभिव्यक्ति करें। सहज अभिव्यक्ति में ही अपनी विचार- शक्ति एवं अभिव्यक्ति क्षमता का परिचय दे दे।
- वृद्धीकरण अन्य पुराष शैली में करें।

1. माली आवत देख करि कलियन करी पुकार।
फूले फूले चुन लिए काल हमारी बार।।

युग द्रष्टा कवि कबीर ने इस दोहे में संसार की नश्वरता और इस जगत से प्रयाण की ओर संकेत किया है। जिस प्रकार बगीचे में जो कलियाँ पुष्प बन गई है, माली आकर उन्हें तोड़ लेता है, और जो अभी कच्ची कलियाँ हैं उन्हें दूसरे दिन उनके खिल कर पुष्प बन जाने पर तोड़ ले जाएगा। उसी प्रकार इस संसार में जो मनुष्य वृद्ध हो गए हैं उन्हें मृत्यु प्राप्त होती है। मृत्यु हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है वह सृष्टि का क्रम है और इस क्रम से कोई व्यक्ति बच नहीं सकता। जीवन और मृत्यु इस संसार के शाश्वत नियम है। अगर ऐसा न हो तो इस संसार में जड़ता व्याप्त हो जाए। परिवर्तन इस पृथ्वी का नियम है और इस परिवर्तन के चक्र में हरेक को चलना ही पड़ता है इसलिए मनुष्य को मृत्यु पर शोक नही करना चाहिए। मृत्यु के ध्रुव सत्य को ध्यान में रखकर मनुष्य को सदैव अहंकार रहित एवं संवेदनशील बनकर रहना चाहिए। जब अंत में मरना ही है तो अहंकार. लोभ, लालच एवं मायाजाल के प्रपंचों में लिप्त रहने का कोई अर्थ नहीं है।

2. परहित सरिस धर्म नहिं भाइ

यह महाकवि तुलसी के विश्वविख्यात महाकाव्य 'रामचरितमानस' की पंक्ति है। मनुष्य ने इस जीवन में अपनी वैचारिकता से अनेकों धर्म निर्मित किए, उसे ईश्वर से जोड़ा और मुक्ति पाने का प्रयास किया। परन्तु धर्म को वह स्वार्थ और संकुचित सीमाओं से मुक्त नहीं करा पाया। धर्म से उसने मनुष्य को बांटा, उसके अलग अलग खेमे बनाए, उसके मन में एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या और बैर का भाव पैदा किया। एक प्रकार से मानवता की समाप्ति की तभी तो इकबाल ने कहा कि - मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना। मगर स्वार्थ लोलुप व्यक्ति कभी अपने आपको इन विभाजक दीवारों से अलग नहीं कर सकता। उसमें लोक कल्याण की भावना नहीं पनपी। मानव जीवन की सफलता यदि देखे तो नैतिक कर्म में ही निहित है। इसी पवित्र भावना के द्वारा ही तो महान व्यक्तियों ने समाज और विश्व के समक्ष आदर्श की स्थापनाएं की है। शिवि, दधीचि, कर्ण आदि तो इस क्षेत्र में उज्जवल नक्षत्र है। मनुष्य की सार्थकता भी इसी में है। अपने लिए तो पशु पक्षी भी सब कुछ करते हैं, परन्तु जो दूसरों के लिए करे, दूसरों की भलाई करे वही मनुष्य कहलाने योग्य है। 'परहित' का अर्थ ही यही है कि बिना किसी भेदभाव के, दूसरे

मनुष्य का कल्याण। और धर्म का लक्ष्य भी दूरपरों का कल्याण ही होता है। सत्य, अहिंसा के मार्ग पर चलना, तथा मन, वचन, और कर्म से हर व्यक्ति की भलाई करना यही मानवता है, हुयी सही मार्ग है यदि ऐसा नहीं करते तो इससे बड़ी नीचता और क्या होगी? परोपकार ही मनुष्य जीवन का मूल मंत्र होना चाहिए और अगर ऐसा हो जाए तो इस पृथ्वी से दुःख, भय, मृत्यु, विनाश के बादल सदा के लिए मिट जाए। फिर तो चारों ओर प्रेम, सेवा मानवता का ही रूप दिखाई दे। अत: सबसे सुन्दर, श्रेष्ठ धर्म एक मात्र यही है कि हम मनुष्य मात्र के कल्याण के मार्ग पर चलें। ऐसा करने से हमारा तो मोक्ष होगा ही यह धरती स्वर्ग बन जाएगी। स्वयं भगवान् राम और कृष्ण ने ही धर्म की रक्षा और परहित के लिए हीं धरती पर अवतार लिया और इसीलिए हम उनकी पूजा करते हैं।

3. नीड़ का निर्माण फिर-फिर :

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि बच्चन की इस लोकप्रिय काव्योक्ति में निराशा और विनाश के वृक्ष पर आशा और पुनर्निमाण की प्रेरणास्कूर्त विजयाकांक्षा का शाश्वत संदेश है।

अपनी पत्नी की अकाल-मृत्यु से आहत कवि आकुल- अंतर होकर निराशा की ओर अवसाद के एकांत- संगीत में डूब जाता है। सहसा, उसकी दृष्टि एक छोटी सी चिड़िया पर पड़ती है, जो बार-बार गिरने पर भी पुन: तिनका-तिनका जोड़कर अपना नीड़ बनाने में जुटी है - और अंतत: उसे बनाकर ही साँस लेती है- इसी जवीन प्रसंग से कवि को रचनात्मक आशा और निर्माण की प्रेरणा मिली और वह जैसे चहक उठा-

"नीड़ का निर्माण फिर-फिर, स्नेह का आहवान फिर-फिर
नाश के दु : ख से कभी दबता नहीं निर्माण का सुख
प्रलय की निक्कधता से सृष्टि का नवगान फिर-फिर "

जब प्रलय के विनाश के बाद भी सृष्टि का नवविकास होता है तो फिर जीवन में छोटे-मोटे विनाश या बिखरे नीड़ों का पुनर्निमाण क्यों नहीं हो सकता?

प्रकृति के परिवर्तन चक्र में भी उत्थान-पतन, सुख-दुःख और सृजन-सिंचन, संहार और धुनःसृजन का सिलसिला चलता रहा है। क्या ऐसी कोई रात है जिसके बाद सवेरा न हुआ हो-

'दुःख की पिछली रजनी बीच विकलता सुख का नवल प्रभात।

क्या मुरझाये पतझड़ की पीठ पर सवार होकर ऋतुराज बसंत का नवोन्मेष नहीं होता :-

When Winter has come, can the spring be far behind? (वर्डस्वर्थ)

छोटी सी मकड़ी बार-बार गिर-पड़कर भी अपनी जीवट का जाला बुन लेती है, छिपकली बार बार गिरकर भी दीवार पर चढ़ कर रहती है, छोटी सी चींटी भी चट्टानी धरती को भेदकर उसकी गहराइयों में घर कर लेती है, मधुमक्खी फूलों के पराग को चुन-चुनकर शहद में ढाल देती है, छोटा सा परिंदा अपने थके पंख फड़पड़ाकर आकाश को चीरकर फिर-फिर उड़ान भरता है तो इस सभ्यता और संस्कृति के अपार उन्मेष का नायक

मनुष्य भी अपनी अदम्य जिजीविषा, अडिग इच्छा शक्ति और अथक जीवट के बल पर किसी भी विनाश की भस्म राशि के पुनर्निमाण का ठाठ खड़ा करने में सक्षम है।

मोहम्मद गोरी सत्रह बार पृथ्वीराज चौलान से हारकर भी हताश नहीं हुआ, अठारहवीं बार जीता और उसने भारतीय इतिहास की दिशा बदल दी।

अत: मनुष्य को बीती हुई बातों को बिसार कर पुन: नव-निर्माण, नव रचना और नवोन्मेष के पथ पर बढ़ना चाहिए। हारा हुआ आदमी दुबारा लड़ने का हौसला बचा लाय तब तक उसकी हार नहीं है। इसीलिए कवि डॉ. नवल भाभड़ा ने कहा है :

"फिर उड़ान भर मुक्त गगन में, चाहे थकी हुई हो पाँखें
होठों पर मुस्कान रहे, फिर चाहे जितनी नम हो आँखें। "

4. सकल पदारथ है जग माहीं
करम हीन नर पावत नहीं (तुलसी)

महाकवि तुलसी के इस प्रसिद्ध एवं अर्थगंभीर कथन में कर्म से जुड़े भाग्य का मर्म व्यंजित हुआ है।

भाग्य और भाग्य से जुड़ा कर्म। भाग्य कर्मफल ही है। निष्क्रिय व्यक्ति का भाग्य भी निष्क्रिय होता है, उद्यमी पुरुष का भाग्य सदैव सक्रिय और फलदायी होता है-

न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगा :

अर्थात् सोये हुए सिंह के मुख में अपने आप हिरण प्रवेश नहीं करते हैं। सिंह को भी स्वयं प्रयास करना पड़ता है।

जो कर्महीन है वही वास्तव में करमहीन या भाग्यहीन है। संसार में सभी तरह के सुख-साधन चमक- दमक, वैभव-ऐश्वर्य एवं सुविधाएँ हैं, पर कर्महीन हतभाग्य के लिए जैसे होकर भी नहीं है। कॉलरिज ने भी ऐसे ही प्रसंग में कहा है-

अर्थात् पानी है, पानी है, चारों तरफ पानी है पर पीने के लिए एक बूँद भी नहीं है।

“Water, water ever where
Not a drop to drink.”

अर्थात् पानी है, पानी है, चारों तरफ पानी है पर पीने के लिए एक बूँद भी नहीं है ।

वास्तव में मनुष्य स्वयं अपने पुरुषार्थ से अपने भाग्य का निर्माण करता है। पुरुषार्थी व्यक्ति के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है-

उद्योगिन हि पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी

अर्थात् उद्यतेगी पुरुषसिंह का ही लक्ष्मी वरण करती है।

और निष्क्रिय और निठल्ले लोगों का भाग्य भी निष्क्रिय हो जाता है, सब कुछ संसार में विद्वमान होने पर भी उन्हें कुछ भी सुलभ नहीं होता।

कर्म का सीधा सम्बन्ध मनुष्य की मति से है - जैसे बुद्धि, वैसा कर्म, वैसा ही फल। इसीलिए तुलसी ने कहा है-

जहाँ सुमति तहँ सम्पत्ति नाना
जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना

इसी बात को महाकवि तुलसी ने अन्यत्र दूसरे शब्दों में भी कहा है -

जिनको प्रभु दारुण दुख देहीं
तिनकी मति पहिले हर लेही

अर्थात् जिसे प्रभु को भीषण दुख देना होता है वह उसकी बुद्धि पहले ही फेरदेते हैं। दुर्मति के कारण व्यक्ति करमहीन या दुष्कर्मी बनता है और अंततः उसका दुष्परिणाम भुगतता है।

5. "अधजल गगरी छलकत जाय"

अधजल गगरी छलकत जाय' उक्ति का अर्थ है - यदि घड़ा पानी से आधा भरा होगा तो वह बाहर छलक-छलक कर लोगों को यह बता देगा कि उसमें पानी है। पर यदि घड़ा पूरा पानी से भरा हुआ है, उसको उठा कर कहीं भे ले जाया जाय, उनमें से पानी की एक् भी बूँद नहीं छलकेगी। इसका तात्पर्य है कि मानव की पूर्णता गंभीरता को जन्म देती है। एक पूर्ण ज्ञानी व्यक्ति कभी अपने ज्ञान का ढिंढोरा दूसरे व्यक्ति या समाज के सामने नहीं पीटता है। यह सय पूर्वक अहंकार से शून्य होकर, जनता को अपना ज्ञान देता है।

पर दूसरी ओर व्यक्ति की अपूर्णता अहंकार को जन्म देती है। अज्ञानी व्यक्ति थोड़ा सा ज्ञान पाकर स्वयं को किसी भी ज्ञानी से किसी प्रकार कम नहीं समझता है। वह अपने अल्प ज्ञान का खूब प्रदर्शन करता है। फल यह होता है कि लोग उसके अहंकार पर हँसते हैं, उसकी मजाक बनाते हैं।

इसी प्रकार वास्तव में जो धनवान व्यक्ति होता है, वह अपने धन का अहंकार नहीं करता। वह लोगों से यह लोगों से यह नहीं करता है कि मैं धनवान हूँ। उसका रहन-सहन, आचार-विचार अत्यन्त सरल होता है। पर साधारण स्थिति वाला व्यक्ति थोड़ा सा धन पाकर भी लोगों को यह दिखाना चाहता है कि उसके पास भी धन है। लोग उसे निर्धन न समझें। इस प्रकार अल्प धन अधजल गगरी व्यक्ति अपने धन का ढिंढोरा पीट कर अपनी आत्महीनता के भावों पर विजय प्राप्त करना चाहता है, पर यह प्रवृत्ति ठीक नहीं है। इससे व्यक्ति की आत्मा पर विजय के बजाय उसकी आत्मशक्ति का हास ही होता है।

प्रकृति के क्षेत्र में भी ऐसा उदाहरण देखा जा सकता है। समुद्र की सेवा में अनेक नदियाँ रात-दिन रत रहती हैं पर समुद्र को अपनी इस निधि का कभी अहंकार नहीं होता। वह कभी अपनी मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता, परन्तु, क्षुद्र नदियाँ वर्षा के दिनों में थोड़ा सा जल पाकर ही उन्मत्त हो उठती हैं और अपने किनारे तोड़ देती हैं।

इसलिए कहा गया है कि सद्ज्ञानी समुद्र के समान गंभीर होते हैं। उनकी स्थिति पूर्ण जल से भरी गगरी की-सी होती है, जो कभी छलकती नहीं। इसके विपरीत दुष्ठ या अज्ञानी की स्थिति अध जल गगरी की सी होती है जो थोड़ा-सा भी लाभ प्राप्त कर, अहंकार वश उसे प्रकट करने लगते हैं।

7.4 पारिभाषिक शब्दावली (अनुवाद)

हिन्दी से अंगरेजी या अंगरेजी से हिन्दी में अनुवाद करने की सहायतार्थ यहाँ वैज्ञानिक, प्रशासनिक, संसदीय, वैधानिक एवं आर्थिक पारिभाषिक शब्दावली आपके ज्ञान एवं अभ्यास के लिए प्रस्तुत है।

Annual	वार्षिक	Autonomy	स्वायत्तता
Arrest	बन्दी बनाना, गिरफ्तार	Autonomous	स्वायत्तशासी
Article	अनुच्छेद	Appointment	नियुक्ति
Assembly	सभा	Agency	अभिकरण
Adoption	स्वीकार करना, दत्तक	Allot	आवंटन
Accused	अभियुक्त	Act	अधिनियम
Agent	अभिकर्ता	Allegation	आरोप, मताधिकार
Allowances	भत्ता	Adhoc	तदर्थ
Approve	अनुमोदन करना	Adulteration	महाधिवक्ता संलग्र
Advocate General	विधायिक्त	Application	आवेदनपत्र
Appended	संलग्र	Allocation	बंटवारा, आवंटन
Adjournment	विधायिका/ व्यवस्थापिका	Legislature	व्यवस्थापक
Alien	अन्यदेशीय	Auxilliary	सहायक
Bill	विधयेक	Body	निकाय
Bail	जमानत	Broadcasting	प्रसारण
Bonus	लाभांश	Bond	बंधपत्र
Conscience	अन्त:करण	Consent	सम्मति
Consul	वाणिपय दूत	Consequential	आनुषंगिक
Dissent	विमति	Divorce	विवाह-विच्छे
Dealing	लेना देना, व्यवहार	Duty	कर्त्तव्य शुल्क
Domicile	अधिवास	Duty-Stamp	मुद्रांक शुल्क
Debit	विकलन	Debt	ऋण
Decision	विनिश्चय, फैसला	Declaration	घोषणा
Decree	डिक्री आज्ञाप्ति	Deed	विलेख

Domiciled	अधिवासी	Dividend	लाभांश
Defamation	मानहानि	Delimination	परिसीमन
Dismiss	पदच्युत करना	Discrimination	विभेद
Discretion	स्वविवेक	Discipline	अनुशासन
Direction	निर्देश	Equality	समता
Estates	संपदा	Expenditure	व्यय
Evidence	साक्ष्य	Ex-Officio	पदेन
Education	शिक्षा	External affairs	
Elect	निर्वाचन	Election	निर्वाचन
Eligibility	पात्रता	Eligible	पात्र होना
Emergency	आपात	Emigration	उत्प्रवास
Emoluments	उपलब्धियाँ	Endorsed	अंकित, पृष्ठांकित
Forbid	निषेध	Fare	किराया भाडा
Frontiers	सीमान्त	Finance bill	वित्त विधेयक
Form	प्रपत्र	Grant	अनुदान
Governor	राज्यपाल	Gazette	सूचनापत्र
Guardian	संरक्षक	Guarantee	प्रत्याभूति
Gratuity	उपदान	Honorarium	मानदेय
Habeas corpus	बन्दी प्रत्यक्षीकरण	Inquiry	जाँच परिप्रश्न
Invalid	अमान्य	Inspection	निरीक्षण जांच
Illegal	अवैध	Issue	वाद, मामला
Improvement Trust	सुधार प्रन्यास	International	अन्तरराष्ट्रीय
Infectious	संक्रामक	Insolvency	दिवाला
Judicial power	न्यायिक अधिकार	Judiciary	न्यायपालिका
Judgement	निर्णय	Jurisdiction	क्षेत्राधिकार
Livelihood	स्वाधीनता	Lock up	उप बन्दीखाना
Legal	विधि सष्कधी, कानूनी	Local body	स्थानीय निकाय
Livelihood	जीविका	Legislature	विधान मण्डल
Minor	अवयस्क	Minority	अल्पसंख्यक वर्ग
Misbvehaviour	कदाचार	Memorial	प्रव्रजन

Morality	सदाचार	Memorial	स्मारक
Municipal	उ. नगर निगम	Major	वयस्क
Majority	बहु मत	Memorandum	ज्ञापन
Navigation	नौपरिवहन	Notification	अधिसूचना
Nominate	नाम निर्देश/ मनोनीत करना	Obligation	आभार
Owner	स्वामी	Ordinance	अध्यादेश
Permission	अनुज्ञा	Penalty	शास्ति
Pension	सेवावृत्ति	Public health	लोक स्वास्थ्य
Publication	प्रकाशन	Proroque	सत्रावसान
Presiding Officer	अधिष्ठता	Proportional	अनुपाती
Prisoner	काराबन्दी	Promulgate	प्रख्यापन करना
Prohibition	प्रतिषेध	Remuneration	पारिश्रमिक
Relevancy	सुसंगति	Speaker	अध्यक्ष
Staff	कर्मचारी	Summon	आह्वान
Subordinate officer	अधीनस्थ अधिकारी	Sovereign	संप्रभु
Stamp duties	मुद्रांक शुल्क	Sentence	दण्डादेश
Security	प्रतिभूति	Talltax	पथकर
Territory	राज्य- क्षेत्र	Tenure	पदावधि
Tribunal	न्यायाधिकरण	Tribe	जनजाति
Territorial	जल-प्रांगण	Union	संघ
Unity	एकता	Violation	अतिक्रमण
Validity	मान्यता	Warrant	अधिपत्र
Will	इच्छा-पत्र वसीयत		

7.5 संदर्भ ग्रन्थ

प्रयोजन मूलक हिन्दी - डॉ. माधव सोनटक्के

अनुवाद सिद्धान्त व प्रयोग - डॉ. जी. गोपीनाथन

कोश-विज्ञान - सिद्धान्त व प्रयोग - डॉ. हरदेव बाहरी

व्यावहारिक हिन्दी - पं. रमापति शुक्ल

7.6 अभ्यासार्थ बोध प्रश्न

1. निम्नलिखित अवतरणों का संक्षेपण करते हुए उपयुक्त शीर्षक भी दीजिए :

(क) भारतीय नारी न्याय, बलिदान, साहस, शक्ति तथा सेवा की सजीव मूर्ति है। जीवन के सुख्-दुःख में छाया की भाँति पुरुष का साथदेने के कारण वह अर्द्धांगिनी, घर की व्यवस्थापिका होने के कारण वह लक्ष्मी श्लाघनीय गुणों के कारण वह देवी कही जाती है। स्वार्थ और भोग- लिप्सा को तिलांजली देकर भारतीय नारी ने आत्म-बलिदान द्वारा समय-समय पर ऐसी ज्योति प्रज्वलित कि है उसके पुनीत प्रकाश में पुरुष ने अपना मार्ग ढूंढा है। उसकी शक्ति के सामने यमराज को हारना पड़ा है। सती सावित्री वीरांगना लक्ष्मीबाई, तपस्विनी उर्मिला की दिव्यझाकियां प्रेरणा के स्त्रज्ञेत है और पुरुष को चेतना और जागरण का सन्देश देती है, नारी का सम्मान करके ही पुरुष का जीवन कुसुम सुवासित होता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार जहाँ नारी का सम्मान होता है, वहाँ देवता निवास करते है।

(ख) भयंकर आँधी, तेज गर्मी, बीहड़ रेगिस्तानी मार्ग और कंटीले रास्तों में काम करना और जीवन-निर्वाह करना तो दूर रहा वहाँ पर थोड़े समय के लिए रहना भी मुश्किल हो जाता है। ऐसे रेगिस्तान में यहाँ की नारी, श्रम लगन और त्याग के कारण श्रम-देवी की उपाधि प्राप्त किए हुए है। चहो आँधी आऐ या तुफान, घोर वर्षा हो या कड़ाके की सर्दी, यहाँ की नारी कभी अपने कर्तव्य एवं कार्य से मुँह नहीं मोड़ती। राजस्थान के पश्चिमी भूखण्ड के बाड़मेर जिले में (जिसका संपूर्ण भाग रेगिस्तान है) रहने वाली नारी अपने घरेलू कार्यों, खेती, पानी की सिंचाई, जानवरों के पालन-पोषण आदि के साथ ही व्यापार में भी तत्पर रहती है।

पो फटी नहीं कि नारी अपने दैनिक जीवन के कार्य में जुट जाती है। ग्रामों में उठने के तुरन्त पश्चात वह अपने पालतू पशुओं के लिए चारे और पानी की व्यवस्था में जूट जाती है। इसके बाद चाहे परिवार में कितने ही लोग क्यों न हो, उसे उनके लिए प्रतिदिन आवश्यकता में आनेवाला पानी निकटतम कुओं, बावड़ियों, तालाबों से लेकर आना पड़ता है। पानी, जो इस क्षेत्र की सबसे बड़ी विकट समस्या है। कोसों दूर, सैकडों फुट गहरे कुओं से पानी ये नारियाँ अपने कोमल हाथों से खींचकर, सिर पर दो-तीन मटके रख कर लाती है। पानी की केवल परिवार के मानव-समुदाय के लिए ही नहीं, पशुओं के लिए भी जरूरत होती है।

(ग) लोभियों का दमन योगियों के दमन से किसी प्रकार कम नहीं होता। लोभ के बल से वे काम और क्रोध जीतते हैं, सुख की वासना का त्याग करते हैं, मान-अपमान में समान भाव रखते हैं। अब और चाहिये क्या? जिससे वे कुछ पाने

की आशा रखते हैं वह यदि उन्हें दस गालियाँ भी देता है तो उनकी आकृति पर न रोष का कोई चिह्न प्रकट होता है और न मन में ग्लानि होती है। न उन्हें मक्खी चूसने में घृणा होती और न रक्त चूसने में दया। सुन्दर से सुन्दर रूप देखकर वे अपनी एक कौड़ी भी नहीं भूलते। करुण से करूण स्वर सुनकर वे अपना एक पैसा भी किसी के यहाँ नहीं छोड़ते। तुच्छ से तुच्छ व्यक्ति के सामने हाथ फैलाने में वे लज्जित नहीं होते। क्रोध, दया, घृणा, लज्जा आदि करने से क्या मिलता है कि वे करने जायें? जिस बात से उन्हें कुछ मिलता नहीं जबकि उसके लिए उसके मन के किसी कोने में जगह नहीं होती तब जिस बात से पास का कुछ जाता है, वह बात उन्हें कैसे लगती होगी, यह यों ही समझा जा सकता है। जिस बात में कुछ है, लगे, वह उनके किसी काम की नहीं- चाहे वह कष्ट-निवारण हो या सुख-प्राप्ति, धर्म हो या न्याय। वे शरीर सुखाते हैं, अच्छे जन, अच्छे वस्त्र की आकांक्षा नहीं करते लोभ के अंकुश से अपनी संपूर्ण इन्द्रियों को वश में रखते हैं। लोभियों! तुम्हारा अक्रोध, तुम्हारा इन्द्रिय-निग्रह, तुम्हारी मानापमान-समता, तुम्हारा तप अनुकरणीय है तुम्हारी निष्ठुरता, तुम्हारी निर्लज्जता, तुम्हारा तप अनुकरणीय,तुम्हारी निष्ठुता, तुम्हारी निर्लज्जता, तुम्हारा अविवेक, तुम्हारा अन्याय विगर्हणीय है। तुम धन्य हो। तुम्हें धिक्कार है।

2. निम्नलिखित कथनों का पल्लवन कीजिए
   (क) प्रकृति के यौवन का श्रृंगार करेंगे कभी न बासी फूल
   (ख) मन के हारे हार है, मन के जीते जीत
   (ग) जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ
3. निम्नलिखित पारिभाषिक शब्दों के सही हिन्दी अनुवाद उनके समक्ष लिखिए -
   (क) Adjournment विधायिका (ख) Legislature स्थगन
   (ग) Bonus बंधपत्र (घ) Bond लाभांश
4. निम्नलिखित पारिभाषिक शब्दों के हिन्दी अनुवाद लिखिए
   (क) Staff (ख) Bill
   (ग) Annual (घ) Agent

7.7 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

भारतीय नारी

1. (क) भारतीय नारी, न्याय, साहस, शक्ति तथा सेवा का प्रतिरूप है। वह पुरुष के लिए अर्द्धांगिनी, लक्ष्मी और देवी है, विपत्ति के अन्धकार में प्रकाश-पुंज है।भारतीय अतीत की गौरवशाली नारियाँ पुरुष की प्रेरणा-स्त्रोत रही है। नारी सम्माननीय है - यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:

मरुस्थल की कर्मठ महिला

(ख) राजस्थान के भीषण रेगिस्तानी इलाकों की नारी बड़ी परिश्रमी, कर्मठ और साहसी होती है। जीवन के नानाविध संघर्षो से उठकर मुकाबला करती हुई वह बड़ा कठोर और त्यागपूर्ण जीवन जीती है। दैनन्दिन घरेलू कार्यों के अतिरिक्त आजीविका के लिए भी वह खेती, सिंचाई, पशु-पालन, व्यापार आदि में पुरुषों के साथ पूरा हाथ बंटाती है। कोमलागी होते हुए भी, कोसों दूर स्थित सैकड़ों फुट गहरे कुओं से पानी लाकर, यह नारी अपने परिवार तथा पशुओं की पिपासा शान्त करती है।

लोभियों का आत्मदमन

(ग) लोभियों का दमन योगियों के दमन से किसी प्रकार कम नहीं होता। लोभ के बल परही वे अपनी इन्द्रियों और इच्छाओं पर नियन्त्रण रखते हुए अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए हर प्रकार से तैयार रहते है। एक मात्र अर्थ लाभ ही उनकी दृष्टि में सर्वोपरि होता है। इसीलिए सौंदर्य, क्रोध करूणा, घृणा, लज्जादि से उनका कोई सम्बन्ध नहीं रहता। यदि उनका अक्रोध, इन्द्रिय निग्रह, मानापमान-समता ओर तप अनुकरणीय है तो उनकी निष्ठुतानिर्लज्जता, अविवेक और अन्याय भर्त्सनीय।

2. (क) महाकवि प्रसाद ले कामायनी महाकाव्य में प्रलय के विनाश की भयावह निस्तब्धता की पृष्ठभूमि में सृष्टि के नव विकास का गौरवपूर्ण आख्यान किया है। हताश मनु को आशा और उत्साह का प्रेरणास्फूर्त संदेश देते हुए श्रद्धा कहती है : -

प्रकृति के यौवन का श्रृंगार, करेंगे कभी न बासी फूल
मिलेंगे वे जाकर अति शीघ्र, आह उत्सुक है उनकी धूल

परिवर्तन प्रकृति का नियम है, और यह अनवरत प्रवाहमान परिवर्तन की प्रक्रिया ही जीवन और जगत् में नित्य नूतनता और नव निर्माण की अदम्य जिजीविषा की शाश्वत संजीवनी बनकर प्रतिफलित होती है। परिवर्तन का यह अटूट क्रम निष्ठुर है। यही हमारी समस्त उत्थान और पतन, विनाश और निर्माण का कारण -

अहे निष्ठुर परिवर्तन
तुम्हारा ही नयनोन्मीलन, निखिल उत्थान-पतन।

प्रकृति चिरयौवना है, यह नित्यनूतनता की जाग्रत चेतना है। पुराने और बासी फूलों से उसका श्रृंगार नहीं हो सकता। जो पुराना है, जर्जर है, जीर्ण-शीर्ण है - प्रकृति तत्काल उसके केंचुल को उतार फेंकती है और सदैव अपने को एक नई साज-सज्जा में प्रस्तुत करती है।

पुरातनता का यह निर्मोक, सहन करती न प्रकृति पल एक
नित्य नूतनता का आनंद, किये है परिवर्तन में टेक (प्रसाद : कामायनी)

प्रकृति का परिवर्तमान ऋतु-चक्र भी सदैव नित्य नूतनता की नव-नव छवियों का मूर्त संदेश देता है। पतझड़ के शीत से हरे-भरे वृक्ष पीले पड़ जाते हैं, पत्ते और फूल मुरझाकर झर जाते हैं और फिर ऋतुराज बसंत के आते ही उनकी जगह नई कोंपले, ताजी हरियाली और नवोदित रंग-बिरंगे फूल प्रकृति के प्रांगण का नव श्रृंगार करते हैं।

मानव जीवन के सभ्यता और संस्कृति के विकास में भी नये आविष्कार पुरानी गति-स्थिति को बदलकर नित्य नवीन छवि देते रहते हैं। पुराने, जर्जर अंध विश्वासों गलित रूढ़ियों और जर्जर मान्यताओं के बासी फूल झरते हरते हैं और आधुनिक जीवन मूल्यों के सामरस्य के ताजे फूले खिलते रहते हैं। आज राजतंत्र, सामंती शोषण, विषमताजन्य अत्याचारों की जगह समता और मानवाधिकारों से पोषित प्रजातांत्रिक मूल्यों की प्रतिष्ठा है। जो जर्जर है, दलित है, जीर्ण-शीर्ण है उसे नये पल्लवों के लिए जगह बनानी होती है, बनानी चाहिए-

द्रुत झरो जगत् के जीर्ण पत्र
हे स्रस्त-ध्वस्त हे शुष्क शीर्ध
हिम-ताप भीत, मधुवात भीत
तुम वीतराग, जड़ पुराचीन- (पंत)

किसी भी देश का विकास अनुभवी वार्द्धक्य की संतुलित पृष्ठभूमि में युवा-शक्ति के हाथों ही होता है। इसलिए जीवन के कवि बच्चन का उद्बोधक आह्वान है-

ओ जो तुम ताजे, ओ जो तुम जवान
तुम्हारे लिए ही हो उठती है मेरी कलम
खुलती है मेरी जुबान

जीवन के चमन को हरा-भरा रखने के लिए पुरानी डालियों का टूटना और नई शाखाओं का पल्लवन एक प्राकृतिक अनिवार्यता है। पतझड़ पर बसंत की विजय प्रकृति का भी नियम है और जीवन का भी काल का दुर्घर्ष रथ प्राचीन और अनुपयोगी जर्जरता का रौंदता हुआ नितनूतनता के स्कूर्त-ऊर्जस्वित जवीन-पथ पर आगे बढ़ता रहता है। पुराने घाँसले टूटते है, नये नीड़ों का निर्माण होता रहता है -

नीड़ का निर्माण फिर फिर
स्नेह का आह्वान फिर-फिर (बच्चन)

और प्रकृति के यौवन के श्रृंगार के लिए प्रगतिशील कवि आस्था के स्वर में पुकार उठता है

कंकाल जाल जग में फैले
फिर नवल रुधिर पल्लव लाली
प्राणों की मर्मर से मुखरित
जीवन की मांसल हरियाली (सुमित्रानंदन पंत)

(ख) मानव देह में मन एक महत्त्वपूर्ण अंग है जिससे सम्पूर्ण जीवन और उसका र्क्य परिचालित है। इससे ही एक-एक आकांक्षा प्रस्फुटित होती है और पल्लवित होती है। मन ही मनुष्य को आगे बढ़ने की निरन्तर प्रेरणा देता है। मनुष्य क्योंकि चिन्तन शील प्राणी है इसलिए अनेकों प्रकार के भाव उसके मन में जन्म लेते हँ तथा इन्हीं विचारों के अनुसार उसकी गतिविधि चलती रहती है। यहय मन उथला भी होता है, गहरा भी, चंचल भी होता है। स्थिर भी, आशावादी भी होता है, निराशावादी भी। जैसी इसकी स्थिति होती है वैसा ही मनुष्य होता है। वैसे मन की गति बड़ी तीव्र होती है त्था पल भर में यह कहीं कहाँ पहुँच जाता है। इसीलिए ज्ञानियों ने मन को वंश में रखने का उपदेश दिया है। ऐसा करने से व्यक्ति हर कर्म सोच विचार कर करता है। आवेश के मार्ग को वह छोड़ देता है। मन सदा जल्दी ही उत्तेजित हो जाता है यही कारण है कि मन में पराजय का लेश मात्र भी विचार आता है तो व्यक्ति हताश हो जाता है और विजय की आकांक्षा समाप्त हो जाती है। इसी जगह यदि वह मन से आशावान रहे तो हारता हु आ भी जीत जाता है। इसलिए मन मनुष्य के विकास और पतन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। मन को सही दिशा दी जाये तो निश्चित ही मनुष्य प्रगति की, सफलता की सर्वोच्च अवस्था प्राप्त कर सकता है। शरीर तो रथ है, मन ही उसका सारथी है।

(ग) जिसने गहरे पानी में उतर कर खोज की है उसे मोती अवश्य मिले है। यानी जो गहरे मनोयोग से तलाशता है, कठोर परिश्रम करता है, उसे एक-न-एक दिन प्रतिफल अवश्य मिलता है जो अध्ययन रूपी सागर में गहरे गोते लगाने का साहस करता है उसे ज्ञान का मोती अवश्य मिलता है। यहाँ दो बातें स्पष्ट है - एक तो यह कि जिसने भी खोजा है उसने प्राप्त किया है, अर्थात् संकल्प के साथ जिसने मेहनत की उसको अवश्य ही कल मिलेगा। दूसरी यह कि खोजने के लिए. गहरे पानी में जाना होगा। जल की ऊपरी सतहों में परिश्रम करते रहने से कुछ उपलब्ध नहीं होने वाला। पानी के नीचे तल होगा, तल तक पहुँचना होगा उसके लिए संकल्प की साहस की शक की और परिश्रम की जरूरत होगी। यदि इन सबको बटोकर गहरे पानी में उतरेंगे और खोजेंगे तो प्राप्ति अवश्यंभावी है। पुराणों और इतिहास में भगीरथ, ध्रुव, प्रह्लाद, शंकराचार्य, विवेकानन्द, गांधी आदि के उदाहरण इसी उक्ति को चरितार्थ करते हैं। प्रसिद्ध कवि बच्चन ने इसीलिए कहा है:

"तीर पर कैसे रुकूँ मैं
आज लहरों में निमन्त्रण।"

3. निम्नलिखित पारिभाषिक शब्दों के सही हिन्दी अनुवाद उनके समक्ष लिखिए -

(क) Adjournment स्थगन

(ख) Legislature विधायिका

(ग) Bounus लाभांश

(घ) Bound बंधपत्र

4. निम्नलिखित पारिभाषिक शब्दों के हिन्दी अनुबाद लिखिए :

(क) Staff कर्मचारी

(ख) Bill विधेयक

(ग) Annual वार्षिक

(घ) agent अभिकर्ता

खण्ड 3 का परिचय

अनिवार्य हिंदी का यह तीसरा खंड इस प्रश्न पत्र का प्रमुख खण्ड है। यह पत्र लेखन एवं निबन्ध लेखन से संबंधित है। अब तक आपने हिन्दी भाषा के साहित्यकारों के द्वारा लिखी गई रचनाओं के साथ-साथ हिंदी भाषा के अपने स्वरूप एवं विकास की जानकारी प्राप्त की है। आपने भूमण्डलीकरण के दौर में हिंदी भाषा की स्थिति से भी परिचय प्राप्त किया है। इसी भाँति हिंदी भाषा के व्यावहारिक व्याकरण की भी जानकारी आपने प्राप्त कर ली है। इस आधार पर आप हिंदी साहित्य एवं भाषा के स्वरूप का अभिज्ञान प्राप्त कर चुके हैं। ये सभी बातें दूसरों के द्वारा अब तक जो कुछ भी कार्य किया गया है उस पर निर्भर थी। लेकिन भाषा का वास्तविक अभिज्ञान केवल दूसरों के रचना कर्म को पढ लेने से ही पूर्णता को प्राप्त नहीं हो जाता है। जब तक कोई व्यक्ति खुद भाषा के प्रयोग को अपने स्तर तक आत्मसात नहीं कर लेता है तब तक भाषा को सही ढंग से नहीं अपना सकता है। किसी भाषा में पारंगतता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उसको जानने वाला स्वयं दैनन्दिन जीवन के महत्त्वपूर्ण अवसरों उसको शुद्ध रूप से प्रयुक्त करना सीखें। यह तीसरा खंड आपको विविध प्रकार के पत्रों की रचना किस तरह की जाती है उसे समझाता है। साथ ही किसी दिए गए विषय पर बौद्धिक एवं तार्किक ढंग से अपने विचार एक निबन्ध रूप में किस प्रकार प्रकट किये जाने चाहिए इस कला को भी इस खण्ड में दर्शाया गया है.। इसके लिए आपको व्यक्तिगत पत्र लेखन, सामाजिक पत्र लेखन, व्यापारिक या व्यावसायिक पत्र लेखन के साथ साथ सरकारी पत्र लेखन कला का भी अभिज्ञान करवाता है।

आपके जीवन में भी अनेक अवसर आऐंगे जब आपको व्यक्तिगत, पारिवारिक, व्यापारिक या सरकारी पत्र लिखने पड़ेंगे। अत: यदि आप इन सभी पत्रों के प्रारूप को ठीक प्रकार से समझ लेंगे तो व्यावहारिक जीवन में आप किसी भी प्रकार के पत्राचार के लिए पूर्ण सक्षम हो जाऐंगे। दूसरों पर निर्भर रहने की जगह आप आत्मविश्वास के साथ अत्यन्त आधिकारिक एवं प्रभावशाली ढंग से अपने विचारों को पत्र लिखकर प्रकट कर सकेंगे।

आशा है आप स्वयं निरन्तर अभ्यास करते हुए हिंदी भाषा में अपने विचारों को स्पष्टता एवं भव्यता के साथ प्रकट करना सीख जाऐंगे। अनिवार्य हिंदी पाठयक्रम का मूल प्रयोजन भी यही है कि विद्यार्थी इस अध्ययन के माध्यम से हिंदी भाषा पर अधिकार प्राप्त करते हुए पारंगतता प्राप्त कर सकें।

इकाई - 8 व्यक्तिगत एवं सामाजिक पत्र

इकाई का रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 पत्रों के प्रकार

8.3 व्यक्तिगत पत्र

8.3.1 व्यक्तिगत पत्र लिखने का तरीका

8.3.2 व्यक्तिगत पत्रों के नमूने

8.4 सामाजिक पत्र

8.4.1 आवेदन पत्र

8.4.2 प्रार्थना पत्र

8.4.3 सम्मान पत्र

8.4.4 शिकायती पत्र

8.4.5 बधाई पत्र

8.4.6 धन्यवाद पत्र

8.4.7 शोक सन्देश

8.4.8 शोक प्रस्ताव

8.4.9 संवेदना पत्र

8.4.10 निमन्त्रण पत्र

8.4.11 अभिनन्दन पत्र

8.5 व्यावसायिक पत्र

8.6 सारांश

8.7 संदर्भ ग्रन्थ

8.8 प्रश्न एवं अभ्यास

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप व्यक्तिगत, सामाजिक, व्यावसायिक तथा सरकारी पत्राचार करने के तरीकों को समझ कर आदर्श पत्र लेखन कला को आत्मसात् कर सकेंगे। विविध प्रकार के पत्रों के स्वरूप की जानकारी देकर उन्हें लिखना सिखाना हमारा उद्देश्य है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- विविध प्रकार के पत्रों के भेदों को समझ कर उनका अन्तर कर सकेंगे।
- सभी प्रकार के व्यक्तिगत पत्र लिख सकेंगे।
- सभी प्रकार के सामाजिक पत्र लिख सकेंगे।
- सभी प्रकार के व्यावसायिक पत्र लिख सकेंगे।

- सभी प्रकार के सरकारी पत्र लिख सकेंगे।
- सरकारी विभागों में टिप्पणी लिखने की कला जान सकेंगे।
- किसी भी विषय पर संतुलित विचार पूर्ण निबंध लिख सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

इस इकाई का उद्देश्य आपको पत्र लिखना सिखलाना है। ऊपर से देखने पर तो यह बात बहुत अटपटी लगती है कि कॉलेज स्तर पर आकर भी पत्र सीखने की क्या आवश्यकता है लेकिन जब आप व्यक्तिगत, सामाजिक, व्यावसायिक एवं सरकारी पत्रों के विविध रूपों को देखेंगे तो आपको लगेगा कि आपको इनको लिखना सीखना जरुरी ही नहीं अनिवार्य भी है।

पत्र लेखन का आविष्कार :

प्रत्येक व्यक्ति अपने विचारों, भावों आदि को दूसरों के सामने प्रकट करना चाहता है। इसके लिए वह सामने वाले व्यक्ति को मुख से बोलकर अपनी बात कहता है। लेकिन जब सुनने वाला व्यक्ति सामने उपस्थित न हो तो बोलने की जगह पत्र लिखकर अपनी बात दूसरों के सामने प्रकट करता है। इस प्रकार पत्र लेखन के मूल में मनुष्य की सामाजिक उपस्थिति रहा करती है। समाज का सदस्य होने के कारण प्रत्येक मनुष्य को समाज के दूसरे व्यक्तियों से निरन्तर सम्पर्क करते रहना पड़ता है। यह संपर्क जितना अपने निकट रहने वाले व्यक्तियों से किया जाना जरुरी होता है उतना ही जरुरी दूर स्थित व्यक्तियों से भी किया जाना अनिवार्य होता है। इन दूरस्थ व्यक्तियों के साथ अपने भावों, विचारों के आदान-प्रदान के लिए ही पत्र लेखन का आविष्कार हुआ। पत्र व्यवहार के द्वारा हम अपनी भौगोलिक दूरियों को दूर करते हुए अपने विचारों को दूसरों के सामने प्रकट करने में समर्थ रहते हैं।

पत्र लेखन की महत्ता :

पत्र-व्यवहार से समाज के अनेक क्षेत्रों विविध प्रकार से विकास सम्भव हो सका। पत्र का महत्त्व इस बात को लेकर भी अधिक है कि इसके द्वारा वे बातें भी जो हम संकोच या अन्य कारणों से मुँह से बोलकर नहीं कह सकते हैं उन्हें भी पत्रों द्वारा अधिक आकर्षक और प्रभावशाली ढंग से प्रकट कर सकते हैं। पत्र लेखन में मानवीय भावों को सुन्दरतम ढंग से प्रकट करने की अपार सम्भावनाएं हैं। यही कारण है कि पत्र-लेखन एक महत्त्वपूर्ण कला बन गई है।

मानव के इतिहास में पत्रों ने अनेक प्रकार से महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाई हैं। पत्र लेखन के ऐसे ही महत्त्व को देखते हुए सबके लिए आज पत्र लेखन कला को जानना जरुरी हो गया है।

आज पत्र हमारी रोजमर्रा की जिंदगी का अनिवार्य हिस्सा बन गया है। प्रतिदिन हम औपचारिक या अनौपचारिक अनेक प्रकार के पत्र लिखते हैं अथवा दूसरों के द्वारा लिखे गए पत्र हमें प्राप्त होते हैं। घर में रहते हुए लोग अपने परिवार के सदस्यों को पत्र लिखते, मित्रों से पत्रों का अदान-प्रदान करते हैं। घर से बाहर निकलकर कहीं सामाजिक कमियों को उजागर करने के लिए शिकायती पत्र लिखते हैं, कहीं नौकरी के लिए आवेदन-

पत्र लिखते हैं, कहीं प्रार्थना पत्र लिखा जाता है। खुशियों के अवसरों पर बधाई पत्र लिखे जाते हैं तो शोक के अवसरों पर शोक पत्र भी लिखा जाता है। व्यवसाय से संबंधित पत्राचार के लिए व्यावसायिक पत्राचार किया जाता है। सरकार के एक विभाग का दूसरे विभाग से तो पत्रों के द्वारा ही संपर्क किया जाता है। इसी कारण विज्ञप्ति, विज्ञापन, अधिसूचना, विज्ञप्ति टेंडर जैसे अनेक प्रकार के अनौपचारिक सरकारी पत्राचार भी आज समाज का अनिवार्य अंग बन चुका है।

आज जीवन के हर क्षेत्र में समाज का कामकाज पत्रों के माध्यम से ही किया जाता है। पत्र से दूर बैठे व्यक्ति से सम्पर्क कर वे महत्त्वपूर्ण सूचनाएं भेज सकते हैं जिन्हें मौखिक रूप से भेजना संभव नहीं हो पाता है। पत्र द्वारा सूचनाएं क्रमबद्ध रूप में अत्यंत व्यवस्थित रूप में भेजी जा सकती हैं। क्योंकि पत्र लिखते समय हम अनेक प्रकार की आवश्यक काट-छांट कर पत्र को अत्यंत प्रभावशाली बना सकते हैं जबकि मुँह बोलकर ऐसी व्यवस्था कर पाना ज्यादातर दशाओं में संभव नहीं रह पाता है। कई-कई पत्र तो दस्तावेज के रूप में सुरक्षित रखे जा सकते हैं। अत: पत्र लिखने की कला की जानकारी प्राप्त करके ही हिंदी में पत्र लेखन में प्रवीणता प्राप्त की जा सकती है।

8.2 पत्रों के प्रकार

जीवन के विविध क्षेत्रों से संबंधित होने से सामान्यत: पत्रों के प्रकारों को आसानी से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। चूंकि प्रत्येक पत्र का प्रारूप (ढंग) उसके विषय से संबंधित होता है इसी कारण विषयों की विविधता के कारण प्रत्येक पत्र का अपना एक अलग प्रकार का ढांचा बन जाता है। इसके बावजूद सामान्य जीवन में जिस तरह के पत्र लिखे जाते हैं उनमें से कुछ अनौपचारिक पत्र होते हैं जिसमें किसी तरह की औपचारिकताओं को निभाने की जरूरत नहीं पड़ती है, ये प्राय: निजी या व्यक्तिगत पत्र होते हैं। कुछ पत्र ऐसे होते हैं जो होते तो निजी पत्र ही हैं पर उनमें कुछ सीमा तक किन्हीं औपचारिकाओं को भी निभाना पड़ता है। ये प्राय: हमारे सामाजिक दायित्वों से संबंधित होते हैं। अत: इन्हें सामाजिक पत्र कहा जा सकता है। तीसरे तरह के पत्र शुद्ध औपचारिकताओं को निभाने वाले होते हैं। इनमें एक ओर व्यापार एवं व्यवसाय से संसबंधित पत्रों को देखा जा सकता है तो दूसरी ओर समस्त प्रकार के सरकारी पत्राचार को भी इसमें समाहित किया जा सकता है ।

उपर्युक्त विवरण को ध्यान में रखते हुए समस्त प्रकार के पत्रों को अध्ययन की सुविधा के लिए निम्नलिखित चार भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. व्यक्तिगत पत्र
2. सामाजिक पत्र
3. व्यावसायिक पत्र
4. सरकारी पत्र

8.3 व्यक्तिगत पत्र

व्यक्तिगत संबंधों को आधार बना कर लिखे जाने वाले पत्र अनौपचारिक पत्र होते हैं। ये पत्र परिवार के सदस्यों, मित्रों आदि को लिखे जाते हैं। जिनको यह पत्र लिखे जाते हैं उनसे आत्मीय संबंध होने से इन पत्रों में किसी भी प्रकार की औपचारिकताओं को निभाने की जरुरत नहीं पड़ती है। ये निम्न प्रकार के होते हैं -

1. निजी या व्यक्तिगत पत्र - माता-पिता, भाई, बहिन, अन्य संबंधी व मित्रों आदि को जो पत्र लिखे जाते हैं वे निजी या व्यक्तिगत पत्र कहलाते है।
2. इनमें पत्र लेखक अपनी निजी अनुभूतियों या भावनाओं को इस रूप में व्यक्त करता है कि वह पत्र पाने दलो को निजी संवेदनाओं का स्पर्श कर सके। कई बार व्यक्तिगत पत्र भी अपनी सामाजिक उपयोगिता के कारण सभी लोगों के लिए महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। इस तरह के पत्रों का सांस्कृतिक, ऐतिहासिक अथवा सामाजिक महत्त्व होता है। पंडित जवाहरलाल नेहरू के द्वारा इंदिरा गांधी को लिखे गए पत्र इतिहास, भूगोल, विज्ञान आदि विषयों को समेट कर लिखे गए हैं। इनका संग्रह 'पुत्री के नाम पिता के पत्र' के रूप में अलग से पुस्तक रूप में भी किया गया है। व्यक्तिगत पत्र होकर भी ये पत्र समाज के लिए महत्त्वपूर्ण उपयोगी सामग्री प्रदान करते हैं।

8.3.1 (व्यक्तिगत) अनौपचारिक पत्र लिखने का तरीका :

वैसे तो व्यक्तिगत या अनौपचारिक पत्र कई तरह के होते हैं इसलिए उन सभी से संबंधित कोई खास नियम नहीं बनाए जा सकते हैं। फिर भी सभी प्रकार के अनौपचारिक पत्रों का ऊपरी ढाँचा लगभग एक जैसा होता है। दैनिक जीवन में लोग व्यक्तिगत पत्र लिखते समय जिन बातों का निर्वाह किया करते हैं उनको इन बिन्दुओं में देखा जा सकता है -

1. पत्र लिखने वाले का पता - अनौपचारिक पत्रों में सर्वप्रथम पत्रों के दाहिनी कोने में (बायीं ओर) पत्र लिखने वाले का पता लिखा जाता है।
2. तारीख लिखना - पत्र के दाहिनी ओर ही पते के नीचे पत्र लिखे जाने की तारीख डाली जाती है।
3. सम्बोधन - अब पत्र के बायीं ओर पाने वाले को संबोधित किया जाता है। ध्यान रहे संबोधन लिखते समय अपने से बड़ों के लिए, बराबर वालों तथा अपने से छोटों व स्त्री या पुरुष को ध्यान में रखकर अलग-अलग ढंग से संबोधित किया जाता है। जैसे-

   (1) बड़ों के लिए - पूज्य या पूज्या, आदरणीय या आदरणिया

   (2) बराबर वालों के लिए - प्रिय

   (3) छोटों के लिए - प्रिय

4. अभिवादन - संबोधन करने के बाद एक पंक्ति छोड़ कर अभिवादन सूचक शब्द लिया जाना चाहिए। यह भी बड़ों या छोटों के हिसाब से अलग-अलग ढंग से किया जाना चाहिए। जैसे -

   (1) बडों के लिए - सादर प्रणाम

   (2) बराबर वालों के लिए - नमस्कार

   (3) छोटों के लिए - शुभ आशीर्वाद

5. पत्र का प्रारम्भ - अभिवादन सूचक शब्द लिखने के बाद पत्र को शुरू किया जाता है इसके लिए सामान्यत: अपनी तथा अपने परिवार की कुशलता की सूचना से किया जाता है। जैसे यहाँ सभी कुशल हैं तथा परमात्मा से आपकी कुशलता की कामना करता हूँ।
6. कुशलता सूचक शब्दों के उल्लेख के पश्चात् पत्र पाने की सूचना 'आपका पत्र प्राप्त हुआ' जैसे वाक्यों से करते हुए स्वयं को प्राप्त पत्र का हवाला आदि दिया जाता है।
7. पत्र का मूल विषय - इसके उपरान्त पत्र के मूल विस्तार से लिखा जाता है। व्यक्तिगत पत्रों में मूल विषय कई बातों को समेट कर लिखे जा सकते हैं। इनकी सीमा भी नहीं होती है। पत्र लेखक जितना चाहे उतने विस्तार से अपना पत्र लिख सकता है।
8. पत्र लेखक के हस्ताक्षर - पत्र समाप्त करते हुए बिंदु तीन में किए गए संबोधन को ध्यान में रखकर नीचे दाहिनी ओर आपकी, तुम्हारा, तुम्हारी आदि लिखकर पुत्र, पुत्री, मित्र, अग्रज, अनुज आदि संबंधों को भी प्रकट किया जाता है। इसके नीचे पत्र लेखक को अपने हस्ताक्षर करने चाहिए।
9. पत्र में छूटी हुई बातों का लेखन - पत्र में यदि कोई बात छूट गई हो तो उसे बायीं तरफ 'पुनश्च' लिखकर लिख देना चाहिए। 'पुनश्च' का अर्थ होता है 'बाद में जोड़ा गया अंश'। इस अंश के समाप्त हो जाने पर पुन: हस्ताक्षर कर देने चाहिए।

8.3.2 व्यक्तिगत पत्रों के नमूने

(क) अपने से बड़ों को लिखे जाने वाले पत्र का नमूना

(1) 124, बिन्नाणी बिल्डिंग
अलख सागर रोड,
बीकानेर

(2) 13.05.2007

(3) पूज्य पिताजी,

(4) सादर प्रणाम। (5) मैं यहाँ पर पूर्ण स्वस्थ और प्रसन्न हूँ। आशा है आप एवं पूज्या माताजी भी पूर्ण स्वस्थ होंगे। (6) यहाँ मेरी पढ़ाई ठीक से चल रही है....

आपका पूत्र
परितोष

(हस्ताक्षर)

(ख) अपने बराबर वालों को लिखे जाने वाले पत्र का नमूना

(1) 520, आसोपा भवन,
रोड 8 बी 'बी' रोड
सरदारपुरा
जोधपुर

(2) 14.05.2007

(3) प्रिय मयंक,

(4) नमस्कार। (5) मैं यहाँ कुशलपूर्वक हूँ। मुझे आज ही तुम्हारा पत्र प्राप्त हुआ।(6) यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि तुम प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए हो।.....................

....

....

तुम्हरा मित्र
पुनीत

(ग) अपने से छोटों को लिखे जाने वाले पत्र का नमूना

(1) मकान नं. 307
आदर्श मौहल्ला
नई दिल्ली-1

(2) 15.05.2007

(3) प्रिय संजय,

(4) शुभाशीष। (5) तुम्हारा पत्र मिला। (6) तुमने अपनी हिमालय की यात्रा का रोमांचक वर्णन किया। ....

....

....

तुम्हारा अग्रज
राकेश

8.4 सामाजिक पत्र

समाज में विविध प्रयोजना के लिए लिखे जाने वाले पत्रों को इस वर्ग में रखा जा सकता है। इन पत्रों में जहाँ एक ओर व्यक्तिगत पत्रों के समान निजता रहा करती है वहीं दूसरी ओर सामाजिक शिष्टाचारों को निभाने की औपचारिकता भी निभाई जाती है। इसी कारण विषय के अनुरूप इनमें से प्रत्येक को लिखने का ढंग अलग-अलग प्रकार का होता है। विद्यार्थियों की जानकारी के लिए यहाँ प्रमुख प्रकार के निम्नलिखित सामाजिक पत्रों का स्वस्थ एवं उनको लिखने के ढंग को प्रस्तुत किया जा रहा है -

1. आवेदन पत्र   2. शिकायती-पत्र

3. बधाई-पत्र 4. धन्यवाद-पत्र
5. शोक-संदेश 6. शोक-प्रस्ताव
7. संवेदना-पत्र 8. निमन्त्रण-पत्र
9. सम्मान-पत्र 10. अभिनन्दन-पत्र

8.4.1 आवेदन-पत्र

किसी विभाग के प्रधान अधिकार को किसी प्रकार की अनुमति, स्वीकृति या सुविधा प्राप्त करने के लिए लिखे जाने वाले पत्र आवेदन-पत्र कहलाते हैं। ये कई प्रकार के हो सकते हैं। जैसे-

नौकरी के लिए आवेदन-पत्र :

आवेदन पत्र निम्नानुसार लिखे जाते हैं -

1. इस पत्र की शुरूआत पत्र के बायीं तरफ सबसे ऊपर 'सेवा में' लिखकर की जाती है।
2. उसके नीचे दाहिनी ओर जिस अधिकारी को पत्र लिखा जा रहा हो उसका पदनाम लिखा जाता है। उसके नीचे उसे उस विभाग का पता लिखा जाता है।
3. उसके नीचे बायीं तरफ 'महोदय' शब्द लिखकर संबोधन किया जाता है।
4. उसके नीचे मूल विषय को लिखा जाता है। इसके लिए सर्वप्रथम उस विभाग के द्वारा निकाले गए विज्ञापन का संदर्भ दिया जाता है। इसमें अखबार का नाम, विज्ञापन संख्या और विज्ञापन प्रकाशन की तारीख का उल्लेख किया जाता है।
5. इसके उपरान्त 'निवेदन है कि' शब्दों से मूल विषय की शुरूआत की जाती है। इसमें अपनी समस्त प्रकार की शैक्षणिक योग्यताओं, सह-शैक्षणिक गतिविधियों, प्राप्त अनुभवों आदि का बिन्दुवार हवाला दिया जाता है।
6. इसके नीचे नौकरी का अवसर दिए जाने का विनम्र शब्दों में अनुरोध किया जाता है।
7. पत्र का समापन करने के लिए पत्र के अन्त में शिष्टाचार निभाते हुए 'सधन्यवाद', 'अग्रिम धन्यवाद', ' धन्यवाद सहित' आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है।
8. पत्र के अन्त में नीचे दायीं तरफ ' भवदीय', 'विनीत' 'प्रार्थी' आदि उचित शब्द का उल्लेख करते हुए उसके नीचे पत्र लेखक अपने हस्ताक्षर कर देता है।
9. हस्ताक्षर के नीचे पत्र लिखकर अपना पता लिखता है।
10. सबसे अन्त में पत्र के बायीं तरफ पत्र लिखे जाने की तारीख लिखी जाती है।

आवेदन पत्र का नमूना :

(1) सेवा में,

(2) प्राचार्य
डूँगर महाविद्यालय,
बीकानेर।

(3) महोदय,

(4) निवेदन है कि दिनांक 05.01.2007 'राजस्थान पत्रिका' में प्रकाशित आपके विज्ञापन संख्या 208 के संदर्भ में आपके कॉलेज में चित्रकला के प्राध्यापक के पद के लिए आवेदन करना चाहता हूँ। (5) मेरी शैक्षणिक योग्यताएं और अन्य उपलब्धियों इस प्रकार है -

1. नाम
2. पुत्र
3. जन्म तिथि
4. शैक्षणिक योग्यताएँ
5. अन्य उपलब्धियाँ / पुरस्कार
6. प्रकाशित रचनाएँ / पुस्तकें
7. अनुभव संबंधी सूचनाएँ
8. अन्य सूचनाएँ

(6) यदि मुझे उक्त पद पर कार्य करने का अवसर दिया जाता है तो मैं पूर्ण कर्तव्यनिष्टता और ईमानदारी से कार्य करते हुए अपने आपको इस कार्य के योग्य सिद्ध करने का पूरा प्रयास करूँगा।

(7) अग्रिम धन्यवाद सहित।

(9) दिनांक 13.05.2007

(8) भवदीय
राधेश्याम शर्मा
2 क 6, पवनपुरी बीकानेर

8.4.2 प्रार्थना पत्र

किसी अधिकारी को प्रार्थना करने हेतु लिखा गया पत्र प्रार्थना पत्र कहलाता है।

प्रार्थना पत्र का नमूना :

(1) सेवा में,

(2) प्रधानाचार्य
राजकीय सार्दुल स्कूल
जयपुर।

(3) विषय : छात्रवृति प्राप्त करने हेतु।

(4) महोदय,

(5) नम्र निवेदन है कि ....
....
....

(6) दिनांक व 13.05.2007

(7) आपका आज्ञाकारी शिष्य

मोहनलाल

कक्षा - सीनियर सैकण्डरी 'अ' वर्ग

8.4.3 सम्मान-पत्र

समाज के किसी भी क्षेत्र विशेष में उल्लेखनीय कार्य करने वाले व्यक्ति को जब किसी संस्था द्वारा सम्मान किया जाता है तब उसे सम्मान-पत्र प्रस्तुत किया जाता है। सम्मान पत्र व्यक्ति विशेष की समाजोपयोगी कार्यों के उपलक्ष्य में प्रदान किया जाता है।

सम्मान पत्र का नमूना :

सम्मान-पत्र

भारत सेवक समाज कोटा के समस्त सदस्य वन विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य कर मानवीय कल्याण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के उपलक्ष्य में श्रीमती अलका देवी को स-सम्मान यह सम्मान-पत्र प्रदान करते हैं।

ह. ह.

सचिव अध्यक्ष

भारत सेवक समाज, कोटा

8.4.4 शिकायती पत्र

लोकतंत्र व्यवस्था में देश के प्रत्येक नागरिक को अपनी कठिनाईयों अथवा शिकायतें प्रकट करने का अधिकार है। इन पत्रों में किसी सरकारी / अर्द्धसरकारी कर्मचारियों द्वारा विभाग के कार्यो में की जा रही लापरवाहियों के कारण आम नागरिकों को होने वाली कठिनाईयों की ओर उन विभागों के अधिकारियों का ध्यान आकाषेत किया। जाता है। शिकायती पत्रों का प्रारूप बहु त कुछ आवेदन पत्र की तरह होता है।

शिकायती पत्र का नमूना

सेवा में,

अध्यक्ष,

नगर परिषद,

जयपुर।

विषय : वार्ड नं. 30 में अनियमित सफाई बाबत।

महोदय,

सानुरोध निवेदन है कि हमारे वार्ड नं. 30 में नालियों और सड़कों की सफाई की उचित व्यवस्था नहीं है। इस कारण चारों ओर गन्दगी फैली रहती है। कीचड़ और गंदे पानी से राह चलते लोगों को बहु त असुविधा हो रही है।

अत: आपसे निवेदन है कि आप व्यक्तिगत रुचि लेकर हमारे वार्ड में समुचित सफाई की व्यवस्था करावें, जिससे किसी प्रकार की बिमारियों से बचा जा सके।

दिनांक 20.04.2007

भवदीय

वार्ड नं. 30 के नागरिक

8.4.5 बधाई पत्र

अपने किसी परिचित या संबंधी के जीवन में परीक्षा में सफलता, पुत्र जन्म, विवाह और अन्य खुशियों के अवसरों पर दी जाने वाली बधाई को लेकर लिखा जाने वाला पत्र बधाई-पत्र कहलाता है। यह निजी पत्र की तरह लिखा जाता है, किन्तु इसमें अभिवादन के बाद सीधे मूल विषय को अत्यंत संक्षेप में लिखा जाता है।

बधाई-पत्र का नमूना

मातुश्री
रामगंज
जोधपुर

प्रिय मित्र सुरेश,

सप्रेम वन्दे। अभी-अभी समाचार पत्र में आपको राजस्थान साहितय अकादमी द्वारा पुरस्कृत किए जाने की खबर पढी है। एक साहित्यकार के रूप में आपको इतना गौरवशाली सम्मान प्राप्त करते देखकर मेरा हृदय खुशी एवं गर्व से भर उठा।

इस सम्बन्ध में मेरी ओर से हार्दिक बधाई स्वीकार करें। मैं आशा करता हूँ आप इसी तरह उन्नति करते हुए एक महान् साहित्यकार के रूप में समाज की सेवा करते रहेंगे। शेष शुभ।

आपका अभिन्न मित्र
गोपाल राम

8.4.6 धन्यवाद पत्र

बधाई पत्र के जवाब के रूप में लिखा जाने वाला पत्र धन्यवाद पत्र कहलाता है। यह सामाजिक शिष्टाचार को निभाते हुए दूसरों के द्वारा बधाई दिए जाने पर आभार प्रकट करने के रूप में लिखा जाता। इसका प्रारूप भी बधाई पत्र के समान ही होता है।

धन्यवाद पत्र का नमूना

आलोक कुंज
सीताबाड़ी
भीलवाड़ा
15.02.2006

प्रिय श्री गोपाल राम जी,

सप्रेम वन्दे। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा मुझे पुरस्कृत किए जाने पर आपका स्नेह भरा बधाई पत्र प्राप्त हुआ। इसके लिए मैं हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ। मेरी इस सफलता का श्रेय आप जैसे सुहृय बन्धुओं की शुभ कामनाओं को ही है। मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में भी आपकी ऐसी ही शुभकामनाओं के बल पर मैं निरन्तर श्रेष्ठ साहित्य सृजन कर प्रगति के पथ पर अग्रसर होता रहूँगा।

आपका अभिन्न हृदय
सुरेश गोस्वामी

8.4.7 शोक-संदेश

घर-परिवार में किसी का आकस्मिक निधन हो जाने पर संबंधियों, मित्रों परिचितों, हितेषियों को इस शोक की सूचना को देने वाले पत्र को शोक संदेश कहा जाता है। यह पत्र रूप में भी भेजा जाता है और अखबारों में भी प्रकाशित किया जा सकता है। इसमें किसी प्रकार की औपचारिकता नहीं होती है।

शोक संदेश का नमूना :

शोक-संदेश

अत्यन्त दुःख के साथ सूचित करना पड़ता है कि हमारे पूज्य पिताजी श्री नवल शंकर जी का कल दिनांक 12.12.06 को आकस्मिक निधन हो गया है। उनकी शव यात्रा दिनांक 13.12.08 को हमारे आवास से प्रात: 9.00 बजे शुरू होगी। उनका तीया दिनांक 14.12.06 को सायं 5.00 बजे हमारे आवास पर आयोजित किया जाएगा। द्वादशी का आयोजन दिनांक 23.12.06 को सायं 4.00 बजे आयोजित की जाएगी।

राम प्रकाश, जटाशंकर शर्मा
मोहन कुंज, चौतीना कुंआ
पाली

8.4.8 शोक - प्रस्ताव

किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के निधन पर किसी संस्था के द्वारा प्रकट की जाने वाली शोक श्रद्धांजलि को एक प्रस्ताव के द्वारा प्रकट किया जाता है। शोक-प्रस्ताव एक व्यक्ति की ओर से नहीं वरन् समूची संस्था के सदस्यों द्वारा प्रकट किया जाने वाला प्रस्ताव होता है। सभा में दो मिनिट का मौन रखने के उपरान्त शोक प्रस्ताव को पढा जाता है और फ़िर इसे शोक संतप्त परिवार को भेज दिया जाता है। शोक प्रस्ताव को काली का बोर्डर बना कर उसमें टाईप किया जाता है।

शोक-प्रस्ताव का नमूना :

शोक-प्रस्ताव

देश की प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के निधन पर राजस्थान प्रदेश कांग्रेस समिति के समस्त सदस्य अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करते हैं। समिति के समस्त पदाधिकारी एवं सदस्य दिवंगत आत्मा की चिर शांति और सद्गति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करती हैं।

30.10.1984
राजस्थान प्रदेश कांग्रेस के समस्त सदस्य

8.4.9 संवेदना - पत्र

शोक पत्रों के जवाब में शोक संतप्त परिवार के प्रति संवेदना व्यक्त करने के लिए जो पत्र लिखा जाता है उसे संवेदना पत्र कहते हैं।

संवेदना पत्र का नमूना :

मंगल सुदन
सुभाष चौक
बाडमेर
02.09.2005

प्रिय बन्धु,

अभी अभी आपके पुत्र की अलाक मृत्यु का हृदय विदारक समाचार सुना। इससे हृदय को गहरा धक्का लगा। यह आपके समस्त परिवार के लिए असहनीय वजपात की तरह है। मैं इस शोक की घड़ी में आपकी पीड़ा को समझ सकता हूँ। कृपया इस सम्बन्ध में मेरी हार्दिक संवेदनाएं स्वीकार करें। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह दिवंगत आत्मा को चिर शान्ति एवं सद्रति प्रदान करें तथा आपको और आपके शोक सन्तप्त परिवार को इस असीम दुःख को सहन करने की शक्ति एवं धैर्य प्रदान करें।

आपका
परमानन्द वर्मा

8.4.10 निमन्त्रण पत्र

घर में किसी प्रकार के खुशी के अवसर पर अथवा किसी सामाजिक संस्था द्वारा आयोजित किए जाने वाले किसी समारोह के लिए विशिष्ट अतिथियों को निमन्त्रित किया जाता है। इस हेतु लिखे गए पत्र को निमंत्रण पत्र कहा जाता है।

निमन्त्रण-पत्र का नमूना :

वैवाहिक निमन्त्रण - पत्र

श्रीमती एवं श्री शान्ताकुमार के पुत्र चिरंजीव मोहन एवं श्रीमती एवं श्री प्रह्लादराय की पुत्री आयुष्मती शारदा के शुभ पाणिग्रहण संस्कार के अवसर पर वर-वधु को आशीर्वाद प्रदान करने हेतु आपको सादर आमंत्रित करते हैं।

विशेष प्रार्थी	विनीत
दिलीप, गोपाल, निरंजन, बाबूलाल एवं समस्त मित्रगण	राम कुमार श्याम कुमार एवं समस्त शर्मा परिवार

कार्यक्रम

बरात प्रस्थान	सोमवार	5.5.2005	सायं 5.00 बजे
पाणिग्रहण संस्कार	सोमवार	5.5.2003	सायं 9.00 बजे
प्रीतिभोज	सोमवार	5.5.2005	रात्रि 8.00 बजे
आयोजन स्थल :	कोठारी पैलेस, मोहनपुरा, अलवर		

8.4.11 अभिनन्दन-पत्र

नेशनल कॉलेज के प्रचार्य डॉ. शिवनारायण के
सम्मान में समर्पित
अभिनन्दन-पत्र

आदर्श अध्यापक!

आपने आजीवन एक समर्पित अध्यापक की तरह अपने विद्यार्थियों को सदिशक्षा प्रदान की है। विषय का गहनतम अध्ययन कर आपने ज्ञान के सच्चे मोती अपने छात्रों को प्रदान किए हैं। आपने अपने अथक प्रयत्नों से विद्यार्थियों के अज्ञान के अन्धकार को दूर करते हुए उन्हें प्रकाश के पथ पर चलना सिखाया है। आपके अंगुली निर्देशों पर चलकर विद्यार्थियों ने अपने जीवन को प्रशस्त किया है।

अद्वितीय साहित्यकार।

आपने विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ आपने सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए श्रेष्ठ साहित्य का भी प्रणयन किया है। आपका साहित्य राष्ट्रीयता और देशप्रेम की भावना को उजागर करता है और पाठकों को उद्वेलित करता है। अपनी लेखनी से सामाजिक विसंगतियों पर प्रहार करते हुए लोगों में आदर्श भावना को भरने में पूर्ण समर्थ रहता है। अनेक पुरस्कारों से सम्मानित आपका साहित्य आगामी पीढ़ियों का मार्ग भी प्रशस्त करता रहेगा।

सुयोग्य प्रशासक!

महाविद्यालय के प्राचार्य के पद पर प्रतिष्ठित होने के पश्चात् आपने अपनी अद्वितीय प्रशासनिक क्षमताओं का भी परिचय दिया है। आपने कार्यालय के कार्यो को गतिशीलता प्रदान करते हुए परिसर, खेलकूद के मैदानों तथा भवन के विकास में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ अर्जित की है। समस्त प्रकार की शैक्षणिक एवं सह- शैक्षणिक गतिविधियों का संपादन करते हुए आपने महाविद्यालय को प्रदेश का सिरमौर कॉलेज बनाने में सफलता प्राप्त की है।

आपके सुखमय सुदीर्घ जीवन की मंगलकामनाओं के साथ।

दिनांक 30.01.2006

आपके
नेशनल कॉलेज के समस्त प्राध्यापक एवं
विद्यार्थी

8.5 व्यावसायिक पत्र अथवा व्यापारिक पत्र

व्यापार एवं व्यवसाय की उन्नति के लिए प्रत्येक व्यापारिक संस्थान को दूसरे व्यापारियों, व्यापारिक संस्थाओं से विविध प्रकार से पत्राचार करना पड़ता है। इन पत्रों के लिखने का ढंग पूर्णत: सुनिश्चित रहता है। इन पत्रों के प्रारूप को इन बिन्दुओं में देखा जा सकता है-

1. लेटर हैड (पत्र शीर्ष) - ये पत्र फार्म के छपे हुए लेटर हैड पर लिखे जाते हैं। इस पत्र शीर्ष में फर्म का नाम, पता, पंजीकरण क्रमांक, फोन नम्बर, तार एवं वेब साईट, ई-मेल आदि का पता पहले से ही छाप दिया जाता है।
2. क्रमांक व दिनांक पत्र के बायीं तरफ पत्र भेजने का क्रमांक तथा दाहिनी ओर दिनांक लिखी जाती है।
3. पत्र पाने वाले का नाम व पता - पत्र शुरू करते समय सर्वप्रथम जिस फर्म या व्यक्ति को पत्र लिखा जा रहा है उसका नाम व पता लिखा जाता है।
4. संबोधन -ऐसे पत्र हमेशा 'प्रिय महोदय' संबोधन देकर शुरू किए जाते हैं।
5. मूल विषय - व्यावसायिक पत्रों में निजी पत्रों की तरह शिष्टाचार सूचक शब्द नहीं लिखे जाते हैं। ये पत्र संबोधन के नीचे अगली पंक्ति में सीधे मूल विषय को समेट कर लिखे जाते हैं। एक से अधिक बातें लिखनी हो तो उन्हें अलग-अलग प्रेरेग्राफों में लिखा जाता है।
6. पत्र की समाप्ति-पत्र को. समाप्त कर नीचे पत्र के दाहिनी और ' भवदीय' शब्द लिखा जाता है।
7. हस्ताक्षर - 'भवदीय' के नीचे पत्र फर्म का मालिक या अधिकारी अपने हस्ताक्षर कर देता है।
8. संलग्र - यदि पत्र के साथ अन्य प्रकार के कागजात भेजने हो तो बायीं तरफ नीचे 'संलग्र' शब्द लिखकर संलग्र किए जाने वाले कागजातों का शीर्षक और संख्या लिखी जाती है।

व्यावसायिक पत्र का नमूना :

(1) मरूधर साहित्य मंदिर, जोधपुर

(2) क्रमांक. म.सा.मं. /2007/01 दिनांक 15.05.07

(3) राजस्थानी भाषा अकादमी,
मुरलीधर व्यास नगर
बीकानेर

(4) प्रिय महोदय,

(5) आपकी मांग के अनुसार हम हमारे नवीनतम प्रकाशनों सहित अपने प्रकाशनों का सूची पत्र भिजवा रहे हैं। ये सभी पुस्तकें आपको क्रय करने पर निम्नानुसार कमीशन देय होगा।

1. पाँच पुस्तकों तक - दस प्रतिशत
2. पचीस पुस्तकों तक - पच्चीस प्रतिशत
3. पच्चीस से अधिक पुस्तकों पर - तीस प्रतिशत

पुस्तकें भेजने का पैकिंग चार्ज नहीं लिया जायेगा, किन्तु डाक खर्च आपको वहन करना होगा। अपने आदेश के साथ पच्चीस प्रतिशत राशि अग्रिम भिजवाना आवश्यक है। कृपया अपना आदेश भेजकर हमें उचित सेवा का मौका प्रदान करें।

(6) भवदीय

ह.

कृते मरूधर साहित्य मंदिर, जोधपुर

8.6 सारांश

इस प्रकार सामाजिक जीवन में हमें कई प्रकार के व्यक्तिगत, सामाजिक एवं व्यावसायिक पत्र लिखने होते हैं। इस इकाई के आधार पर आप सभी प्रकार के व्यक्तिगत, सामाजिक पत्र लिख सकेंगे।

8.7 संदर्भ ग्रन्थ

1. आधुनिक हिंदी व्याकरण एवं रचना रघुनंदन प्रसाद
2. नवशती हिन्दी व्याकरण - बदरीनाथ कपूर
3. प्रयोजन मूलक हिन्दी - डॉ. माधव सोनटके

8.8 प्रश्न एवं अभ्यास

1. पत्रों के भेदों को स्पष्ट कीजिये।
2. एक अभिनंदन पत्र की रूपरेखा बनाइये।
3. अपने मित्र की सफलता पर उसे बधाई संदेश दीजिये।
4. नगर पालिका के नाम एक शिकायती पत्र लिखिये।
5. अध्यापक की नौकरी हेतु आवेदन पत्र लिखिये।
6. महाविद्‌यालय के एक कर्मचारी के पिता के देहान्त पर एक शोक प्रस्ताव की रूपरेखा बताइये।
7. आत्माराम एण्ड संस दिल्ली से पुस्तकों की खरीद हेतु एक व्यावसायिक पत्र की रूपरेखा बनाइये।

इकाई - 9 सरकारी पत्र

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 सरकारी विभाग की कार्यप्रणाली
9.3 सरकारी पत्र का प्रारूप
9.4 सरकारी पत्र का खाका
9.5 सरकारी पत्रों के विविध रूप
 9.5.1 कार्यालय ज्ञापन
 9.5.2 अधिसूचना
 9.5.3 कार्यालय आदेश
 9.5.4 परिपत्र
9.6 अर्द्ध सरकारी पत्र
 9.6.1 अर्थ सरकारी पत्र का अनुक्रम
 9.6.2 अर्ध सरकारी पत्र का प्रारुप
9.7 सरकारी पत्रों के नमूने
9.8 सारांश
9.9 संदर्भ मन्थ
9.10 प्रश्न एवं अभ्यास

9.0 उद्देश्य

आज हिन्दी भाषा को राजभाषा के रूप में विकास करना है। शासकीय भाषा के रूप में राजभाषा का स्वरूप सामान्य भाषा से भिन्न प्रकार का होता है। इसी कारण सरकारी पत्रों का स्वरूप भी सामान्य व्यक्तिगत या सामाजिक पत्रों से भिन्न प्रकार का होता है। इस इकाई में सरकारी पत्रों के स्वरूप, सरकारी पत्र लेखन की विधि (टिप्पणी लेखन) एवं विविध प्रकार के सरकारी पत्रों के स्वरूप से आपको परिचित करवाया जाएगा। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- सरकारी पत्र लेखन की प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
- सरकारी कार्यालयों में टिप्पणी लेखन की प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
- सरकारी पत्र के प्रारूप को समझकर उसे लिखना सीख सकेंगे।
- अर्द्धसरकारी पत्र के स्वरूप को समझकर उसे लिखना सीख सकेंगे।
- विविध प्रकार के सरकारी पत्रों को लिखना सीख सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

सरकारी पत्रों को शासकीय पत्र भी कहा जाता है। ये पत्र एक सरकारी विभाग से दूसरे सरकारी विभाग या संस्थाओं को लिखे जाते हैं। सरकारी पत्राचार की प्रक्रिया समझने से पहले इनके स्वरूपों को तथा सरकारी विभागों में पत्र-प्राप्ति का तरीका, पत्र से संबंधित कार्यवाही और अन्त में पत्रोत्तर दिए जाने की प्रणाली को समझ लेना जरुरी होता है। सरकारी विभागों में विभिन्न स्तर के अधिकारी, कर्मचारी होते हैं। प्रत्येक कार्य से सम्बन्धित फाईलें निर्धारित लिपिक के पास रहती है, जो बड़े बाबू के नियंत्रण में रहता है और कार्यालय अधीक्षक अधिकारियों से प्रत्येक पत्र व्यवहार के लिए उचित निर्देश प्राप्त कर तदनुसार पत्रोत्तर तैयार करवाता है।

9.2 सरकारी विभाग की कार्य प्रणाली

सरकारी विभाग के सारे कार्य निम्नानुसार संयोजित किए जाते हैं -

1. पत्र की पावती - प्रत्येक विभाग में जो भी पत्र आता है उसे सर्वप्रथम एक आवती रजिस्टर में दर्ज किया जाता है। पावती लिपिक पंजीकरण के उपरान्त पत्र को संबंधित अनुभाग अधिकारी के पास भिजवा देता है। अनुभाग अधिकारी समस्त पत्रों को संबंधित अधिकारी के पास ले जाता है जो उनसे संबंधित निर्देश के साथ उन पर अपने लघु हस्ताक्षर कर देता है जिसे कार्यालय के शब्दों में पत्र को 'मार्क' करना कहा जाता है।
2. टिप्पणी - विभाग के अधिकारी द्वारा 'मार्क ' कर दिए जाने पर उस पत्र से संबंधित कार्यवाही शुरू हो जाती है। इसके लिए संबंधित लिपिक सर्वप्रथम एक नई फाईल तैयार करता है तथा विभाग की नोटशीट (मिसिल) पर अपनी टिप्पणी अंकित करता है। इसमें पत्र का सारांश, सही तथ्यों को नियमों, नीतियों और इससे संबंधित पूर्व के निर्णयों का उल्लेख करता है। इस प्रकार टिप्पणी तैयारकर वह बायीं तरफ अपने हस्ताक्षर करता है और अनुभाग अधिकारी को सौंप देता है। अनुभाग अधिकारी लिपिक की टिप्पणी को पढ़कर अपनी ओर से टिप्पणी लिखकर उचित आदेश हेतु अधिकारी के पास मिसिल भिजवा देता है। अधिकारी सभी बातों का अध्ययन कर अपने आदेश प्रदान कर मिसिल को लौटा देता है। अधिकारी के द्वारा दिए गए आदेशों की अनुपालना में पत्र का जवाब तैयार किया जाता है और अधिकारी के हस्ताक्षर करवा कर पत्रोत्तर भिजवा दिया जाता है।
3. नोट शीट की प्रक्रिया - टिप्पणी लिखने के लिए नोटशीट का प्रयोग किया जाता है। इसके बायीं तथा दायीं दोनों ओर हाशिए होते हैं।
    1. नोटशीट पर सर्वप्रथम कार्यालय या अनुभाग का नाम लिखा जाता है।
    2. पावती की दिनांक एवं क्रमांक का हवाला दिया जाता है।
    3. टिप्पणी निम्न क्रम में लिखी जाती है - विषय, नियम, कार्यालय के पूर्व निर्णय और अन्त में सुझावों को दिया जाता है।

4. नोटशीट पर अराजपत्रित अधिकारी बायीं तरफ हस्ताक्षर करते हैं तथा राजपत्रित अधिकारी उसके दाहिनी ओर हस्ताक्षर करते हैं।
5. संबंधित अधिकारी के आदेश के अनुसार पत्र अंकित कर कर उसे प्रेषित कर दिया जाता है।

सरकारी पत्रों के प्रकार

1. ज्ञापन
2. परिपत्र
3. अधिसूचना एवं संकल्प
4. प्रेस विज्ञप्ति
5. निविदा सूचना

9.3 सरकारी पत्र का प्रारूप

“जब एक सरकार दूसरी राज्य सरकार को अथवा केन्द्र सरकार किसी राज्य सरकार को अपने से सम्बद्ध या अपने अधीनस्थ कार्यालयों, विभागों, सहकारी संगठनों, सार्वजनिक निकायों तथा व्यक्तियों को विभिन्न विषयों से संबंधित पत्र लिखती है अथवा उत्तर देती है तब उन्हें सरकारी या प्रशासकीय पत्र कहा जाता है। " सरकारी पत्र का प्रारूप सम्बद्ध लिपिक या कार्यालय सहायक करता है। इस पत्र के कच्चे रूप को ' 'प्रारूपण या आलेखन या मसौदा तैयार करना कहा जाता है। इस प्रारूपण के आधार पर तैयार किए जाने वाले सरकारी पत्र के निम्नलिखित अंग होते हैं-

1. **पत्र शीर्ष -** पत्र के सबसे ऊपर पत्र लिखने वाले विभाग का नाम छपा रहता है। जिस पत्र का शीर्ष या 'लेटर हैड' कहा जाता है।
2. **पत्र क्रमांक -** विभाग के छपे हुए नाम के नीचे बांयी तरफ भेजे जाने वाले पत्र की संख्या लिखी जाती है दाहिनी तरफ पत्र भेजे जाने का दिनांक लिखी जाती है।
3. **प्रेषक -** पत्र क्रमांक के नीचे बाँयी तरफ प्रथम 'प्रेषक' शब्द लिख कर पत्र भेजने वाले अधिकारी का पदनाम और विभाग का नाम लिखते हैं।
4. **प्रेषित -** प्रेषक के पदनमा व पते के नीचे जिसे पत्र भेजा जा रहा है प्रेषित शब्द लिखकर उसका पदनाम व विभाग का नाम लिखा जाता है।
5. **तिथि और स्थान -** प्रेषिती के बाद उसके नीचे पत्र के दाहिनी ओर किनारे पर स्थान और तिथि लिखी जाती है।
6. **पत्र का संक्षिप्त विषय संकेत -** स्थान और तिथि निर्देश के उपरान्त उसके नीचे पत्र के प्राय: मध्यभश में विषय का शीर्षक लिखा जाता है।
7. **संबोधन-**विषय शीर्षक के नीचे बांयी ओर हाशिये से थोड़ा सा हटकर 'महोदय'/'महोदया' अथवा 'महानुभाव' आदि संबोधन सूचक शब्द लिखे जाते हैं। एक ही विभाग के अफसरों या विभाग के अनेक कार्यालयों के अफसरों के बीच लिखे जाने वाले पत्रों में संबोधन नहीं दिया जाता है।

8. **पत्र का शुभारम्भ -** सरकारी पत्र में पत्र की मूल विषय सामग्री को विषय और संदर्भ का हवाला देते हुए शुरू किया जाता है।

पत्र के प्रारम्भ में संदर्भ या विषय का हवाला कई तरह से दिया जाता है। कुछ उदाहरण देखे यहाँ दिए जा रहे है-

क. आपके पत्र संख्या....... दिनांक........के संदर्भ में लेख है कि....

ख. उपर्युक्त विषयान्र्तात निवेदन है कि..........

ग. हमारे कार्यालय के पूर्व पत्र क्रमाक....... के क्रम में सूचित किया जा रहा है कि.....

घ. आपके उपर्युक्त पत्र के प्रत्युतर में मुझे यह निवेदन करने का निर्देश जारी हुआ है कि

ङ. मुझे यह सूचित करते हुए प्रसन्नता है कि

9. **मूल विषय का प्रतिपादन -** सरकारी पत्र के मूल विषय में सारी सामग्री व्यवस्थित ढंग से और बिनदूवार दी जाती है। इनमें विषय का पर्याप्त प्रमाणों के साथ स्पष्टीकरण दिया जाता है।

10. **पत्र का समापन -** सरकारी पत्रों में पत्र लेखक, सहयोग, समादर शुभकामना आदि का विश्वास दिलाते हुए 'भवदीय' लिखकर पत्र समाप्त करता है।

11. **हस्ताक्षर -** भवदीय के नीचे पत्र प्रेक्षक अपने हस्ताक्षर करता है हस्ताक्षर के नीचे पदनाम लिखा जाता है।

12. **पृष्ठांकन -** यदि सरकारी पत्र प्रेषित व्यक्ति के साथ अन्य विभागों को भी सूचनार्थ भेजा जाना हो तो 'प्रतिलिपि सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्यवाही हेतु प्रेषित' लिखकर क्रमशः 1, 2, 3, 4, 5 लिखकर सभी विभागों के नाम, पदनाम लिखे जाते हैं। इसके नीचे पुनः हस्ताक्षर कर पदनाम लिखा जाता है।

13. **संलग्र-** यदि पत्र के साथ अन्य कागजात या पूर्व पत्रों की फोटो प्रतियाँ भिजवानी हो तो संलग्र लिखकर उनका 1, 2 3, आदि क्रम में विवरण दिया जाता है। संलग्र के नीचे हस्ताक्षर नहीं किए जाते हैं।

9.4 सरकारी पत्र का खाका

(1) विभाग का नाम (पत्र शीर्ष)

(2) क्रमांक (3) दिनांक

(4) प्रेषक

....

....

(5) प्रेषित

....

....

(6) विषय : ....

(7) संदर्भ : ....

(8) संबोधन, (महोदय / महोदया)

(9) पत्र का समारम्भ

(10) मूल विषय...

....

(11) स्व निर्देश

(12) हस्ताक्षर

पदनाम

(13) प्रतिलिपि प्रेषित ....

1.

2.

3.

(14) संलग्र

1.

2.

3.

हस्ताक्षर

पदनाम

9.5 सरकारी पत्रों के विविध रूप

सरकारी पत्र कई तरह के होते हैं। उनमें से कुछ प्रमुख सरकारी पत्र ये हौ -

9.5.1 कार्यालय ज्ञापन (office Memorandum)-

इसका प्रयोग एक विभाग के अधिकारी के द्वारा अपने अधीनस्थ कार्यालयों तथा अधिकारियों के पास सामान्य सूचनाएं भेजने के लिए होता है। इसमें न तो संबोधन होता है न समापन सूचक शब्द ही होते हैं। इसमें न तो संबोधन होता है न समापन सूचक शब्द ही होते हैं। यह पत्र सीधा विषय से शुरू होता है और पत्र समाप्ति पर सिर्फ हस्ताक्षर किए जाते हैं। इसकी वाक्य रचना आदेशात्मक होती है।

9.5.2 अधिसूचना (Notification) :

जन साधारण से सम्बन्धित वे सूचनाऐं जो सरकारी गजट में प्रकाशित की जाती हैं अधिसूचना कहलाती है। अधिसूचना की भाषा आदेशात्मक या सूचनापरक होती है। इसमें किसी प्रकार का कोई संबोधन नहीं होता है। अधिसूचना उन सारी जानकारियों को विषय के रूप में प्रस्तुत करती है जिनकी जानकारी आम नागरिकों को दी पानी जरूरी है।

अधिसूचना के नीचे संबंधित अधिकारी के हस्ताक्षर उनके पदनाम का उल्लेख किया जाता है लेकिन किसी भी प्रकार के समाहारसूचक शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता है।

9.5.2 कार्यालय आदेश (Office Order) :

किसी विभाग के उब अधिकारी द्वारा अपने अधीनस्थ विभागों, कर्मचारियों को किसी तरह की कोई अनुदेश या आदेश देने के लिए कार्यालय आदेश जारी किया जाता है। इसकी भाषा पूर्णरूपेण आदेशात्मक होती है। इसमें किसी तरह का कोई संबोधन नहीं रहता है। पत्र के अन्त में दायीं तरफ अधिकारी के हस्ताक्षर होते हैं। कार्यालय आदेश का मूल विषय स्पष्ट अक्षरों में उत्तम पुरुष एकवचन में लिखा जाता है।

9.5.4 परिपत्र (Circular) :

किसी विभाग के सभी अनुभागों, विभागीय कार्यालयों, शाखा कार्यालयों, अधीनस्था विभागों को एक साथ कोई सूचना या आदेश देने के लिए परिपत्र लिखा जाता है। परिपत्र का प्रारूप ज्ञापन या कार्यालय पत्र जैसा होता है। हस्ताक्षर के नीचे बायीं तरफ बिन्दुवार परिपत्र पाने वाले अधिकारियों, विभागों, संस्थाओं का उल्लेख किया जाता है।

9.6 अर्द्ध सरकारी पत्र (D.O.)

अर्द्धसरकारी पत्र भी एक सरकारी पत्र ही होता है किन्तु ये सरकारी पत्रों की तरह पूर्णत: औपचारिकताओं से भरे हुए नहीं होते हैं। इनमें कुछ सरकारी पत्रों की औपचारिकताएं निभाई जाती है तो कुछ-कुछ इसमें व्यक्तिगत पत्रों की तरह का भाव भी रहता है। अर्द्धसरकारी पत्र सरकारी अधिकारियों के बीच सूचनाओं का आदान-प्रदान के लिए अनौपचारिक रूप से लिखा जाता है। इनका सर्वाधिक प्रयोग तब किया जाता है जब कोई अधिकारी दूसरे विभाग के अधिकारी का ध्यान व्यक्तिगत रूप से किसी -अनिवार्य विषय की ओर आकृष्ट करना चहाता है। जब किसी विभाग से बार-बार पत्र लिखे जाने पर भी प्रत्युत्तर नहीं आता है तब उस विभाग के अधिकारी के नाम अर्द्धसरकारी पत्र लिखकर उसका ध्यान उस विषय की ओर खींच कर यह अपेक्षा की जाती है कि वह व्यक्तिगत रूचि लेकर उस विषय पर कार्यवाही करवाए।

9.6.1 अर्द्ध सरकारी पत्र का अनुक्रम

अर्द्धसरकारी पत्र निम्नानुसार क्रमबद्ध किये जाते हैं :-

1. अर्द्धसरकारी पत्र का क्रमांक पत्र के ऊपर वाले बायें हिस्से में अस. पत्र संख्या...... लिखकर किया जाता है।
2. क्रमांक की ही सीध में दाहिनी ओर दिनांक लिखी जाती है।
3. आवश्यकता होने पर विषय भी लिखा जाता है।
4. अर्द्धसरकारी पत्रों में औपचारिक पत्रों से अलग हटकर संबोधन लिखा जाता है। यहाँ संबोधन प्रेषक तथा प्रेषिती के निकट संबंधों का अभास देते हुए प्रिय श्री लिखकर

उसका राम भी लिखा जाता है तथा नाम के साथ ही आदरसूचक 'जी' शब्द भी लिखा जाता है।

5. अर्द्ध सरकारी पत्रों के मध्य भाग को उत्तम पुरुष एकवचन अर्थात् मैं, मुझे आदि से पत्र शुरू किया जाता है। जैसे मैं इस सम्बन्ध में आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि....।
6. पत्र का समापन आपका सद्रावी, आपका, आपका विश्वासपात्र आदि से किया जाता है। उसके नीचे हस्ताक्षर किये जाते हैं।
7. सबसे नीचे बाँयी तरफ प्रेषिती का नाम व पता लिखा जाता है।
8. यदि आवश्यक हो तो पत्र एवं लिफाफे के ऊपर गोपनीय शब्द भी लिखा जाता है जिससे कि प्रेषिती को छोड़कर अन्य कोई इसे नहीं पड़े।

अर्द्ध सरकारी पत्र का प्रारूप

(1) विभाग का छपा हुआ नाम

(2) क्रमांक (3) स्थान एवं दिनांक

(4) प्रिय श्री ....

(5) विषय वस्तु ....

....

(6) आपका

हस्ताक्षर

(7) प्रेषिती

श्री ....

....

....

9.7 सरकारी पत्रों के नमूने

कार्यालय ज्ञापन का नमूना

सं. 1-16/87 स्था.

भारत सरकार

राजभाषा विभाग

गृह मंत्रालय

लोकनायक भवन

खान मार्केट

नई दिल्ली, 14.4.88

कार्यालय ज्ञापन

विषय : कार्यालय पेशगी

श्री विवेक सक्सैना को उनके दि. 27.3.86 के आवेदन पत्र के बारे में सूचित किया जाता है कि त्यौहार पेशगी के रूप में उन्हें 500 रु. की राशि मंजूर कर दी गई है यह राशि उन्हें 50/- रु. प्रतिमाह के हिसाब से 10 किस्तों में अदा करनी होगी।

(सलीम असलम)
प्रशासन अधिकारी

प्रतिलिपि प्रेषित

1. कार्यालय आदेश रजिस्टर
2. वित्त अनुभाग
3. प्रशासन अनुभाग
4. श्री विवेक सक्सैना

कार्यालय आदेश का नमूना

सं. 3 - 56 / 7
भारत सरकार
राजस्व विभाग
वित्त मंत्रालय
भारत सरकार

राजस्व भवन
इन्द्रप्रस्थ एस्टेड
नई दिल्ली
5.12.86

कार्यालय आदेश

देखने में आया है कि कार्यालय के कुछ कर्मचारी समय से कार्यालय नहीं पहुँचते या कार्यालय से समय से पहले चले जाते हैं। सभी कर्मचारियों को आदेश दिया जाता है कि वे कार्यालय समय का पालन करें। ऐसा न करने वाले कर्मचारियों क विरुद्ध अनुशासनिक कार्रवाई की जाएगी।

हरीश पियंकर
निदेशक

प्रतिलिपि प्रेषित
कार्यालय के सभी कर्मचारी

परिपत्र का नमूना

केन्द्रीय जल आयोग
वैस्ट ब्लॉक, सैक्टर-ख, रामकृष्णपुरा
नई दिल्ली
सं...........

ता......................

परिपत्र

विषय : हिंदी पुस्तकों की खरीद

कार्यालय के वार्षिक बजट में से 500 रु. की राशि हिंदी पुस्तकों की खरीद के लिए निर्धारित की गई है। इसराशि का इस्तेमाल ऐसी पुस्तकों पर किया जाएगा जो कार्यालय कर्मचारियों के लिए उपयोगी हों। अत: कार्यालय के सभी कर्मचारी अपनी जरुरत तथा रुचि की पुस्तकों की सूची 15.12.88 तक पुस्तकाध्यक्ष को दे दें, ताकि खरीद के समय उन्हें अंतिम सूची में शामिल किया जा सके।

(रंगास्वामी)

उपनिदेशक

सेवा में

सभी अधिकारी तथा कर्मचारी

....

9.8 सारांश

इस प्रकार सरकारी पत्रों के विविध रूप होते हैं। सरकारी पत्र टिपणी लेखन की विशेष पद्धति से लिखे जाते हैं। इनकी भाषा रूढ और विषय पर आधारित होती है। इनमें अनेक प्रकार की औपचारिकताओं का निर्वाह किया जाता है। इन सबको जानकर आप आदर्श ढंग आदर्श ढंग से सरकारी पत्र लिखे की कला सीख सकेंगे।

9.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. आधुनिक व्याकरण एवं रचना - वासुदेवनन्दन प्रसाद

9.10 प्रश्न एवं अभ्यास

1. किसी सरकारी पत्र का खाका तैयार कीजिये।
2. सरकारी पत्र कितने तरह के होते हैं स्पष्ट कीजिये।
3. सरकारी और अर्द्ध सरकारी पत्र में अन्तर स्पष्ट कीजिये।
4. एक अर्द्ध सरकारी पत्र लिखिए।
5. एक परिपत्र की रूपरेखा बनाइये।
6. एक कार्यालय आदेश का प्रारूप बनाइये।
7. एक अधिसूचना का प्रारूप बनाइये।

इकाई - 10 निबन्ध लेखन

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.0 प्रस्तावना

10.2 निबन्ध का स्वरूप

10.2.1 निबन्ध का अर्थ और परिभाषा

10.2.2 निबन्ध के भेद

10.2.3 निबन्ध में विचारों की अभिव्यक्ति

10.2.4 निबन्ध की भाषा शैली

10.3 श्रेष्ठ निबन्ध लिखने की कला

10.3.1 निबन्ध के तीन अंग

10.4 निबन्ध की रूपरेखा

10.5 निबन्ध लेखन का उदाहरण

10.6 कुछ निबन्धों की रूपरेखाएँ

10.7 सारांश

10.8 संदर्भ ग्रन्थ

10.9 अभ्यास के प्रश्न

10.0 उद्देश्य

यह हिन्दी अनिवार्य के तीसरे खंड का अंतिम अंश है। अब तक आप हिन्दी भाषा के स्वरूप एवं हिन्दी भाषा के व्यावहारिक लेखन की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। इस इकाई में हम हिन्दी में निबन्ध लेखन की चर्चा करेंगे।

इस इकाई को पढ़नें के बाद आप :

- निबन्ध के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- निबन्ध केविविध भेदों को बतला सकेंगे।
- निबन्ध लेखन की प्रक्रिया समझ सकेंगे।
- आदर्श निबन्ध लेखन कला को समझ सकेंगे।
- निबन्ध की रूपरेखा बनाना सीख सकेंगे।
- निबन्ध लिखना सीख सकेंगे।
- किसी दिए गए विषय पर निबन्ध लिख सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

अनिवार्य हिन्दी के इस पाठयक्रम प्रयोजन आपको हिन्दी भाषा में पूर्ण दक्षता प्रदान कराना है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए इसके पाठयक्रम का निर्धारित किया गया है। अब तक आप हिन्दी साहित्य के ग द्य एवं पद्य रूपों की जानकारी प्राप्त करने के

साथ-साथ हिन्दी भाषा के विकास, उसकी वर्तमान स्थिति तथा उसके व्यावहारिक व्याकरण को पढ़ चुके हैं। आप पत्र लोन कला से भी भली भांति परिचित हो चुके है। इसी क्रम में इस इकाई में आपको निबन्ध लेखन के बारे में बतलाया जा रहा है। इसे पढ़कर आप निबन्ध लेखन के विषय में आवश्यक जानकारी प्राप्त करेंगे तथा हिन्दी में एक् अच्छा निबन्ध लिखना सीख सकेंगे।.

10.2 निबन्ध का स्वरूप

निबन्ध साहित्य की एक नयी विधा है। हिन्दी में आधुनिक काल में भारतेन्दु युग में ही हिन्दी की शुरुआत हुई। पत्रपत्रिकाओं के प्रसार ने निबंध विद्वा को अत्यधिक लोकप्रिय बना दिया है। आप गद्य खण्ड में अध्यापक पूर्णसिंह का 'सच्ची वीरता' निबन्ध पढ़ चुके हैं। उसे पढ़कर आपको अनुभव हो गया होगा कि निबन्ध किसे कहते हैं? निबंध कथात्मक विधा नहीं है क्योंकि कहानी की तरह इसकी रचना का आधार कथा नहीं है। इसमें विचारों को अभिव्यक्त करते हुए किसी विषय के समस्त पहलुओं को स्पष्ट किया जाता है।

10.2.1 निबन्ध का अर्थ और परिभाषा

हिन्दी में निबन्ध शब्द अंग्रेजी के 'एसे' (Essey) के लिए प्रयुक्त किया जाता है। अंग्रेजी में 'एसे' शब्द का अर्थ है प्रयत्न या प्रयोग अर्थात् प्रयत्न पूर्वक किसी एक विषय का परीक्षण कर, अपने विचारों को सुव्यवस्थित रूप से अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया को 'एसे' कहते हैं।

हिन्दी में निबन्ध शब्द का अर्थ है बाँधना। हिन्दी में निबन्ध शब्द 'बंध' शब्द के आगे 'नि' उपसर्ग जुड़ने से बना है। इसका शाब्दिक अर्थ हुआ 'विशेष रूप से बाँधना'। इस प्रकार हिन्दी में निबन्ध उस रचना को कहते हैं जिसमें विचारों को बिखर जाने से रोकने के लिए व्यवस्थित ढंग से बाँधकर प्रस्तुत किया जाता है। कानियर्स विश्वकोश में निबंध की परिभाषा इस प्रकार से दी गई है. -

"निबंध अपने आप में पूर्ण, एक बैठक में पढ़ी जाने वाली ऐसी गद्य रचना है जो गैर तकनीकी पद्धति पर वैयक्तिक दृष्टि बिन्दु को प्रधानता देते हुए निर्मित की गई हो। "

हिन्दी के प्रसिद्ध विद्रान गुलाबराय ने निबंध की परिभाषा देते हुए कहा है -

"निबंध उस गद्य रचना को कहा जाता है जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सोष्ट्व और सजीवता तथा आवश्यक संगति और संबद्धता के साथ किया गया हो। "

इस प्रकार निबन्द में लेखक अपने विचारों एवं भावों को आत्मपरक रूप में त्यक्त करने के लिए लालित्यपूर्ण और मर्यादित भाषा का प्रयोग करता है। इसकी शैली में लेखक के व्यक्तित्व की छाप अवश्य रहती है। प्रत्येक लेखक अपने का से निबन्ध में भावों एवं विचारों को प्रकट करता है। लेखक के व्यक्तित्व का यह प्रभाव निकध में उसके विचारों साथ-साथ उसकी भाषा शैली में भी स्पष्ट झलकता है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि, वह गद्‌य रचना निबन्द कही जाती है जिसमें 1 विचार तत्व हो 2. लेखक का व्यक्तित्व हो और 3. जिसमें निजी भाषा- शैली का प्रयोग किया गया हो।

10.2.2 निबन्ध के भेद

निबन्ध कई प्रकार के होते हैं। कोई निबन्ध विचार प्रधान होता है तो कोई भाव प्रधान। किसी में हास्य व्यंग्य का पुट होता है ते किसी में गंभीर दार्शनिक अंदाज में विषय का प्रतिपादन किया है। किसी में विषय का सीधा-सादा निरूपण हो सकता है तो किसी विस्तृत विश्लेषण। इसी तरह भाषा को लेकर भी निबंधों में अलग- अलग प्रवृत्तियाँ दिखाई देती है। किसी की भाषा चटपटी, चुटीली और व्यंग्य प्रधान हो सकती है तो किसी भी सरस और लालित्य लिए हो सकती है। कहीं सरल भाषा में विचार प्रस्तुत किए जाते हैं तो कहीं जटिल ढंग से। इस प्रकार निबन्ध कई प्रकार के हो सकते हैं उसके इन्हीं विभिन्न रूपों के आधार पर निबंध के कई वर्गीकरण किये जाते हैं -

(क) विषय वस्तु के आधार पर निबन्ध दो प्रकार के होते हैं -

1. विचारात्मक निबन्ध या चिंतन प्रधान निबन्ध
2. भावात्मक निबन्ध

(ख) लेखक के व्यक्तितत्व के आधार पर निबन्द दो प्रकार के होते हैं -

1. आत्मपरक निबन्ध
2. विषय परक निबन्ध

(ग) शैली के आधार पर निबन्द के ये चार भेद होते हैं -

1. वर्णनात्मक शैली के निबन्ध
2. विश्लेषणात्मक (विवेचनात्मक) शैली के निबन्ध
3. ललित शैली के निबन्ध
4. व्यंग्यात्मक शैली के निबन्ध

10.2.3 निबन्ध में विचारों की अभिव्यक्ति

एक अच्छा निबन्ध लिखने के लिए यह आवश्यक है कि आप ऊपर दिए गए निबन्ध के स्वरूप एवं उसके अंगों को भली प्रकार से समझ ले। आज का युग बौद्धिक विचारों की अभिव्यक्ति का युग है। इसमें आपको जीवन के विविध क्षेत्रों में संबंधित अपने विचारों को स्पष्टता व प्रभावशाली ढंग से प्रकट करना पड़ता है। ध्यान रहे निबन्ध का प्रधान तत्व विचार ही होता है। किसी भी दिए गए बिन्दु पर तर्क संगत ढंग से विषय के समस्त आयामों का स्पर्श करते हु ए विचार प्रकट करना अच्छे निबन्ध की पहली निशानी होती है। ये विचार सन्तुलित का से प्रकट किए जाने चाहिए। इसका अर्थ यह है कि हमें न तो निबन्ध के किसी विषय को अत्यधिक विस्तार देना है और न किसी बिन्दु की उपेक्षा भी करना है। कई बार ऐसा होता है कि हमें बिन्दु के किसी एक पक्ष से विशेष अनुराग होता है और अन्यों से कम। ऐसी मनोदशा में पड़कर हम प्राय: एक पक्ष को तो

अत्यधिक विस्तार दे देते हैं और दूसरे पक्षों की ओर ध्यान नहीं देते हैं। ऐसा करने पर हमारा निबन्ध असन्तुलित हो जाता है। अत: आदर्श निबन्ध लिखने के लिए सर्वप्रथम यह जान लेना जरुरी है कि हमारे द्वारा लिखे गए निबन्ध के सभी पक्षों पर सन्तुलित ढंग से विचार प्रकट किए जाए।

10.2.4 निबन्ध की भाषा शैली

किसी भी विषय पर लिखे जाने वाले निबन्ध को केवल विचारों को ही व्यक्त नहीं किया जाता है वरन उसमें भाषा और शैली का भी विशेष महत्व होता है। निबन्ध की भाषा सरल वाक्यों से युक्त होनी चाहिए। उसमें आम लोगों में 'प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिए। पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग आवश्यकतानुसार ही किया जाना चाहिए। जहाँ तक हो सके अलंकारिक भाषा का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। मुहावरे और लोकोक्तियों का सार्थक प्रयोग निबन्ध की भाषा को महत्त्वपूर्ण बना देता है। उचित अवसरों, प्रसंगों में हास्य और व्यंग्य का उपयोग भी बात को प्रभावशाली बनाने के लिए किया जाता सकता है।

निबन्ध लघु आकार की रचना होती हैं अत: इसमें लेखक का अपना व्यक्तित्व भी पूरी तरह से झलकना चाहिए। कोई भी निबन्धकार न तो केवल विचारों के आधार पर निबन्ध रचना करता है और न केवल भावों के आधार पर ही निबन्ध की' रचना की जा सकती है। एक श्रेष्ठ निबन्ध लेखक विचारों और भावों को साथ लेकर चलता है। निबन्ध बिन्दुवार लिखा जाता है। बिन्दुओं में उठाए गए विषय के अनुसार निबन्ध में कभी विचारों की प्रधानता हो जाती है तो कभी भावों की। वस्तुत: निबन्धकार क्रमबद्ध चिंतन के द्वारा अपने विचार प्रकट करता है।

10.3 श्रेष्ठ निबन्ध लिखने की कला

कोई भी व्यक्ति थोड़े से अभ्यास से ही आदर्श निबन्ध लिख सकता है। निबंध जैसा कि इसके अर्थ से ही स्पष्ट है एक प्रकार निबन्ध रचना है इसमें विचारों को अपने ढंग से प्रकट जने के लिए लेखक को पूरी आजादी रहती है अत: इसके लेखन की विधि को किन्हीं नियमों की चार दिवारी में नहीं बाँधा जा सकता है प्रत्येक लेखक दिए गए विषय को अपने ढंग से सोच विचारकर अपनी भाषा- शैली में प्रकट करता है इसलिए एक ही विषय पर दो अलग- अलग व्यक्तियों द्वारा लिखे गए निबन्ध अलग- अलग रूपों में देखे जा सकते हैं। आपको अच्छे निबन्ध लेखन के लिए निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

10.3.1 निबन्ध के तीन अंग

किसी भी निबन्ध के तीन अंग होते हैं :-

(1) प्रारम्भ

(2) मध्य का भाग

(3) अन्त

प्रारम्भ :

यह निबन्ध का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंश होता है यहाँ से ही सम्पूर्ण निबन्ध में प्रकट किए जाने वाले विचारों का सूत्रपात होता है। इसलिए निबन्ध के प्रारम्भ को सावधानी पूर्वक लिखा जाना चाहिए। शास्त्रीय दृष्टि से निबन्ध लेखन की दो शैलियाँ होती हैं। (1) व्यास शैली और (2) समास शैली

व्यास शैली :- इसमें मूल विषय को प्रारम्भ में ही प्रकट किया जाता है और फिर मध्य के भाग में उसे एक-एक पैरेग्राफ में विस्तार से वर्णित किया जाता है। इसमें लेखक अपने विचारों को विस्तार से खोलकर रखता चलता है अपने मत की बीच-बीच में व्याख्या भी करता जाता है।

समास शैली :- व्यास शैली के विपरीत समास शैली में लेखक संक्षेप में अपने विचारों को क्रमश: प्रकट करता चलता है। इसमें व्याख्या नहीं की जाती है। लेखक अपने विचारों के सूत्र रूप में बात प्रस्तुत करता है ।

निबन्ध का प्रारम्भ ही पाठकों को निबन्ध को पूरा पढने की प्रेरणा देता है। इसलिए निबन्ध का प्रारम्भ आकर्षक और प्रभावशाली आ से किया जाना चाहिए। यह निबन्ध का पहला पैरेग्राफ होता है। अत: लेखक को यहाँ से ही पूर्ण स्पष्टता से अपने विचारों को प्रकट करना शुरू करना चाहिए।

निबन्ध का मध्य भाग :

प्रारम्भ करने के बाद निबन्ध का मध्य भाग शुरू होता है। यह निबन्ध का वह अंश है जिसमें विषय को अत्यन्त विस्तार से प्रकट किया जाता है। दिए गए विषय से संबंधित सभी पहलुओं को बिन्दुवार पैरेग्राफ बनाकर प्रस्तुत किया जाता है। ये पैरेग्राफ विषय के सर्वागीण -पक्षों को- समेटकर लिखे जाते हैं। मध्य भाग ही निबन्ध में लेखक के विचारों को प्रकट करने वाला मुख्य भाग होता है अंत: इसके केन्द्र के अनेक बिन्दु हो सकते हैं। विषय के पक्ष की समस्त बातों को प्रकट करने के पश्चात् विपक्ष के भी सारे चिंतन बिन्दुओं को प्रकट किया जाता है।

निबन्ध का उपसंहार (अंत) :

निबन्ध का अंत उसके प्रारम्भ की ही भांति विषय केन्द्रित और विचारों के निचोड़ के रूप में लिखा जाना चाहिए। लेखक चाहे तो यहाँ समस्त निबन्ध का सार दे सकता है या यहाँ अपने मत को निष्कर्ष रूप में दे सकता। अंत का भाग निबन्ध में लेखक के सारे विचारों के निचोड़ की तरह होता है। इसमें कुछ दार्शनिक अन्दाज में अपने मध्य के भाग में दिए गए तर्को को स्पष्ट करना चाहिए। अन्त में समस्त विचारों का समाहार करते हुए प्रभावशाली ढंग से निबन्ध समाप्त करना चाहिए।

10.4 निबन्ध की रूपरेखा

निबन्ध शुरू करने से पहले उचित यह रहता है कि दिए गए विषय की एक सुनिश्चित रूपरेखा बना ली जावे। रूपरेखा बना लेने से निबन्ध के सारे बिन्दु हमारे सामने पूरी तरह से स्पष्ट हो जाते हैं और हें निबन्ध लिखने में सहूलियत हो जाती है। रूपरेखा बनाते समय मुख्य भाग अर्थात् केन्द्र के विस्तार क अनेक बिन्दुओं को पहले से ही स्पष्ट कर

लेना चाहिए। विषय के पक्ष और विपक्ष में जितने भी पहलू होते हैं रूपरेखा में उन सबको अलग-अलग बिन्दुओं में शामिल किया जाना चाहिए।

10.5 निबन्ध लेखन का उदाहरण

आइए अब उदाहरण देकर हम निबन्ध लिखने की प्रक्रिया को समझने की कोशिश करते हैं। मान लीजिये आपको विषय दिया गया है। आइए, अब एक उदाहरण के द्वारा निबन्ध - लेखन की प्रक्रिया को समझे। संभवत: आप प्रतिदिन दूरदर्शन देखते होंगे। यदि आप प्रतिदिन दूरदर्शन न भी देखते हों, तो भी कभी- न-कभी आपने दूरदर्शन पर कुछ कार्यक्रम अवश्य देखे होंगे। मान लीजिए आपको 'भारत में दूरदर्शन का महत्व' विषय पर निबन्ध लिखना है। सबसे पहले आप इसकी रूपरेखा बना लीजिए। भूमिका और उपसंहार के बीच में निबन्ध का मुख्य भाग है, जिसके विभिन्न पहलुओं को आप रूपरेखा में रखेंगे। चिन्तन या विचार करने पर आपे मस्तिष्क में तुरन्त यह बात कौंधती है कि इसमें दूरदर्शन के लाभों की चर्चा होनी चाहिए। दूरदर्शन का पहला महत्व मनोरंजन की दृष्टि से है, फिर ज्ञानवर्द्धन की दृष्टि से। शिक्षा के प्रचार-प्रसार, सरकारी नीतियों के प्रचार-प्रसार, व्यापार-वृद्धि में सहायता आदि की दृष्टि से भी इसका महत्व है। इन सब बिन्दुओं का उल्लेख निश्चय ही आप अपनी रूपरेखा में करना चाहेंगे। इन विचार बिन्दुओं के कुछ उपबिन्दु भी हो सकते हैं। मसलन ज्ञानवर्द्धन की दृष्टि से दूरदर्शन के लाभों की चर्चा करते समय आप प्रमुख घटनाओं, महापुरुषों, पशु-पक्षियों, वैज्ञानिक आविष्कारों, प्रश्नमंचो आदि की चर्चा करना चाहेंगे। लाभों के साथ आप इसकी हानियों पर भी इस बिन्दु में विचार करना चाहेंगे। लीजिए भारत में दूरदर्शन की रूपरेखा तैयार हो गयी। इसे आप इस प्रकार लिख सकते हैं

भारत में दूरदर्शन :

रूपरेखा :

1. भूमिका
2. दूरदर्शन का महत्व
    (i) मनोरंजन की दृष्टि से
    (ii) ज्ञानवर्द्धन की दृष्टि से - प्रमुख घटनाओं की जानकारी, पशु-पक्षी जगत, अंतरिक्ष, सागर आदि के अज्ञात रहस्यों की जानकारी, विज्ञान-विषयक जानकारी, प्रश्नावली, प्रश्न-मंच आदि के द्वारा ज्ञानवर्द्धन
    (iii) शिक्षा के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से
    (iv) शासकीय नीतियों के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से
    (v) व्यापारिक दृष्टि से
3. दूरदर्शन की सीमाएँ
4. उपसंहार

इस रूपरेखा से स्पष्ट है कि निबन्ध का मुख्य भाग सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इसमें केन्द्र-बिन्दु का अनेक दृष्टियों से विस्तार किया जाता है। पल्लवन का उपयोग करते हुए आप इन चिन्तन-बिन्दुओं का सहज ही विस्तार कर सकते हैं।

सबसे पहले आपको विषय की भूमिका लिखनी है। भूमिका - लेखन के अनेक प्रकार हो सकते हैं। कुछ निबन्धकार भूमिका का प्रारम्भ काव्यात्मक पंक्तियों से करते हैं तो कुछ प्रारम्भ में विषय के महत्व पर प्रकाश डालते हैं। वास्तव में, निबन्ध का प्रारम्भ आकर्षक ढ़ंग से होना चाहिए, क्योंकि आकर्षक प्रारम्भ पाठक को नित्य पढ़ने के लिए विवश करेगा।

आप "भारत में दूरदर्शन का महत्व" की भूमिका लिखते समय वर्तमान काल में विज्ञान के महत्त्व को रखते हुए इसे दूरदर्शन से जोड़ सकते हैं। इस विषय की भूमिका यों तो हर लेखक अपने ढंग से लिख सकता है इसका एक रूप यह हो सकता है:

आज विज्ञान का युग है। चारों ओर वैज्ञानिक आविष्कारों की दुदंभी बज रही है। विज्ञान ने जहाँ समय और दूरी पर विजय पायी है, वहाँ मनुष्य के जीवन को सुख-सुविधा-सम्पन्न भी बनाया है। मानव- जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं, जहाँ विज्ञान ने प्रवेश न किया हो। आज के व्यस्त जीवन में मनुष्य के पास मनोरंजन के लिए भी समय नहीं हे। उसे ऐसे साधन की आवश्यकता थी जो घर बैठे उसका मनोरंजन कर सके। दूरदर्शन के आविष्कार से विज्ञान ने मनुष्य की इसी आवश्यकता की पूर्ति की है।

इस प्रकार 'भूमिका' सीधे-सीधे मुख्य विषय से जुड़ती है। ऐसी भूमिका का कोई अर्थ नहीं जो अनावश्यक बातों में उलझ कर रह जाए और मुख्य विषय से बहुत दूर तक न जुड़े।

भूमिका के बाद निबन्ध के मुख्य भाग का लेखन करना होता है। जैसा कि हम बता चुके हैं निबन्ध के इस भाग में केन्द्र का विस्तार करना होता है। केन्द्र का विस्तार करने के लिए विभिन्न चिन्तन-बिन्दुओं पर, उनके महत्त्व के अनुसार एक या दो अनुच्छेद लिखे जा सकते हैं। चूंकि यह निबन्ध का मुख्य भाग है, अत: यहाँ विषय के विभिन्न पहलुओं के पल्लवन की आवश्यकता होती है। महत्व के अनुसार जो बात पहले आनी चाहिए, उसे पहले लिखना चाहिए। निबन्ध के इस भाग में विषय के पक्ष में पड़ने वाले तर्क पहले लिख देने चाहिए। विषय के विपक्षी तर्कों की चर्चा भी अन्त में तर्कसम्मत ढ़ंग से कर देनी चाहिए।

अब आप जो निबन्ध लिख रहे थे, उसके मध्य भाग के एक-दो बिन्दुओं पर विचार कर लीजिए। मान लीजिए आप 'मनोरंजन' की दृष्टि से दूरदर्शन के महत्त्व को रेखांकित करना चाहते हैं। आप लिख सकते है :

दूरदर्शन मनोरंजन का सस्ता और सशक्त साधन है। दूरदर्शन के कार्यक्रमों में मनोरंजन का बहुत ध्यान रखा जाता है। प्रतिदिन कुछ कार्यक्रम ऐसे अवश्य होते हैं जो जनता के मन को मोह लेते हैं और जिनका लोग बेसब्री से इन्तजार करते हैं। प्रति सप्ताह हिन्दी फीचर फिल्म, प्रादेशिक फिल्म, चित्रहार, चित्रमाला नाटक, प्रहसन आदि के जो कार्यक्रम दूरदर्शन पर प्रदर्शित किये जाते हैं उनके द्वारा दर्शकों का भरपूर मनोरंजन होता है।

मनोरंजन की दृष्टि से प्रदर्शित अनेक कार्यक्रम केवल मनोरंजक ही नहीं, शिक्षाप्रद भी होते हैं। मनोरंजन के साथ ज्ञानवर्द्धन, सूचना और शिक्षा दूरदर्शन की विशेषताएँ है। इन दिनों धारावाहिक रूप से प्रदर्शित "महाभारत' और "रामायण' का उपर्युक्त दृष्टि से विशेष महत्व है।

आपने देखा कि किस प्रकार भूमिका से चिन्तन के अगले बिन्दु को जोड़कर निबन्ध का विकास किया गया है। इस प्रकार, चिन्तन-बिन्दुओं को जोड़कर, उन्हें सिलसिलेवार लिखकर आप निबन्ध के मध्य या मुख्य भाग को पूरा कर सकते हैं। ऊपर हमने मनोरंजन की दृष्टि से दूरदर्शन के महत्व पर प्रकाश डाला है और अनुच्छेद के अंत में ज्ञानवर्द्धन और शिक्षा की चर्चा भी कर दी है। अब आप शेष विचार- बिन्दुओं का इस प्रकार पल्लवन कीजिए कि न तो क्रम भंग हो और न चिन्तन के प्रवाह में कोई बाधा ही पड़े।

निबन्ध का अंत आकर्षक ढंग से होना चाहिए। उपसंहार का अनुच्छेद मुख्य विषय से कटा हुआ नहीं होना चाहिए। उसे इस प्रकार लिखना चाहिए कि उसके बाद कुछ और लिखने की आवश्यकता न रह जाए। प्रत्येक निबन्धकार की अपनी शैली होती है, अत: निबन्ध की समाप्ति का ढंग भी निजी होता है। कुछ निबन्ध लेखक किसी पद्धरण से निबन्ध की समाप्ति करना ज्यादा पसंद करते हैं, तो कुछ किसी सुझाव्वाक्य से। कुछ अन्य चेतावनी - वाक्य या महत्त्व से। कभी-कभी निबन्ध का अंत कुछ प्रश्न- वाक्यों और उनके संक्षिप्त उत्तर से भी कर दिया जाता है। आप इनमें से किसी भी प्रकार निबन्ध का उपसंहार क्यों न करें, वह ऐसा अवश्य हो कि उससे उसके सौन्दर्य को बढ़ावा मिले। इन बातों का ध्यान रखते हुए आप अपने विषय अर्थात् ' 'दूरदर्शन का महत्व' का उपसंहार इस प्रकार कर सकते हैं:

दूरदर्शन निश्चय ही मनोरंजन और शिक्षा का सशक्त माध्यम है। किसी सिद्धान्त अथवा विचार- धारा के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से भी इसकी उपयोगिता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता, पर मूल प्रश्न यह है कि भारत जैसे निर्धन और विकासशील देश में वास्तव में इसकी कितनी उपयोगिता है? क्या इस देश के निर्धन ग्रामीण इसे खरीदने की स्थिति में है? यदि नहीं, तो इसका लाभ उन्हें कैसे मिलेगा? जब तक इन प्रश्नों का तर्कसंगत, व्यावहारिक समाधान नहीं ढूँढ लिया जाता, तब तक इस देश में दूरदर्शन का लाभ एक सीमित वर्ग को ही मिल सकेगा और यही इसके महत्व पर एक प्रश्न-चिन्ह लग जाएगा।

आप देख चुके हैं कि निबन्ध लेखन में अपने विचारों का क्रमिक विकास करते हुए उपसंहार तक पहुँचा जाता है और इसी के साथ निबन्ध समाप्त हो जाता है। निबन्ध की समाप्ति के बाद उसे एक बार फिर पढ़ लेना उपयोगी रहता है। इससे उसमें रह जाने वाली भूलों को सुधारा जा सकता है।

10.6 कुछ निबन्धों की रूपरेखाएँ

यहाँ कुछ निबंधों की रूपरेखाएँ दी जा रही हैं इनके आधार पर आप निबंध लिखने का अभ्यास कर सकते हैं।

(1) भारतीय लोकतंत्र और युवावर्ग

रूपरेखा : -

(1) प्रस्तावना

(2) युवावर्ग की क्षमता

(3) युवावर्ग का समाज के प्रति दायित्व

(4) युवावर्ग के प्रति समाज का दायित्व

(5) युवा ही लोकतन्त्र के रक्षक

(6) उपसंहार

(2) आतंकवाद की समस्या

रूपरेखा :-

(1) प्रस्तावना

(2) आतंकवाद क्या है?

(3) आतंकवाद का विश्वव्यापी स्वरूप

(4) भारत में आतंकवादी गतिविधियाँ

(5) मुक्ति के उपाय

(6) उपसंहार

(3) बेरोजगारी की समस्या और समाधान

रूपरेखा :-

(1) प्रस्तावना

(2) भारत में बेरोजगारी का स्वरूप

(3) बेरोजगारी के कारण

(4) समाधान

(5) उपसंहार

(4) भारत में नारी

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. नारी का सामाजिक महत्व
3. प्राचीन भारत में नारी की दशा
4. मध्यकालीन भारत में नारी की दशा
5. आधुनिक भारत में नारी की दशा
6. नारी सशक्तिकरण के दौर में नारी की दशा
7. उपसंहार

(5) खेल जगत में भारत

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. खेलों का मानव जीवन में महत्व
3. प्राचीन भारत के खेल
4. आधुनिक खेलों में भारत
5. खेलों में भारत के पिछड़ेपन के कारण
6. भारत में खेलों के विकास के लिए सुझाव
7. उपसंहार

(6) ऐतिहासिक स्थल की यात्रा

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. मानवजीवन में यात्राओं का महत्व
3. किसी ऐतिहासिक स्थल की यात्रा का प्रयोजन
4. उस स्थल की ऐतिहासिक जानकारी
5. उस स्थल की यात्रा के प्रत्यक्ष अनुभव
6. जीवन में इतिहास की जानकारी का महत्व
7. उपसंहार

(7) टेलीविजन वरदान या अभिशाप

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. टेलीविजन का आविष्कार और विकास
3. टेलीविजन के लाभ
4. टेलीविजन के दोष
5. टेलीविजन का सामाजिक महत्व
6. टेलीविजन के उपयोग संबंधी सुझाव
7. उपसंहार

(8) अनुशासन और विद्यार्थी

अथवा

छात्र- असंन्तोष : कारण और निवारण

रूपरेखा :-

(1) प्रस्तावना
(2) छात्र-असन्तोष क्यों
(3) अनुशासन का अर्थ
(4) अनुशासन के विविध रूप
(5) छात्रों के लिए अनुशासन का महत्व

(6) अनुशासन लाने के उपाय

(7) उपसंहार

10.8 सारांश :

जीवन में प्रत्येक क्षेत्र में आज अनेक प्रकार की चुनौतियाँ हैं हर मनुष्य को प्रतिदिन सैकड़ों वांछनीय - अवांछनीय प्रसंगों से होकर गुजरना पड़ता है। ऐसे में भाषा पर हमारा अधिकार हमें हर प्रकार की सम- विषय परिस्थितियों में विचाराभिव्यक्ति के लिए योग्य बना देता है। हम अधिकार पूर्वक और आत्मविश्वास के साथ अपने विचार आसानी से प्रकट कर सकते हैं। निबन्ध में किसी एक विषय पर हमें अपने पूर्ण विचार व्यक्त करने होते हैं। निबन्ध में विषय को उचित ढंग से प्रारम्भ में शुरू करके उसे मध्य के ग में विस्तार से प्रकट किया जाता है। जहाँ प्रत्येक बिन्दु पर क्रमश: धैर्यपूर्वक विवेचित किया जाता है यहां विचारों की एक श्रृंखला सी प्रकट की जाती है विषय के पक्ष और विपक्ष सभी को सन्तुलित ढंग से प्रकट किया जाता है। लिखते समय विचारों की स्पष्टता का पूरा ख्याल रखा जाता है और विषयांतर से बचा जाता है। विषय के सभी पक्षों (अनुकूल/प्रतिकूल) सभी को प्रकट करना जरूरी होता है। निबन्ध का अन्त प्रभावशाली हो।

10.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. आधुनिक हिंदी व्याकरण और रचना - डॉ. वासुदेवनन्दन प्रसाद
2. समसामयिक निबन्ध - डॉ. देवव्रत
3. हिन्दी भाषा, व्याकरण व रचना - डॉ. अर्जुन तिवारी

10.10 अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित निबन्धों को अपनी भाषा में प्रभावशाली ढंग से पाँच पृष्ठों में लिखिए -

1. मनोरंजन के साधनों का महत्व
2. अकाल की समस्या
3. एक ऐतिहासिक स्थल की यात्रा
4. विज्ञान वरदान या अभिशाप
5. बेरोजगारी की समस्या और समाधान
6. दहेज प्रथा
7. विद्यार्थी और राजनीति
8. राष्ट्रभाषा हिन्दी का महत्व
9. समाचार-पत्रों का महत्व
10. साम्प्रदायिकता एक अभिशाप
11. भारतीय संस्कृति की विरासत
12. भारतीय नारी कल और आज

खण्ड - 4 का परिचय

अनिवार्य हिंदी का यह पाठयक्रम आपको हिन्दी साहित्य एवं भाषा के स्वरुप से परिचित करवाने हेतु रखा गया है। इसे पढ़कर आप साहित्य को समझने के साथ- साथ आपको हिन्दी भाषा का शुद्धतम प्रयोग करने की दक्षता भी प्राप्त हो सकेगी। इन्हीं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर यह पाठ्यक्रम तैयार किया गया है।

पाठ्यक्रम का यह चौथा खण्ड है। इसमें हिन्दी साहित्य के चुनिंदा पाँच कवियों की कविताएँ आपके वाचन हेतु संकलित की गई हैं। यहाँ हमारा लक्ष्य इन कविताओं के माध्यम से आपको साहित्य का रसास्वादन करवाना है। हिन्दी में प्राचीनकाल से ही साहित्य का निर्माण पद्य (कविता) के रुप में ही किया जाता रहा है। प्राचीन काल के कवियों की रचनाएँ राजस्थानी (डिंगल) या मैथिली आदि बोलियों में अर्थात् अपभ्रंश से विकसित हिन्दी भाषा के पुराने रुप में लिखी गई। मध्यकाल के कवियों ने प्रमुखत: अवधी या ब्रजभाषा में रचनाएँ की थी। 1857 ई. के स्वाधीनता आन्दोलन के सूत्रपात के साथ हिन्दी कविता के क्षेत्र में भी नई काव्य प्रवृत्तियाँ विकसित हुई। अब तक प्रचलित डिंगल, अवधी, ब्रजभाषा के स्थान पर पहली बार खड़ीबोली को हिन्दी भाषा के रुप में विकसित किया गया। तब से लेकर हिन्दी कविता ने विविध कालखण्डों में अलग- अलग काव्य प्रवृत्तियों के साथ विकास प्राप्त किया। आज तो हिन्दी कविता विश्व की किसी भी भाषा की श्रेष्ठ कविता के बराबर खड़ी दिखाई देती है।

आपके पाठ्यक्रम में सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य की काव्ययात्रा को आधार बना पाँच कवियों की रचनाएँ संकलित की गई हैं। इनके आधार पर आप हिन्दी कविता की परम्परा को आसानी से समझ सकेंगे।

पद्य अंश कुल पाँच इकाइयों में विभक्त है। इकाई संख्या 11 में हिन्दी साहित्य के प्रमुख संत कवि कबीर की कविताएं आपके वाचन हेतु संकलित की गई है। इकाई 12 हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ रामभक्त कवि तुलसीदास की कविताओं से संबंधित है। भक्तिकाल की ही राजस्थान की प्रसिद्ध कृष्ण भक्त कवयित्री प्रेम दिवानी मीराँबाई की कविताएँ इकाई 13 में संकलित की गई है। ये तीनों कवि भक्तिकाल के कवि थे। उस काल में ईश्वर की भक्ति भावना को ही कविता का विषय बनाया गया था। इनमें कुछ कवि ईश्वर के निर्गुण, निराकार रूप को आधार बनाकर कविताएँ लिख रहे थे तो कुछ राम या कृष्ण को आधार बनाकर सगुण, साकार ईश्वर की भक्तिमयी रचनाएँ लिख रहे थे।

इकाई 14 आधुनिक काल के प्रमुख काव्य आन्दोलन छायावाद के शीर्षस्थ कवि जयशंकर प्रसाद की कविताओं से संबंधित है। छायावाद में प्रेम, रुमानियत, सौंदर्य, प्रकृति को कविता का विषय बनाया गया। देश की आजादी के लिए किए जा रहे राजनैतिक प्रयासों से प्रेरणा लेते हुए हिन्दी में राष्ट्रीय काव्यधारा की भी श्रेष्ठ रचनाएँ लिखी गई। इकाई 15 में सुभद्राकुमारी चौहान की ' 'झाँसी की रानी' संकलित की गई है। इकाई 17 में

आधुनिक काल में राजस्थान में लिखी जाने वाली कविताओं से आपको परिचित करवाने के लिए राजस्थान के प्रसिद्ध गीतकार तारा प्रकाश जोश की कविताएँ प्रस्तुत की गई हैं। कविता का रसास्वादन करने के लिए मूल कविताओं को देकर उनकी व्याख्याएँ भी की गई है। इसके अलावा कविताओं की विशेषताओं को स्पष्ट करने के लिए भावपक्ष और कलापक्ष से संबंधित संक्षिप्त आलोचनात्मक परिचय भी दिया गया है। इनकी सहायता से आपको पद्य अंश को समझने, व्याख्या करने तथा उन पर आलोचनात्मक टिप्पणी करने की योग्यता हासिल हो सकेगी।

आपकी सुविधा के लिए कठिन शब्दों के अर्थ भी दे दिए गए है। प्रत्येक इकाई के बाद पाद्य अंश से संबंधित प्रश्न भी दिए गए हैं। इसी भाँति इकाई के बाद विस्तृत अध्ययन के लिए कुछ उपयोगी पुस्तकों के नाम भी दिए गए है। आप उनका भी अध्ययन करें।

इकाई 11 कबीर

इकाई की रुपरेखा

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 कबीर का जीवनवृत्त
11.2.1 कुल और जाति
11.2.2 कबीर की शिक्षा
11.2.3 परिवार
11.3 कबीर की रचनाएँ
11.4 कबीर के साहित्य की पृष्ठभूमि
11.5 काव्य - वाचन
11.6 संदर्भ सहित व्याख्या
11.7 भाव पक्ष
11.7.1 कबीर का रहस्यवाद
11.7.2 कबीर के दार्शनिक विचार
11.7.3 कबीर की भक्ति भावना
11.8 शिल्प पक्ष (कला पक्ष)
11.8.1 कबीर की भाषा
11.8.2 कबीर की शैली
11.8.3 कबीर प्रतीक योजना
11.8.4 कबीर की अलंकार योजना
11.8.5 कबीर की भाषा में लोकोक्तियाँ
11.9 सारांश
11.10 संदर्भ ग्रन्थ
11.11 अभ्यास एवं बोध प्रश्न
11.12 अभ्यास/बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

अनिवार्य हिन्दी पाठ्यक्रम की यह प्रथम इकाई है। इसमें हम मध्यकालीन निर्गुण भक्ति के संत कवि कबीर की कुछ कविताओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- कबीर के जीवन वृत्त के विषय में बता सकेंगे।
- कबीर के काव्य के आधार पर तत्कालीन युगीन परिवेश के विषय में बता सकेंगे।
- कबीर की रचनाओं के विषय में बता सकेंगे।

- कबीर साहित्य के सिद्धांत एवं साधना के विषय में बता सकेंगे।
- कबीर साहित्य में रहस्यवाद, योगमार्ग, भक्ति और प्रेम, कबीर के मानवीय दृष्टिकोण उनके समन्वयवाद और क्रांतिकारी चेतना के विषय में बता सकेंगे।
- कबीर साहित्य में अभिव्यंजना, प्रतीक योजना, उलटबाँसिया, अलंकार, छन्द योजना, सौन्दर्य भावना और संगीत तत्व के विषय में बता सकेंगे।
- वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कबीर के व्यक्तितत्व का महत्व बता सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

संत कबीर अद्भु त प्रतिभा सम्पन्न और महिमा युक्त महामानव थे। कबीर की भक्ति ने भारतीय जनमानस को उस समय अवलम्बन प्रदान किया था जब वह सिद्धों ओर योगियों की गुह्नासाधना से आतंकित हो रही थी। कबीर के समय धार्मिक क्षेत्र में अनेक धर्म साधनाएँ प्रचलित थी जो जनता को उकसा रही थी। इस महान सन्त आत्मा ने अपनी प्रेमाभक्ति का ऐसा संबल और दृढ़ अवलम्बन धर्म प्राण जनता को प्रदान किया कि वह राम-रस में भाव-विह्वल हो डूब उठी। कबीर की भक्ति का यह आदर्श नवीन होते हु ए भी सर्वथा भारतीय है। उसमें प्रेम, विश्वास और ज्ञान का सम्मिश्रण है। एक ओर तो वह प्रेम और विश्वास की छटा से अलौकिक है तो दूसरी ओर वह चिन्तन के विविध आयाम भी प्रस्तुत करती है। एक ओर कबीर निर्गुण की बात करते हैं तो दूसरी ओर ईश्वर के दर्शन की कामना भी करते हैं। इस रुप में कबीर की भक्ति में रामानन्द का भक्तिवाद, इस्लाम का एकेश्वरवाद, नाथ पंथ का हठयोगवाद और सूफियों की प्रेमनिष्ठा का समन्वय है।

कबीर की भक्ति का आदर्श ऊँचा है। उसमें प्रेम, अगाध विश्वास, श्रद्धा आस्था और निष्ठा है किंतु पूजा अनुहान के लिए अवसर कम हैं।

कबीर में भक्ति की पराकाष्ठा है। भक्ति जब अपनी चरम अवस्था को प्राप्त कर लेती है तो वह अपने आराध्य की निकटता करती है, ऐसे में भौतिक उपासना गौण हो जाती है। कबीर की सम्पूर्ण भक्ति, प्रेम, विश्वास चित्त की शुद्धता और ज्ञान के आधार पर ही टिकी है।

कबीर का ज्ञान भी अद्भुत है। वह वेदों और शास्त्रों का होते हु ए भी इनके प्रतिकूल है। वह आत्मानुभूतियों पर टिका है इसलिए इसमें विराटता है, वह देश, काल और ग्रंथों की परिधि से परे असीम है। वह किसी एक धर्म, सम्प्रदाय और मत-विशेष से जुड़ा न होकर सबका है।

कबीर की सम्पूर्ण रचनाएँ पदों, साखियों, शब्दों और रमैनियों में हैं। उन्होनें दोहे में विभिन्न राग- रागनियों को अपनी रचनाओं में ढाला है। इनमें क्रमबद्धता और सुसम्बद्धता नहीं है, इसका कारण उन्हें छंद शास्त्र का ज्ञान नहीं था और उन्होनें सचेष्ट होकर इनकी रचना नहीं की थी।

कबीर के कहने का ढंग भी अपने तरीके का अनूठा है। उस पर कबीर के व्यक्तित्व की पूर्ण छाप है कबीर के व्यक्तित्व की अक्खड़ता और निर्भयता जैसे उनकी शैली में समाहित हो गई है।

कबीर की शैली की तरह ही उनकी भाषा भी बहुत अद्भुत है। उन्होनें विभिन्न भाषाओं की सहायता से अपने लिए एक अलग भाषा का निर्माण किया। कबीर की यह भाषा बहुत सरल और बोधगम्य है। शब्दों के ओज ओर प्रभाव के कारण उसमें गतिशीलता है।

इस इकाई में हम आपको कबीर के तीन पद वाचन के लिए दे रहे है। इन पदों के माध्यम से आप कबीर के विषय में अध्ययन करेंगे। कबीर की काव्यधारा की विशिष्टता और उनके रचनागत वैशिष्टय को पहचान सकेंगे। आप कबीर की कविताओं की विषय-वस्तु, भाषा, छन्द और शिल्प की विशेषताओं से भी परिचित होंगे।

11.2 कबीर का जीवन वृत्त

कबीर का जन्म कब हुआ, इस सम्बन्ध में विद्वान एकमत नहीं हैं। 'कबीर चरित्र बोध' के अनुसार कबीर का जन्म संवत् 1455 ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा सोमवार को हुआ। कबीर पंथियों की मान्यता का आधार यह पद है: -

"चौदह सौ पचपन साल गए, चन्द्रवार एक ठाठ गये।
जेठ सुदी बरसायत को पूरनमासी तिथि प्रगट भये।।
धन गरजे दामिनी दमके, बूँद करखे झर लाग भरे।
लहर तालाब में कमल खिले तहं कबीर भानु प्रगट भये।। "

कबीर की जन्मतिथि के सम्बन्ध में जो सामग्री उपलब्ध है, वह केवल कबीर पंथियों में प्रचलित ये दोहे ही हैं। ज्योतिषाचार्य और गणिताचार्यो की गणना के अनुरुप भी कबीर की जन्मतिथि संवत् 1455 ही मानी चाहिए अत: यह तिथि अधिक प्रामाणिक है।

11.2.1 कुल और जाति

कबीर पंथियों के विश्वासानुसार कबीर लहरतारा में कमल पत्र पर प्रकाश स्वरूप अवतीर्ण हुए थे। अन्य मत के अनुसार कबीर का जन्म एक विधवा ब्राहमणी के गर्भ से हुआ था। उसने लोकापवाद के भय से नवजात कबीर को काशी में लहरतारा तालाब के निकट फैंक दिया था, जहां नीरु नामक जुलाहे ने उन्हें आश्रय दिया था। इन दोनों मतों का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता।

कबीर की रचनाओं के आधार पर यह तथ्य उभर कर आता है कि कबीर का जन्म काशी में हुआ था और उनके पिता का नाम नीरु जुलाहा और माता का नाम नीमा था।

कबीर जिस जुलाहा वंश में उत्पन्न हुए थे हो सकता है कि किसी भय अथवा प्रलोभन के चलते उनके पूर्वजों ने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया हो। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने अपनी पुस्तक कबीर में लिखा है ' 'कबीरदास की वाणियों में जान पड़ता है कि मुसलमान होने के बाद न तो जुलाहा जाति अपने पूर्ण के संस्कारों से एकदम मुक्त हो सकी थी और न उनकी सामाजिक मर्यादा बहुत ऊँची हो सकी थी। पर कबीर

की रचनाओं से यह बात प्रमाणित नहीं होती कि वे मुसलमान थे क्योंकि उन्होंने अपनी वाणियों में स्वयं के न हिंदू और न मुसलमान होने की बात कही है।

कबीर की वाणियों से तो यह सिद्ध होता है कि कबीर नाथपंथ से जुड़ी योगी जाति में उत्पन्न हुए थे जो सचमुच न हिन्दू थी, न मुसलमान। इस जाति के मनुष्यों का व्यवसाय कपडा बुनना था।

11.2.2 कबीर की शिक्षा

दीक्षा कुछ भी नहीं हुई और यदि कुछ हुई भी हो तोइसके विषय में जानकारी उपलब्ध नहीं है, पर कबीर की वाणियों और साखियों से यह ज्ञात होता है कि उनके भीतर ही शान जैसे अन्तर्भूत था।

कबीर का ज्ञान किताबी न होकर अनुभवीय था। उनका हृदय दिव्य प्रकाश से भरा था। वे घुमक्कड़ प्रकृति के थे और अनेक तीर्थ स्थानों की यात्राएँ भी करते थे। वे हिन्दू साधु और मुस्लिम फकीरों की सत्संगति में रहते थे। इस सत्संग से कबीर को बहुत लाभ हुआ। इसी से उन्हें भारत में प्रचलित विभिन्न भाषाओं के शब्दों का ज्ञान हुआ और वे हिन्दू शास्त्रों और मुस्लिम धर्म ग्रन्थों से परिचित हुए।

11.2.3 परिवार

कबीर का विवाह लोई से हुआ था। कुछ लोग कबीर की पत्नी का नाम रामजनियां मानते थे। कबीर के पुत्र का नाम कमाल और पुत्री का नाम कमाली था। कबीर की भांति ही उनका पुत्र कमाल भी संत और कवि हृदय था। जिसने कबीर की अपूर्ण रचनाओं को पूर्ण किया।

कबीर के हृदय में बाल्यावस्था से ही भक्ति अंकुरित हो उठी थी। कबीर की परिपक्वावस्था के साथ-साथ यह भक्ति भी पुष्ट होती गई। अपने जीवन की सांध्य-बेला में वे गृहस्थ जीवन से भी विरत हो उठे थे।

कबीर के मृत्यु-संवत् के सम्बन्ध में भी मतभेद है। कबीर की मृत्यु के सम्बन्ध में कबीर की मृत्यु के सम्बन्ध में ज्ञात तथ्यों के आधार पर संवत् 1575 में उनका निधन होना माना है। उन्होंने 120 वर्ष की दीर्घायु प्राप्त की थी।

कबीर पंथियों के अनुसार कबीर की मृत्यु पर हिन्दुओं और मुसलमानों में विग्रह उत्पन्न हो गया था। हिन्दू अपनी परम्परा के अनुसार कबीर के शव को जलाना चाहते थे और मुस्लिम दफनाना चाहते थे। ऐसे में कबीर के शव के स्थान पर कमल के फूल प्राप्त हुए जिसे उन दोनों ने आपस में बांटकर अपनी- अपनी विधि का निर्वाह किया।

11.3 कबीर की रचनाएँ

कबीर कवि और काव्यप्रणेता नहीं थे। वे पहले भक्त और सुधारक हैं, कवि बाद में। यही कारण है कि उन्होंने अपनी धुन में ही आत्माभिव्यक्ति कर पदों की रचना की और अपनी सत्संग मंडली में उनको सुनाया करते थे। कबीर के पदों से और उनके उपदेशों से प्रभावित होकर अनेक लोग इनके शिष्य बने। इन्हीं शिष्यों ने कबीर के निधन के

उपरान्त कबीर के पदों, साखियों और रमैनियों को संकलित किया, जो 'बीजक' के नाम से प्रसिद्ध हुई। 'बीजक' के अतिरिक्त भी कबीर के नाम से कई संग्रहित ग्रंथ प्राप्त होते हैं, इनमें कुछ ग्रंथ हस्तलिखित भी हैं। इनमें से कई रचनाएं प्रक्षिप्त हैं जो बाद में उनके शिष्यों द्वारा जोड़ दी गई है कबीर द्वारा रचित मानी जाने वाली रमैनियों का उल्लेख कई छोटे-बड़े ग्रंथों में हुआ है।

'बीजक' में रमैनी, साखी और सबद का समावेश है। इनकी रचना गायन की दृष्टि से की गई है अत: इनमें विषयवस्तु की आवृत्ति भी दिखाई देती है। ऐसे में साखियों में कबीर की आध्यात्मिक मान्यता के दर्शन होते हैं।

11.4 कबीर के साहित्य की पृष्ठभूमि

कबीर एक ऐसे युग में उत्पन्न हुए थे जब भारतीय समाज निराशा और दीनता के समुद्र में डूब रहा था। कबीर ने निराशा के घने अंधकार में डूबे भारतीय समाज को अपने दिव्य ज्ञान के प्रकाश से आलोकित कर दिया।

कबीर का युग दुर्व्यवस्था और अस्तव्यस्तता का युग था। मुसलमानों के आक्रमण भारत पर निरन्तर होते रहते थे जिससे भारत की आंतरिक शक्ति क्षीण हो रही थी। विदेशी मुसलमानों ने दिल्ली पर आधिपत्य पर लिया था। हिन्दू जनता पूरी तरह से निराश हो रही थी। अपनी राष्ट्रीयता के प्रति उनमें विश्वास पूर्ण रूप से समाप्त हो चला था। ये हिन्दु राजा मुसलमान शासकों को प्रसन्न करने के लिए अपने ही भाईयों का गला काटने पर तुले थे। भारतीय समाज की राजनैतिक शक्ति अब बिल्कुल क्षीण हो चुकी थी। सामाजिक स्थिति भी कमोबेश ऐसी ही थी। वेदों के एकेश्वरवाद के स्थान पर अनेक प्रकार के धर्म और सम्प्रदाय प्रचलित थे। धर्म, ईश्वर और धर्म ग्रंथ केवल उच्चवर्ग तक सीमित रह गया था। धर्म के नाम पर पापाचारों का बोलबाला था। चारों ओर बाह्याडम्बरों, पंडों, पुजारियों और धर्म गुरुओं का प्रभुत्व था। छूआछूत की भावना बड़ी तीव्रता के साथ फैल रही थी। वर्ण व्यवस्था अब जड़ और रूढ़ होकर रह गई थी। प्रेम और मानवीयता की भावनाएं धीरे-धीरे तिरोहित होती जा रही थी।

चारों तरफ सामाजिक और राजनीतिक विश्रृंखलता छाई थी। काशी नगरी जो धर्म का केन्द्र थी, में कुछ लोग धर्म के नाम पर विलासिता कर रहे थे तो करोड़ों लोग दुःख और अभावों से भरे चीत्कार कर रहे थे। समाज में दलित वर्ग के लिए कोई संवेदना शेष नहीं रह गई थी। वे समाज की उपेक्षा और घृणा के पात्र रह गए थे। ऐसे में यह वर्ग भी मानवता रहित, ऐसे समाज का परित्याग कर रहा था। वर्ण-व्यवस्था की संकीर्णता और छापा-तिलक, माला और धर्म ग्रन्थों की रक्षा में संलग्र समाज के प्रति उनके मन में कोई भावना शेष नहीं थी।

कबीर ने अपने युग के दलितों की इन भावनाओं की तड़पन को देखा और उनका हृदय उनकी पीड़ा से आर्द्र हो उठा। उन्होंने उस समाज के प्रति अपने विद्रोह को बुलन्द किया, जो मनुष्यता को कुचल रहा था। उन्होंने विरोध किया और संघर्ष किया। तत्कालीन

समाज के हीन, दलित और उपेक्षित वर्ग की ओर से समाज को ललकारा और फटकारा। कबीर के पदों और वाणियों में आदि से अंत तक यही स्वर सुनाई देते हैं।

11.5 काव्य वाचन

पहला पद : -

दुलहनीं गावहु मंगलाचार।
हम घरि आये हो राजा राम भरतार।
तन रत कीर मैं मन रति कीर, पंचतत्व बराती।
रामदेव मोरे पाहुँने आये, मैं जोबन मदमाती।
सरीर सरोवर बेदी करिहूं, बह्मा बेद उचार।
रामदेव सगि भाँवीर लैहूं,धनि- धनि भाग हमार।
सुर तैंतीस कौतिग आये, मुनिवर सहस अठयासी।
कहै कबीर हम ब्याहि चलै हैं, पुरिष एक अविनासी।

कठिन शब्द : -

दुलहनीं-सौभाग्यवती नारियाँ. मंगलचार-विवाह संस्कार के मंगलमय गीत, भरतार-पति, रत- अनुरक्त, पंचतत-पंचतत्व, (क्षिति जल, पावक, गगन, समीर), पाहुँने-अतिथि, भांवरि-विवाह पीरक्रमाएं, धनि- धनि = धन्य- धन्य, भाग- भाग्य, सुर-देवता, तेतीसूं-तैंतीस सौ, कौतिग-करोड़, मुनियर-मुनिवर, सहस-सहस्त्र, पुरिष-पुरूष।

दूसरा पद : -

संतो भाई आई ग्याँन की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सबै उडाँणी, माया रहै न बाँधि रे।।
दुचिते की दोई थुनी गिराँनी मोह बलींडा टूटा।
त्रिस्नाँ छाँनि परी घर ऊपीर कुबुधि का भांडा फूटा।
जोग जुगति कर संतों बाँधि, निरचू चुवै न पाँणी।
कूड-कपट माया का निकस्या हरि की गति जब जाँणी।।
आंधी पीछै जो जल बूठा, पे हरि जन भीनाँ।
कहै कबीर भाँन के प्रगटे, उदित भया तम पींनाँ।।

कठिन शब्द : -

ग्याँन-ज्ञान, टाटी-टट्टी, छप्पर, उड़ाणी-उड़ गई दुचिते-दुविधा, दोई -दोनों, थूनी-छप्पर को रोकने की टेक, बलींडा-छप्पर को मजबूत करने के लिए उसके सिरे पर लगाया जाने वाला फूँस का लम्बा लम्बा एक भाग, त्रिस्नाँ-तृष्णा, छांनि-छप्पर, कुबधि-कुबुद्धि, भांडा-बर्तन, निरचू- थोड़ा सा भी, चुवै-टपकें, पाँणी-पानी, कूड कपट-गंदगी, काया- शरीर, पीछे -बाद में, बूठा-बरसा, भीनाँ- भीग गए, भान-भानु, सूर्य प्रगटै -उदित होने पर, तम-अंधकार, पीना- क्षीण।

इस पद में कबीर ज्ञान की आँधी से भ्रम, माया, दुविधा मोह, तृष्णा, कुबुद्धि सब नष्ट हो जाते हैं। ज्ञान रूपी आँधी से शरीर की गंदगी बाहर निकल गई। इस आँधी के पश्चात् प्रभु भक्ति के जिस जल की वर्षा हुई उससे ईश्वर के भक्त भीग गए और ज्ञान रूपी सूर्य के उदित होने से अज्ञान रूपी अंधकार नष्ट हो गया।

तीसरा पद : -

अब तोहि जान न देहूँ राम पियारे,
ज्यूँ भावे त्यूँ होह हमारे।
बहुत दिनन के बिछुरे हरि पाये,
भाग बड़े घर बैठें आये।
चरननि लागि करौं बीरयाई,
प्रेम-प्रीति राखौं उरझाई।
इतन मन-मंदिर रही नित चौषै,
कहै कबीर परहु मति धौषै।।

कठिन शब्द : -

तोहि-तुम्हें, जान-जाने, देहूं-दूंगी, ज्यूँ-जैसे भी, भावै - अच्छा लगे त्यूं-वैसे ही, दिनन-दिनों के, भाग- भाग्य, चरननि-चरणो की, बीरआई - सेवा, उरझाई-उलझाकर, चौबे- भली प्रकार से, परहु- पड़ो, मति-मत, धोषै - धोखे।

कबीर की दाम्पत्य भाव की मधुरा भक्ति कबीर आत्मा के द्वारा कहलवाते हैं कि अब वह आत्मा को परमात्मा से अलग नहीं होने देगी। जैसे भी रहो पर मेरे होकर रही। बहुत दिनों से बिछुड़े स्वामी को प्राप्त किया है, मैं उन्हें प्रेम बंधन में बांधकर उनके चरणों में रहकर सेवा करूंगी। हे स्वामी अन्यत्र जाकर धोखे में न पड़ो और नित्य मेरे मन-मंदिर में रहो।

11.6 संदर्भ सहित व्याख्या

(1) दुलहनी गाहवु मंगलाचार....... एक अविनासी।

संदर्भ : - हिन्दी साहित्य में 'कबीर की पदावली' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मुक्तक काव्य की दृष्टि से भी 'पदावली' अनूठी है। रहस्यवादी कविता में प्रयुक्त उनकी रहस्यपूर्ण उक्तियाँ अभिव्यक्ति की उच्चतम स्थिति को छूती है। इसकी आध्यात्मिक चेतना अद्वितीय है। हिन्दी साहित्य में तुलसी के पश्चात् जन हृदय के इतने करीब कबीर ही आए हैं।

प्रस्तुत पद में लम्बी प्रतीक्षा के पश्चात् जब जीव रूपी दुल्हन अपने प्रिय परमात्मा रूपी प्रिय से मिलती है, तो उसे 'अलौकिक आनन्द' की प्राप्ति होती है।

कबीर यहाँ परम पुरुष से अपने आध्यात्मिक मिलन का वर्णन विवाह के रूपक द्वारा करते हुए कहते हैं कि हे सौभाग्यवती नारियों ! तुम विवाह के मंगलगीत गाओ, क्योंकि आज मेरे घर स्वामी राम - परमात्मा आए है। स्वयं परब्रह्म राम मेरे घर पर अतिथि

बनकर आए है, मैं उनका स्वागत पति रूप में उनका वरण कर करूंगी। मेरी आत्मा भी परब्रह्मा के प्रेम से परिपक्र (जोबन में माती) है। मै अपने शरीर और मन को उनके प्रेम में अनुरक्त कर पंचतत्वों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्रि, आकाश) को बाराती बनाकर अर्थात् उनके समक्ष शरीर रूपी कुण्ड की वेदी बनाकर परब्रह्मा के साथ परिणय सूत्र में बंध जाऊंगी। इस विवाह के संस्कार के अवसर पर ब्रह्मा स्वयं वेद मंत्रों का उच्चारण करेंगे। आत्मा और परमात्मा के इस महामिलन को देखने तैतीस करोड़ देवता एवं अठ्यासी हजार श्रेष्ठ मुनि आये थे। कबीर कहते हैं कि इस प्रकार आत्मा ने अविनाशी परम पुरुष से विवाह सूत्र (अटूट प्रेम बंधन) जोड़ लिया है।

विशेष -

1. रूपक एवं अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।
2. राग पौड़ी में प्रस्तुत पद की रचना हुई है।
3. कबीर ने प्रस्तुत पद में तैंतीस करोड़ देवता और अठयासी हजार मुनियों का प्रयोग किया है, इसका अभिप्राय: यह नहीं है कि कबीर बहुदेववाद अथवा अंधविश्वास में यकीन रखते थे। इसका उल्लेख विवाह की अद् भुतता को व्यंजित करने के लिए किया है।
4. मधुरा भक्ति का प्रयोग है।
5. प्रकृति और पुरुष की समरसता का मणिकांचन योग है।

(2) संतौ भाई आई ग्यानं की आंधी रे।

संदर्भ : - कबीर जिस ज्ञान की आधी की बात कर रहे हैं, वह कृष्ण द्वारा अर्जुन को दिया गया ज्ञान है। जिस प्रकार अर्जुन का मोह ज्ञान से नष्ट हुआ वैसे ही आत्मज्ञान से कबीर का :-

कबीर कहते हैं कि हे सज्जनों! ज्ञान की आधी आई हैं जिससे माया के बंधनों से बंधी भ्रम का छप्पर नष्ट होकर उड़ गया। ज्ञान की आधी के आते ही मिथ्या प्रेम द्वैतजनित भावना की टेक गिर गई और मोह का बलींडा भी टूट गया।

है संतो ! जीवात्मा ने यह छप्पर बड़े यत्नपूर्वक बांध था, जिससे ज्ञान की एक बूंद भी इसमें न गिर सके किन्तु इस ज्ञान आँधी ने इसे उड़ाकर शरीर के पापों रूपी कूड़े को निकाल बाहर किया। इस आँधी के पश्चात् प्रभु-भक्ति जिस जल की वर्षा हुई उससे प्रभु प्रेमी सिक्त हो गए। कबीर कहते हैं कि इस भाँति ज्ञान रूपी सूर्य के उदित होते ही अज्ञान रूपी अंधकार क्षीण हो गया।

विशेष -

1. सांग रूपक, रूपकातिशयोक्ति अलंकार।
2. राग गौड़ी का प्रयोग।
3. गीता में ज्ञानदीप से अज्ञानान्धकार को दूर करने को कहा है -ज्ञान की यह वर्षा ही भगवद् कृपा है।

4. भ्रम, दुचित्तता, तृष्णा, कुबुद्धि ये सब अज्ञान के फल है - यही जीवन का अंधकार पक्ष है। अंधकार ही द्वैत का आधार है।
5. कबीर ने जनपदीय शैली में गीता के रहस्य को खोलकर रख दिया है।
6. ग्यान की आँधी - बड़ा ही सार्थक प्रयोग है - संरचना की दृष्टि से अनुभूति की प्रमाणिकता के कारण उनकी शैली बहुत प्रभावशाली हो गई है।

(3) अब तोहि जान न देहूं राम पियारे।

संदर्भ : - कबीर आत्मा के द्वारा कहलवाते हैं कि हे प्रियतम राम! अब मैं तुम्हें अपने से दूर जाने नहीं दूँगी अर्थात् अपने से अलग नहीं होने दूँगी। जिस प्रकार भी चाहे आप मेरे पास रह सकते हैं। मैंने बहुत दिनों से बिछुड़े स्वामी को प्राप्त किया है और वे घर बैठे ही प्राप्त हो गए हैं। यह मेरा परम सौभाग्य है। मैं उन्हें प्रेम-बन्धन में बाँधकर, उनके चरणों में रहकर सेवा करूंगी। आप मेरे मन- मन्दिर में नित्य भली प्रकार (सभी सुविधाओं सहित) रहो। आप अन्यत्र जाकर धोखे में मत पड़िए अर्थात् मेरे जैसा सच्चा प्रेम अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।

विशेष -

1. कबीर की भक्ति प्रेम भक्ति है उसमें समर्पण है प्रिय के प्रति। यह श्रृंगार का उदात्त रूप है।
2. कबीर गृहस्थ थे - पति-पत्नी के अद्वैत भाव का उन्हें प्रामाणिक ज्ञान था, उस अनुभूति के माध्यम से उन्होंने ईश्वर विषयक रति का, उसके मधुरभाव का अंकन किया है।
3. कबीर की भक्ति निष्काम है, जैसी पतिव्रता की। कबीर के मालिक राम है, वह उनके चरणों में रहकर उनकी सेवा करना चाहते हैं।
4. राम की जेवड़ी ही प्रेम की रस्सी है : -

   प्रेम जेवरियां तेरे गले बांधू। जहां लै जाऊं, जहां मेरौ माधौ। यह है कबीर का समर्पण योग। वे कहते हैं, 'ज्यूँ हरि राखै त्यँ रहौ' कबीर के प्रेम में प्रियतम ही सब कुछ है। कबीर अपने को प्रतिव्रता स्वयं को स्वामी राम के आश्रित बताते हैं -

   कबीर तो तो करै त बाहुडौ दुरि दुरि करै त जाऊ।
   ज्यूँ हरि राखै त्यूँ रहौ जो देवे सो खाऊं।।

11.7 भाव पक्ष

कबीर के भाव पक्ष की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार है -

11.7.1 कबीर का रहस्यवाद

कबीर का रहस्यवाद प्रेम की अनुपूर्ति से भरा है। डॉ. त्रिगुणायत ने कबीर के प्रेम मूलक रहस्यवाद पर टिप्पणी करते हुए कहा है 'उनका प्रेम मूलक रहस्यवाद बड़ा मधुर है। इसमें आध्यात्मिक प्रणय भावना की विविधमुखी रस धारा बही है। इसमें हमें सूफियों के प्रेम प्याले और खुमारी की अच्छी चर्चा मिलती है। इसकी अभिव्यक्ति मधुर दाम्पत्य

प्रतीकों द्वारा की हुई है। दाम्पत्य के संयोग-वियोग पक्षों की अत्यन्त मनोरम और हृदयकारी परिस्थितियों का चित्रण मिलता है। कबीर में प्रचलित रहस्यवाद की सभी विशेषताएँ मिलती है। प्राय: इन सभी में प्रेम और आनन्द की भावना किसी न किसी रूप में अवश्य पाई जाती है। संक्षेप में कबीर का रहस्यवाद अत्यन्त पूर्ण और मधुर है। कबीर हमारी भाषा के श्रेष्ठ रहस्यवादी कवि है।'

11.7.2. कबीर के दार्शनिक विचार

कबीर का मानना था कि ज्ञान के बिना सब व्यर्थ है। तीर्थाटन, मूर्ति-पूजा, जप-तप, प्राणायाम से मुक्ति नहीं मिल सकती। अत: कबीर के योग मार्ग के संदर्भ में ज्ञान (भक्ति), सगुण अथवा निर्गुण, साकार या निराकार आदि प्रश्नों का कोई अर्थ नहीं है। योगाभ्यास द्वारा ही 'इड़ा पिंगला सुषुम्ना' एक हो जाती है। कबीर का योगमार्ग कायिक योग साधन से परे चित्त शुद्धि का मार्ग था। जिसके द्वारा 'उनमनी' (परमात्मा की ओर उन्नुख मन) कर ब्रह्म को प्राप्त करना ही सहज सरल योगमार्ग का उद्देश्य था।

"उन्मनि चढ़ा गगन - रस पीवै, त्रिभुवन भया उजियारा।"

कबीर के राम (ब्रह्म) : -

कबीर अवतारवाद को नहीं मानते थे। कबीर के राम दशरथ पुत्र राम नहीं वरन् निर्गुण ब्रह्म हैं। कबीर ने 'निर्गुण राम' को ही पर ब्रह्म माना है। उनके राम त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) से परे है। वे अलग निरंजन है। वे समस्त भौतिक पदार्थों से परे, पाप-पुण्य से दूर, तीनों लोगों में व्याप्त और विलक्षण है:-

सन्तो धोखा कासूं कहियो
गुण में निरगुण, में गुण है, बांट छांडि क्यूं बहिये।

जीव (जीवात्मा) : -

कबीर जीवात्मा और परमात्मा में कोई भेद नहीं मानते। जीव का शरीर पंच तत्वों के मेल से बना है किन्तु इसमें रहने वाली आत्मा अजर-अमर है। वे कहते हैं-

ना इहु मानसु ना इहु देउ। ना इहु जतो कहावै सेड।।
ना इहु जोगी ना अवधूता। ना इहु माइ न काहू पूता।
कहे कबीर इहु राम को अंसु। जस कागद पर मिटे न मंसु।।

माया तत्व : -

कबीर ने माया,विषयवासना और अज्ञान इन सभी को पर्यायवाची माना है। डॉ. त्रिगुणायत इसकी व्याख्या करते हुए कहते हैं "कबीर का मायावाद सम्भवत: भागवत पुराण के शैतान के समान उनकी वह आध्यात्म साधन में बाधा रूप भी है। कबीर का यह माया तत्व भावरूप होते हुए भी अभ्यास मात्र ही है। यह सत्य तत्व से भिन्न है। कबीर की माया में भावनात्मक वर्णन मिलते हैं। ये वर्णन निम्न कोटि के रहस्यवाद के अन्तर्गत आ सकते हैं। कबीर की माया का विस्तार बड़ा व्यापक है। जहाँ तक मन और विचारों की पहुँच है, वह सब माया है। इसीलिए मन और माया का घनिष्ठ सम्बन्ध माना है। मन

के विचार ही माया के कुटुम्बी है। इस प्रकार कबीर का माया वर्णन अपनी अलग मौलिकता रखता है।'

कबीर के अपने शब्दों में -

माया आदर माया मान, माया नहीं तहां ब्रह्म गियांन।
माया रस माया कर जान, माया मारनि तजै परान।
माया जप तप माया जोग, माया बांध सब ही लोग।
माया जाति थलि माया आकासि माया व्यापि रही चद्दू पासि।
माया माता माया पिता, अति माया अन्तस्सुता।

सांसारिक सत्ता और स्वरूप : -

कबीर इस जगत (सृष्टि) को क्षणभंगुर मानते थे। यह संसार सेमल के पुष्प की तरह नाशवान है -

यह ऐसा संसार है जैसा सेमल फूल।
दिन दस के त्यौहार को झूठे रंगि न मूल।।

नर देह : -

कबीर मानते थे कि जीवात्मा पंच तत्वों से बनी है, उसमें रहकर भी उससे भिन्न है, वे कहते हैं: -

पंचतत्व के भीतरे गुप्त वस्तु अस्थान
बिरले मर्म कोई पाइ है, गुरू के शब्द प्रमाण।

कबीर की सहज योग साधना (मध्यमार्ग) : -

कबीर का साधना स्वरूप निवृत्ति और प्रवृत्ति के मध्य मार्ग को विवेचना करता है। कबीर ने कुंडलिनी योग की कठिन साधना से सिद्धि प्राप्त करने की बजाय मन की दृढ़ता और सहज योग द्वारा गुरू की कृपा से मन को एकाग्र कर कुंडलिनी जागृत करना ही कबीर का सहज योग है। कबीर कहते हैं -

"अवधू मेरा मन मतिवारा
उन्मीन चढया मगन रस पीवै त्रिभुवन भया उजियारा
गुड करि ग्यान ध्यान कर महु अवा, भव माटी कीर मारा।
सुषमन नारि सहज समानी, पीवे पीवन हाय।
सुनि मंडल में मंदला बाजै, तहां मेरा मन नाचै।
गुरू प्रसादि अमृत फल पाया, सहीत सुषुमना काछे।
पूरा मिल्या तबै सुष उपज्यो, तन की तपनि बुझानी।
कहै कबीर भवबंधन छूटै जाविहि जोति समानी। "

11.7.3 कबीर की भक्ति भावना

कबीर की अनुभूतियाँ ही उनकी भक्ति में छलकती है। कबीर ने इन अनुभूतियों में प्रेमी और वियोगी बनकर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त किया है। इसीलिए उनका ब्रह्म

इन्द्रियातीत अगम्य होते हुए भी गम्य है। वह प्रेम से प्राप्त है। उन्होंने अपनी आत्मा रूपी प्रियतमा के समान ब्रह्म रूपी प्रिय की बाट देखी है -

बहुत दिनन की जोवती, बाट तुम्हारी राम।
जिव तरसै तुझ मिलन कूं, मन नहीं विश्राम।।

उनकी विरहिणी आत्मा तो विरह के कष्ट पाकर जर्जर हो गई है फिर भी और कष्ट पाने को तत्पर है। प्रियतम को पाने के लिए वह तो अपना सब कुछ समर्पित करने को तत्पर है : -

"इस तन का दीवा करौ, बाती मेल्यूं जीव।
लोही सींचौ तेल ज्यू कब मुख देखो पीव।।'

कबीर की भक्ति और प्रेममय योग ही उनकी योग समाधि को स्पष्ट करता है। कबीर का यह भाव भक्ति हरि के साथ गठजोरा (विवाह) के समान है। मिलन का निश्चय होने पर आत्मा रूपी नायिका का हृदय उल्लास से भर उठता है -

"थरहर कंपै वाला जीड, ना जानउ किया किरसी पीव।
रैन गई मति दिन की जात, भँवर गए बग बैठे आय।।'

इसके पश्चात् मिलन की अवस्था होती है और इस आध्यात्मिक विवाह के मंगलाचार होनें लगते हैं-

बहुत दिनन थे प्रीतम पाए, भाग बड़े घर - बैठे आए
मंगलाचार माहि मन राखो राम रसायन रसना चाखो।
अथवा - दुलहिन गावों मंगलाचार हम घरि आयो हो राजा राम भरतार।

प्रिय को एक बार पा लेने पर प्रियतमा उसे किसी भी प्रकार अपने से दूर करना नहीं चाहती। इसके लिए वह उससे प्रार्थना करती है और उसके चरणों पर गिरकर उसे अपनी प्रेम-प्रीति का वास्ता देती है -

अब तोहि जान न देहूं राम पियारे, ज्यूं भावे त्यूं होय हमारै।

इस मिलन के पश्चात् आत्मा परमात्मा से मिलकर एकाकार हो जाती है और साधक आनन्द की उस जलधि में डूब जाता है, जिसका वर्णन वह शब्दों में नहीं करसकता।

'अविगत अलग अनुपम देखा कहता कहीं न जाय
सैन करे मन ही मन रहसे, गूंगे आनि - मिठास।'

कबीर की भक्ति साधना का प्रयोजन प्रेमाशक्ति को प्रकट करना है।

नाम स्मरण -

कबीर एक गृहस्थ संत थे। वे सांसारिक जीवन की जटिलताओं से भी परिचित थे। इनसे मुक्ति के लिए एवं मन की एकाग्रता के लिए उन्होंने नाम स्मरण साधना पर बल दिया। राम नाम स्मरण की लय को कबीर का सुरति शब्द योग कहा गया है। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने 'कबीर साहित्य परख' में सुरति शब्द योग को स्पष्ट करते हुए कहा है, कबीर साहब ने इसके लिए नाम स्मरण का एक बहुत ही उपयोगी साधन चुना है। उन्होंने उसे 'सुरति शब्द योग' का क्रियात्मक रूप भी दिया है, जिसके द्वारा मन पर पड़ने वाले

सुदृढ़ प्रमाण का रहस्य भी भली भांति समझ में आ सके। इस योग की साधना में अपनी 'सुरति' को अपने भीतर निरन्तर उठते रहने वाले 'अनाहत- नाद' के साथ सदुरू की बतलाई युक्ति द्वारा जोड़ना पड़ता है। वह अनाहत नाद की वस्तुत: भगवन्नाम है और अपने मन का ही एक सूक्ष्म रूप वह सुरति भी है, जिसे जिसके साथ जोड़ना आवश्यक होता है। ऐसा करने पर हमारे मन को कहीं इधर-उधर भटकने का बहाना नहीं मिलता और वह उस 'नाम' के ही रंग में रंग कर तद्रूप बन जाता है। ऐसी दशा में वह अपने आत्म विचार की साधना करते हैं, तब भी किसी भिन्न क्षेत्र में नहीं जाते, न जब हम भाव-भगति की साधना अपनाते हैं, उस समय उसका पूरा आनन्द उठाने से वंचित रह पाते हैं।'

11.8 शिल्प पक्ष (कला पक्ष)

कबीर के शिल्प पक्ष की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार है -

11.8.1 कबीर की भाषा

कबीर के काव्य में ब्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी के साथ ही खड़ी बोली के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है।अत: व्याकरण की दृष्टि से भी इस भाषा में मिश्रित प्रवृति अथवा शैली दिखाई देती है। डॉ. श्याम सुन्दर दास ने कबीर की भाषा पर टिप्पणी करते हुए लिखा है "कबीर की भाषा का निर्णय करना टेढ़ी खीर है क्योंकि वह खिचड़ी है। कबीर में केवल शब्द ही नहीं क्रियापद कारण चिह्नादि भी कई भाषाओं में मिलते है। कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे इसी से बाहरी प्रभावों के बहुत शिकार हुए। भाषा और व्याकरण की स्थिरता उनमें नहीं मिली। इसके अतिरिक्त उनकी भाषा में अक्खड़पन है और साहित्यिक कोमलता या प्रसाद का सर्वथा अभाव है'। कही-कहीं उनकी भाषा गँवारू लगती है।'

अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध ने कबीर की भाषा पर लिखा है - "कबीर साहब के ग्रंथों का आदर कविता की दृष्टि से नहीं, विचार दृष्टि से है। कहीं-कहीं उनकी भाषा में गँवारुपन आ जाता है।' हिन्दी साहित्य का इतिहास में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कबीर के बीजक की भाषा को सुधक्कड़ी अर्थात् राजस्थानी पंजाबी मिली खड़ी बोली पर रमैनी और सबद, को गेय पद बताते हुए उनके काव्य में ब्रजभाषा और कहीं-कहीं पूरवी बोली के व्यवहार को बताया।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर की भाषा पर टिप्पणी करते हुए व्यक्त किया कि "भाषा पर कबीर का जबर्दस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है, उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया है, बन गया है तो सीधे-सादे नहीं तो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार सी नजर आती है। उसमें मानों ऐसी हिम्मत ही नहीं कि इस लापरवाह फक्कड़ की किसी फरमाइश को नहीं कह सके।'

वस्तुत: कबीर एक घुमक्क्ड संत थे अत: राजस्थान तथा गुजरात के विधि प्रांतों से उन्होंने शब्दों को लिया और अपने पदों में उनका प्रयोग किया। कबीर ने उस समय की जनता को उन्हीं की भाषा में उपदेश देकर उनके सही मार्ग दिखाने की चेष्टा की थी।

11.8.2 कबीर की शैली

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने कबीर की शैली के सम्बन्ध में कहा है की कबीर साहब कुशल कवि नहीं थे, उन्होंने कवि कर्म के लिए चेष्टा भी नहीं की। वे कवि कर्म को इतना महत्त्वपूर्ण भी नहीं मानते वरन् इसे 'व्यर्थ के लिए मरना' तक कह देते हैं अत: कबीर ने प्रतीक योजना जैसा कोई साहित्यिक प्रयत्न जानबूझकर नहीं किया होगा आचार्य हजारी प्रसाद द्‌विवेदी भी मानते हैं कि "कबीर के शास्त्रीय भाषा का अध्ययन नहीं किया था। काव्यगत रूढ़ियों के न वे जानकार थे और न कायल।'

अस्तु कबीर की सधुक्कड़ी भाषा अलंकार, रूपक तथा प्रतीक योजना से युक्त सरल और सुबोध भाषा है। उनके भावों का प्रकटन ही प्रतीक से जुड़ा है। मानवीय जगत के विविध उपकरणों की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने जिन संकेतों का प्रयोग किया है, वे ही प्रतीक बन गए हैं।

11.8.3 कबीर की प्रतीक योजना

प्रतीक का प्रयोग सन्त कबीर ने धर्म के प्रति विस्मय की भावना को साकार रूप देने और जनसाधारण के मन में धर्म के प्रति रूचि जाग्रत करने के किया है। कबीर की उलटबाँसियों में विरोधाभास कराने वाली प्रतीक योजना है। डॉ. रामकुमार वर्मा का मत है कि "कबीर धर्म में जिज्ञासा उत्पन्न करने के लिए उलटबाँसियाँ लिखते थे।'

कबीर की रचनाओं में प्रयुक्त प्रतीकों के कई स्त्रोत हैं। कबीर साहित्य में प्रयुक्त प्रतीक अधिकांशत: सिद्ध तथा नाथ साहित्य से प्रभावित है। नाथ साहित्य में प्रतीक समता मूलक और विरोध मूलक दोनों ही प्रकार के है।

"कबीर की रचनाओं में विरोध मूलक प्रतीक प्रणाली द्‌वारा अभिव्यक्ति - उलटबाँसियाँ - हिन्दी साहित्य में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं। विरोध को आकर्षक और अर्थपूर्ण बनाने के लिए कबीर ने अपनी रचनाओं में उलटबाँसियाँ को सिद्धहस्त प्रयोग किया है।"

कबीर की उलट्‌बाँसियों के सम्बन्ध में आचार्य परशुनाथ चतुर्वेदी अपना अभिमत प्रकट करते हुए लिखा है - "कबीर साहब अपनी उलटबाँसियों के लिए बहुत प्रसिद्ध है। उनके नाम पर निर्मित उलटबाँसियाँ सर्व साधारण तक में प्रचलित पायी जाती है। ये उलटबाँसियाँ बहुधा अटपटी वाणियों के रूप में रची गई रहती है। जिस कारण इनके गढ़ आशय को शीघ्र समझ न पाने वाला इन्हें सुनकर आश्चर्य में अवाक् रह जाता है। जब कभी इन पर ध्यानपूर्वक विचार कर लेने पर वह इनके शब्दों के पीछे निहित रहस्य को जान पाता है तो उसे अपार आनन्द भी मिलता है। "

विरोधमूलक प्रतीक योजना में कबीर सिद्धहस्त थे। उस समय के सामाजिक परिवेश को लेकर कबीर ने लिखा है -

नित उठि स्यार सिंघ सौ जूझे। कहै कबीर कोई बिरला बूझै।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवैदी जी ने भी अपना मत प्रकट करते हुए कहा है, "अपने चारों ओर के वातावरण से प्रभावित होकर काव्य रचना करने वाले इस मस्तमौला कवि का स्थान प्रतीकों की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। '

कबीर ने अपनी उलटबाँसियों में सीधी सरल भाषा में उनके अर्थ को बताने को कहा है। उनकी आध्यात्मिक और साधनात्मक अनुभूति विरोधाभासी प्रतीकों के रूप में प्रकट हुई है:-

है कोई जगत गुरू यानी, उलटि व बै क्वै। पाणी में अगनि जरै, अंधरे कीं सूझे।

अमृत समानां विष मैं जानां, विष मैं अमृत चाख्या।

कहै कबीर विचार विचारी, तिल में सेर समाना।

अनेक जनम का गुर गुर करता, सतगुर तब भेटांनां।

कबीर ने आमजन में प्रचलित प्रश्न-उत्तर पद्धति और पहेली के रूप में उलटबाँकसयों की रचना की है। यहाँ सर्वसाधारण की भाषा में वे जनमानस को चमत्कृत करना चाहते थे।

11.8.4 कबीर की अलंकार योजना

कबीर के काव्य में अलंकारों का भी सहज प्रयोग है। कबीर ने भाषा को अलंकृत करने के उद्देश्य से इसका प्रयोग नहीं किया है। डॉ गोविन्द त्रिगुणायत का मत है, "कबीर की रचनाओं में उन्हीं अलंकारों की प्रचुरता है,जिनकी योजना कवि की प्रतिभा अज्ञात रूप से भाव को प्रभावात्मक बनाने के लिए करती है।'

कबीर की रचनाओं में रुपयों का विशेष महत्व है, यदि कालीदास अपनी उपमा के लिए लोकप्रिय है तो कबीर ने रूपकों के माध्यम से ख्याति अर्जित की है।

रूपक

1. संतों भाई आई ज्ञान की आँधी रे।
2. यह संसार कागद की पुडिया, बूंद पडे घुल जाना है।

उपमा

1. यह ऐसा संसार है,जैसा सेमल फूल।
2. सतगुरु ऐसा चाहिए,जैसा सिकलीगर होई।
3. हाड़ जरै ज्यों लाकड़ी, केस जरे ज्यों घास।

अनुप्रास

1. काल अहेरी सांझ सकारा।
   सावज सकल संसारा।
   अखंड मंडल मंडित मत।
   त्री असनान करै त्रि खंड।

यमक

सहज सहज सब कोई कहै, सह न चीन्है कोई।

जिनि सहजै साहिब मिलै, सहज कहा है सोइ।।

श्लेष

सुरति समांनी निरति मैं, निरति रही गिरधार।

सुरति निरति परचा भया, तब खुली भया सिंभु दुवार।।

11.8.5 लोकोक्तियाँ

1. काजल केरी कोठरी।
2. पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ।
3. स्वास्थ की सब कोई सगा।
4. दिवस चारि का पेखणां।
5. अंधे से अंधा मिला, राह बतावै कौन

वस्तुतः कबीर के कथन का ढंग अपना ढंग है। पर उनके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप है। कबीर की अक्खड़ता और फक्कड़ाना मस्ती के कारण उनकी शैली में भी निर्भीकता और ओज पाया जाता है। कबीर कवि नहीं सर्वप्रथम भक्त और संत थे अत: उनके काव्य में साहित्यिक प्रतिमान छंद अलंकार, संगीत की राग रागिनियों का प्रयोग भी सचेष्ट नहीं है, अनायास ही है।

11.9 सारांश

कबीर काव्य का उद्देश्य अपनी अनुभूतियों के माध्यम से ब्रह्म विचार की अभिव्यक्ति करना था -

'यह जनि जानो गीत है, यह निज ब्रह्ा विचार

केवल कहि समझाइया, आतम साधन रे ।'

'मसि-कागद' से अपरिचित अशिक्षित कबीर ने शब्दों को तौलकर अभिव्यक्त नहीं किया वरन उनका काव्य स्वत: स्फुटित होता रहा।

उनके रहस्यवादी पदों में प्रिय के वियोग में व्याकुल प्रिया की व्याकुल पुकार, उसकी प्रतीक्षा और प्रेम की पीर इतनी अधिक है कि प्रेम दीवानी मीरा के निसदिन बरसत नैन हमारे, सदा रहत पावस ऋतु हम पर जबतें स्याम सिधारे। जैसे पद भी फीके पड़ जाते हैं:-

"आँखड़ियाँ झाँई पड़ी,पंथ निहारि-निहारि।

जीभडिया छाला पड़या राम पुकारि पुकारि।'

“विरहिनि ऊभी पंथ फिरि पंथी बूझे घाय।

एक सबद कह पीव का, कबहुँ मिलेंगे आय।

कबीर का वियोग काव्यकोमलता से परिपूर्ण और आत्मसमर्पण के भावों से भरा है। कबीर का फक्कड् व्यक्तित्व निर्भीकता से सामाजिक, धार्मिक, बाह्याडम्बरों पर प्रहार करता है

किन्तु विरह में प्रिय के प्रति नितान्त कोमल और आत्मनिष्ठा। सूर, मीरा, घनानन्द, जयशंकर प्रसाद और महादेवी वर्मा से भी श्रेष्ठ है।

कबीर ने अपनी रचनाओं को समाज और धर्म के लिए समर्पित किया था। इनमें वे किसी को फटकारते हैं तो किसी को उपदेश देते हैं। किसी को चेतावनी देते है। जाति-पाँति का भेद, ऊंच- नीच, छापा-तिलक, मूर्ति पूजा, रोजा - नमाज सभी को इन्होंने फटकारा और ललकारा। कहीं वे रहस्यवादी बन जाते हैं तो कहीं वियोगी। कहीं आध्यात्मिकता की ओर उन्यूख होते सृष्टि, जीव, ब्रह्म, जगह जैसे गूढ दार्शनिक विषयों की विवेचना करते है। गुरू महिमा, सतसंगति और ईश्वरीय प्रेम की व्याख्या भी साथ-साथ करते चलते हैं।

कबीर की अपनी रचनाओं के विषय भी नितान्त मौलिक है। वे किसी परम्परा का और न किसी व्यक्ति का अनुसरण करते हैं। कबीर क्रांतिकारी कवि थे और उनकी कविताओं के विषय भी क्रांतिकारी है। उनका चिंतन इतना सुस्पष्ट था कि सीधा हृदय को छूता है।

11.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. कबीर - आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
2. कबीर साहित्य की परख - आचार्य परशुराम चतुर्वेदी
3. कबीर एक अनुशीलन - डॉ. रामकुमार वर्मा
4. कबीर का रहस्यवाद - डॉ. रामकुमार वर्मा
5. कबीर साहित्य चिन्तन - आचार्य परशुराम चतुर्वेदी

11.11 अभ्यास

1. नीचे व्याख्या के लिए कुछ पंक्तियाँ दी गयी है, अत्यंत संक्षेप में व्याख्या कीजिए। उत्तर रिक्त स्थानों में लिखिए -

(क) तन रत कीर मैं मन रत कीर, पंचतत्व बराती रामदेव मोरे पाहुँने आये, मैं जोबन मैं माती।

....

....

(ख) आँधी पीछै जो जल आ, प्रेम हरीजन भीनाँ।

कहै कबीर भाँन के प्रगटें, उदित भया तम पीनी।।

....

....

(ग) चरननि लागि करौं बीरयाई,

प्रेम प्रीति राखी उरझाई।

....

....

2. नीचे दी गई पंक्तियों की शिल्पगत विशेषताएं बताइए।

(क) दुलहिन गाओ मंगलाचार।

हर घरि आए हो राजा राम भरतार।

....

....

(ख) दुचिते की दोई धुँनी गिराँनी, मोह बलींडा तूटा।

त्रिस्ताँ छानि परी घर ऊपीर, कुबधि का भाँडा फूटा।

....

....

(ग) इत मन मंदिर रही नित चौषे,

कहै कबीर परहु मत छाए

....

....

बोध प्रश्न :

1. नीचे दिये गए वाक्यांशों को व्यक्त करने वाले सही शब्द बताइए -

   (क) संस्कार के मंगलमय गीत (लोकगीत/ मंगलाचार)

   (ख) पति के लिए प्रयुक्त शब्द (पियारे / भरतार)

   (ग) विवाह के समय वेदी के समक्ष की गई पीरक्रमाएं (फेरी/गाँवरि)

2. उलटबाँसियाँ का तात्पर्य क्या हैं, दो पंक्तियों में बताइए।

   ....

   ....

3. कबीर के काव्य की मुख्य विशेषताएँ बताइए।

   ....

   ....

4. कबीर की भाषा की दो विशेषताएं बतलाइए।

   ....

   ....

11.12 अभ्यास / बोध प्रश्नों के उत्तर -

1. (क आज मेरे घर स्वामी पर ब्रह्म श्री राम अतिथि बनकर आए हैं। मेरी आत्मा (प्रभु भक्ति में परिपक्व (जोबन मै माती) है। मैं अपने शरीर और मन को उनके प्रेम में रंग लूंगी और पंचतत्व मेरे विवाह के साक्षी (बाराती) होंगे।

   (ख) इस आधी के पश्चात् प्रभु भक्ति के जिस जल की वर्षा हुई, उससे प्रभु प्रेमी भीग गए। ज्ञान के सूर्य के उदित होते ही अज्ञान का अंधकार विकीर्ण हो गया।

   (ग) मैं प्रियतम रूपी परब्रह्म को अपने प्रेम बंधन में बाँध, उनके चरणों में रहकर उनकी सेवा करूँगी।

2. (क) सांग रूपक रूपकातिशयोक्ति अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग। माधुर्य गुण, रहस्यवादी भावनाओं की अभिव्यक्ति दाम्पत्य भावना के प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग प्रस्तुत पद में किया गया है।

(ख) ज्ञान, भावना और कल्पना तीनों का सुंदर मिश्रण है। कल्पना तत्व को रूपक और प्रतीकों दारा अभिव्यक्त किया है। दुचित्रे रूपी धूंनी, मोह रूपी बलींड़ा, तृष्णा रूपी छप्पर, कुबुद्धि रूपी बर्तन। प्रसाद-गुण का प्रयोग।

(ग) मन रूपी मंदिर रूपक अलंकार है। मार्धुय भाव की भक्ति। कोमल कान्त शब्दावली का प्रयोग,प्रसाद एवं माधुर्य गुण, भावाकुलता की अभिव्यापक्ता।

बोध प्रश्नों के उत्तर -

1. (क) मंगलाचार

(क) भरतार

(ख) भाँवीर

2. उलटबाँसी का अभिप्राय 'उलटी हुई प्रतीत होने वाली उक्ति' आध्यात्मिक अनुभूतियाँ लोक विपरीत अनुभूतियाँ होती है और उन अनुभूतियों को व्यक्त करने वाली वाणी लोकदृष्टि से उलटी प्रतीत होती है। गोरखनाथ की 'उलटी चर्चा' और कबीर. का 'उलटा वेद' का प्रयोग भी इसी अर्थ का घोतक है।

3. कबीर का काव्य अनुभूति प्रवणता, प्रतिभा और उनके व्यक्तित्व के आकर्षण से परिपूर्ण है। उनकी अनुभूति का आधार मानव चेतना है। ये पदावलियाँ रसात्मकता के साथ-साथ रहस्यवाद में अद्वैती और सूफीमत की धारा प्रवाहित होती दिखाई देती है। सामाजिक आडम्बरों का विरोध भी इनकी विशेषता है।

4. कबीर की भाषा में विविध प्रान्तीय भाषाओं का मेल है। भाषा का रूप अधिकतर विषय और भाव के अनुरूप है। उनमें संकेतात्मकता, प्रतीकात्मकता और परिष्कार है, उनमें भाषा के नियमों का पालन नहीं है इसीलिए उनकी भाषा सधुक्कड़ी या खिचड़ी है। भाषा में उपदेशात्मक प्रवृत्ति की प्रधानता वाले पदों में प्रसाद गुण और रहस्यवादी प्रवृत्ति में माधुर्य गुण मिलता है।

इकाई 12 तुलसीदास

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 जीवनवृत्त

12.2.1 रचनाएँ

12.2.2 तुलसीदास की पृष्ठभूमि

12.3 मूलपाठ (वाचन)

12.4 संदर्भ सहित व्याख्या

12.5 भावपक्ष

12.5.1 तुलसीदास की दैन्य भावना

12.5.2 तुलसीदास की समन्वय भावना

12.6 तुलसीदास का संरचना शिल्प (कला पक्ष)

12.6.1 अलंकार योजना

12.6.2 गीतिकाव्य

12.7 सारांश

12.8 संदर्भ ग्रन्थ

12.9 अभ्यास

12.9.1 बोधप्रश्न

12.9.2 बोधप्रश्न / अभ्यासों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम मध्यकालीन सगुण भक्ति के राम भक्ति शाखा के सर्वश्रेष्ठ कवि तुलसीदास की कुछ कविताओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढने के बाद आप-

- तुलसी के जीवन वृत के विषय में बता सकेंगे।
- तुलसी के काव्य के आधार पर तत्कालीन युगीन परिवेश के विषय में बता सकेंगे।
- तुलसीदास की रचनाओं के विषय में बता सकेंगे।
- तुलसीदास की भक्ति भावना के विषय में बता सकेंगे।
- लोकनायक तुलसीदास की समन्वय साधना के विषय में बता सकेंगे।
- तुलसी को युग प्रतिनिधि कवि के रूप में बता सकेंगे।
- तुलसी के काव्य - कौशल के विषय में बता सकेंगे।
- तुलसीदास की आज की प्रासंगिकता के विषय में बता सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

देशकाल और क्षणभंगुरता के विरुद्ध विश्वजनीन चिरन्तन जीवन मूल्यों की अखण्डता और अमरता का उद्घोष करने वाले, हिन्दी साहित्य गगन के परम प्रकाशमय नक्षत्र विश्व साहित्य के सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ रामचरित मानस के प्रणेता गोस्वामी तुलसीदास का जीवनवृत्त अन्धकार एवं विवादस्पद है। गोस्वामी तुलसीदास ने न केवल तत्कालीन हिन्दू समाज अपितु भारत और समस्त संसार को अपनी भक्ति के आलोक से आलोकित कर दिया है, जिससे अविश्वास, अनास्था, कुण्ठा और अवसाद ग्रस्त भ्रियमाण मानव समुदाय को नई आस्था, विश्वास और जीवन जीन का संबल प्राप्त होता है।

12.2 जीवनवृत्त

गोस्वामी तुलसीदास का जन्म संवत् 1589 के लगभग राजापुर में हुआ। अनेक विद्वानों गोस्वामी जी का जन्म सोरों में हुआ मानते हैं और इस हेतु साक्ष्य भी प्रस्तुत करते हैं। किन्तु विद्वानों ने पर्याप्त शोध एवं अन्त: साक्ष्य और बाहय साक्ष्य के आधार पर उनका जन्मस्थान राजापुर ही माना है। उनके पिता का नाम आत्माराम था। उनका गोत्र पाराशर था और वे 'पत्योजा' के दूबे थे- 'तुलसी परासर गोत, दूबे पति औजा को 'कुछ विक्षन इन्हें सरयूपारीण ब्राह्मण मानते है। उनकी माता का नाम हुलसी था। अन्त: साक्ष्य, बाहय साक्ष्य और जनश्रुति तीनों से इस बात की पुष्टि हो जाती है-

'रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी,
तुलसीदास हित हिय तुलसी सी। '

इसी प्रकार रहीमदास जी ने भी कहा है-

'गोद लिए हुलसी फिरै, तुलसी सो सुत होय। '

जनश्रुति के अनुसार तुलसीदास जी का जन्म अभुक्तमूल नक्षत्र में होने के कारण बाल्यावस्था में ही उनके माता-पिता द्वारा परित्याग कर दिया गया था।

अभुक्तमूल नक्षत्र में उत्पन्न बालक माता-पिता के लिए अमंगलकारी माना जाता है। तुलसी को एक मुट्ठि अनाज के लिए घर-घर भटकने के लिए विवश होना पड़ा, विपत्ति के समय उनके माता-पिता एवं सभी सगे सम्बन्धियों ने भी उनसे नाता तोड़ दिया था। उनका पालन पोषण मुनिया नाम की सेविका ने किया और इनका नाम 'रामबोला' रखा। उसकी मृत्यु के पश्चात् इन्हें अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। कवितावली में वे कहते है -

जाये कुल मंगन, बधावनों बजायो सुनि
भयो परिताप पाप जननी जनक को
बारें ते ललात बिललात द्वार-द्वार दीन
जानत हो चारि फल चारि चनन को।

चार चने ही जिनके लिए जीवन की चरम सिद्धि (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) बन गए थे, ऐसे में भाग्य पर भला उनका विश्वास कैसे होता।

दीरद्रय एवं दैन्य में पोषित होने के कारण तुलसी में अपनी ब्राह्मण जाति का बोध उभर नहीं पाया, वे जाति पाँति का प्रश्न उठने पर चिढ़ जाते थे। कवितावली में अपने हृदय की वेदना को व्यक्त करते हुए वे कहते हैं : -

(1) " धूत कहौ अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जोलहा कही, कोऊ
काहू की बेटी सो बेटा न ब्याहब, काहू की जाति बिगारी न सोऊ। '

(2) "मेरी जाति - पाँति न चहौ काहू का जाति - पाँति,
मेरे कोऊ काम को न मैं काहू के काम को। "

बाल्यावस्था की इस दयनीय अवस्था में उनकी भेंट बाबा नरहरिदास जी से हुई। वे अनन्य रामभक्त थे। तुलसीदास ने उनसे संस्कृत भाषा का ज्ञान अर्जित किया। गुरू षेष सनातन के पास काशी में निरन्तर 16 - 17 वर्ष रहकर उन्होंने वेद पुराण, उपनिषद, रामायण तथा भागवत आदि का गंभीर अध्ययन किया। फिर वे राजापुर चले गए।

दाम्पत्य जीवन :

राजापुर में ही दीनबन्धु पाठक की पुत्री रत्नावली के साथ उनका विवाह हुआ। उनके तारक नाम का एक पुत्र भी हुआ, जिसकी बाद में मृत्यु हो गई थी। तुलसीदास की युवावस्था और उनका दाम्पत्य जीवन संतुष्ट और सुखी था। ' भक्त माल' के प्रियादास की टीका से भी ज्ञात होता है कि तुलसीदास पत्नी के प्रेम में आकण्ठ डूबे संतुष्ट पति थे, पत्नी का वियोग उनके लिए सह्य नहीं था। लोक जीवन में यह प्रचलित है कि पत्नी रत्नावली के पीहर चले जाने पर वर्षा काल में ऊफनती हुई नदी को शव के सहारे पार किया और सर्प के सहारे दीवार को लांघा। रत्नावली के रूप-सौन्दर्य पर अत्यधिक आसक्ति के कारण उन्हें पत्नी से 'लाज न आई आपको, दौरे आएहु नाथ। ' सुनना पड़ा और रत्नावली के इन शब्दों ने तो उनकी जीवनधारा, दिशा और दृष्टि को ही बदल डाला-

'अस्थि चर्म मय देह मम, तासो जैसी प्रीति,
जैसी जो श्री राम महं, होति तो न भव भीति। '

पत्नी की फटकार ने भोगी, आसक्त, गृहस्थ, तुलसी को योगी, अनासक्त, भक्त तुलसीदास बना दिया। काम की चरम सीमा को पार करते ही विरक्त तुलसी के समक्ष भक्ति और साधना का मार्ग खुला और उन्हें 'मानस' और 'विनय पत्रिका' जैसी उत्कृष्ट रचनाएँ लिखने की प्रेरणा प्राप्त हुई। तीर्थाटन के रूप में प्रयाग, चित्रकूट हरिद्वार आदि स्थानों पर भी गए।

विरोध और सम्मान :

जनश्रुतियों से पता चलता है कि तुलसीदास को लोकभाषा अवधी में 'रामचरितमानस' की रचना करने पर काशी के असहिष्णु पंडित वर्ग के प्रबल विरोध का सामना करना पड़ा। इन पंडितों ने 'रामचरितमानस' की पांडुलिपि को जलाने का प्रयास किया। भगवान विश्वनाथ के मंदिर में पांडुलिपि को परीक्षणार्थ रखा गया। भगवान विश्वनाथ का समर्थन 'मानस' को मिला और अन्त में तुलसी के विरोधियों को उनके समक्ष झुकना पड़ा। इसे कवितावली में तुलसी ने कहा भी है -

'राम नाम को प्रमाउ पाउ महिमा प्रताप
तुलसी से जग मानियत महामुनी सो।'

जीवन की सांध्य-बेला :

'हनुमान - बाहुकं' के पदों से पता चलता है कि तुलसीदास को जीवन के अंतिम कुछ वर्षों में अतिशय शारीरिक कष्ट झेलना पड़ा था। वे कहते हैं :-

पाये पीर, पेट पीर, बांह पीर, मुंह पीर,
जर्जर सक ल सरीर पीर भई है।

आजीवन काशी में 'रामकथा' में निमग्र तुलसी असी गंग के तट पर संवत् 1680 श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन पंचभूत के इस शरीर से मुक्त हो गए। उनकी मृत्यु के सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है-

'संवत् सोलह सौ अस्सी, असी गंग के तीर,
श्रावण शुक्ला तीज शनि, तुलसी तज्यों शरीर। '

12.2.1 रचनाएँ

तुलसीदास जी भक्त, साधक और महाकवि थे। उनकी भक्त और साधना ही काव्य के रूप में आकार ग्रहण करती दिखाई देती है। कालक्रमानुसार उन्होंने भक्ति रस से परिपूर्ण अनेक ग्रंथों की रचना की जिनके नाम इस प्रकार हैं : - (1) रामलला - नहछू (2) वैराग्य संदीपनी (3) रामाज्ञा प्रश्न (4) जानकी मंगल (5) रामचरित मानस (6) सतसई (7) पार्वती मंगल (8) गीतावली (9) विनय पत्रिका (10) कृष्ण गीतावली (11) बरवै रामायण (12) दोहावली और (13) कवितावली (बाहुक सहित)। इनमें से 'रामचरित मानस', 'विनय पत्रिका', 'कवितावली' और 'गीतावली' जैसी रचनाएँ तो कालजमी रचनाएँ हैं।

रामचरित मानस : -

यह श्री तुलसीदास जी का विश्वप्रसिद्ध महाकाव्य है। इसकी रचना उन्होंने संवत् 1631 की रामनवमी के दिन प्रारम्भ की थी। इस ग्रंथ में उन्होंने मानव जीवन की विविध स्थितियों और भावों को अंकित किया है। अपने आदर्शो, मूल्यों और नैतिक मापदण्डों में यह अनूठा ग्रंथ है।

विनय पत्रिका :-

रामचरित मानस के पश्चात् विनय पत्रिका तुलसी का श्रेष्ठ ग्रंथ है। विनयपत्रिका में तुलसी की भक्ति और दीनता का सुन्दर निदर्शन है। जनश्रुति है कि तुलसीदास जी ने विनयपत्रिका की रचना काशी के पंडितों के असहिष्णुतापूर्ण व्यवहार से त्रस्त होकर की थी। विनय पत्रिका के पदों में ज्ञान, वैराग्य, मोह-माया और संसार की असारता पर प्रकाश डाला गया है। इनकी भाषा परिनिष्ठत और संस्कृत निष्ठ है। इसकी रचना काल संवत् 1639 है।

कवितावली : -

यह रचना भी मानस की तरह कांड बद्ध है। इसीलिए बहुत से लोग इसे 'कवित-रामायण' भी कहते हैं। इसमें कुल मिलाकर 637 छंद है। इसकी भाषा ब्रज है और कवित्र सवैया, घनाक्षरी, षटपदी आदि छंदों का प्रयोग है। कवितावली तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों का अंकन है। इसकी रचना का समय संवत् 1655 से 1671 के मध्य है।

गीतावली : -

गीतावली कृष्ण साहित्य से प्रभावित है किन्तु इसमें रामकथा का ही वर्णन है। भाषा अपने माधुर्य के लिए प्रसिद्ध ब्रज है। शैली अष्टछाप के कवियों की गति शैली से मिलती है। इसमें संयोग-वियोग और वात्सल्य का चित्रण है। इसमें कुछ मिलाकर 328 स्फुट पद है। इसका रचनाकाल संवत् 1616 से 1628 के मध्य माना जाता है।

भक्ति-काव्य : -

तुलसीदास सबे लोकधर्म के नायक थे। वे सच्चे वैष्णव साधु थे और उनकी वैष्णव भक्ति में पूरा विश्व समाविष्ट था।वे राम के उपासक थे किन्तु उन्होंने अन्य मतावलम्बियों का भी सम्मान किया। उन्होंने ज्ञानवाद के साथ कर्मकाण्डों को भी प्रश्रय दिया और भक्ति,ज्ञान और कर्म का समन्वय किया। उन्होंने ब्रहम, विष्णु, महेश की भी भक्ति की। उनके आराध्य राम स्वयं कहते हैं : -

'शिव द्रोही मम दास कहावा, सो नर मोहि सपनेहूँ न पावा।'

उन्होंने लोक-धर्म को निभाते हुए सभी साध्नाओं को अपने मत में स्थान दिया। वे समाज की नाड़ी को पहचानने वाले कुशल वैध थे, वे जानते थे कि लोक और समाज के कल्याण के लिए गृहस्थ जीवन को दया, धर्म, सत्कर्म और त्याग जैसे महत्त् मूल्यों से प्रतिष्ठित करना होगा, इसीलिए उन्होंने गृहस्थ जीवन के आदर्श चित्रों को प्रस्तुत किया। उनके पात्र आदर्श भाई, आदर्श पत्नी, आदर्श पति, आदर्श बहू ' आदर्श सास, आदर्श राजा, आदर्श प्रजा, आदर्श स्वामी और आदर्श सेवक की सृष्टि करते हैं। आज भी भारतीय समाज को इन्हीं आदर्शों की आवश्यकता है। उन्होंने तत्कालीन सांस्कृतिक वातावरण को देखा और अपनी रचनाओं में उनके विषय में प्रतिक्रिया भी दी।

12.2.2 पृष्ठभूमि

तुलसीदास युग दृष्टा कवि थे। उन्होंने समकालीन समाज की तमाम स्थितियों को भली भांति देखा। तुलसी का युग मुगल सम्राट अकबर का युग था। अकबर यद्यपि शान्तिप्रिय शासक और भारतीय संस्कृति का प्रशंसक था किन्तु फिर भी उस काल में इस्लामी संस्कृति हिन्दू संस्कृति को सब ओर से आक्रांत किए थी। हिन्दुओं की राजनीतिक शक्ति का क्षय हो गया था। हिन्दू और मुसलमान दोनों विलासिता के पंक में डूबे हुए थे। आर्थिक रूप से समाज क्षीण हो चुका था। दैन्य और दरिद्रता का ही व्यापक प्रसारथा। समाज अस्त-व्यस्त अवस्था में था, छुआछूत का रोग चारों और फैला था। दुर्भिक्ष से पीड़ित जनता अपनी हीन सामाजिक और आर्थिक स्थिति को लेकर त्राहि-त्राहि कर रही

थी। समाज के सभी वर्ग अपने परम्परागत व्यवसाय को छोड़कर आजीविका विहीन हो गए -

'खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि,
बनिक को बनिज, न चाकर को चाकरी।
जीविका विहीन लोग, सीद्यमान सोच बस,
कहै एक एकन सों, कहां - जाई का करी।'

-कवितावली

शासक के उत्पीड़न के साथ-साथ भीषण अकाल, दुर्भिक्ष, महामारी आदि अनेकानेक संकटपूर्ण स्थितियों से जनता आतंकित सी थी -

'संकर सहर सर नारि नर बारि -बर
बिकल सकल महामारी मांजामई है।
उछरत उतरात हहरात मरि जात,
भमरि भगता,थल-जल मीचुमई है।'

वर्णाश्रम व्यवस्था विकृत हो गई थी। संतों के उत्पीड़न के साथ-साथ दुष्टों का सम्मान किया जा रहा था-

'प्रजा पतित पाखंड पाप-रत, अपने अपने रंग रई है। '

इस प्रकार तुलसी ने युग प्रतिनिधि कवि के रूप में अपने युग के चित्रण के साथ-साथ लोकरंजन और लोक सुधार का प्रयास भी किया।

12.3 मूल पाठ (वाचन)

यहाँ हमने श्रृंगार वर्णन (रामचरितमानस) और बाल वर्णन (कवितावली) से सम्बन्धित तीन पद दिये हैं। आगे आप इन पदों का वाचन करेंगे। रामचरित मानस से लिया गया अंश अवधी और कवितावली के दो पद ब्रजभाषा में है। कठिन शब्दों के अर्थ नीचे दिए गए हैं।

श्रृंगार वर्णन :

पहला पद रामचरितमानस के बालकाण्ड से लिया गया है। राम-लक्ष्मण जनक की पुष्प वाटिका का निरीक्षण करने आते हैं। सीता जी भी पार्वती माता की पूजा करने सखियों सहित वहाँ आती है। सीता जी का राम का प्रथम दर्शन और सीता-राम जी का परस्पर दर्शन होता है। राम सीता को देखकर उन पर अनुरक्त हो जाते हैं। राम लक्ष्मण से कहते हैं कि सीता के कंकण कर धनी और पाजेब के शब्दों की ध्वनि को सुन ऐसा लगता है, मानों कामदेव विश्व विजय का संकल्प लेकर दुंदुभी बजा रहा हो। उनके सौन्दर्य को निष्पलक नेत्रों से देखते हैं और मन ही मन उनके प्रेम में मग्न होकर अपनी अवस्था को देखते हुए पवित्र मन से अपने छोटे भाई लक्ष्मण से समय के अनुसार वचन कहे।

कंकन किकिनि नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन राम हदयँगुनि।
मानहुँ मदन दुदुभी दीन्हीं। मनसा बिस्व विजय कहें दीन्हीं।।
अस कहि फिरि चितए तेहि ओरा। सिय मुख सीस भए नयन चकोरा।

भए बिलोचन चारू अचंचल। मनहुँ सकुचि निमि तजे दिगंचल।।
देखि सीय सोभा सुखु पावा। हदयँ सराहत वचनु न आवा।
जनु बिरंचि सब निज निपुनाई। बिरचि बिस्व कहँ प्रगति देखाई।
सुदरता कहुं सुंदर करई। छवि गृह दीपसिखा जनु बरई।
सब उपमा कवि रहे जुठारी। केहिं पटतरौ विदेह कुमारी।
दो सिय सोभा हिय बरनि प्रभु आपनि दसा बिचारि।
बो ले सुचि मन अनुज सन बचन समय अनुहारि।

कठिन शब्द :

कंकन-हाथों के कड़े, किंकिनि-करघनी, नूपुर-घुंघरू, धुनि-ध्वनि, सन-से गुनि-विचार कर, मानहुँ -मानो, मदन-कामदेव, दुंदुभी-वाद्यायन्त्र, मनसा-मनसे, विस्व-विश्व, अस कहि-ऐसा कहकर, चितए-देखा,सिय-सीता, सीस-चन्द्रमा, भए-हो गए, बिलोचन-नेत्र, चारू-चंचल, अचंचल-स्थिर, सकुचि-सकुचाकर, निमि-निमि-नामक,एक राजा,ये जनक के पूर्वज थे और उनका निवास पलकों में माना जाता है दिगचल -(दृगंचल) - पलक सराहत, सराहना, जनु-मानो, बिरंचि-विधाता,निपुनाई-चतुराई, बिरचि-निर्मित की बरई-जल रही है जुठारी-झूठे पटतरो-तुलना करूँ, हिय-हृदय आपनि-अपनी सुचिमन-पवित्रमन से अनुहारि-अनुसार।

बाल सौन्दर्य :

तुलसीदास श्रीराम के बाल सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहते हैं कि श्री राम की दांतों की पंक्ति सुन्दर, श्वेत, कुद के पुष्प के समान है, उनके होंठ कोमल कि सलय के समान है। अमूल्य मोतियों की माला उनके वक्षस्थल पर शोभा पा रही है। उनकी घुंघराली लटें - उनके मुँह के ऊपर झूल रही है और तुलसीदास जी कहते हैं कि राम के इस - बाल सौन्दर्य पर मैं अपने प्राणों को न्यौछावर करता हूँ और उनके मीठे बोलों पर बलिहारी होता हूँ।

दूसरा पद :

वर दन्त की पंगति - कुंदकली, अधराधर पल्लव खोलन की।
चपला चमकै घन बीच जर्ग छबि मोतिन माल अमोलन की।
घुंघरारि लटैं लटकैं मुख ऊपर, कुण्डल लोल कपोलन की।
निवछावरि प्रान करें 'तुलसी' बलि जाऊं लला इन बोलन की।

कठिन शब्द :

वर-श्रेप्त, पंगति-पक्ति, कुंदकली-श्वेत वर्ण का पुष्प, अघरा धर-दोनों होंठ, पल्लव-कोमल पत्ता, चपला-बिजली, धन-बादल, बीच -मध्य, छवि-सौन्दर्य, अमोलन- अमूल्य, धुंघरारि-घुंघराली, कुण्डल-कानों के कुंडल, लोल-चंचल, कपोलन-गालो पर, निवछावरि-उत्सर्ग, लला-प्रिय, बालकु- बोलन, वचन पर बलि जाऊ-न्यौछावर हो जाऊं।

तीसरा पद :

अवधेस के द्वारे सकारे गई g सुत गोद कै भूपति लै निकसे।
अवलोकि हौं सोच-विमोचन को, ठगी-सी रही, जे न ठगे धिक से।

'तुलसी' मनरंजन रंजित अंजन नैन सु - खंजन जातक से।
सजनी सीस में समसील उभै नवनील सरोरूह से विकसे।। 1।।

बाल सौन्दर्य के इस पद में एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि मैं प्रातःकाल अयोध्या नरेश दशरथ के द्वार पर गई तो वे अपने पुत्र राम को गोद में लेकर निकले। राम की सुन्दरता को देखकर मैं आश्चर्य और प्रसन्नता से स्तब्ध सी रह गई। एक सखी अपनी सखी से बालक श्रीराम के नेत्रों की एवं शरीर की शोभा का वर्णन करती है।

कठिन शब्द :

अवधेश-अयोध्या के राजा दशरथ, सकारे-सुबह, अवलोकि-देखकर, हाँ-मैं, विमोचन-दूर करने वाले, जे-जो, धिक्-धिक्कार, मनरंजन-मन को प्रसन्न करने वाले, अंजन-काजल, जातक-बचा, सीस-चन्द्रमा, उभै-दोनो, सरोरूह-कमल, खंजन-एक पक्षी जिसकी तुलना नेत्रों से की जाती है।

12.4 संदर्भ सहित व्याख्या

आपने तुलसीदास द्वारा रचित उपर्युक्त तीन पदों का वाचन और तुलसीदास के काव्य की विशेषताओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया होगा। तुलसीदास के साहित्य को किस प्रकार पढ़ा जाना चाहिए और उसकी व्याख्या कैसे करनी चाहिए इसके लिए हम उपर्युक्त तीनों पदों की व्याख्या यहाँ दे रहे है।

पद - कंकन किंकिनि अर.... समय अनुहारि।

संदर्भ : - प्रस्तुत पद रामचरित मानस के बालकाण्ड से लिया गया है। राम-लक्ष्मण दोनों पुष्प- वाटिका का निरीक्षण करने आते हैं। सीताजी भी सखियों के साथ पार्वती जी की पूजा करने आती हैं। राम सीता जी के प्रथम दर्शन से उनके प्रति अनुरक्त हो जाते हैं और सीता के कंगन, करधनी और नुपूर की ध्वनि से राम के हृदय में प्रेम से परिपूर्ण हलचल सी होने लगती है। वे अपनी अनुभूतियों को अपने छोटे भाई लक्ष्मण के समक्ष व्यक्त करते हैं।

सखियों सहित सीता के आगमन के समय कंगन (हाथों के कड़े) करधनी और पाजेब के घुंघरूओं की आवाज सुनकर श्री रामचन्द्र जी हृदय में विचारकर लक्ष्मण से कहते हैं-

यह ध्वनि ऐसी आ रही है मानों कामदेव ने विश्व को विजय करने का संकल्प करके डंके पर चोट मारी है।

ऐसा कहकर श्रीराम जी ने फिरकर उस ओर देखा तो सीताजी के मुख रूपी चन्द्रमा (को निहारने) के लिए उनके नैत्र चकोर बन गए। उनके सुन्दर नैत्र स्थिर हो गए (टकटकी लग गई) मानों निमि (जनक के पूर्वज, जिनका निवास वसकी पलकों में माना गया है) ने लड़की-दामाद के मिलन प्रसंग को देखना उचित नहीं, इस भाव से सकुचाकर पलकें छोड़ दीं (पलकों में रहना छोड़ दिया, जिससे पलकों का गिरना रूक गया)।

सीता जी की शोभा देखकर श्री रामचन्द्र जी ने बड़ा सुख पाया। हृदय में वे उसकी सराहना करते हैं किन्तु से वचन नहीं निकलते (यह शोभा अति अनुपम है) मानों ब्रह्मा ने अपनी सारी निपुणता को मूर्तिमान कर संसार को प्रकट करके दिखा दिया हो।

वह (सीताजी की शोभा) सुन्दरता को भी सुन्दर करने वाली है (वह ऐसी मालूम होती है) मानो सुन्दरता के घर में दीपक की ली जल रही हो (अब तक सुन्दरता रूपी भवन में अंधेरा था, वह भवन मानो सीता जी की सुंदरता रूपी दीपशिखा को पाकर जगमगा उठा है। पहले से भी अधिक सुंदर हो गया है।) सारी उपमाओं को तो (काम में लेकर) कवियों ने झूठा कर रखा है। मैं जनक नन्दिनी सीताजी की किससे उपमा दूँ?

इस प्रकार हृदय में सीताजी की शोभा का वर्णन करके और अपनी दशा को विचारकर प्रभु श्री रामचन्द्र जी पवित्र मन से अपने छोटे भाई लक्ष्मण से समयानुकूल वचन बोले।

विशेष : -

1. अनुप्रास से पुष्ट उत्प्रेक्षा अलंकार है। ध्वन्यार्थ व्यंजना, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय और संदर्भ - जैसे अलंकार हैं।
2. प्रथम दर्शन में प्रेम की विहवलता का वर्णन।
3. राम की मनोदशा और सीता के सौन्दर्य का वर्णन।
4. श्रृंगार रस का सात्विक चित्रण।
5. तुलसी की काव्य - कला की विशेषता प्रभावोत्पादकता है। तुलसी का शब्द संगठन इतना मार्मिक है कि वह वर्णन को तुरंत सजीव और गति सम्पन्न कर देता है।
6. दृश्य सजीव रूप में अपनी नाटकीयता के साथ हमारे समक्ष खड़ा हो जाता है।

पद - वर दन्त की पंगति कुंदकली..... इन बोलन की।

संदर्भ : - प्रस्तुत पद 'कवितावली' से उद्धृत है। इस पद में श्री रामचन्द्र के बाल सौन्दर्य का वर्णन है। कवि कहता है : -

व्याख्या - श्री राम के श्रेष्ठ दांतों की पंक्ति सुंदर श्वेत कुंद के पुष्प के समान हैं, उनके होंठ कोमल किसलय के प्रस्फुटित होने के समान हैं। उनके श्याम वर्ण के वक्षस्थल पर अमूल्य मोतियों की माला इस प्रकार शोभयमान हो रही है, जैसे बादल के बीच में बिजली चमक रही हो। उनके मुख पर बालों की घुँघराली लटें लटक रही हैं और उनके कानों में पहने चंचल कुण्डलों की शोभा गालों पर झलकती दिखाई दे रही है। तुलसीदास जी कहते हैं कि मैं रामचन्द्र जी के इस बाल सौन्दर्य पर अपने प्राणों को न्यौछावर करता हूँ और उनेक मीठे बोलों पर बलिहारी होता हूँ।

विशेष -

1. अनुप्रास, रूपक व उपमा अलंकार है।
2. श्री राम के बाल सौन्दर्य का वर्णन है।
3. तुलसी राम के बाल सौन्दर्य के वर्णन में भी मर्यादा का ध्यान रखते हैं।
4. वर्ण मैत्री, शब्द मैत्री, संगीतात्मकता और कोमल कल्पना के साथ शब्द की आकृति और प्रवाह प्रकट हो रहा है।

पद - अवधेस के द्वारे... सरोरूह से बिकसे।

संदर्भ : - प्रस्तुत पद महाकवि तुलसीदास द्वारा रचित 'कवितावली' से लिया गया है। एक सखी दूसरी सखी से राम के सौन्दर्य का वर्णन करती हुई कहती है -

में प्रातःकाल ही अयोध्या के राजा दशरथ के द्वार पर गई थी। उस समय राजा दशरथ अपने पुत्र राम को गोद में लेकर महलों से बाहर निकले थे। मैंने जब दुःखों को दूर करने वाले राम के दर्शन किए तो उनकी सुन्दरता को देखकर मैं आश्चर्य व प्रसन्नता से स्तब्ध हो गई। जो सौन्दर्य के भण्डार राम के रूप को देखकर जो स्तब्ध नहीं होते उनको धिक्कार है। तुलसीदास जी कहते हैं कि मेरे मन को प्रसन्न करने वाले उनके काजल से रंजित होकर ऐसे प्रतीत हो रहे थे, जैसे सुन्दर खंजन पक्षी के बचे के समान शोभा सम्पन्न हो। हे सखी! राम का शरीर अपने स्वभाव से ही चन्द्रमा व नीले रंग के कमल दोनों के ही स्वभाव को धारण किए हुए विकसित हो रहा था।

विशेष -

1. व्यतिरेक, रूपक और उपमा अलंकार का प्रयोग है।
2. पद ऐसी सरल वाक्य रचना में ढला है कि वह हमारे बोलचाल के गद्य से भी अधिक सुलझी जान पड़ती है।

12.5 भाव पक्ष :

तुलसीदास जी द्वारा प्रतिपादित भक्ति आत्माभिव्यक्ति होते हुए भी स्वान्तः सुखाय है। इसमें व्यक्तिगत कल्याण के साथ-साथ लोक-कल्याण की भावना भी है। तुलसी की भक्ति में समस्त सांसारिक मर्यादाओं का आदर्श निहित है और उनमें वेद और लोक दोनों का सुन्दर समन्वय है।

12.5.1 तुलसीदास की दैन्य भावना

'माधव मो समान जग माही।

सब विधि हीन, मलीन, दीन अति, लीन विषय कोई नाही।।'

तुलसीदास की यह दीनता ऐसा प्रतीत होता है कि अपने बाल्कयकाल की दरिद्रता और असुरक्षा का ही उदात्तीकृत रूप है। तुलसी ने अपनीदीनता को व्यापक मानवता के साथ जोड़ दिया। बाल्यावस्था में पाई दैन्य और दरिद्रता ने उनके बाद के चिंतन और साधना को भी प्रभावित किया। भौतिक स्तर पर उन्होंने 'नहिं दरिद्र सम दुख जग माहि' और जनहित के लिए 'दरिद्र दसानन दबाई दुनी दीनबंधु दुरित दहन देखि तुलसी हहा करी' कह दरिद्रता रूपी रावण से विश्व को मुक्त करने की प्रार्थना की। यद्दपि तुलसी ने स्वयं के लिए 'जथालाभ संतोष सदाकाहू सो कछु न चहाँगों का आदर्श रखा।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भक्ति साधना के प्रमुख अंग दैन्य को भक्त के 'लघुत्व की अनुभूति' कहा है। तुलसी का दैन्य उनकी प्रशस्त सामाजिक भावना के अनुकूल था। ''नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सो' कहते हुए तुलसी ने राम की सेवा को ही अपने जीवन की परम सिद्धि के रूप में स्वीकारा और अपने सभी भावों, आचरण और संवेदनों को इसी अनुरूप ढाला और इसी में सुख का अनुभव किया 'तुलसिहिं बहुत भलो लागत जग जीवन राम गुलाम को उन्होंने स्वयं को राम के प्रति समर्पित कर दिया और स्वयं को उन्हीं के द्वारा निर्मित माना, 'आप हो आपको नीके दै जानत, सवरो राम भरायो,

गढ़ायो., हौं तो सदा खर को असवारतिहारोई नाम गयंद चढ़ायो' इसी कारण उनमें श्रेष्ठत्व का गर्व कभी नहीं आया, अपितु उनका व्यक्तित्व परिष्कृत होकर संत की श्रेणी में पहुंच गया। तुलसी अहंकार से मुक्ति पाने और दैन्य की दयनीयता से छुटकारा पाने के लिए प्रभु-कृपा को याचना करते हैं। वे स्वयं को सभी प्रकार से साधनहीन मानते हैं। वेद, पुराण, ज्ञान, विज्ञान, ध्यान, धारणा, योग-यज्ञ किसी भी साधन में तुलसी को विश्वास नहीं था अत: अपने दैन्य का सहारा लेकर ही वे प्रभु से प्रार्थना करते हैं : -

'बेद न पुरान गान, जानौ न विज्ञान ज्ञान,
ध्यान - धारना, समाधि, साधन- प्रवीनता।
नाहिन बिराग जोग जाग भाग तुलसी के,
दया- दान-दूबरो हौं, पाप ही की पीनता।।
लोभ-मोह, काम-कोह-दोष, कोष मो सों कौन,
कलि हू जो सीखि लई मेरियै मनीलता।।
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत है,
रावरे दयालु दीनबन्धु मे री दीनता।।'

तुलसीदास का दैन्य शरणागत भक्तों की भावनाओं के उपयुक्त है, तुलसी अपने को संसार का सबसे बड़ा दीन और प्रभु को दीन-बन्धु मानकर उनसे प्रार्थना करते हैं,

'तुम सब दीनबंधु न दीन-कोउ मो सम,सुनहु नृपति रघुराई।
मो सम कुटिल मौलिमनि, नहिं जग, तुम सम हरि न हरन कुटिलाई।।'

तुलसी दैन्य में अहंकार के परित्याग और भगवद् प्राप्ति की भक्ति की पराकाष्ठा है, जो निश्चय ही स्तुत्य है।

12.5.2 गोस्वामी तुलसीदास की समन्वय भावना

तुलसी लोकदर्शी - काव्यकार थे उन्होंने उस युग की जनता की नब्ज को पहचाना और 'रामचरित मानस' के रूप में समन्वय का आदर्श प्रस्तुत किया। भारतीय समाज में अनेक प्रकार के सांस्कृतियाँ, साधनाएं, धर्म, जातियाँ, चिन्तन पद्धतियाँ और जीवन दर्शन रहे हैं। भारतीय समाज के लोक नायक को इनके मध्य समन्वय करना ही पड़ेगा। वे उन परस्पर विरोधी तत्वों से भली भांति परिचित थे, जिसके कारण समाज कमजोर हो रहा था। समाज की कमजोरी को दूर करने के लिए उन्होंने समन्वयवाद का सहारा लिया उन्होंने लोक के साथ वेद का, भक्ति के साथ ज्ञान का ब्राह्मण के साथ चांडाल का और विद्वान के साथ मूर्ख का समन्वय किया। उनके अनुभव और सूक्ष्य निरीक्षण शक्ति, जो जीवन के संघर्षों की आँच से निरन्तर निखरती रही थी, ने इसमें भरपूर सहयोग दिया। डॉ. उदय भानु सिंह के अनुसार - "वे यौवन की कामासक्ति के शिकार भी हुए थे और वैराग्य की पराकाठा पर पहुँच कर आत्माराम भी हो गए थे। वे अर्थ-काम पंकिल भव-सरिता से निकलकर धर्म-दर्शन विशिष्ट रामभक्ति की डगर पर आए थे। कवि की

कारयित्री प्रतिभा, भक्त के निष्काम हृदय और समाज सुधार की लोकमंगल भावना का उनमें अपूर्व समन्वय था। उन्होंने अपने अनुभव, अवेक्षण, शास्त्र ज्ञान और सहृदयता के आधार पर कवित्व, धर्म और भक्ति की त्रिपथगा का निर्माण किया। उनकी समन्वय साधना बहुमुखी है।

लोक बिलोकि पुरान वेद सुनि समुझि बूझि गुर ग्यानी।

प्रीति प्रतीति राम-पद पंकज सकल सुमंगल खानी।।

तुलसीदास की धार्मिकता एकनिष्ठ है। उनका धर्म क्षेत्र भी बहुत विशाल है, पूरा विश्व उसमें समाहित हो जाता है। वे विश्व के सम्पूर्ण मानकों में राम की ही अमर ज्योति को देखते हैं। हिन्दू होने के कारण सनातन धर्म पर उनकी आस्था है और उनका सनातन धर्म इस कारण सर्वोत्तम है कि उसके विस्तृत क्षेत्र में वैष्णव, शैव और शाक्त, जैनी और बौद्ध सभी आ जाते हैं, उनके राम सनातन मूल्यों के संस्थापक हैं। वे निर्गुण भी हैं और सगुण भी है. -

1. सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा।
2. अगुन सगुन दुई ब्रह्म सरूपा। अकथ, अगाध अनादि अनूपा।
3. जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने।

वे ही ब्रह्मा है, वे ही विष्णु है और शिव में भी वे ही है। वैष्णवों, शैवों और शाक्तों में वे ही विद्‌वमान है, राम परम आराध्य है। तुलसी ने तीनों संप्रदायों में समन्वय स्थापित किया -

1. 'संकर प्रिय मम द्रोही, सिव द्रोही मम दास।
   ते नर करहि कलप भरि घोर नरक महुँबास।।'

तुलसी ने भाग्य, पुराषार्थ और समन्वय वाद तीनों का उपस्थापन किया है। पुरूषार्थ वाद की प्रतिष्ठा में वे कहते हैं 'करम प्रधान बिस्व करि राखा जो जस करइ सो तस फल चाखा। ' भाग्यवाद को स्थापित करते हुए कहते हैं, 'तुलसी जसि भवितव्यता, तैसी मिलै सहाई। ' समन्वयवाद को प्रतिपादित करते हुए तुलसी कहते हैं : -'

'सुभ अरू असुभ करम अनुहारी। ईसु देइ फल हृदयँ बिचारी।

करइ जो करमु पाव फल सोई, निगम नीति अस कह सब कोई।। '

वे भक्त के साथ साधक हैं। उनकी साधना कविता के रूप में छलकती है। उन्होंने काव्य साधना लोक कल्याण के लिए की है। उनही 'स्वान्तः सुखाय' भक्ति साधना 'पर हिताय' एवं 'लोक हिताय' है। उन्होंने लोकरंजन और लोक मंगल का भी समन्वय किया। कर्म ज्ञान और भक्ति से ही जीवन का पूर्णता है। ये तीनों अन्योन्याश्रित है। ज्ञान भक्ति से रहित कर्म बंधन कारक होता है अत: तुलसी ने इन तीनों का समन्वय किया है -

'श्रुति सम्मत हरि भगति पथ संजुत विरति विवेका'

भक्ति के क्षेत्र में उन्होंने नवधा भक्ति का समन्वय किया तथा बुद्धि और हृदय के मध्य सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया है-

'हियँ निर्गुन नयनन्हि सगुन - रसना राम सुनाम
मनहुँ पुरट संपुट लसत तुलसी ललित ललाम।'

तुलसी ने समाज की व्यवस्था में वर्ण भेद स्वीकार करते हुए भी भक्ति के क्षेत्र में ब्राह्मण और शूद्र को समान स्थान दिया। भरत और क्रषिश्रेष्ठ वशिष्ट ने निम्न वर्ण के निषाद और केवट को भाव विभोर होकर प्रेम पूर्वक गले लगाया है -

भेंटत् भरतु ताहि अति प्रीति। लोक सिहाहिं प्रेम कै रीती।।
तेहि भरि अंक राम लघु भ्राता। मिलत पुलक परिपूरत गाता।।

व्यक्ति और समाज का समन्वय प्रस्तुत करते हुए पारिवारिक जीवन के आदर्श प्रस्तुत किए जो सभी के लिए अनुकरणीय है। ये सभी पात्र स्नेह और शील के उदात्त स्तर पर स्थित हैं। सुग्रीव और विभीषण तो राम के प्रति लक्ष्मण और भरत के प्रेम को देख लज्जित हो गए -

सघन चोर मग मुदित मन, धनी गही ज्यों फेंट।
त्यों सुग्रीव विभीष नहिं भई भरत सों भेंट।।
राम सराहे भरत, उठि ममिले राम सम जानि।
तदपि विभीषन की सपति, तुलसी गरत ग्लानि।।

वे गार्हस्थ जीवन को त्याग, समानता, प्रेम, आस्था, संवेदना और कर्तव्य के आधार पर टिका देखना चाहते थे। इसी धारणा के आधार पर वे विश्व के सममुख एक आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

तुलसीदास जी ने अपनी भक्ति में शील, सौन्दर्य और शक्ति तीनों कासमन्वय किया है। उनके राम सौन्दर्य के आगार, शील के सागर और शक्ति के केन्द्र है। उनका सौन्दर्य, लोकपालन के शील, लोकरंजन के और शक्ति अनाचार के दमन हेतु है।

तुलसी ने दार्शनिक समन्वयवाद को प्रस्तुत करते हुए द्वैत्अद्वैत, विद्वा-अविधा, माया और प्रकृति, जगत की शाश्वतता और नश्वरता, जीव और ब्रह्म के ऐक्य, साधु मत और लोकमत, राजा और प्रजा, भोग और त्याग में समन्वय स्थापित किया। वे जिस राम की भक्ति करते हैं वह सारे ब्रह्मांड में व्याप्त है। उनका राम ही ब्रह्म है। वह सगुण भी है और निर्गुण भी तुलसी ब्रह्म के लिए ईश्वर या 'ईश' शब्द का प्रयोग करते हैं। ईश्वर के रूप में ही ब्रह्म विश्व की सृष्टि और उसका पालन करता है। तुलसी की लोकप्रियता का श्रेय भी उनकी समन्वय साधना को ही है। उन्होंने काव्य, समाज और भक्ति में यह समन्वय विधान किया। इसी कारण कभी वे निरीह भक्त दिखाई देते हैं तो कभी समाज सुधारक, लोक नायक. कवि, पंडित और भविष्य द्रष्टा बन जाते हैं, इन सभी गुणों के मिश्रण ने उन्हें और उनके कृतित्व को बेजोड़ बना दिया है। विश्व इतिहास में उन सा साहित्य मिलना दुर्लभ है।

12.6 तुलसीदास का संरचना शिल्प (कलापक्ष)

तुलसी की कृतियों में उनका व्यक्तित्व झलकता है। उनकी निजी अवधारणाएं, विचार और मान्यताएं जैसे सचेत होकर इन कृतियों में समा जाती है।

तुलसी श्रेष्ठ कोटि के लेखक है। वे अपने काव्य में भाव प्रकाशन की अद्भुत क्षमता रखते हुए भाषा और शब्दों पर भी पूरा अधिकार रखते हैं। उनके पास भाषा की वह क्षमता है कि वह सूक्ष्म से सूक्ष्म विचारको भी प्रत्यक्ष खड़ा कर देती है। तुलसी अपनी रचनाओं में शब्द प्रयोग, भाषा प्रयोग, अलंकार, छंद वर्णन के साथ-साथ मानव जीवन का भी चरित्रांकन करते चलते हैं। वे मानव जीवन क जीवनादर्शों और सामाजिक जीवन का स्पष्टीकरण करना चाहते हैं। इसी हेतु वे अपनी कृतियों में कलात्मक क्षमता के विषय में कहते हैं-

'कवि न होऊं नहिं चतुर प्रवीनू। सकल कला सब विद्वा हीनू।
कीरति विवेक एक नहिं मोरे। सत्य कहीं लिखि कागद कोरे।'

तुलसी ने उक्ति वैचित्रय को कभी महत्त्व नहीं दिया, उन्होंने जीवन सत्य एवं मूल्यों पर ही दृष्टि- निक्षेप किया इसीलिए वे कोरे कागज पर सत्य को लिखना ही अपने जीवन का आदर्श मानते थे। काव्य-कला को भी वे बहुत महत्त्वपूर्ण और वृहद उद्देश्य से परिपूर्ण मानते थे-

"कीरति, भनिति, भूति, भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हिएत होई।।"

उन्होंने लोक और वेद का समन्वय किया है। शास्त्र और परम्परा दोनों को समान दृष्टि से देखा है। उनके कलापक्ष में भी यही समन्वय है। उन्होंने अलंकार, वस्तुवर्णन और शैलियों में शास्त्रीय और लौकिक पद्धतियों का सम्मिश्रण किया है।

तुलसी की भाषा में संस्कृत बहुल शब्दावली भी है और लोक प्रचलित ठेठ गँवारू देशज शब्द भी हैं। विनय पत्रिका के प्रारम्भिक पद में लगात निह शब्दावली है तो कहीं वे देशज शब्दावली में रचना करते हैं-

'राम कहत चलु राम कहत चलु राम कहत चलु भाई रे।
नाहिं त भव बेगारि माँ पीरहै छूटत अति कठिनाई रे। '

छंद रचना में भी उन्होंने संस्कृत के छंदों के साथ लोक काव्य शैली मै व्यवृहत झूलना, बरवै, सोहर, मंगल आदि सभी गीतों में रचना की है।

तुलसी की काव्य कला की सबसे प्रमुख विशेषता उनकी स्वाभाविकता और सुबोधता है। उनका आदर्श है : -

'सरल कवित, कीरति विमल, जेहि आदर्श सुजान,
सहजू बैर विसराय रिपु जो सुनि करहिं बखान। '

सरल भाषा के द्वारा ही तुलसी काव्य को लोक मंगलकारी बनाना चाहते थे। ताकि अधिकाधिक लोग उनकी भाषा को समझ कर उनके काव्य का हृदयंगम कर सकें। तुलसी के पास भावों, विचारों और अनुभूतियों का अथाह भण्डार है, जिसे वे अवधी और ब्रजभाषा के लोक रूप के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाना चाहते हैं। इसीलिए उनके पद्द की भाषा भी गद्द की भाषा से अधिक सुस्पष्ट लगती है। 'कवितावली' में राम के बाल

सौन्दर्य का चित्रण करने वाले छंद में वर्ण मैत्री, शब्द मैत्री, संगीतात्मकता, कोमल कल्पना आदि के साथ-साथ बोध गम्यता भी है -

'वरदंत की पंक्ति कुंदकली, अधराधर पल्लव, खोलन की
चपला चमकै धन बीच जौ, छवि मोतिन माल अमोलन की।'

कलात्मक विशेषता के साथ-साथ शब्द झंकृति, गति और कल्पना का सौन्दर्य यहाँ आद्दन्त दिखाई देता है।

तुलसी की काव्य-कला की दूसरी विशेषता यह है कि उन्होंने लोक जीवन से अपनी वर्ण्य विषय वस्तु, उपमान और प्रतीक चुने हैं। इससे उनके काव्य में सहज ही प्रभावित करने का गुण समाहित हो गया है। तुलसी जब किसी व्यक्ति या वस्तु का वर्णन करते हैं तो वह सजीव होकर सामने आ जाती है। शब्द चयन, पद-संगठन और वर्ण मैत्री ये तीनों विशेषताएं तुलसी के काव्य को वैशिष्टय प्रदान करती हैं-

'तुलसी मन रंजन, रंजित अंजन, नैन सुखंजन चातक से।
सजनी ससि में समसील उभै, नवनील सरोरूह से विकसे।।'

तुलसी की काव्य कला की तीसरी विशेषता यह है कि उन्होंने अपने पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है, जिससे वे सजीव लगने लगे हैं। बाल मनोविज्ञान एवं बाल स्वभाव का सुंदर चित्रण करते हुए कहते हैं-

'कबहूं ससि मांगत आरि करै, कबहूं प्रतिबिम्ब निहारि डरै।
कबहुं करताल बजाई कै नाचत मातु सबै मनमोद भरै।'

तुलसी की अन्य विशेषता यह भी है कि उनकी भाषा सदैव मर्यादित और सुरूचि पूर्ण है। इसी कारण तुलसी की कला उदात्त है, वह मानव मात्र की भावनाओं को परिष्कृत करने वाली है। राम और सीता के व्यक्तित्व में सौन्दर्य, शील और शक्ति का समावेश उब आदर्श और निष्कर्ष का कार्य करते हैं। राम-सीता के प्रेम में भी उनकी यह उदात्तता दिखाई देती है -

'जानकी-नाह को नेह लखी, पुलकी तनु, वारि बिलोचन बाढ़े। '

तुलसी अपने भाव-वर्णन में सचेत हैं और सदैव औचित्य का ध्यान रखते हैं, तुलसी का काव्य इस रूप में समाज का प्रेरक है और अपनी सरल,सुबोध, लोकभाषा के माध्यम से काव्य कला को किसी विशिष्ट वर्ग तक सीमित न रख जन-जन तक पहुँचा देते हैं।

12.6.1 अलंकार योजना

उक्ति वैचित्र्य और वाक् वैचित्र्य अलंकारों के मूल में निहित होते हैं। गोस्वामी तुलसीदास वाणी के कुशल शिल्पी थे। भाषा पर उनका सहज अधिकार था। अत: उनके काव्य में अलंकार भी उसी सहजता से प्रयुक्त होते दिखाई देते हैं। अनुप्रास,यमक, पुनरूक्ति प्रकाश, वक्रोक्ति, श्लेष, उपमा, उत्पेक्षा, प्रतीप, भ्रान्तिमान, संदेह, रूपक, तदुण, यथा

संख्य, पीर संख्या, काव्यलिग, विभावना, अतिशयोक्ति, व्यतिरेक, अपन्हु ति, व्याजस्तुति आदि अनेकानेक अलंकारों का प्रयोग तुलसी ने किया है-

अनुप्रास – कंकण, किकिनि नुपूर धुनि सुनि।
– कहत लखन सन राम हृदय गुनि।

वक्रोक्ति – मैं सुकुमारि नाथ बन जोगू,
– तुमहि उचित तप मो कहँ भोगू।

विरोधाभास – मूक होई वाचाल, पंगु चढ़इ गिरिवर गहन।

काव्यलिंग – स्याम गौर किमि कहौं बखानी।
– गिरा अनयन, नयन बिनु बानी।

विभावना – 'बिनु पद चलई, सुनइ बिनु काना।
– कर बिनु करम करइ विधि नाना।। '

12.6.2 गीतिकाव्य

रामकाव्य के कवियों में प्रबन्ध और गीतिकाव्य दोनों ही दृष्टियों से तुलसीदास जी बेजोड़ कवि हैं। उनकी 'विनयपत्रिका' में भक्ति के जिस पूर्ण परिपाक का निदर्शन होता है वैसा अन्यत्र दिखाई नहीं देता। तुलसी के गीतों में भाव केद्रण प्रारम्भिक चरण में होता है, मध्य पंक्तियों में उसका विस्तार एवं अंतिम चरण में पाठक / श्रोता पुन: भाव केद्रण में आकर भाव में डूबने लगता है। तुलसी के गीतों में यह विशेषता दिखाई देती है -

ऐसी मूढ़ता या मन की
परिहरि राम भगति सुर सरिता, आस करत ओसकन की।
धूम समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति घनकी।
नहिं तहँ सीतलता न वारि, पुनि हानि होति लोचन की।
ज्यों गच काँच विलोकि सेन जड़ छाँह आपने तनकी।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आनन की।

'विनय पत्रिका' न केवल आत्म निवेदन भावन विह्वल भक्त का भगवद् सत्ता के साथ संपर्क स्थापन हैं अपितु अद्भु त गीतिकाव्य है। अपनी सांगीतिक और छांदसिक प्रयोग की दृष्टि से भी अनूठी रचना है। 'विनय पत्रिका' में बीस रागों का प्रयोग है। ये सभी शुद्ध स्वर वाले कोमल राग है जो भक्ति रस को निष्पन्न करने में सहयोगी है।

12.7 सारांश

भक्ति की प्रधानता :

तुलसीदास की भक्ति लोक कल्याण की भावना पर आधारित है। भक्ति मार्ग में भी उन्हें दास्य भाव ही प्रिय है। तुलसी का युग सांस्कृतिक संघर्ष का युग था, इस्लामी आक्रमण प्रारम्भ हो चुका था, जिसके लिए धर्म महज जीवन पद्धति ही नहीं अपितु जेहाद था। यह

काल सही मायने में संकट और संत्रास का काल था। व्यक्ति और समाज ही नहीं, सभी आस्थाएं, विश्वास और मूल्य चरमरा रहे थे। यह अद्योगति का समय था।

समस्त अंतर्विरोधों और विसंवादी स्वरों को कालकूट की तरह पीकर इस संकटकाल से कैसे उबरा जाए, यी उस युग की मांग थी। इसके लिए सर्वथा उपयुक्त आधार था, रामायण। तुलसी के राम, भरत आदि सभी उन परिस्थितियों से गुजरे हैं, जिनमें से होकर हर पराधीन स्थिति के व्यक्ति और समाज को गुजरना पड़ता है।

तुलसीदास का आदर्श ऐसा था, जो एक परतंत्र दलित जाति का स्वतंत्र और सक्षम बनने की प्रेरणा दे सकता है। तुलसी के समक्ष देश और जनता की मुक्ति का एक ही आधार है- राम का आश्रेय। वस्तुतः प्रभु का शरणागत वत्सल रूप और उनकी निर्भरता ही तुलसी के भक्तिवाद का मुख्य आधार है।

देश को जनतांत्रिक मनोवृति से जोड़ने के लिए तुलसी ने जनभाषा को अपनाया। जनभाषा को अपनाने से तुलसी जन अनुभूतियों के निकट आए। तुलसी की भक्ति संपूर्ण जनता के लिए थी।

निषादराज और शबरी की उपकथाओं से भी यह प्रतिपादित होता है कि जाति-पांति का भेदभाव निस्सार है और मनुष्य आंतरित शुद्धि और भक्ति से ही ऊंचा उठता है।

तुलसीदास आज की प्रासंगिकता - तुलसीदास ने अपने समकालीन संकट को देखा - जो सामाजिक और आध्यात्मिक दोनों ही स्तरों पर था, उनके समक्ष भारतीय धर्म के स्तम्भ एक-एक कर टूट रहे थे-

कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्त भए सदंथ। दंमिन्ह निज मति कल्प कीर प्रगट किए बहु पंथ।।

बरन धर्म नहिं आश्रम चारि। सुति विरोध रत सब नर नारी।।

मारग सोइ जा कहँ जोई भाषा। पंडित सोइ जो गाल बजावा।।

निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलिजुग सोइ ज्ञानी सो बिरागी।।

वे वर्णाश्रम धर्म के टूटने से दुःखी थे, भक्ष्याभक्ष्य खाने वाले योगियों और सिद्धों की पूजा करने वाली जनता से क्षुब्ध थे। वेद विरोधी पंथ भी उन्हें नहीं आ रहे थे, लोक आचारहीन हो रहे थे, ऐसे में उन्होंने ऐसे चरित्र की अवतारणा की जो स्वयं में आचार संहिता था। उन्होंने राम रूप कवच जिसमें संस्कृति रक्षा की शक्ति और समन्वय, जनता को पहचाना जिससे चार सौ वर्षों तक उसकी रक्षा होती रही।

कौटम्बिक एकता के लिए राम चौदह वर्ष वनवास जाते हैं। वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मर्यादा का पालन करते हैं।

जाति-पांति का विरोध भी वे करते हैं, भक्ति के क्षेत्र में ऊंच नीच को कोई स्थान नहीं देते -

'धूत क हौ, अवधूत कहौ, जुलाहा कहौ कोऊ।

काहू की बेटी सो बेटा न ब्याहव, काहू की जाति बिगार न सोउ।।'

तुलसी के राम को नगर की अपेक्षा ग्रामीण जीवन अधिक प्रिय है। रावण-वध के लिए वे अयोध्या के नागरिकों का सहयोग नहीं लेकर वन्य भील, कक्ष और केवट का सहयोग लेते हैं। वानरों, भल्लुओं की सहायता से उन्होंने रावण के विरु रणनीति अपनाई।
उनके अंतर्द्वद्व में उनके मानवीय रूप की यथार्थता और जीवन की अनेकमुख साधना की गरिमा अंतर्निहित है। उनकी मानव-सुलभ दुर्बलता कभी प्रकट होकर सामने नहीं आती। शील, सौन्दर्य और शक्ति के त्रिपुट के साथ करूणा की भूमि पर उनका चरित्र उतना ही मानवीय है और अनासक्ति और आत्मसंयम की भूमि पर अतिमानवीय/ आधुनिक युग के गाँधी में कहीं-कहीं उनके चरित्र की समानता दिखाई देती है। साधनहीन और विषपायी जनता के लिए राम का आदर्श वरेण्य है। मानस आज भी चारों ओर फैले प्रश्नों और समस्याओं से आक्रांत जन को आज भी राम रूपी मृत्युंजयी संदेश से विलगाव, पलायन, पराजय और हजाशा से बचता है।

12.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. तुलसी साहित्य : विवेचन और मूल्यांकन- आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, वचन देव कुमार
2. तुलसीदास और उनका युग - डॉ. राजपति दीक्षित
3. तुलसीदास जीवनी और विचारधारा - डॉ. राजाराम रस्तोगी
4. रामकथा और तुलसी - डॉ. मह. राजूरकर
5. तुलसीदास और उनके काव्य - डॉ. रामदत्त भारद्वाज

12.9 अभ्यास

1. नीचे व्याख्या के लिए कुछ पंक्तियाँ दी गयी है अत्यन्त संक्षेप में व्याख्या कीजिए। अपने उत्तर रिक्त स्थानों में लिखिए।

(क) 'मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही। मनसा बिस्व विजय कहँ दीन्ही।'

....

....

(ख) 'चपला चमकै घन बीच - जगै छवि मौंतिन मील - अमोलंन की।

....

....

(ग) 'तुलसी' मनरंजन रंजित अंजन नैन सुखंजन जातक से।

....

....

2. नीचे दी गई पंक्तियों की शिल्पगत विशेषताएं बताइए।

(क) कंकन किंकिनि कूर धुनि सुनि। कहत लखन सन राम हृदय गुनि।।

....

....

(ख) जनु बिरंचि सब निज निपुनाई। बिरचि बिस्व कहँ प्रगति देखाई।।

....

....

12.9.1 बोध प्रश्न

1. नीचे दिए गए वाक्यांशों को व्यक्त करने वाले सही शब्द बताइए -

(क) सुंदरता और प्रेम के देवता। (मदन / इन्द्र)

(ख) 'तुलसी' मनरंजन रंजित अंजन में 'अंजन ' शब्द का अर्थ है। (लालिया / काजल)

(ग) तुलसीदास सगुण भक्ति की किस काव्यधारा के कवि है। (रामभक्ति शाख / कृष्ण भक्ति शाखा)

2. दैन्य भाव की भक्ति का तात्पर्य क्या है, दो पंक्तियों में बताइए।

....

....

3. तुलसीदास के काव्य की मुख्य विशेषताएँ बताइए।

....

....

4. तुलसीदास की काव्यभाषा की दो विशेषताएँ बताइए।

....

....

12.9.2 बोध प्रश्नों /अभ्यासों के उत्तर

1. (कसीताजी के कंगन (, करधनी और अर की ध्वनि सुनकर श्री रामचन्द्र को ऐसा लगता है मानो प्रेम और सौन्दर्य के देवता कामदेव के मन में विश्व विजय का संकल्प करके दुंदभी बजाई हो।

   (ख) श्यामवर्गी श्रीरामचन्द के वक्षस्थल पर अमूल्य श्वेत मोतियों की माला ऐसे शोभित हो रही है, जैसे बादलों के मध्य - बिजली चमक रही हो।

   (ग) राम के बाल सौन्दर्य का वर्णन करते हु ए तुलसीदास जी कहते हैं, मन को प्रसन्न करने वाले, काजल से रंग उनके नेत्र मानों सुंदर खंजन पक्षी के बच्चे के समान शोभा सम्पन्न थे।

2. (क) अनुप्रास से पुष्ट उत्प्रेक्षा अलंकार है। अवधी भाषा की सहज संप्रेषणीयता भावानुभूति को व्यक्त करने में सक्षमा/ ध्वन्यर्थ व्यंजना, मानवीकरण, विशेषण, विपर्यय आदि अलंकारों को प्रयोग है।

   (ख) अनुप्रास से पुष्प उत्प्रेक्षा अलंकार है। अवधी भाषा में भावों की कलामयी अभिव्यंजना के माध्यम से पद में सरसता और प्रभावान्विति आई है।

बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (क) मदन
   (ख) काजल
   (ग) रामभक्ति शाखा
2. प्रभु के समक्ष भक्त अपने हृदय में लघुता का अनुभव करता है और ईश्वर की महानता का वर्णन करने में उसे आनन्द आता है। प्रभु की अनंत शक्ति के समक्ष वह अपने जैसा दीन हीन संसार में किसी को नहीं देखता।
3. तुलसीदास की समन्वय भावना द्वारा उन्होंने शैव शाक्त वैष्णव, कर्म-ज्ञान-भक्ति, शील- शक्ति-सौन्दर्य, भाग्यवाद-पुरुषार्थ, सगुण-निर्गुण, लोक और वेद आई को परस्पर जोड़ा। संस्कृत की अपेक्षा जनभाषा ब्रज और अवधी का प्रयोग किया। सामाजिक मूल्यों और आदर्शों के प्रतिमान जन के समक्ष रखे।
4. (1) उनकी भाषा में भावों को अभिव्यक्त करने में सक्षम है अत: शब्दों का गठन और स्थापन बहु त स्वाभाविक और अनुकूल है।
   (2) संस्कृत के तत्सम शब्दों के अतिरिक्त उनकी भाषा में भोजपुरी, गुजराती, बंगाली और मराठी इत्यादि प्रान्तीय भाषाओं के शब्द भी मिलते हैं। कवितावली और विनयपत्रिका में ब्रजभाषा का और रामचरितमानस में अवधी का पूर्ण विकास है।

इकाई 13 मीराँबाई

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 जीवन परिचय
13.2.1 रचनाएँ
13.3 मूलपाठ (वाचन)
13.4 संदर्भ सहित व्याख्या
13.5 भावपक्ष
13.5.1 भक्ति भावना
13.6 संरचना शिल्प (कला पक्ष)
13.6.1 गीतितत्व
13.6.2 काव्य भाषा का सौन्दर्य
13.7 प्रतिपाद्य
13.8 सारांश
13.9 संदर्भ मन्थ
13.10 अभ्यास
13.10.1 बोधप्रश्न
13.10.2 बोधप्रश्न अभ्यासों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

आधार पाठ्यक्रम की इस इकाई में हम मध्यकालीन सगुण कृष्ण भक्त एवं हिन्दी, राजस्थानी और गुजराती की सर्वश्रेष्ठ कवयित्री मीराँबाई की कुछ कविताओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढने के बाद आप-

- मीराँ के जीवन वृत्त के विषय में बता सकेंगे।
- मीराँ की रचनाओं के विषय में बता सकेंगे।
- मीराँ की भक्ति साधना के विषय में बता सकेंगे।
- मीराँ की अभिव्यंजना शैली और मीराँ के काव्य शिल्प के विषय में बता सकेंगे।
- मीराँ के पदों की संगीतात्मकता के विषय में बता सकेंगे।
- मीराँ की क्रान्तदर्शिता के विषय में बता सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आपको मीराँबाई की कुछ कविताएँ वाचन के लिए दे रहे हैं। इन कविताओं के माध्यम से आप मीराँ के काव्य एवं भक्ति भावना का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

कवयित्री मीराँ ने अपनी भक्ति से समाज में विशेष रूप से स्त्री-समाज में अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त की। उनके पद जनमानस द्वारा बहुत प्रचारित और प्रसारित हुए उन्होंने राजस्थान, गुजरात और उत्तरप्रदेश में ही नहीं वरन् मद्रास एवं बंगाल जैसे अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में भी बहुत ख्याति अर्जित की। कवि पंत ने उनको ' भक्ति के तपोवन की शकुन्तला' तथा ' राजस्थान के मरूस्थल की मंदाकिनी' कहा है। इनके काव्य का मुख्य गुण भाव और भाषा की सरलता है।

13.2 जीवन परिचय

अन्य भक्त कवियों की भाँति मीराँ का जीवन वृत्त भी विविध मत-मतान्तरों से घिरा है। मीराँ जोधपुर के संस्थापक राव जोधा के पौत्र और राव छा के चतुर्थ पुत्र रतनसिंह की पुत्री थी। चितौड़ की रक्षा के प्राण विसर्जन करने वाले प्रसिद्ध वीर और भक्त जयमल इनके चचेरे भाई थे। मीराँ का जन्म राठौड़ों की मेड़तिया शाखा की कुड़की गांव में संवत् 1555 के आस-पास हुआ। शैशव में माता के देहान्त हो जाने के कारण इनका पालन पोषण पितामह छा के द्वारा हुआ, जो कि परम वैष्णव भक्त थे। इन्हीं के संसर्ग से मीराँ के हृदय में कृष्ण- भक्ति उत्पन्न हुई जो बाद में माधुर्य भाव में परिपक्व हुई। 12 वर्ष की अवस्था में इनका विवाह चितौड़ के महाराणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज के साथ हुआ। उनका देहान्त अपने पिता के जीवनकाल में ही हो गया था। पति की मृत्यु हो जाने पर मीराँ ने अपना मन कृष्ण भक्ति में लगाया। वह बाल्याकाल से ही कृष्ण को अपना पति मान चुकी थी। मीराँ का लौकिक प्रेम कृष्ण के प्रति अलौकिक प्रेम के रूप में और अधिक प्रगाढ़ हो उठा। पति के शव के साथ सती न होकर साधु-सन्तों के साथ भजन कीर्तन करना राजवधू के आचरण के अनुकूल नहीं था। इससे सास-ननद के विरोध के साथ-साथ देवर राणा जी की कठोरता की बढ़ती गई।

महाराणा सांगा की मृत्यु के पश्चात् रतनसिंह मेवाड़ के राणा हुए। वे उदार एवं प्रजावत्सल शासक थे परन्तु दुर्भाग्य से षड्यन्त्र का शिकार होने से शीघ्र ही उनकी मृत्यु हो गई। उनके बाद छोटे भाई विक्रमादित्य सिंहासनारूढ़ हुए। ये प्रकृति से क्रोधी और निर्दय थे। मीराँ को अनेक प्रकार की पीड़ा देने वाले राणा, यही विक्रमादित्य मीराँ के देवर थे। इनका राज्यकाल सं. 1588 से 1593 तक रहा।

मीराँ को सामाजिक लोकमर्यादा और राजवधू होने का वास्ता देकर इस मार्ग से विरत करने की चेष्टा भी की गई। यह भी प्रसिद्ध है कि घरवालों के विरोध और व्यवहार से तंग होकर उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास को एक पद लिखकर भेजा था, जिसके उत्तर में तुलसीदास जी ने 'जाके प्रिय न राम वैदेही' लिखकर भेजा था। मीरा ने अन्त में मेवाड़ त्याग दिया और वृन्दावन आदि स्थानों का तीर्थाटन करती हुई द्वारिका पहुंची, जहाँ भगवान रणछोड़ की आराधना में लीन हो गई 'अब मिलि बिछुरन नहिं कीजै'। संवत् 1603 के लगभग इनका देहान्त हुआ।

मीराँ पर सन्त सम्प्रदाय एवं चैतन्य मत का प्रभाव पड़ा था। इनके गुरू रैदास माने जाते हैं।

13.2.1 रचनाएँ

मीराँ के जीवन-वृत की भाँति, उनकी रचनाएँ भी विवादग्रस्त हैं। उनके द्वारा प्रणीत तीन-चार पुस्तकों का उल्लेख किया जाता है-

1. गीत - गोविन्द की टीका
2. नरसी जी रो माहेरो (मायरो)
3. राग गोविन्द
4. राग सोरठ के पद

इनमें नरसी जी को माहेरो के अतिरिक्त कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। उनकी लोकप्रियता का आधार उनके स्फुट पद ही हैं जो मीराँ पदावली के नाम से अनेक व्यक्तियों ने संग्रहीत कर संपादित किए हैं।

13.3 पाठ (वाचन)

यहाँ हमने मीरा के माधुर्य भक्ति से सम्बन्धित मीराँ के तीन पदों का संकलन किया है। मीराँ ने संसार की असारता को बताते हुए ईश्वर के अविनश्वर स्वरूप को भक्ति के द्वारा प्राप्त करने को कहा है क्योंकि उसी में प्राणी उद्धार निहित है। आगे आप इन पदों का वाचन करेंगे। इन पदों के कठिन शब्द नीचे दिए गए हैं, जिनसे इन पदों को समझाने में सुगमता होगी।

पहला पद मीराँ की माधुर्य भाव की भक्ति से सम्बन्धित है। मीराँ अपने भगवान की रूप माधुरी का वर्णन करते हुए उनके भक्त वत्सल स्वरूप का स्मरण करती है। दूसरे पद में मीराँ हरि दर्शन के लिए व्याकुल है अरौर उनके वियोग में हर क्षण तड़पती रहती है, वे प्रभु से प्रार्थना करती हैं कि वे उनके दुःखों को हरकर उन्हें सुख देते हुए शीघ्र ही आकर मिलें। तीसरे पद में प्रभु के अविनाशी और उद्धारक रूप को ही यम की फांसी को काटने वाला, पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति दिलाने वाला और मोक्ष देने वाला बताया है।

1. बरते मेरे नैनन में नंदलाल

   मोहनी मूरति, साँवरी अति, नैणा बने बिसाल।

   अधर सुधारस मुरली राजति, उर-वैजंती माल।

   छुद्रघंटिका कटितट सोभित, नुपूर सब रसाल।

   मीरा के प्रभु संतन सुखदाई, भक्त बछल गोपाल।।

कठिन शब्द : -

बसो-वारन करो, मोरे-मेरे, नैनन मे-नैत्रों में,नंदलाल-नंद के प्यारे पुत्र, श्री कृष्ण मोहिनी-मन को मुग्ध करने वाली मूरति रूप, सूरति-सूरत, आकृति, नैना-नेत्र, विशाल-बड़े बड़े, बने- शोभायमान है, अधर सुधारस- ओंठों का अमृत रूपी रस, राजति - शोभा देती है, उर-हृदय, बैजन्ती- वैजयन्ती नायक एक माला विशेष जिसमें पांच प्रकार की मणियां होती हैं और यह घुटनों तक पहुंचती है। छुद्र-मोटी छोटी, छंटिका-घण्टियां, कटितट कमर

का, नुपूर सबदरसाल-पायल की रस युक्ति ध्वनि, संतन-संतों को सुखदाई -सुख देने वाले, बछ्त-वत्सल (प्रेम करने वाले), गोपाल-गायों के पालक (रक्षक)

2. दरस बिनु दुखण लागै नैन

   जब से तुम बिछुरे प्रभु मोरे कबहुँ न पायो चैन।
   सबद सुनत मेरी छतियाँ काँपै,मीठे -मीठे बैन।
   विरह कथा काँसे कहूँ सजनी,बह गई करवत अन।
   कल न परत हरि मग जोवत, भई छयासी रैण।
   मीराँ के प्रभु कबरे मिलोगे, दुख मेटण सुख दैण।

कठिन शब्द : - दरस-दर्शन, यिन-बिना, अन-दुखने, नैण-नयन, बिछुरे-विलग हुए, कबहुं-कभी भी, चैन-प्रसन्नता, कासूं-किससे, सजनी-सखी, करवत- आरा, अण-ठीक, बिच्छल कल- चैन, मग जोवत-प्रतीक्षा करते हुए, मार्ग देखते हुए, भयो-हो गई है, छः मासी-छह महीनों की, छह महीनों जितनी लम्बी, रैण-रात्रि, मेटण-मिटाते हुए, दैण-देने के लिए।

3. भज मन! चरण-कँवल अविनासी।

   जेताई दीसे धरणि गगन बिच, तेताई सब उठजासी
   इस देही का गरव न करणा, माटी में मिल जासी
   यो संसार चहर की बाजी, साँझ पडयाँ उडजासी
   कहा भयो है भगवा पहरयाँ, घर तज भवे सन्यासी
   जोगी होई जुगति नहिं जाणि, उलटि जनम फिर आसी
   अरज करूँ अबला कर जोरे, स्याम! तुम्हारी दासी
   मीराँ के प्रभु गिरधर नागर। काटो जम की फाँसी।

कठिन शब्द : - कँवल-कमल, अविनासी-अविनश्वर, (सदैव रहने वाले ईश्वर), जेताई-जितने भी, दीसै-दिखाई देता है, धरणि गनगन बिच-पृथ्वी और आकाश के मध्य, तेताई-वह सब, उठ जासी-नष्ट हो जाएगा, देही- शरीर, गरब-अभिमान, (घमण्ड) माटी में मिल जासी-मिट्टी में मिल जाएगा (नष्ट हो जाएगा) यो-यह, चहर की बाजी-चिड़ियों का खेल (या चौसर की बाजी), साँझ- संध्या, पंडयाँ-होने पर, उठजासी-समाप्त हो जाएगा, कहा भयो-क्या लाभ हुआ, भगवा-गेरूए वस्त्र, तज-छोडकर, सुगति-युक्ति (मिलन का उपाय) उलटि-लौटकर, जनम फिर आसी-पुनर्जन्म होगा, अरज-प्रार्थना, कर-हाथ, काटो-नष्ट करो, जम की फाँसी-यमराज का फंदा (मृत्यु)।

13.4 संदर्भ सहित व्याख्या

आपने मीराँबाई द्वारा रचित उपर्युक्त तीनों पदों का वाचन और मीरा के काव्य की विशेषताओं का ध्यान पूर्वक अध्ययन किया होगा। मीराँ के साहित्य को किस प्रकार पढ़ा जाना चहाए और उसकी व्याख्या कैसे करनी चाहिए, इसके लिए हम उपर्युक्त तीनों पदों की व्याख्या यहाँ दे रहे हैं।

पद : - बसी मेरे नैनन में नन्दलाल

संदर्भ : - यह कवयित्री मीराँ द्वारा लिखा गया पद है। मीरा की भक्ति माधुर्य भाव की है अत: वह अपने प्रियतम को सदैव अपने समीप रखना चाहती है। उनसे एक क्षण का वियोग भी उन्हें सहय नहीं है। मीराँ कृष्ण की रूप माधुरी पर रीझी है अत: कृष्ण सौन्दर्य को अपने नेत्रों में ही भर लेना चाहती है। साथ ही कृष्ण क भक्त वत्सल रूप के प्रति भी उनकी अपार श्रद्धा है।

व्याख्या :- मीराँ भगवान श्री कृष्ण की आराधना करती हुए कहती है कि हे नन्द के प्यारे पुत्र कृष्ण आप मेरे नेत्रों में उस रूप में निवास करो, जिसमें आपकी मूर्ति श्याम वर्ण की और विशाल नेत्र शोभायमान हो। आपके अमृत भरे होठों पर वंशी और हृदय पर वैजयन्ती माला है। कमर पर छोटी-छोटी घण्टिया शोभित है और पैरों में पहनी हुई पायल से रसयुक्त ध्वनियाँ आ रही हो। मीराँ कहती हैं कि मेरे भगवान श्री कृष्ण, आप सन्तों को सुख देने वाले, गायों के पालक - रक्षक एवं भक्तों से प्रेम करने वाले हैं।

विशेष : -

1. इस पद में मीराँ के हृदय की एक निष्ठता, अनन्यता, प्रेम की विव्हलता, भावमयता एवं अगाधता प्रकट होती है।
2. आत्माभिव्यक्ति एवं हृदय की प्रेमिल अनुभूतियों को व्यक्त करने में यह पद अनूठा है। प्रिय का क्षण भर का वियोग भी प्रिया के लिए असहनीय है, अत: वह उसे सदैव अपने पास, अपने नेत्रों में बसाना चाहती है।
3. 'आँखों में बसाना' बसो मेरे नैनन में मुहावरा है।
4. दोहा छंद का प्रयोग है। अन्यत्र अनुप्रास है।
5. इसमें माधुर्य व प्रसाद गुण है तथा वैदर्भी रीति है।
6. मीराँ के काव्य के भावों का सागर लहराता है। इसका कारण है कि मीरा प्रेम दीवानी और दरद दीवानी है। काव्य इनका साधन है, साध्य नहीं। इसीलिए इनके पद के प्रत्येक शब्द से इनका सरस और अनुभूति प्रवण हृदय धड़कता प्रतीत होता है।

पद : - 'दरस बिन दूखण लागे नैन'

प्रसंग : - प्रस्तुत पद 'मीराँबाई की पदावली' से लिया गया है। इसमें कवयित्री मीराँ' हरि दर्शन के लिए अपनी अंतस्थ मनोवेदना का मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त करती हैं : -

व्याख्या : - मीराँ हीरदर्शन के लिए व्यग्र होकर कहती हैं कि आपके दर्शनों के बिना मेरे नेत्र दुखने लगे हैं। हे प्रभु जबसे आप मुझसे वियुक्त हुए हो, मुझे कभी भी चैन नहीं मिला। आपकी वाणी इतनी मधुर है कि आपके शब्द सुनते ही मेरी छाती काँपने लगती है, मेरा हृदय तेजी से धड़कने लगता है अर्थात् रोमांच हो जाता है। हे सखी! अपने हृदय की विरह से उत्पन्न कथा को मैं किससे कहूँ। ऐसा जी चाहता है क् मैं तो करवत (आरे) के नीचे बैठकर आत्महत्या कर लूँ। मुझे चैन नहीं पड़ता है, मैं हर पल हरि श्री कृष्ण का मार्ग देखती हूँ अर्थात् उनकी प्रतीक्षा करती हूँ र मेरे लिए तो एक रात्रि ही छ माह के समान दीर्घ हो गई है (विरह में रात्रि व्यतीत ही नहीं होती)। मीराँ बाई कहती हैं कि दु:खों को नष्ट करने वाले एवं सुखों को देने वाले हे प्रभु! आप मुझसे कब मिलेंगे।

विशेष : -

1. वियोग में प्रिया अपने प्रिय का ही सदैव चिन्तन करती रहती हैं और उसी के चिन्तन से संबल प्राप्त करती है। उनके दर्शन न होने पर उसकी व्याकुलता स्वाभाविक है।
2. अर्थान्तरन्यास अलंकार का प्रयोग है। अन्यत्र अनुप्रास है।
3. भक्ति के क्षेत्र में ऐसी मान्यता है कि जो भक्त काशी में 'करवत लेना' अर्थात् अपने शरीर को आरे से चिरवा कर ईश्वर को समर्पित करता है उसे मुक्ति प्राप्त होती है अथवा काशी में मृत्यु से स्वर्ग मिलता है, इस लालच में धर्मान्ध लोग वहाँ बने एक मौत के कुए में गिरकर आत्महत्या कर लेते थे।
4. 'दूखण लागै नैन', 'छतियाँ कांपै', ' भई छमाही रैण' आदि महावरों का प्रयोग है।
5. भक्त कवयित्री मीराँ के वियोग के दुःख की कथात्मक अभिव्यक्ति है।
6. पद का शब्द- शब्द मीरा के मानसिक संताप को व्यक्त करता है।
7. सरल, सुबोध तथा आडम्बरहीन भाषा में भावों की काव्यात्मक अभिव्यक्ति का उत्कृष्ट निदर्शन है।
8. भाषा में सुगमता और प्राचीन राजस्थानी भाषा के स्वरूप का निदर्शन है।

पद :- 'भज मन चरण कँवल अविनासी'

प्रसंग :- प्रस्तुत पद मीराँबाई की पदावली से लिया गया है। पद में कवयित्री मीराँ ने संसार की असारता बताते हुए अविनश्वर श्री कृष्ण की भक्ति एवं स्मरण करने पर बल दिया है।

व्याख्या :- कवयित्री मीराँ अपने मन से कहती है कि हे मेरे मन तू कभी नष्ट न होने वाले भगवान श्री कृष्ण के कमल रूपी चरणों का भजन करता रह क्योंकि इस संसार में पृथ्वी व आकाश के मध्य जो कुछ भी दिखाई देता है, वह सब नश्वर है। अपने इस पंचभौतिक शरीर का भी हमें अभिमान नहीं करना चाहिए क्योंकि एक दिन यह भी मिट्टी में मिलकर नष्ट हो जाएगा। यह संसार कुछ दिनों की चहल पहल का स्थान है जैसे चिड़ियों का खेल जो संध्या होते ही समाप्त हो जाता है।

अग्रिम पंक्तियों में मीराँ बाहरी प्रदर्शन और बाह्याडम्बरों की आलोचना करती हुई कहती है फू कोरे भगवा वस्त्र पहनने से कोई साधु नहीं बन जाता और न ही घर छोड़कर सन्यासी बनने से कोई लाभ होता है क्योंकि यह स्थिति तो पारिवारिक जिम्मेदारियों से पलायन मात्र है। योगी बनकर भी यदि मोक्ष की युक्ति नहीं समझी तो क्या लाभ हुआ, ऐसे लोगों को फिर संसार में आना पड़ेगा अर्थात् जीवन मृत्यु के चक्र में पड़ना होगा।

इतना कहकर मीराँ भगवान से प्रार्थना करती है कि हे प्रभु, मैं तो हाथ जोड़कर सेविका रूप में यही प्रार्थना करती हूँ कि मेरे इस आवागमन (पुनर्जन्म /जीवन-मरण का चक्कर) के बन्धन बने यमराज की फांसी को काटो। मुझे इस संसार में बार-बार जन्म नहीं लेना पड़े, यही विनती है।

विशेष :-

1. संसार की असारता और भक्ति के द्वारा ईश्वर की प्राप्ति पर जोर दिया गया है।
2. संसार व सांसारिक पदार्थों और सम्बन्धों की अनित्यतता का प्राय: सी सन्तों और भक्तों ने वर्णन किया है। इस सच्च-ध में सन्तों ने कहा भी है -

   'यह ऐसा संसार है, जैसा लेवल फूल

   दिन दिस के त्यौहार कौ, झूठे रंगि न झूलि।' - कबीर
3. जग-रचना जंजाल, जीव माया ने घेरा।
4. मीराँ की प्रगतिशीलता की पहचान प्रस्तुत पद से होती है। वे स्पष्ट रूप से ब्राहयाडम्बरों और मिटियाचारों की आलोचना करती है।
5. ईश्वर की भक्ति एवं नाम स्मरण के साथ ही योग साधना सार्थक है अन्यथा निरर्थक है क्योंकि इसके बिना पुनर्जन्म के चक्कर में बार-बार पड़ना पड़ेगा।
6. अनुप्रास और रूपक अलंकार है।

13.5 भाव पक्ष

मीराँ का काव्य गीति काव्य प्रधान एक ऐसा काव्य है, जिसमें एक भक्त के गीत, गायिका की भाव ममता एवं रागात्मकता के दर्शन होते हैं।

13.5.1 भक्ति भावना

भक्ति आत्मा की एक शाश्वत अध्यात्म चेतना है, जो स्वत: ही मनुष्य में उत्पन्न होती है। सांसारिक बन्धनों से स्वतंत्र होकर आत्मा को ब्रहम में समाहित कर लेना एवं मुक्ति पा लेना ही भक्ति का ध्येय होता है।

भक्ति वह शुद्ध भाव है जिसमें अपने आराध्य के प्रति प्रेम और श्रद्धा दोनों मिश्रित रहते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भक्ति की परिभाषा देते हुए कहा है 'श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है।'

भारतीय भक्ति साधना के अनुसार भगवद् भक्ति का प्रधान अंग आत्म-समर्पण है। पति-पत्नी के सम्बन्ध में समर्पण का भाव पूर्ण रूपेण चरितार्थ दिखाई देता है। आत्मोत्सर्ग करने की क्षमता और अहेतुक प्रेम की पराकाष्ठा स्त्रियों में ही विशेष रूप से देखी जा सकती है। इसलिए भक्त कवियों ने नारी रूप में ईश्वर की उपासना की है और स्वयं को पति रूप ईश्वर के समक्ष समर्पित कर दिया है।

दाम्पत्य भाव के भक्तें की श्रेणी में मीराँ का स्थान सर्वोपरि है। गिरधर गोपाल के प्रति उनका प्रेम बाल्यावस्था से ही पुष्ट होता रहा और युवावस्था तक आते- आते पूर्ण परिपाक को प्राप्त हो गया।

मीराँ प्रेमपथ पर अग्रसर एकाकी राहगीर है, जो अकेले ही प्रेम पथ की बाधाओं को पार करती जाती हैं ऐकान्तिक भक्ति में है जो अपूर्व एवं अद्वितीय है। संभवत: दक्षिण की आलवार भक्तिन आण्डाल की तुलना उनसे की जा सकती है, उन्होंने भी रंगनाथ जी की उसी प्रकार मधुर 'भाव से आराधना की थी, जिस प्रकार मीराँ ने।

मीराँ ने कृष्ण के रूप माधुर्य पर रीझ कर मन ही मन उनका वरण कर लिया था। इस हेतु लोक मर्यादा का उल्लंघन भी किया और उनके समक्ष नाचा और गाया भी।

मीराँ की भक्ति अन्य कृष्ण भक्तों की माधुर्य भक्ति से भिन्न है। कृष्ण भक्तों ने राधा गोपियों के माध्यम से अपनी अनुभूति को व्यक्त किया। मीराँ को किसी माध्यम की आवश्यकता नहीं थी। वे स्वयं गोपिका, राधा बन गई। माधुर्य भक्ति के लिए जिस प्रकार का आत्म समर्पण अपेक्षित है, मीरा में वह सहज स्वाभाविक है।

मीरा का वियोग अनुभूत वियोग है। वियोगजन्य अनुभूति का दंश उन्हें हर क्षण सालता रहता है। उनकी पीड़ा उनके हृदय की व्यथा है। मीराँ और उनके आराध्य के मध्य किसी माध्यम की आवश्यकता नहीं है, वे तो पूर्ण रूप से कृष्ण को ही समर्पित हँ। माधुर्य भक्ति की यथार्थपरक भावमयता, प्रेम की पीर और अनुभूति की गहराई और अगाघता जो मीराँ में है, वह अन्यत्र नहीं दिखाई देती।

मीराँ तो अपने गिरधर की सेविका है, उनकी प्रिया भी है और गिरधर के अतिरिक्त उनका किसी से कोई नेह नहीं है। गिरधर उनेक पति, स्वामी और उद्धारक तो हैं ही, वे सर्वव्यापी, अविनश्वर ब्रह्म हैं। उनका - माधुर्य भाव उदात्त स्तर का है अतएव लौकिक संस्पर्श का छिछलापन यहाँ नहीं है।

मीराँ की अन्य विशेषता यह भी है कि वे सम्प्रदाय मुक्त थीं इसलिए किसी भी दार्शनिक मतवाद को उन्होंने खड़ा नहीं किया वे किसी सम्प्रदाय से प्रभावित भी नहीं थीं अतएव उनकी भक्ति स्वतंत्र, निमुक्त और उब कोटि की रही।

प्रेम में तो किसी तर्क वितर्क और दर्शन का स्थान ही नहीं था। उन्होंने तो अपने कुटुम्ब-कबीले एवं लोक-लाज को भी त्याग दिया और विरह की पीर में बहते हु ए अश्रुओं से प्रेम की बेल का पोषण किया ' अश्रु जल सींच - सींच प्रेम बेला बोई। ' इसी कारण विष के प्याले को भी अमृत समझ सहर्ष पी गई। यह आस्था, समर्पण और निडरता दाम्पत्य भाव की भक्ति में ही संभव है। कृष्ण उनके जीवन के आधार है, उन्होंने उन्हें मोल लिया है किन्तु किसी से छुपाकर नहीं वरन् ढोल बजाकर लिया है, कृष्ण उनके पिया, जनम-जनम के साथी और पिव आदि है।

मीराँ का दर्द दीवानापन उनके काव्य को अनूठा बना देता है। मीराँ पर संतों के निर्गुण का भी प्रभाव पड़ा है और उनमें रहस्यात्मकता का समावेश हो गया है। मीराँ के प्रेम का दरद और तल्लीनता सीधे हृदय को स्पर्श करती है और भाव-विभोर कर देती है। भगवद् विषयक रति भी पाँच है -

माधुर्य भाव की भक्ति : -

प्रेम का सहज, स्वर्णिम रूप जो दाम्पत्य भाव में मिलता है। वह भक्ति के वात्सल्य, दास्य एवं सख्य रूप में उपलब्ध नहीं होता, यहाँ भक्त ईश्वर को अपना पति मानकर कान्ताभाव से उसकी आराधना करता है। पति-पत्नी का प्रेम एक ही धरातल पर स्थित होने के कारण इनके बीच कोई भेद नहीं रह जाता।

माधुर्य भाव की भक्ति दो रूपों की होती है - (1) प्रत्यक्ष (2) अनुभा। स्वयं को गोपी या राधा / प्रेयसी मानकर अपने ईश्वर के प्रति प्रेम को समर्पित करना प्रत्यक्ष कांता भाव कहलाता है। भक्त जब मध्यस्थ बनकर गोपियों और कृष्ण की प्रेम लीलाओं का पूर्व भावमयता एवं विकलता से अभिव्यक्त करता है, तो वह कान्ता भाव अनुगा कान्ता भाव है। मीरा का कानताभाव प्रत्यक्ष कान्ता भाव है।

इन दोनों प्रकार के माधुर्य भाव में भगवान की प्रेम से परिपूर्ण लीलाएं और उनकी प्रेम परक चेष्टाएं ही आराधकों के लिए इष्ट होती है।

मीराँ ने कृष्ण की रूप माधुरी का वर्णन करते हुए अपना प्रेम निवेदन व्यक्त किया है और अपने विरह के दरद का प्रकाशन भी किया है। उनका कान्ता भाव सर्वत्र ही व्यक्त हुआ है। वे अपने आराध्य के प्रति पत्नी रूप में कहती है, 'मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरों न कोय' यही मीराँ के जीवन की परम सिद्धि है।

कृष्ण-प्रेम में सराबोर मीराँ कभी संयोग की अनुभूतियों से प्रसन्न होती है और उन्हें रिझाने के लिए नृत्य करती है, 'हरि बिन किण गती मेरी' अथवा 'पग घुंघरू बांधि मीरा नाची' इस निमित्त न सामाजिक मर्यादा को त्यागने में कोई संकोच होता है और न पारिवारिक विरोध का सामना करने में ही। गिरधर गोपाल, नटनागर उनके जीवन आधार 'हरि म्हारा जीवन प्राण आधार और उनके साध्य और साधन दोनों ही हैं। प्रेम की इस शक्ति ने उन्हें निर्भय और दृढ बना दिया है। '

प्रेम और भक्ति : -

मीराँ के प्रेम का क्रमश: भक्ति के रूप में रूपान्तरण हुआ, जिससे मीरा भक्त के साथ-साथ गायिका औरे कवयित्री भी बन गई।

कृष्ण के सौन्दर्य का लौकिक स्वरूप : -

मीराँ कृष्ण की रूप माधुरी में आकण्ठ डूबी थी। उनका साँवला मुखड़ा, विशाल कमल नेत्र, बांकी चितवन कानों के कुण्डल, पीताम्बर वैजयन्ती माला, उनका मुरली बजाना, यमुना के तट पर गायों को चराना, सभी कुछ मीरा के हृदय को मुग्ध कर देता है। मीराँ कृष्ण की छवि को देखने के लिए व्याकुल हो उठती है, 'दरस बिन स्पन लागे नैण' मीराँ को तो कृष्ण की छवि देखने की लत लग गयी है, ' आली री मेरे नैना बान पड़ी। '

अलौकिक स्वरूप : -

मीराँ में कृष्ण के प्रेम का लौकिक स्वरूप और सौन्दर्य धीरे-धीरे प्रौढ़ता की ओर अग्रसर होता हुआ दिव्य रूप प्राप्त करता है। कृष्ण का सार्वभौतिक, अविनश्वर और दिव्य स्वरूप उन्हें सांसारिक यातनाओं से भयमुक्त कर देता है, 'म्हा सुण्या हरि अधम उद्धारण, अहम उद्धारण भव भय तारण। ' मीराँ पतित उद्धारक कृष्ण से कातर वाणी में आत्मा निवेदन करती हुई कहती है, ' 'सब भगताँ रा कारण साधा, म्हारा परण निभाज्यो जी।

अलौकिक धरातल पर आकर उने पिया-अविनश्वर, तरण-तारण, अन्तर्यामी, भक्त वत्सल गोपाल आदि हो जाते हैं, 'भजमन चरण कँवल अविनासी।'

इस प्रकार मीराँ भक्त पहले है, भक्ति के आवेग ने ही उन्हें कवयित्री बना दिया है। उनकी भाषा सरल है, अनुभूतियाँ सरल एवं भाव प्रवण हैं और इतनी सबी है कि पाठक के मन को आर्द कर देती है और प्रेम दीवानी मीरा पाठकों को भी प्रेम दीवाना बना देती है।

भावावेग, संगीतात्मकता और प्रसाद माधुर्य गुण सम्पन्न भाषा ये सभी विशेषताएं मीरा के काव्य में पाई जाती है।

13.6 संरचना शिल्प (कलापक्ष)

मीराँ की ख्याति उनके स्फुट पदों के कारण ही है। उनके संग्रह ग्रन्थों की संख्या लगभग पचास है। जिनमें 25 से लेकर 500 पद संगृहित हैं।

मीराँ के पद राजस्थानी, ब्रज, गुजराती और अन्य भाषाओं में प्रचलित हैं। साथ ही राजस्थान में ही नहीं वरन् गुजरात, बंगाल, उतर प्रदेश और ब्रजभूमइ में भी लोकप्रिय हैं। उनके पदों में राजस्थानी, ब्रजभाषा, खड़ी, बोली, अवधी, गुजराती आदि भाषाओं का सम्मिश्रण है।

13.6.1 गीति तत्व

मीराँ के पदों में संगीतात्मकता, आत्माभिव्यक्ति, वैयक्तिकता, संक्षिप्ति, अन्विति आदि गेय काव्य की समस्त विशेषताएँ प्राप्त होती हैं।

संगीतात्मकता की दृष्टि से उनमें विभिन्न राग रागिनियों के बंध है। मीराँ संगीतज्ञ नहीं थी किन्तु सहज प्रवाह में अनायास ही ये तत्व आ गए हैं। उन्होंने शास्त्रीय संगीत में भी पदों को आवंटित नहीं किया, फिर भी उनका संगीत आत्माभिव्यक्ति और भावों के सहज उद्वेग के साथ लयात्मक हो शास्त्रीय आधार प्राप्त कर लेता है। यद्यपि इन पदों में शास्त्रीय आधार नहीं है तथापि इनके अभाव में भी उकने पद वर्ण - मैत्री, शब्द चयन और रागात्मकता के कारण कार्ण प्रिय एवं मीठे हैं। उनमें लोक संगीत की सी सादगी और भोलापन है।

उनके गीतों में भावों का प्रकादय ही प्रमुख है। अनुभूति श्रवणता के लिए संक्षिप्ति आवश्यक होती है अतएव मीराँ के पद संक्षिप्त हैं, जिनमें चार से छः पंक्तियाँ हैं। ग्यारह पंक्तियों का पद मात्र दो हैं (पद संख्या 35 एवं 84) तेरह पंक्तियों का एक मात्र पद है (पद संख्या 102) बाकी के पद संक्षिप्त हैं।

मीराँ के पदों के भावनाओं का वैविध्य नहीं है किन्तु शब्दों और छंदों की लयात्मकता के कारण उनमें सम्प्रेषणीयता की अपार शक्ति है।

13.6.2 काव्य भाषा का सौन्दर्य

मीराँ के पद मुख्यतया राजस्थानी से मिश्रित ब्रजभाषा है। कई पदों में गुजराती का पुट भी पाया जाता है। मीराँ की काव्य भाषा अमिधा प्रधान है। उन्होंने अपने आन्तरिक भावों

का प्राकटय सीधे- सादे शब्दों में सहजता से किया है। यहाँ अमिधा का भी कलात्मक रूप उभर कर आता है - 'आली म्हाने लागे वृन्दावन नीको। '

माधुर्य रसमयता से प्रभावित होने के कारण उनके पद संक्षिप्त होते हुए भी सरस हैं। लक्षणा और व्यंजना शक्ति का प्रयोग उनके पदों में अत्यल्प है।

मुहावरे : -

मीराँ के पदों में मुहावरों का अधिक प्रयोग जन जीवन पर उनकी पकड़ को घोतित करता है। इनके मुहावरे आन्तरिक उद्‌गारों की अभिव्यक्ति के कारण सहज सम्प्रेषणीय हैं। कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं-

(1) 'आली री मेरे नैनां बान पड़ी' (नयनों की आदत बनना)

(2) 'स्याम म्हाँ बाहडियाँ जी गहयाँ' (बाँह गहना, पकड़ना सहारा बनना)

(3) 'पिय रो पंथ निहारता, सब रैण बिहाणी हो' (पंथ निहारना, प्रतीक्षा)

(4) 'मीराँ के प्रभु गिरधरनागर, बेड़ा पार लगाज्यो जी'

(बेड़ा पार लगाना, मुक्ति /उद्धार, प्रदान करना)

(5) 'लगन म्हारी स्याम सूँ लागी' (लगन लगना, प्रेम होना)

अलंकार : -

मीराँ का काव्य सहज प्रेमाभिव्यक्ति का काव्य हैं, जिसमें अलंकार अनायास ही आकर काव्यशोभा को बढ़ा देते हैं। मीराँ ने जिस प्रकार अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग किया है, वह बहुत सार्थक है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अत्युक्ति, अनुप्रास और श्लेष अलंकारों का पर्याप्त प्रयोग इनके पदों में मिलता है।

छंद : -

अलंकारों की भांति मीरा के पदों में छंदों का प्रयत्नो भी सचेष्ट नहीं है। इसीलिए उनके पदों में मात्रा- विधान की त्रुटियाँ भीपाई जाती है। यद्दपि पिंगल शास्त्र की कसौटी पर मीराँ के पद खरे नहीं उतरते तथापि उनके पदों में सार छन्द, सरसी, दोहा, सुगीत छंद, समान सवैया, दण्डक छंद, जातक छंद, उपमान छंद और चौपाई छंद आदि पाए जाते हैं।

13.7 प्रतिपाद्‌य

मीराँ कृष्णोपासक काव्यधारा की प्रतिनिधि कवयित्री है। उनकी भक्ति माधुर्य या कान्ता भाव की है। मीराँ में प्रेम की वियोग वेदना की व्यग्रता और पीर तो है ही, साथ ही उन्होंने ज्ञान और वैराग्य के साथ-साथ संसार की नश्वरता आदि का भी उल्लेख है। मीरा में सगुण भक्ति के साथ-साथ निर्गुण भक्ति के पद भी प्राप्त होते हैं। निर्गुण संत रैदास इनके गुरू माने जाते हैं। इसीलिए मीराँ की भक्ति पद्धति में यह दोनों साधना पद्धतियाँ पाई जाती है।

मीराँ कृष्ण की अनन्य उपासिका होने पर भी उस अबोध किशोरी जैसी प्रतीत होती है, जिसे प्रिय को रिझाने के लिए नाचना गाना ही आता है, पूजा की अन्य विधियों से जो अनभिज्ञ है।

ऐसी स्वच्छंदता और निर्मुक्तता अन्य किसी कवि में नहीं मिलती अतएव भक्ति के क्षेत्र में मीरा का स्थान अकेला और अद्वितीय है।

मीरा की क्रांतदर्शिता : -

मीराँ के कारण ही भक्ति साहित्य सम्पूर्ण बना, अन्यथा यह पुरुष प्रधान साहित्य ही होता। मध्ययुगीन आन्दोलन की एक मात्र अत्यन्त प्रभावशालिनी भक्त मीराबाई ही थी। जौहर की नगरी चितौड़गढ़ में मीराँ अपने पति भोजराज की मृत्यु के उपरान्त सती नहीं हुई। मीराँ ने प्रचलित वैधव्य की परम्परागत लीक के एकांतवास को तोड़ा और अकर्मण्यता के जीवन को नकारा।

संत रैदास को गुरू मानकर उन्होंने जातिगत, भेदभाव को पूर्णत: नकार दिया। हरि को भजे सो हरि का कोई कहकर उन्होंने मानव मात्र की महत्त को प्रतिष्ठित किया। मुगलकाल की धार्मिक कट्टरता के माहौल में लोक संग्रह की भावना से भरकर उन्होंने वैष्णव धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा प्रकट की। लोक निन्दा की परवाह किए बगैर लोक जागरण को अपनाया और सबे प्रेम की महत्ता के समक्ष समाज की रूढ़ियों और मर्यादाओं को छोड़ दिया।

रानी होकर भी वे जन साधारण तक पहुँची और उनके मनोबल को दृढ़ करके उन्हें भावी संघर्ष के लिए तैयार किया।

13.8 सारांश

मध्यकालीन भक्ति आंदोलन अपने समय का प्रगतिशील और सांस्कृतिक मूल्यों से जुड़ा आन्दोलन था। डॉ. रामविलास शर्मा ने इस आंदोलन को जन आंदोलन के साथ जोड़ा है।

मीराँ जितनी बड़ी भक्त थी, उतनी ही बड़ी क्रांतिधर्मी भी है। मीराँ ने मध्यकालीन प्रतिगामी मानसिकता से जमकर संघर्ष किया। मीरा ने आडम्बर, प्रदर्शन और छल का विरोध कर त्याग की अवधारणा को पुष्ट किया। मीरा ने जीवटता से अपने प्रति हुए षड्यंत्रों का भी सामना किया। वे कहती हैं ' -

"लोकलाज कुल काण जगत की, दइ बहाय जस पाणी।

अपने घरका परदा कर ले, मैं अबला बौराणी।। ' '

मीराँ सामन्ती परिवेश का अंग होते हुए भी लोक चेतना से जुड़ी रही। मीराबाई ने मारवाड़ और मेड़ता को त्यागकर ब्रजप्रदेश और वृंदावन में रहते हुए तत्कालीन समाज में नारी जागरण और चेतना के स्फुलिंग फूँके। इस दृष्टि से उन्हें नारी सशक्तीकरण का आद्य प्रवर्त्तक माना जा सकता है। उन्होंने मध्यकाल में सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात करते हुए पर्दा प्रथा, सती प्रथा, बहु विवाह प्रथा जैसी सामाजिक रूढ़ियों का साहस पूर्वक संघर्ष किया। मीरा का प्रचार करने वाला कोई नहीं था, ना कोई शिष्ट और न ही कोई संप्रदाय। मेवाड़ के शैव भक्तों के मध्य इरा युवती ने अपने संकल्प साहस और कृष्ण के प्रति अनन्यता से वैष्णव मत को प्रसारित किया।

मीरा जनमानस की जीवन्त पात्र है। पाँच सौ वर्षों के उपरान्त भी साहित्य अध्यात्म, धर्म, दर्शन भक्ति, गीत, संगीत और प्रेम आदि क्षेत्र मीरा की चर्चा के बिना अधूरी है।

13.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मीराँबाई का जीवन चरित्र - मुंशी देवी प्रसाद
2. मीराँबाई की पदावली - परशुराम चतुर्वेदी
3. मीराँ एक अध्ययन - पद्मावती 'शबनम'
4. मीराँ माधुरी - श्री ब्रजरत्न दास
5. मीराँ बाई - डॉ. श्री कृष्ण लाल
6. मीराँ जीवनी और काव्य - महावीर सिंह गहलोत
7. मीराँ की प्रेम साधना - भुवनेश्वर नाथ मिश्र 'माघव'
8. मीराँबाई की काव्य साधना - डॉ. राम प्रकाश

13.10 अभ्यास

1. नीचे व्याख्या के लिए कुछ पंक्तियाँ दी गई हैं, अत्यन्त संक्षेप में व्याख्या कीजिए। अपने उत्तर रिक्त स्थानों में लिखिए।

(क) 'छुद्र घटिका कटि-तट सोभित, नुपूर सबद रसाल। '

....

....

(ख) 'कल न परत पल हरि मग जोवत, भयी छ: मासी रैण।'

....

....

(ग) 'यो संसार चहर की बाजी, सांझ पख्वां उडजासी।'

....

....

2. नीचे दी गई पंक्तियों की शिल्पगत विशेषताएँ बताइए।

(क) जेताई दीसै धरणि - गगन बिच, तेताइ सब उठ जासी।
इस देही का गरब न करणा, माटी में मिल जासी।।

....

....

(ख) 'मोहिनी मूरति, सांवीर अति, नैना बने विसाल।
अधर सुधारस मुरली राजती, उर वैजंती माल।। '

....

....

13.10.1 बोध प्रश्न

1. नीचे दिए गए वाक्यांशों को व्यक्त करने वाले सही शब्द बताइए।

(क) ईश्वर को भक्तों से प्रेम करने वाला मानना (भक्तवत्सल/सगुणमार्गी)

(ख) ईश्वर के प्रति दाम्पत्य प्रेम की अनुभूति (दास्य/माधुर्य)

(ग) कहा भयो है भगवा पहरयां, घर तज भये संन्यासी

(साधुओं का विरोधाबाह्याडम्बरो की आलोचना)

2. माधुर्य भाव की भक्ति का क्या तात्पर्य है, दो पंक्तियों में बताइए।

....

....

13.10.2 अभ्यास /बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (कमीराँ कृष्ण की रूप माधुरी (, जिसमें उनकी कमर पर छोटी-छोटी घण्टियाँ शोभित हो और पैरों में पहनी हुई पायल से रसयुक्त ध्वनियां आ रही हो, को नेत्रों में बसाना चाहती है।

   (ख) मीराँ कृष्ण के दर्शन के लिए व्याकुल है, उनके दर्शन के बिना उन्हें चैन नहीं पड़ता है, हर पल श्रीकृष्ण का ही मार्ग देखती है अर्थात् उनकी प्रतीक्षा करती है। वियोग में उनके लिए एक रात्रि भी छः माह के समान दीर्घ हो गई है।

   (ग) संसार की असारता को व्यक्त करती हुई मीरा कहती है यह संसार तो चिड़ियों का खेल है, जो संध्या होते ही समाप्त हो जाता है। यह सांसारिक चहल-पहल भी कुछ ही दिनों की है।

शिल्पगत विशेषताएँ :

2. (क) अनुप्रास और रूपक अलंकार है। सरल, सुबोध, आडम्बरहीन भाषा का प्रयोग। प्राचीन राजस्थानी भाषा के देशज स्वरूप का निदर्शन होता है। गीतिकाव्य की विशेषताएँ अनायास ही इसमें आ गई है।

   (ख) दोहा छंद का प्रयोग है। अन्यत्र अनुप्रास है। इसमें माधुर्य और प्रसाद गुण है तथा वैदर्भी रीति है। 'नैनो में बसाना' मुहावरा है। कथन की सरलता औरसादगी अनूठी है ।

1. (क) भक्त वत्सल

   (ख) माधुर्य

   (ग) बाह्याडम्बरों का विरोध

2. यहाँ भक्त भगवान को अपना पति मानकर कान्ता भाव से उसकी उपासना करता है। पति- पत्नी का प्रेम एक ही धरातल पर होने से उनके मध्य किसी भी प्रकार की टूटी नहीं रहती। इस भक्ति में एक निष्ठता, अनन्यता के साथ, 'मिलन का सुख नहीं तो विरह का दुःख ही सही' के भाव के साथ प्रसन्न रहता है।

इकाई 14 जय शंकर प्रसाद

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 जीवन वृत्त
14.2.1 रचनाएँ
14.3 मूल पाठ (वाचन)
14.4 संदर्भ सहित व्याख्या
14.5 भावपक्ष
14.6 कलापक्ष (संरचना शिल्प)
14.7 सारांश
14.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
14.9 प्रश्न / अभ्यास

14.0 उद्देश्य

अनिवार्य हिंदी पाठ्यक्रम की यह चौदहवीं इकाई है। इसमें हम छायावादी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि जयशंकर प्रसाद की कविताओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप - छायावादी काव्य की विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।

- जयशंकर प्रसाद के जीवन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रसाद जी की रचनाओं के बारे में बता सकेंगे।
- प्रसाद जी की कविताओं के भावपक्ष की विशेषताएँ बतला कसेंगे।
- प्रसाद जी की कविताओं में राष्ट्रीय भावनाओं को समझ सकेंगे।
- प्रसाद जी के काव्य के संरचना शिल्प की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- हिंदी साहित्य को प्रसाद जी के योगदान को समझा सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद छायावादी काव्यधारा के प्रमुख चार स्तंभों में से एक प्रमुख स्तंभ है। छायावाद काव्य का प्रारम्भ 1918 - 19 के आसपास से हुआ। इससे पहले तक हिंदी में द्विवेदीयुगीन नैतिकता, सुधारवाद और उपदेशात्मकता से भरी हुई कविताएँ लिखी जा रही थी। कवियों ने देशप्रेम और राष्ट्रीयता के भावों का भी निरूपण किया। लेकिन उनके काव्य में काव्य की सौंदर्यमयी दृष्टि का अभाव था। कल्पना की सूक्ष्मता का अभाव था तथा वर्णन में अत्यंत व्यापक स्थूलता के दर्शन होते हैं। कुल मिलाकर छायावाद से पूर्व के साहित्य में वर्णन कौशल का पूरी तरह से अभाव था। इसकी तीव्र प्रतिक्रिया स्वरूप हिंदी साहित्य में स्वच्छंदतावादी काव्य प्रवृत्तियों से भरे हुए छायावाद का उदय हुआ। डॉ नगेन्द्र के शब्दों में 'स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह ही छायावाद है'। काव्य की इस नूतन

धारा को यद्दपि व्यंग्य रूप में यह नाम दिया गया लेकिन शीघ्र ही इसने सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य में अति विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण काव्य आंदोलन का स्वरूप ग्रहण कर लिया। आधुनिक हिंदी साहित्य का अत्यंत महत्त्वपूर्ण काव्य आंदोलन बन गया। छायावादी आंदोलन हिंदी की एक विशिष्ट देन है। अन्य भारतीय भाषाओं के तत्कालीन साहितय में भी इसी प्रकार की अंतर्वस्तु एवं शिल्प से मिलते-जुलते कई प्रयोग देखे जा सकते हैं, किन्तु केवल हिंदी में ही इनका विकास पूरे स्वतंत्र रूप से हो सका है। आधुनिक हिंदी साहित्य के इतिहास में तो एक मात्र यही काव्यांदोलन ऐसा है जिसे कविता का मौलिक आंदोलन भी कहा जा सकता है।

जयशंकर प्रसाद ने छायावादी काव्यगत विशेषताओं के साथ साथ अपने नाटकों के कथानकों एवं गीतों से राष्ट्रीय जागृति का मुखरगान करते हुए अतीत के गौरव एवं संस्कृति के महत्त्व को स्थापित करने का सफल प्रयास किया है। 'हिमाद्रि तुंग मृग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती' जैसे गान नवजागरण पैदा करते हैं। इसके साथ ही दार्शनिक विचारधाराओं का संगम, बौद्ध करूणा और अद्‌वैत दर्शन, राष्ट्र की अमूल्य धरोहरों से भी इनका काव्य परिचित करवाता है।

युग कवि जयशंकर प्रसाद छायावाद को नेतृत्व देकर सफलता के चरम-शिखर तक ले जाने वाले महान् कलाकार हैं। भारतेन्दु युग में जन्मी नवजागरण एवं राष्ट्रीय चेतना की जो लहर द्‌विवेदी युग तक आते-आते जोर पकड़ने लगी थी छायावाद तक आते- आते वह पल्लवित होने लगी। इसका सफल निरूपण प्रसाद जी का काव्य एवं नाटकों में देखने को मिलता है। इस इकाई में हम प्रसाद के काव्य का अध्ययन करने जा रहे हैं।

14.2 प्रसाद जी का जीवन परिचय

प्रसाद जी का जन्म काशी के एक समृद्ध और संपन्न परिवार में 1889 ई. को हुआ। इनके दादा शिवरत्न साहु वाराणसी के अत्यंत प्रतिष्ठित नागरिक थे और एक विशेष प्रकार की सुरती (तम्बाकू) बनाने के कारण 'सुँघनी साहु' के नाम से विख्यात थे। प्रसाद जी के पिता देवी प्रसाद साहु ने भी अपने पूर्वजों की परम्परा का पालन किया। प्रसाद जी की माँ का नाम मुन्नी देवी और इनके बड़े भाई का नाम शम्भुरत्न था।

प्रसादजी की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही शुरू हुई थी। बाद में वे कींव्स कॉलेज में सातवीं तक पढ़े थे। उनके परिवार में साहित्यिक वातावरण था। घर पर उन्हें संस्कृत, हिंदी, फारसी, उर्दू के शिक्षक पढाने आया करते थे। स्कूल की नियमित पढ़ाई न होने पर भी वे अपने अध्ययनवृत्ति के आधार पर निरन्तर पढते रहे।

जब वे बारह वर्ष के थे तभी उनके पिता का देहान्त हो गया इसी कारण उन्हें नियमित स्कूली शिक्षा से वंचित होना पड़ा। परिवार का सारा भार बड़े भाई शंभुरत्न जी ने संहाला (प्रदंह की अवसा हुई तो प्रसाद जी की माँ का भी देहान्त हो गया। दुर्भाग्य ने इस पर भी उनका साथ नहीं छोड़ा। दो वर्ष बाद बड़े भाई का भी स्वर्गवास हो गया। घर की सारी जिम्मेवारी प्रसाद जी पर आ गई। पारिवारिक बाधाओं से विचलित न होकर अडिग रहने वाले प्रसाद जी ने अपनी महाजीवट शक्ति से जीवन की विषम परिस्थितियों का सामना

किया। माता-पिता और भाई के देहान्त के बाद भी संघर्षरत प्रसाद जी को और भी अनेक विपदाओं से जूझना पड़ा। विवाह किया तो एक वर्ष बाद ही पत्नी चल बसी। दूसरा विवाह किया किंतु पुत्र जन्म के समय पत्नी और पुत्र दोनों का ही देहान्त हो गया। प्रसाद जी पूरी तरह से टूट गए। उनमें परिवार के प्रति विरक्ति का सा भाव उदित हो गया। किंतु भाभी तथा मित्रों के आग्रह के कारण उन्होंने तीसरा विवाह किया। इसी पत्नी से उनके पुत्र रत्नशंकर नामक एक मात्र पुत्र की प्राप्ति हुई। 1937 में उन्हें टी.बी. हो गई और वे 48 वर्ष की अल्पायु में ही स्वर्ग सिधार गए। इस प्रकार अत्यंत सौम्य, शान्त और गंभीर व्यक्तित्व का सांसारिक संघर्ष समाप्त हो गया।

14.2.1 रचनाएँ

कहा जाता है कि नौ वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने 'कलाधर' उपनाम से ब्रजभाषा में एक सवैया लिखकर गुरूजी को दिखलाया था। बचपन में छिपकर तुकबंदियाँ लिखने वाले प्रसाद का अल्हड़ कवि छुप नहीं रहा। वे पन्द्रह वर्ष की अवस्था से ही दुकान पर बैठ कर बही-खातों के रद्दी कागजों पर कविताएँ लिखा करते थे। 1908 तक आते-आते प्रसाद जी की ब्रजभाषा में रचित कविताएं तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगीं। उनकी प्रारंभिक रचनाएँ ब्रजभाषा में लिखी गई थी, किन्तु उन्होंने क्रमश: खड़ी बोली को अपना लिया। 1909 में प्रसाद जी की प्रेरणा से उनके मामा अम्बिका प्रसाद गुप्त के संपादकत्व में 'इन्दु' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। प्रसाद जी नियमित रूप से इनमें लिखा करते थे और उनकी प्रारंभिक रचनाएं 'इन्दु' पत्रिका में ही प्रकाशित हुई। 'चित्राधार' प्रसाद जी का प्रथम काव्य संकलन है।

प्रसाद जी ने अपनी काव्य साधना से हिंदी की श्रेष्ठ रचनाएँ प्रदान की। सांस्कृतिक चेतना से ओत- प्रोत बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रसाद जी ने काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी तथा निबंध जैसी कई विधाओं में रचना कर मानव समाज की सेवा की। इनकी समस्त रचनाएँ इस प्रकार हैं -

1. **काव्य** – चित्राधार, प्रेम-पथिक, करूणालय, महाराणा का महत्त्व, कानन कुसुम, आँसू लहर तथा कामायनी।
2. **नाटक्** – सज्जन, कल्याणी-परिणय, प्रायश्चित, राज्यश्री, विशाख, अजातशत्रु, जनमेजय का नलयज्ञ, कामना, स्कंदगुप्त, एक घूँट, चंद्रगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी।
3. **उपन्यास** – कंकाल, तितली तथा इरावती (अपूर्ण)
4. **कहानी संग्रह** – छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी तथा इन्द्रजाल।
5. **निबंध** – काव्य और कला तथा अन्य निबंध

प्रसाद जी की 'कामायनी' आधुनिक हिंदी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है।

14.3 मूल पाठ (वाचन)

पहला - चन्द्रगुप्त नाटक से

अरूण यह मधुमय देश हमारा ।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।
सरस तामरस गर्भ विभा पर नाच रही तरुशिखा मनोहर।
छिटका जीवन हरियाली पर, मंगल कुंकुम सारा।
लघु सुरधनु से पंख पसारे, शीतल मलय समीर सहारे।
उड़ते खग जिस ओर मुँह किये, समझ नीड़ निज प्यारा।
बरसाती आँखों के बादल, बनते जहाँ भरे करुणा जल।
लहरें टकराती अनंत की, पाकर जहाँ किनारा।
हेम-कुंभ ले उषा सबेरे, भरती ढुलकाती सुख मेरे।
मदिर ऊंघते रहते जब, जग कर रजनी भर तारा।
अरुण यह मधुमय देश हमारा !

कठिन शब्द :- अरुण-लाल रंग का, मधुमय-मिठास और माधुर्य से भरा हुआ, क्षितिज-वह स्थल जहाँ धरती और आकाश मिले हुए दिखाई देते हैं, तामरस-लाल रंग का सूर्य, विभा-शोभा, तरुशिखा-पेड़ों की चोटियाँ, सुरधनु-इंद्र धनुष, नीड़-घौंसला, हेम कुंभ् सोने का घड़ा (सूर्य), मदिर- आलस्य से भरे हुए।

दूसरा - कामायनी (श्रद्धा सर्ग से)

दु:ख की पिछली रजनी बीच
विकसता सुख का नवल प्रभात
एक परदा यह झीना नील
छिपाये है जिसमें सुख गात।
जिसे तुम समझे हो अभिशाप
जगत की ज्वालाओं का मूल,
ईश का वह रहस्य वरदान
कभी मत इसको जाओ भूल।

कठिन शब्द : - रजनी-रात, गात- शरीर, सविलास-उत्साहपूर्वक, विद्युतकण-बिजली के कण, विकल-व्याकुल, निरूपाय-उपाय रहित, समन्वय-एकीकरण (मेल)

14.4 संदर्भ सहित व्याख्या

पहली व्याख्या

अरूण यह मधुमय देश... बिखरा कुंकुम सारा

संदर्भ - प्रस्तुत पंक्तियाँ छायावाद के प्रमुख आधार स्तंभ तथा भारतीय राष्ट्रीय चेतना के अमर चितेरे जयशंकर प्रसाद के प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक 'चंद्रगुप्त' में से ली गई है। इस नाटक् में प्रसाद जी ने नाटक के कथानक में ही नहीं गीतों में राष्ट्रीय चेतना को मुखरित

किया है। इस गीत का एक और दृष्टि से भी विशेष महत्त्व है। प्रसाद जी ने यहाँ सित्सुकस की पुत्री कार्मेलिया के मुख से भारत की महिमा का निरूपण किया है। राष्ट्रीय गरिमा का देशवासी तो करते ही रहते हैं लेकिन उसका महत्त्व तब और भी अधिक बढ जाता है जब विदेशी लोग इसकी तारीफ करें। यहाँ कार्नेलिया भारत की प्रकृति की मनोरम एवं मनोहारी छटा का छायावादी सौंदर्य चेतना कोण से निरूपण कर रही है।

व्याख्या - कार्नेलिया भारतवर्ष की प्राकृतिक शोभा का वर्णन करते हुए कहती है। हमारा यह प्यारा भारतवर्ष उगते हुए सूर्य की सी लालिमा से ला हुआ सुंदर देश है जिसमें प्रकृति की शोभा के साथ- साथ मधुरिमा और मिठास भी सर्वत्र विद्‌यामान है। यह वही मधुमय दो है जहाँ पर पहुँच कर सर्वत्र निरवलंब रहने वाले क्षितिज को भी एक उचित सहारा प्राप्त हो जाता है। अर्थात् बिना आधार के पृथ्वी पर औंधे मुँह लटके रहने वाले आकाश को भी मानो भारत में आकर ही सुदृढ़ अवलंब प्राप्त हुआ करता है। यहाँ की प्रभात कालीन प्रकृति की शोभा अत्यंत निराली होती है। सवेरे के समय जब-जब ताँबे के रंग का लाल लाल सूर्य पूर्व में उदित होता है तो अंधकार को जाता हुआ देखकर तथा प्रभातकालीन शीतल मंद - सुगंधयुक्त पवन के मधुर झकोरों के साथ पेड़ों की ऊंची-ऊंची डालियाँ आनन्द विभोर होकर नाचने लगती है। ऐसे समय उगते सूर्य के बिम्ब के ऊपर पेड़ों की ऊंचे शिखर अत्यंत मनोरम ढंग से नृत्य करते हुए दिखाई देते हैं। ऐसे समय में सूर्य की लाल-लाल किरणें सारे वातावरण को इस तरह रंग देती है जैसे कि कुंकुम के मांगलिक छींटे चारों ओर बिखेर दिए गए हैं। भाव यह है कि सूर्योदय का पान हरा भरा प्राकृतिक दृश्य भारत में मांगलिक मधुरिमा को चारों ओर बिखेरता हुआ सा दिखाई देता है। इसी तरह रात्रि भर जागकर जब थके हारे तारे नींद में जाने की तैयारी कर रहे होते हैं उस समय उषा रूपी नायिका प्रकाश एवं सौंदर्य के घड़े भर कर सारे संसार पर ढुलकाती जाती है। इस प्रकार सवेरे के साथ ही इस पवित्र भारत भूमि में उषामानो सुख की धाराओं को बहाती हुलकाती रहती है। शाम के समय सूर्य को अस्त होता देखकर सारे पक्षी इस देश की ओर ही उड़े चले आते हैं क्योंकि यह भारत भूमि ही उनका सबसे प्यारा नीड़ या घोंसले की तरह निर्भयशरण और सुरक्षा प्रदान करता है।

विशेष - 1. भाषा में लाक्षणिकता है।
2. बिंबो के सहारे चित्र सा खड़ा करने का प्रयास किया गया है।
3. भाशा में कोमलता, कान्तता, और सौंदर्य है।
4. प्रकृति का मानवीकरण किया गया है।

दूसरी व्याख्या -

दुःख की पिछली रजनी.... जाओ भूल।

संदर्भ - प्रस्तुत पंक्तियाँ महाकवि जयशंकर प्रसाद की अमर काव्यकृति 'कामायनी' में से ली गई है। कामायनी के दूसरे सर्ग में हृदय की प्रतीक श्रद्धा चिंतातुर मनु के मन में उत्साह का भाव भर देना चाहती है। निरंतर आने वाली विपत्तियों और दुःखों को देखकर लोग चिंतामग्र हो जाते हैं। वे थककर चुप बैठ जाना चाहते हँ। लेकिन वे नहीं जानते कि दुःख के बहाने ईश्वर व्यक्ति के जीवन की परीक्षा लेते हुए उसे नवीन प्रेरणा भर देना

चाहते हैं। प्रलय के भीषण दृश्य को देखकर तथा समस्त चराचर सृष्टि के विनष्ट हो जाने पर मनु भी इसी तरह से दुःखी हो जाते हैं। तब अचानक प्रकट हुई श्रद्धा उनके दुःख को दूर करने के लिए तथा उनमें उत्साह भर देने के लिए प्रेरणादायक उद्बोधन करती है।

व्याख्या - श्रद्धा चिंतातुर मनु को समझाते हुए कहती है कि दुःख एक अंधेरी रात की तरह है। रात जब घनी हो जाती है तो व्यक्ति को कुछ भी उपाय नहीं सूझता है। वह निराश होकर बैठ जाता है। लेकिन श्रद्धा कहती है कि रात कितनी ही अधिक घनी, कितनी ही अधिक अंधकारमयी और कितनी ही लंबी क्यों न हो उसका अंत अनिवार्य है। उसी रात के अंधकार के बीच ही नया सूर्य उग कर सामने आ जाता है। नया सवेरा प्रकाश और ऊष्मा को चारों ओर ऐसा फैला देता है कि उसके सामने अंधेरा एक क्षण के लिए भी ठहर नहीं पाता है। दरअसल अंधेरा एक पतले, झीने चादर की तरह है जो सबको छुपाए रखता है। लेकिन जब नया प्रभात होता है तो अंधेरे का वह पर्दा अपने आप गायब हो जाता है।

श्रद्धा के कहने का अभिप्राय यह है कि जैसे अंधेरा जल्द हट जाया करता है वैसे ही मनुष्य के जीवन में आने वाले दुःख भी एक न एक दिन समाप्त हो जाते है। दुःख हमें कर्म की प्रेरणा देता है उससे मुक्ति के लिए हम जो भी प्रयास करते हैं वे नवीन विकास के प्रेरणास्त्रोत बन जाते हैं। दुःख तो सिर्फ एक झीने से पर्दे की तरह है जो सुख को छुपाए रखता है। जैसे सवेरा होने पर अंधेरा छँट जाता है वैसे ही विकास के सुख के फैलते ही दुःख हमोर जीवन से गायब हो जाता है। अतः दुःख से घबराने की जगह मनुष्य को उसे दूर करने के लिए प्रयास शुरू कर देने चामि फिर तो सुख अपने आप खिंचा चला आता है।

यह सोचकर कि मनु प्रलय के दुःख से व्याकुल होकर जीन से विमुख हो रहे हैं, श्रद्धा उन्हें समझाती है कि मनु! तुमने जिस दुःख को संसार का शाप समझ लिया है और जिसे तुम संसार की समस्याओं का. मूल कारण समझ रहे हो वह तो ईश्वर का रहस्यमय वरदान है, तुम्हे इस बात को नहीं भूलना चाहिए। दु :ख ईश्वर का रहस्यमय वरदान है। क्योंकि देखने में दुःख शाप ही दिखाई देता है किन्तु वास्तविकता यह है कि बिना दुःख के सब सुख व्यर्थ है, दुःख की अनुभूति के बाद ही सुख भोगने में आनन्द आता है। दुःख ने ही सुख के मूल्य को बढ़ा दिया है।

विशेष - 1. मानवीय प्रेरणादायक बात कहीं गई है।

2. प्रतीकात्मक ढंग से सुंदर अभिव्यक्ति की गई है।

3. भाषा सरल, सरस और बिंब खड़ा करने वाली है।

14.5 भाव पक्ष

प्रसाद के काव्य में एक् अलौकिक तथा विलक्षण शक्ति है। इन्होंने जीवन और दर्शन में परस्पर निर्भरता प्रकट करते हुए भारतीय उज्ज्वल ऐतिहासिक, सांस्कृतिक परम्पराओं के गरिमामय रूप को अपने काव्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है। भारतीयता, मानवीयता,

संस्कृति तथा दर्शन आदि को युगीन संदर्भों से जोड़ते हुए उनकी प्रासंगिकता सिद्ध की है। इनके काव्य में कई भाव, कई विचार, दृष्टियाँ, कई समस्याएं तथा कई चुनौतियाँ एक साथ उभर कर आती है। प्रसाद जी अपनी आस्थाओं, निछाओं के माध्यम से उन भी का समाधान भी खोज निकालने की सफलता प्राप्त की है। राष्ट्र की खोई चेतना को उन्होंने अतीतकालीन गरिमामय सांस्कृतिक सम्पन्नताओ के मध्य से खोजना आध्या-चेतना उनके विचारों को आस्थामय बनाती है। प्रसाद जी ने हिंदी कविता को नई चेतना और सर्वथा नवीन दृष्टि प्रसाद की थी।

संस्कृतिक एवं इतिहास का निरूपण :

प्रसाद ने भारतीय संस्कृति के उज्जवलतम रूप को प्रदर्शित करना एक प्रकार से अपने काव्य का लक्ष्य बनाया। 'कामायनी' में आनन्दवाद की जो व्याख्या उन्होंने इच्छा क्रिया एवं ज्ञान के एकीकरण से प्रकट की है वह भारतीय संस्कृति के उज्जवल पक्ष को ही प्रकट करती है। भारतीय संस्कृति के बिखरे अवयवों को इन्होंने तिनका-तिनका कर एकत्रित किया। इन्होंने काव्यों, नाटकों में गरिमामयी भारतीय इतिहास की घटनाओं को स्थान दिया और एक अंवेषी कवि की तरह भारतीय इतिहास के पन्नों को खंगालते हुए उनका निरूपण किया। इस तरह इतिहास और संस्कृति के बहुरंगी चित्रों में इन्होंने हिंदी साहित्य को पूरी तरह से सुसज्जित कर दिया। इनका साहित्य इतिहास का स्तुति गान नहीं करता है वरन् उसके उज्जवल पक्षों को पाठकों के समक्ष उपस्थित करता है। इसके साथ ही इन्होंने अतीत की घटनाओं-प्रसंगों को वर्तमान समस्याओं से जोड़ते हुए उनका समाधान खोजने का भी सफल प्रयास किया है।

राष्ट्रीय चेतना का निरूपण :

प्रसाद जी ने राष्ट्रीय चेतना के निरूपण के लिए ही प्राचीन गरिमामय ऐतिहासिक प्रसंगों को अपनी रचनाओं का केन्द्रीय विषय बनाया। इनके माध्यम से प्रसाद जी ने चन्द्रगुप्त, स्कंदगुप्त, चाणक्य जैसे उज्जवल नक्षत्रों की तरह चमकने वाले राष्ट्र के लिए समर्पित चरित्रों के भव्य व्यक्तित्व को पाठकों के समक्षरखा। यहाँ तक कि अलका, सिंहरण, बन्धुवर्मा जैसे काल्पनिक पात्र भी नाटको में चित्रित किए जिन्होंने राष्ट्र के लिए सारा जीवन अर्पित कर दिया। वह युग राष्ट्रीय चेतना, स्वतंत्रता की अमिट कामना का युग था। प्रसाद जी ने महाराणा का महत्तव, पैशाला का प्रतिध्वनि जैसी कविताओं और चन्द्रगुप्त नाटक के 'हिमाद्रितुंग का से' जैसे प्रयाण गीतों से प्रत्यक्ष रूप में भी राष्ट्रीय भावनाओं का निरूपण किया है। जैसे-

हिमाद्रि तुंग श्रृंगसे
प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुल्लला
स्वतंत्रता पुकारती
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो
प्रशस्त पुण्य पंथ है - बड़े चलो बड़े चलो।

सौंदर्य निरूपण :

समस्त छायावादी काव्य अपनी अनुपम सौंदर्य चेतना से उद्भासित है। प्रसाद जी को तो कल्पना और सौंदर्य लोक का कवि कहा जाता है। इन्होंने सौंदर्य का निरूपण प्रकृति में, मानव में, जीवन व जगत् सभी में किया है। इनकी सौंदर्य चेतना सूक्ष्म कल्पनाओं और विरल अनुभूतियों पर निर्भर है जो उत्सुकता, कुतूहल और जिज्ञासा सभी को एक साथ जगा देने में समर्थ है। जैसे -

प्रकृति सौंदर्य – बीति विभावरी जाग री
अंबर पनघट में डुबो रही
तारा घट ऊषा नशरी।

नारी सौंदर्य – नील परिधान बीच सुकुमार
खिल रहा मृदुल अधुखुला अंग
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघ वन बीच गुलाबी रंग।।

भाव सौंदर्य – जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति बन छाई
दुर्दिन में आँसू बन कर
वह आज बरसने आई।।

प्रेम निरूपण :

छायावाद की सम्पूर्ण काव्य चेतना में प्रेम और प्रणय भावना की प्रधानता रही है। प्रसाद जी के साहित्य में आदि से अंत तक इसी प्रेम भाव का स्वर थिरकता हुआ दिखाई देता है। प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए इनकी अनुभूति हार्दिक भावों में भरी हुई अत्यंत सूक्ष्मता से प्रकट हुई है। प्रेम और वासना का अन्तर तथा प्रेम की सात्विक अनुभूतियाँ इनके काव्य में सर्वत्र दिखाई देती है। जैसे-

रो रो कर सिसक सिसक कर
कहता मैं करूण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी।

रहस्यवाद :

प्रकृति की राह से छायावाद का कवि रहस्यवाद के क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ। प्रसाद जी ने भी ईश्वर की अवर्णनीय पृथक रहस्यपूर्ण सत्ता को प्रकृति के पीछे उपस्थित पाया था। उनके प्रति जिज्ञासा, विरह और मिलन की विविध दशाओं को रहस्यवाद के अंतर्गत प्रसाद जी ने निरूपित किया है।

जैसे-

1. हे अनन्त रमणीय! कौन तुम?
   यह मैं कैसे कह सकता?
   कैसे हो? क्या हो?

इसका तो भार विचार न सह सकता।

2. सिर नीचा कर जिसकी सत्ता सब करते स्वीकार यहाँ
   सदा मौन हो प्रवचन करते, जिसका वह अस्तित्व कहां?

पलायनवाद :

सांसारिक उलझनों, बाधाओं, निराशाओं, पराजयों आदि को देखकर छायावाद के कवि ने जीवन के कटु यथार्थ से दूर चले जाने में ही सुखद अनुभूतियों का अनुभव किया था। प्रसाद जी भी इरा कोलाहलमयी धरती को छोड़कर निर्जन एकांत में चले जाने को प्रसन्द करते थे-

ले चल मुझे भुलावा देकर
मेरे नाविक धीरे-धीरे
जिस निर्जन में सागर लहरी
अंबर के कानों में गहरी
निश्च्छल प्रेम कथा कहती हो
तज कोलायत ही अवनी रे।

दार्शनिकता :

प्रसाद जी ने अपनी अमर रचना 'कामायनी' में कश्मीरी शैव दर्शन की शाखा के प्रत्यभिज्ञा दर्शन को काव्य की प्राणधारा के रूप में निरूपित किया है। उन्होंने वेदों, पुराणें, उपनिषदों के साथ-साथ बौद्ध, शैव, शान्त, वैष्णव दर्शन को अपने काव्य के माध्यम से प्रकट किया है। प्रसाद जी मूलत: तत्वदर्शी चिंतक थे। 'कामायनी' में इच्छा, क्रिया, ज्ञान की समरसता को प्राप्त करने पर ही अखण्ड आनन्द की अनुभूति का कारण बतलाया है। इनके अनुसार जड़ -चेतन की यह समरस अवस्था ही परम तत्व को साकार कर देती है।

समरस थे जड़ और चेतन
सुन्दर साकार बना चेतनता एक विलसती
आनन्द अखण्ड घना था।

14.6 कलापक्ष (संरचना शिल्प)

प्रसाद जी के काव्य का कला पक्ष भी उतना ही सबल और जीवन्त है जितना की उनके साहित्य में भाव पक्ष दिखाई देता है। उनका काव्य शिल्प एवं अभिव्यंजना कौशल उनकी साहित्य की भाषा, शैली, प्रतीक, बिंब, अलंकार इत्यादि सभी में स्पष्ट दिखाई देता है। उसकी कुछ विशेषताएं इस प्रकार है -

भाषा सौंदर्य :

प्रसाद जी शुद्ध साहित्यिक भाषा के कुशल चितेरे हैं। इन्होंने संस्कृत के तत्सम शब्द, बहुला भाषा का सर्वत्र प्रयोग किया है। पात्रों के मनोभावों एवं अंतर्द्वद्वों को चित्रित करने में इनकी भाषा पूर्ण समर्थ है। भावों एवं प्रसंगों के अनुरूप इनकी भाषा का स्वरूप भी बदलता जाता है। भाषा में सहज प्रवाह है और वह मार्मिक अभिव्यंजना करने में पूरी

तरह से समर्थ है। लाक्षणिकता इनके काव्य की वह विशेषता है जो समस्त छायावादी काव्य में समान रूप से दिखाई देती है। इन्होंने देशज, विदेशी और तद्भव शब्दों से सर्वत्र परहेज किया है। इनकी भाषा में छमारता, सरसता के साथ-साथ प्रसाद जी के व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट दिखाई देती है।

प्रतीक विधान :

प्रसाद जी ने काव्य में अपने अभिप्रेत अर्थ को प्राप्त करने के लिए प्रतीकों का पर्याप्त सहारा लिया है। कामायनी में तो मनु, श्रद्धा और इड़ा क्रमश: मन, हृदय और बुद्धि के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं। संगीत, मूर्तिकला, प्राकृतिक उपादान, सभी से इन्होंने आवश्यक प्रतीकों का चयन करते हुए अपने काव्य में सौंदर्य भरने की चेष्टा की है। जैसे-

1. बिखरी अलकें ज्यों तर्कजाल
2. उठ उठ री लघु-लघु लोल लहर

बिंब विधान :

बिंब के माध्यम से कवि किसी वस्तु या पदार्थ का मानचित्र प्रस्तुत करता है। बिंब को भावयुक्त शब्द चित्र भी कहते हैं। प्रसाद जी के काव्य में अमूर्त को मूर्त विधान का चमत्कारिक प्रयोग किया गया है। भावों को स्थापित करने के लिए चित्र भाषा का कथात्मक प्रयोग करने के लिए प्रसाद जी ने संस्कार, स्वानुभूति के आधारपर बिंबों की रचना की है।

सिंधु सेज पर धरा वधु अब
तनिक संकुचित बैठी सी
प्रलय निशा ही हलचल स्मृति में
मान किए सी ऐंठी सी।

अलंकार विधान :

प्रसाद जी ने परिश्रमपूर्वक अलंकारों को अपने काव्य में स्थान नहीं दिया है। उनके काव्य में सादृश्यमूलक, वैषम्यमूलक तथा मानवीकरण आदि अलंकारों का सहज प्रयोग दिखाई देता है। कुछ उदाहरण -

उपमा	–	उसी तपस्वी से लंबे थे देवदास दो चार खड़े
रूपक	–	अंबर पनघट में डुबो रही तारा घट उषा नागरी
मानवीकरण	–	कोमल किसलय के अंचल में नन्ही कलिका ज्यों छिपती सी गोधूलि के धूमिल में दीपक के स्वर में दीपति सी।

छंद विधान :

प्रसाद जी ने भावों की गेयतापूर्ण अभिव्यक्ति के लिए छन्दों का पर्याप्त सहारा लिया है। इन्होंने मात्रिक छंदों का ही प्रयोग किया है। कामायनी में पद्धति, पादाकुलक, तारक,

सार, रूपमाला आदि छंदों का प्रयोग हुआ है। ' आंसू में इन्होंने नए छंद का प्रयोग किया है। इन्होंने बंगला के 'त्रिपदी' और 'पयार' नामक छंद का भी सुंदरता से उपयोग किया है। पेशोला की प्रतिध्वनि में इन्होंने मुक्तछंद का प्रयोग भी किया है। प्रसाद जी ने शास्त्रीय दृष्टि से छंदों का सार्थक उपयोग करते हुए कुछ मौलिक प्रयोग भी किए हैं जो उनकी विशिष्ट कवयित्री प्रतिभा को सूचित करते हैं।

14.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आप आधुनिक हिंदी साहित्य के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण काव्य आंदोलन छायावाद की काव्य प्रवृतियों के बारे में जान सकते हैं। जयशंकर प्रसाद ने इस काव्यधारा में ही नहीं संपूर्ण हिंदी साहित्य में अपने मौलिक साहित्य सृजन से विशिष्ट स्थान बनाया है। उनकी समरता के सिद्धान्त को प्रकट करने वाली कामायनी हिंदी साहित्य की श्रेष्ठतम रचना के रूप में परिगणित है। प्रसाद का काव्य इतिहास, संस्कृति और दर्शन का अद्भुत संगम कहा जा सकता है। सौंदर्य की अद्‌वितीय दृष्टि सर्वत्र इनके काव्य की शोभा बढ़ाते हुए दिखाई देती है। इनके काव्य संसार का भावजगत प्रेम, सौंदर्य, करूणा एवं आनंद के भावों से भरपूर है। इनकी भाषा, शैली, अलंकार विधान एवं छंद विधान कवि के अद्भुत अभिव्यंजना कौशल को प्रकट करते हैं।

14.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. प्रसाद साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि - डॉ. प्रेमदत्त शर्मा
2. छायावाद के आधार स्तम्भ - संपा, रामजी पाडेंय
3. प्रसाद का काव्य - डॉ. प्रेमशंकर
4. छायावादी काव्य - डॉ. कृष्णचन्द्र वर्मा
5. जयशंकर प्रसाद - रमेशचन्द्र शाह

14.9 प्रश्न एवं अभ्यास

1. प्रसाद के व्यक्तित्व एवं जीवन का परिचय दीजिए।
2. प्रसाद के रचना संसार की जानकारी दीजिये।
3. प्रसाद के काव्य में प्रेम और सौंदर्य का निरूपण कीजिये।
4. प्रसाद के भावपक्ष में सौंदर्य को अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।
5. प्रसाद की भाषा- शैली की विशेषताएँ बतलाइये।

इकाई 15 गीत - ताराप्रकाश जोशी

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 कवि परिचय

15.3 काव्य वाचन

15.4 व्याख्याएँ

15.5 भावपक्ष

15.6 कलापक्ष (संरचना शिल्प)

15.6.1 गीति काव्य का स्वरूप

15.7 सारांश

15.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

15.9 बोध प्रश्न/अभ्यास

15.0 उद्देश्य

अनिवार्य हिन्दी पाठ्यक्रम की यह सतरहवीं इकाई है। इसमें आप राजस्थान के प्रसिद्ध गीतकार ताराप्रकाश जोशी की कुछ रचनाओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़कर आप -

- तारा प्रकाशजोशी के व्यक्तित्व के बारे में बता सकेंगे।
- गीत साहित्य के स्वरूप को समझा सकेंगे।
- तारा प्रकाश जोशी की रचनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- तारा प्रकाश जोशी की रचनाओं में काव्य सौंदर्य की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- तारा प्रकाश जोशी के गीतों की संरचना शिल्प को स्पष्ट कर सकेंगे।
- तारा प्रकाश जोशी की मानवीय आस्थाओं के बारे में जान सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के आदिकाल के समय से ही राजस्थान में साहित्य की उज्जल परम्परा का सूत्रपात हो चुका था। उस समय डिंगल में रचित रासो साहित्य आज भी संपूर्ण हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि बना हुआ है।भक्तिकाल में प्रेम दिवानी मीराँ के कृष्ण भक्तिपूर्ण गीत आज भी जन-जन के कंठों में बसे हुए हैं। रीतिकाल में भक्ति, लार और नीति की त्रिवेणी को बहाने वाले बिहारी की सतसई नाविक के तीरों की तरह आज भी पाठकों के हृदयों में गहरा घाव करने में समर्थ हैं।

देश की आजादी के बाद मिली राजनीतिक स्वाधीनता से उत्फुल्ल इस मरू प्रदेश में कवियों की परम्परा के समानांतर गीतकारों का एक नवीन वर्ग उभर कर सामने आया। गीतों की रोमांटिक भावधारा के साथ-साथ इस प्रदेश के गीतकारों ने युगीन मानवीय

पीड़ाओं के मध्य से मानवीय आस्थाओं को सबल अभिव्यक्ति प्रदान की। इनमें धारा के बीच रहते हुए भी धारा से अलग अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने वाले गीतकार के रूप में तारा प्रकाश जोशी को देखा जा सकता है। स्वभाव से भावुक गीतकार डॉ. जोशी ने अपने गीतों में गेयता के साथ-साथ सहजता और काव्यात्मक गरिमा को बनाए रखा। मंचीय गीतकार होते हुए भी आपने गीतों के निजी स्वरूप से कभी समझौता नहीं किया। पाठकों की हृदयतंत्री को झंकृत कर देने वाली अद्‌वितीय स्वर लहरी इनके गीतों में प्रकट हुई है। तारा प्रकाश जोशी गीतों से केवल हृदय पक्ष की कोमलता को ही मुखरित नहीं करते हैं वरन् अपनी मानवीय आस्थाओं को भी सदैव प्रकट करते रहे हैं।

यह सत्य है कि कविता कवि के मनोगत भावों का सहज रूप में अनायास ही प्रकट होने वाला अनवरत अजस्र प्रवाह होता है। लेकिन बहुश्रुत और बहुज्ञता कवि के भावों को विस्तार और ग्राह्यता प्रदान करती है। तारा प्रकाशजोशी ने पाश्चात्य एवं भारतीय रचनाकारों को विस्तार से पढ़ा है स्वयं मानते है कि उनकी रचनाओं पर सूर, कबीर के साथ-साथ रवीन्द्रनाथ टेगौर और काजी नजरूल इस्लाम की रचनाओं का गहरा असर है। अपने समकालीन राजस्थानी कवियों की कविताओं ने भी इनके लिए प्रेरणा का कार्य किया है।

इस इकाई में हम ऐसे मनीषी, विचारक और भावुक हृदय गीतकार तारा प्रकाश जोशी की कुछ रचनाएँ आपके अध्ययन के लिए दे रहे हैं।

15.2 कवि परिचय

राजस्थान के प्रमुख गीतकार तारा प्रकाश जोशी का जन्म 25 जनवरी 1933 को जोधपुर के एक साहित्य प्रेमी परिवार में हुआ। आपके पिता श्री मोहन लाल जी जोशी स्वयं एक अच्छे कवि एवं संगीत मर्मज्ञ थे। आपके बड़े भाई सत्य प्रकाश जोशी तो आधुनिक राजस्थानी साहित्य के मूर्धन्य कवि के रूप में प्रीतष्ठित हैं। कविता के संस्कारी परिवेश में पैदा हुए तारा प्रकाश जोशी को एक प्रकार से कविता जन्मजात संस्कारों के रूप में मिली। संस्कार के चाक पर तराश - तराश कर तारा प्रकाश जोशी कविता करना नहीं सीखे हैं वरन् ये तो जन्म से ही कवि है। संस्कारशील, दुराग्रहों से अछूत तथा पाक साफ कवि हैं।

तारा प्रकाश जोशी एम.ए. हिन्दी, साहित्य रत्न की उपाधि प्राप्त है। आपने शोध कार्य लिखकर पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। एम.ए. की डिग्री आपने स्वर्ण पदक के साथ अर्जित की थी। शिक्षा प्राप्त कर आप अध्यापक बनना चाहते थे किन्तु आपका चयन भारतीय प्रशासनिक सेवाओं में हो गया। आई.ए.एस. अधिकारी के रूप में आपने राजस्थान के अनेक विभागों में सेवाएँ दी। प्रशासनिक अधिकारी के रूप में कार्य करते हुए भी आपने अपने कवि को कभी स्वयं से अलग नहीं होने दिया। जीवन को अत्यन्त सहजता से अंगीकार करने वाले तारा प्रकाश जोशी आडम्बरों से सदैव दूर रहे और आजीवन साहित्य सेवा करते रहे। आपकी साहित्य सेवाओं के लिए राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर ने आपको विशिष्ट साहित्यकार के सम्मान से अलंकृत किया है।

रचनाएँ : -

तारा प्रकाश जोशी राजस्थान के सफल गीतकार हैं। लेकिन उन्होंने मंच की लोकप्रियता के कारण अपने गीतों को कभी भी साहित्यक गौरव से नीचे नहीं गिरने दिया। वैसे भी मरूस्थल की माटी की गंध से सरोबार राजस्थानी प्राकृतिक पीरवेश,यहाँ की सोने सी पसरी रेत और यहाँ के सांस्कृतिक सम्पन्न परम्पराएँ गीत रचना के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पृष्ठभूमि का निर्माण करते हैं। स्वयं कहते हँ 'सद्य: परिनिर्वृत्तये' के लिए गीत लिखता हूँ। कविता लिखता हूँ पर मेरे गीत लिखने में एक मात्र यही प्रयोजन रहा हो सो भी नहीं। मैंने सदा "शिवेतरक्षतये" के प्रयोजन को अपनी दृष्टि में रखा है।

आपके प्रकाशित काव्य संग्रह - 1 कल्पना के स्वर 2. समाधि के प्रश्न (खण्ड काव्य) 3. शंखों के टुकड़े 4. जलते अक्षर।

15.3 काव्य वाचन

तारा प्रकाश जोशी राजस्थान के प्रमुख गीतकार हैं। इन्होंने प्रेम, प्रणय, देशप्रेम, प्रगतिशील भावों वाले तथा मानवीय आस्थाओं से ओत प्रोत गीत लिखे हैं। आपके वाचन के लिए यहाँ उनके दो गीत दिए जा रहे हैं. -

गीत

मेरा वेतन ऐसे रानी
जैसे गरम तवे पर पानी।।
एक कसेली कैंटीन से
थकन उदासी का नाता है।
वेतन के दिन सा निश्चित ही
पहला बिल उसका आता है।।
हर उधार की रीत उम्र सी
जो पाई है सो लौटानी।।
दफ्तर से घर तक फैले हैं
ऋणदाता के गर्म तकाजे।
ओछी फटी हुई चादर से
एक ढकूँ तो द्वी लाजे।।
कर्जा लेकर कर्ज चुकाना
अंगारों से आग बुझानी।।
फीस, ड्रेस, कॉपियाँ, किताबें
आगन में आवाजें अनगिन।
जरूरतों से बोझिल आता
जरूरतों में ढल जाता दिन।।
अस्पताल के किसी वार्ड से
घर में सारी उम्र बितानी।।

ढली दुपहरी सी आई हो
दिन समेट टूटे पिछवाड़े।
छाया सी बढ़ती उधड़न से
झाँक रहे हैं अंग उघाड़े।।
तुझको और दिलासा देना
रिसते घावों कलि चुभानी।।
ये अभाव के दिन लावे से
घुटते तेरे मेरे मन में।
अग्नि गीत तनकर फूटेंगे
गाँवों- शहरों में जन-जन में।।
जिस दिन नया सूर्य जन्मेगा
तेरे जूड़े कली लगानी।।

कठिन शब्द : - कसेली- धुएँ से भरी हुई रीति (तरीका), ऋणदाता-उधार देने वाले, रिसते घाव-मवाद टपकाते घाव।

1. आ रे आ बादल

आ रे आ, अनजनमे बादल।
बढ़ता जाये मन का मरुथल।
आ रे आ ! अनजनमे बादल।।
जाने कितने पावस बीते
तेरी पगध्वनियाँ घर आये।
पग ध्वनियाँ तो पगध्वनियाँ हैं
उनकी प्रतिध्वनियाँ घर आये।।
द्वारे सन्नाटे की साँकल
आ रे आ अनगरजे बादल।।
पुरवैया का कोई झोंका
आये यों मुझ तक भी आये।
जैसे पनिहारिन का आँचल
हारे पंथी को छू जाये।।
झुलसा जाये तृण-तृण जंगल।
आ रे आ अनबरसे बादल।।
जग की अनदेखी कर मैंने
तेरे कितने रूप रचाएँ।
ज्यों कोई अधाभिखमंगा
दाता के अनुमान लगाये।।
पुतली घायल सपने घायल।
आ रे आ अनदरसे बादल।।

मैं जनमों जनमों का प्यासा
नभ में ऐसे बादल छाये।
ज्यों कावडिये नष्ट तीर्थ से
खाली कावड़ लेकर आये।।
सूखा जाये जीवन शतदल।
आ रे आ अनबरसे बादल।।
तेरी अनसूँघी सौरभ हित
असवाड़े पसवाड़े जागे।
जैसे कस्तूरी के पीछे टीलों टीलों हिरणा भागे।।
टूटा जाये साँसों का बाल।
आ रे आ अनमहके बादल।।
आ मुझ अथहारे के बादल।
आ मुझ इतिहारे के बादल।
सारी उम्र उड़ीक हो गई
आ मुझ गतिहारे के बादल।।
सिमटी जाये जर्जर कामल
आ रे आ अनबिनसे बादल।।

कठिन शब्द :- अनजनमे-जो पैदा हनी हुआ है, मरूथल-रेगिस्तान, पगध्वनियाँ-पैरों की आवाजें, पुरवैया-पूर्वी दिशा से आने वाली हवा, कावडिये-पवित्र जल के घड़ों को कन्धे पर रखी कावड़ में ढोने वाले भक्त, शतदल-कमल, अनमहके-बिना महक वाला, कामल-कंबल।

15.4 व्याख्याएँ

कवि ताराप्रकाश जोशी जी की कविताओं में से कुछ महत्वपूर्ण पदों की व्याख्या निम्न प्रकार से दी जा रही है। विद्यार्थी इन व्याख्याओं को समझ कर सप्रसंग व्याख्या करने का अभ्यास करें।

(1) मेरा वेतन ऐसे रानी..... अंगारों से आग बुझानी।

प्रसंग : -

प्रस्तुत पंक्तियाँ मानवीय आस्था के सजग प्रहरी गीतकार तारा प्रकाश जोशी के प्रसिद्ध गीत 'मेरा वेतन' से ली गई हैं। आज के जीवन परिवेश में नौकरी पेशा व्यक्तियों की दर्दीली परिस्थितियों को वाणी देने के लिए इस गीत की रचना की गई है। मध्य वर्ग एवं निम्न मध्य वर्ग के व्यक्ति के लिए परिवार के भरण-पोषण के लिए नौकरी करना जरूरी होता है। लेकिन नौकरी से उसको इतना वेतन नहीं मिल पाता है कि वह सुख-चैन से जीवन यापन कर सके। ऐसे में व्यक्ति का जीवन थकान, ऊब, बैचेनी, उदासी और अजीब से खालीपन से भर जाता है। उसका सारा जीवन एक कर्ज उतारने से लेकर दूसरी उधारी के बीच ही फँसकर रह जाता है। ऐसी ही मार्मिक अनुभूतियों को कवि ने यथार्थ के जीवन धरातल पर कड़वी सच्चाइयों को उजागर करते हुए प्रकट किया है।

व्याख्या: -

इन पंक्तियों में गीतकार तारा प्रकाश जोशी ने एक नौकरी पेशा व्यक्ति की जीवन अनुभूतियों की नंगी सच्चाइयों को प्रस्तुत किया है। गर्म तवे पर पानी के छींटे डालने पर वे जिस तरह एक क्षण में ही भाप बनकर उड़ जाते हैं। तपे पर डालने के साथ ही पानी का अस्तित्व गायब हो जाता है। ऐसे लगता है जैसे वह पानी तवे पर डाला ही नहीं गया हो। उसी तरह साधारण सी नौकरी करने वाले व्यक्ति के वेतन की स्थिति होती है। पहली तारीख को वेतन मिलता तो है लेकिन वह फीसों, ड्रेसों, कापियों, किताबों, पुरानी उधारी को चुकाने में ही चला जाता है। ऐसे में व्यक्ति का अपनी थकान और उदासी को मिटाने के लिए चाय की कैंटीनों में बैठा करता है। कैंटीन के कसैले धुएँ से भरे दम घोंटू वातावरण में यों निरूद्देश्य समय गुजारना उसकी मजबूरी बन जाता है। नौकरी का संबंध उदासी और निराशा से तथा इनसे मुक्ति कैंटीन में ही मिल पाती है। इस कारण ऐसे नौकरी पेश। व्यक्ति के लिए इन सबका गहरा रिश्ता बन जाता है। यह बात तो सच है कि नौकरी पेशा को प्रत्येक माह की पहली तारीख को वेतन मिल जाता है लेकिन यह बात ही उतनी ही सब है कि वेतन मिलने के साथ ही सबसे पहले उसे कैंटीन वाले का ही बिल चुकाना पड़ता है। क्योंकि पिछली उधारी चुकाने पर ही व्यक्ति को नई उधारी का हक प्राप्त होता है और इस तरह उधार लेने और चुकाने का यह सिलसिला अनवरत चलता रहता है। नौकरी पेशा व्यक्ति की सारी उम्र प्रति माह किए जाने वाले इसी तरह के लेन देन में ही व्यतीत हो जाती है। ऋणदाताओं के गर्म तकाजे व्यक्ति के दफ्तर से लेकर घर तक फैले रहते हैं। उनके मकड़जाल में नौकरी पेशा व्यक्ति इतना उलझ जाता है कि उसका जीवन तो फटी चादर को खींच खींचकर तन ढकने में ही बीत जाता है। जैसे फटी चादर से एक अंग ढकने पर दूसरा उधड़ आता है वैसे ही एक् उधार चुकाने फिर दूसरी उधारी के तकाई शुरू हो जाते हैं। जैसे अंगारों से आग नहीं बुझाई जा सकती है वैसे ही उधार लेकर उधार चुकाने से जीवन की खुशहाली नहीं प्राप्त की जा सकती है। व्यक्ति की सारी उम्र इसी तरह की खींचतान में व्यतीत हो जाती है।

विशेष : -

1. नौकरी पेशा व्यक्ति के जीवन के यथार्थ को मार्मिक अभिव्यक्ति की गई है।
2. वेतन की नगणयता को गर्म तवे की पानी से तुलना अनूठी उपमा है।
3. भाषा में सहजता एवं बिम्ब खड़ा करने की क्षमता है।

(2) आ रे आ अनजनमे बादल.... अनगरजे बादल

संदर्भ :-

प्रस्तुत पंक्तियाँ मानवीय करूणा को भावुकता भरे गीतों में ढाने वाले राजस्थान के प्रसिद्ध गीतकार तारा प्रकाश जोशी के ' आ रे आ बादल' गीत में से ली गई है। जीवन की नीरसता मरूस्थल सा विस्तार प्राप्त कर लेती है। तब सूखापन, बंजरता जीवन का परम सत्य बन जाती है। जिस तरह सूखा मरूस्थल बड़ी अधीरता से बादलों की प्रतीक्षा करता है उसी तरह कवि अपने जीवन के सूनेपन को भरना चाहता है। प्रतीक्षाकी यह लम्बी कभी न खत्म होने वाली घड़ी उस बैचेनी को और भी अधिक बढ़ा देती है। जिससे हर

कोई बचना चाहता है। एकाकीपन की त्रासदी से संत्रस्त व्यक्ति की सहज मानवीय अनुभूतियों को इस गीत में कवि ने सरस फुहारों से भिगो देने वाले बादल से उपमित करते हुए प्रकट किया है।

व्याख्या : -

द्रवित मानवीय करूणा भाव से भरे हुए इस गीत में तारा प्रकाश जोशी ने मन की बात को प्रतीकों के सहारे व्यक्त किया है। सदियों का प्यास, गर्मी, तू और धूप से आकुल मरूस्थल बादलों को बड़ी अनुनय विनय से पुकारते हुए वर्षा करने की पुकार लगाता है वैसे ही कवि अपने जीवन में फैले सूनेपन और नीरस सूखेपन से मुक्ति पाने के लिए सुखद प्रसंगों रूपी बादलों को पुकारता है यहाँ बादल के लिए अत्यन्त सटीक अनजनमे का विशेषण प्रयुक्त किया गया है जो बादल अभी तक बना ही नहीं है, जिसे अभी अतीत में आना है उसकी उत्सुकता भरी टैर इस गीत में की गई है। आधियों- लूओं के थपेड़ों से मरूस्थल का फैलाव बढ़ता ही जाता है इसीलिए उससे मुक्ति के लिए कवि इस गीत में अजन्मे बादल को पुकार लगाता है। उसके अनुसार हे बादल! तू शीघ्र आ मेरे मन के बढ़ते मरूस्थल को रोक दे। जिससे किसी तरह मेरे इस सूने - उजाड़ मन में शीतलता और शक्ति का अनुभव हो सके।

मरूस्थल के प्यासेपन के प्रतीक से कवि कहता है कि हे बादल! तेरी प्रतीक्षा में न जाने कितनी वर्षा ऋतुएँ बीत गई हैं। तेरे चरणों की पगध्वनियों सुनने के लिए आतुर मेरे कान अत्यंत व्याकुल है। पगध्वनियाँ जो क्या उन कदमों की गज की प्रतिध्वनियाँ सुने हुए भी लम्बा अरसा हो गया है! जैसे मनचीते पाहुन के पैरों की आहट सुनने के लिए सारे घर में उत्सुकता भरी प्रतीक्षा रहती है वैसे ही उत्साह को भर देने वाले सरस बादलों की प्रतीक्षा कवि कर रहा है। उनके नहीं आने तक घर के आपन सूने सूने से रहते हैं। मानों सन्नता घर के द्वार पर सांकल की तरह चढ़ा रहकर भीतर खुशियाँ नहीं आने देता है। इसलिए हे बादल भले ही तू गर्जना मत कर लेकिन तू मेरे आगन में फुहारें करदे जिससे जीवन की नीरसता, उजाड़, एकाकीपन, सूनापन, सूखापन सभी एक साथ पूरी तरह से समाप्त हो जाए और जीवन में खुशियाँ, आनन्द और उत्साह नए सिरे से भरे जाए।

विशेष : -

1. भाषा में लोकतत्वों का प्रभावशाली ढंग से समावेश किया गया है।
2. मरूस्थल को मन के सूनेपन की सुंदर उपमा दी गई है।
3. गीत में मार्मिकता और करूणायित भाव है।

15.5 भाव पक्ष

तारा प्रकाश जोशी एक सफल गीतकार हैं। गोस्वामी तुलसीदास की तरह इन्होंने 'स्वान्तः सुखाय' रचना करते हुए भी अपने गीतों के द्वारा मानवीय रागात्मक अनुभूतियों को 'समाज हिताय' प्रस्तुत किया है। इन्होंने गीत विधा में सहजता बनाए रखते हुए भी उसकी गरिमा बनाए रखी। गीतों में सायास और ओढी हुई गेयता को खींच लाने की जगह उनमें सहज ध्वन्यात्मकता के द्वारा उन्हें गंभीरता प्रदान की। ये ओजस्वी स्वरों में

चुनौती देना भी जानते हँ तो अपने गीतों में कोमल इन्द्रधनुषी कल्पनाओं के रंग भी भरना जानते हैं। जीवन के समस्त खुरदरेपन, भौंतरेपन के विद्यमान रहते हुए भी आस्था और विश्वास के स्वरों को सदैव मुखरित किए रहते हैं। कहीं इन्होंने राजस्थान में निरन्तर पड़ने वाले दुष्कालों के सटीक चितराम अंकित किए है तो कहीं शाश्वत दर्शन को इन्होंने गीतों का विषय बनाया है। प्रेम की शाश्वता को अभिव्यक्त करने वाले गीत भी हैं तो हृदय के कोमल पक्षों को मानवीय आस्था के उच्चतम धरातल पर प्रतिष्ठित कर उसे नवीन ऊँचाईयाँ प्रदान करते हैं।

इनके गीत यथार्थ जीवन की प्रत्यक्ष घटनाओं को भी काव्य विषय बनाते हैं। नेहरू जी के स्वर्गवास पर समाधि के प्रश्न जैसे खंडकाव्य की रचना समसायिक स्थितियों के प्रति कवि मन की जागरूक चिंताओं को प्रकट करता है। नेहरू जी की मृत्यु के बाद लिखित एवं छपित इस संकलन में जो प्रश्न कवि ने उठाए हैं उनमें आक्रोश और तल्खी है। कवि की जागरूक सामाजिकता ने सामाजिक- आडम्बर और शोषण के विभिन्न आयामों पर निर्ममता से प्रहार किया है। स्वयं कवि के शब्दों में 'श्री नेहरू की समाधि के व्याज से मेरा विचारक अपनी संपूर्ण शक्ति से विशेषकर शिवेतर के नाश हेतु इस काव्य में आया है। मैंने श्री नेहरू के सर्वजयी एवं सशक्त व्यक्ति के संबद्ध पावन समाधि के ब्याज से घृणा, कुत्सा, शोषण, युद्ध की आशंका, निराशा, हिंसा और अंधविश्वास पर भरपूर प्रहार किया है।' दुनिया के मायावी रूप का अंकन कवि ने यों किया है -

"इस दुनिया में
हर मनुष्य की
सूरत वाला
अपने दिल से भी मनुष्य हो
यह शायद अनिवार्य नहीं है। "

इनके गीतों में पीड़ा के साकार दर्शन होते हैं। वे कहते हैं :-

"सब परदे हटवादो मुझको
पीड़ा के दर्शन करने दो। "

तारा प्रकाश जोशी संघर्षों से घबराने की नहीं उनसे जूझने की प्रेरणा देते हैं। इनके अनुसार जिस पत्थर पर चोट अधिक पड़ती है उसका हर कण विद्युत कण होता है। इसी कारण ये मानवीय आस्थाओं के सफल पहरेदार है। विश्वासों का गुलाब भी काँटों के बीच ही खिला करता है-

"विश्वासों का हर गुलाब
काँटों के बीच खिला करता है।"

ये अपने युग और परिवेश के प्रति सदेव सजग रहे हैं। राम निवास शाह के शब्दों में 'व्यावसायिक वृत्ति, बाहरी दबाव या काव्यान्दोलनों में प्रतिठा पाने की लालसा से जोशी जी सृजनरत नहीं हुए हैं और न ही जोशी जी ने सुदूर पश्चिम से आती हुई बहुरूपी ध्वनियों और महानगरों की प्लास्टिकी फिजाओं को अनुकरणीय ही माना है।'

आम आदमी के अभावों जनित जीवन दशाओं के यथार्थ में से भी इनके गीतों ने अपना रास्ता तय किया है जैसे : -

"खाने को कोरी उबासियाँ
पीने को आँखों का पानी
जैसे दुःख ने दुःख से कह दी
ऐसी मेरी राम कहानी। "

गीतों में राष्ट्रीय भावनाओं को भी पर्याप्त मात्रा में अभिव्यक्त किया गया है। राष्ट्र के प्रति समर्पित सीमा की रक्षा के लिए समर्पित सैनिकों के नाम सलाम करते हुए कवि उनका आह्वान करता है कि उन्हें इस देश के लिए पूरी तरह से मर मिट जाना है। मिट्टी का मान और पूजन करना ही कवि का इष्ट है-

"युगों युगों से मेरे मन में
मान बहुत मेरी मिट्टी का
सोने की मूरत हटवा दो
मिट्टी का पूजन करने दो।"

15.6 कला पक्ष (संरचना शिल्प)

15.6.1 गीतिकाव्य का स्वरूप

तारा प्रकाश जोशी के गीतों के सफल रचनाकार हैं। गीतकार तारा प्रकाश जोशी के गीतों के संरचना शिल्प की विशेषताओं को जानने के लिए सर्वप्रथम गीतिकाव्य के स्वरूप को जान लेना जरूरी है। हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार ' 'कवि की वैयक्तिक भावधारा और अनुभूति को उनके अनुरूप लयात्मक अभिव्यक्ति देने के विधान को गीतिकाव्य कहते हैं।" वह उन पूर्ण और समग्र क्षणों की वाणी है, जिनकी स्थिति में वे क्षण ही पूर्ण और समग्र जीवन प्रतीत होते हैं।

पाश्चात्य साहित्य में गीतिकाव्य को "लिटिक पोएट्री" कहा जाता है। इसका एक ब्राह्य लक्षण उसकी पूर्वापर प्रसंग निरपेक्षता अवश्य है और इस कारण यह मुक्तक के अंतर्गत आ जाता है। गीतिकाव्य के स्वरूप को स्पष्ट करने वाले निम्नलिखित तत्त्व होते हैं।

1. गीतिकाव्य व्यक्ति प्रधान होता है। इसमें कवि की सुख-दखस्मक भावनाएँ या आत्मनिवेदन प्रमुख होता है।
2. गीतिकाव्य में संगीतात्मकता का होना अनिवार्य है। इसकी गेयता संगीत के शास्त्रीय पक्षों और नाद सौन्दर्य से प्रकट होती है।
3. गीतिकाव्य में भावों की तीव्रता और भावावेश की प्रबलता जरूरी है।
4. इसमें कोमलकांत पदावली का प्रयोग किया जाता है। ललित पद योजना एवं चित्रात्मकता इसकी पदावली के आवश्यक गुण हैं।
5. गीतिकाव्य में भावों की अन्विति का होना अनिवार्य है। ये भाव समन्वित रूप में गहराई के साथ प्रस्तुत किए जाते हैं।

15.6.2 गीतों का कलापक्ष

तारा प्रकाश जोशी सफल गीतकार हैं। इनके गीत अपनी गेयता एवं समन्वित रूप में भावों के प्रकाशन में पूर्णत: समर्थ है। गेयता, भाव गांभीर्य, कवि मन की विराट चेतनानुभूतियाँ और समष्टि के प्रति व्यष्टि का समर्पण इनके गीतों की निजी विशेषताएँ हैं।

गीतिकाव्य के तत्वों के आधार पर इनके संरचना शिल्प को इस रूप में देखा जा सकता है :-

1. भावाकुलता : -

इनके गीत आद्योपान्त भावों से भरे हुए है। रामनाथ कमलाकर के शब्दों में 'उनके समवयस्क कवियों की अपेक्षा तारा प्रकाश जोशी में विशेषता यह है कि जहाँ अन्य कवियों की अपेक्षा में आधुनिकता के मोह के कारण रस की कमी है, वहाँ जोशी के काव्य में रस की धारा निरन्तर प्रवाहमान है। एक खूबी और भी है और वह यह कि दर्द उनके काव्य में घनीभूत है। अंतर्वेदना की दृष्टि से उनके गीतों में महादेवी वर्मा जैसी करूणा के दर्शन होते हैं, जो अत्यंत ही मार्मिक है। '

2. संक्षिप्तता : -

गीतिकाव्य के लिए संक्षिप्तता आवश्यक है। वैसे भी अनुभूति की भावाकुलता तथा उसकी तीव्रता अल्प समय तक ही रह सकती है अत: गीतों में अनुभूति की अखंडता को बनाए रखने के लिए प्रभाव बनाए रखने वाली संक्षिप्तता अनिवार्य है। जोशी के गीतों में संक्षिप्तता का यह गुण पूरी तरह से विद्यमान है। इसके लिए इन्होंने सार्थक शब्दों का प्रयोग करते हुए चित्रात्मकता पैदा करने का सफल प्रयास किया है -

"कूड़े के ढेरों से
नाज बीन लाती है।
दो भूखी जूणों में
एक बार खाती है। "

3. वैयक्तिकता : -

गीतों में व्यैक्तिकता से अभिप्राय कवि के निजी जीवन के सुख दुख, हर्ष-विवाद आदि को चित्रित करने से है। जहाँ गीतकार अपने निजी जीवन से बाहर जाकर गीत रचना करता है वहाँ भी शब्दों और अभिव्यक्तियों में निजता का संस्पर्श बहुत जरूरी है। गीतकार घटनाओं का नहीं बल्कि उनके प्रभावों का अंकन करता है। इसी कारण गीतों में चित्रित भावनाएँ समान रूप से सबको आनंदित कर देती है। जोशी जी के गीतों में वैयक्तिकता का यह संस्पर्श सभी गीतों में दिखाई देता है जैसे -

"जाने कैसे आज स्वयं ही
तार कस गये हैं सितार के
कोई राग जगाता हूँ पर
स्वर लग जाते हैं बहार के।

4. संगीतात्मकता : -

गीत रचनाएँ वस्तुत कविता और संगीत का मिला जुला रूप लिए रहती है। इसमें एक ओर भाव प्रवणता कल्पना की मौलिक उड़ान काव्य तत्व को प्रकट किए रहती है तो दूसरी ओर संगीत की राग -रागनियों के आधार पर संयोजित कोमलकांत पदावली पाठकों को संगीत का आनन्द प्रदान करती है। जोशी जी के गीतों में काव्य तत्व की प्रधानता होते हु ए भी उनमें संगीत की तार सप्तकीय स्वर लहरियाँ संयोजित है। इसी कारण इनके गीतों में भावों के सहज स्कुरण के साथ-साथ संगीतमयी मार्मिकता भी स्पष्ट दिखाई देती है। जैसे. -

सूखे पुष्प बुझा है दीपक
रक्त सना पूजा का चंदन
भारत माता फिर भी अर्पण
नीरांजन मेरा नीरांजन।

5. भाषा सौन्दर्य :

जोशी जी के गीतों में रूप-रस-गंध का सफल संयोजन हुआ है। मनोभावों की सीधी सी अभिव्यक्ति, संवेदनाओं की अछूती दिशा तथा नवीन शब्दावली में सर्वथा अछूते भावों को व्यक्त किया जाता है। भाषा में संगीत का भरपूर समावेश किया गया है। इसी से जब कवि स्वयं सस्वर गीत सुनाते हैं तो श्रोता मंत्रमुग्ध होकर कहीं दूर खो जाता है। भाषा की अर्थवत्ता पाठकों पर सीधा असर करती है। अलंकारों का मोह तो नहीं है लेकिन जहाँ कहीं उनका उपयोग किया गया है वहाँ पाठकों पर आलंकारिक चमत्कार पूरा असर डालने में समर्थ रहते है। जैसे -

उपमा - मेरा वेतन ऐसे रानी
        जैसे गरम तवे पर पानी।
रूपक - खाने को कोरी उबासियाँ
        पीनों को आँखों का पानी।

मुहावरों का सार्थक और चुटीला प्रयोग भी इनकी भाषा की एक और विशेषता है जैसे : -

पथ के काँटे बीन चुभा दो
पांवों में फट गई बिवाई।

15.7 सारांश

अन्त में सुमनेश जोशी के शब्दों में तारा प्रकाश जोशी के रचना संसार को इस रूप में परिभाषा बद्ध किया जा सकता है-

'कला के पारस का स्पर्श पा लेने वाले श्री तारा प्रकाश जोशी का परिचय कवि और कलाकार के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। ' इनके गीत मंचीय लोकप्रियता के साथ-साथ साहित्यिक वैभव भी रखते हैं।

15.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. राजस्थान के कृतिकार प्रस्तुति 42 - राजस्थान साहित्य अकादमी प्रकाशन
2. राजस्थान के कवि - राजस्थान साहित्य अकादमी प्रकाशन

15.9 प्रश्न एवं अभ्यास

1. गीत के स्वरूप एवं उसके तत्वों को संक्षेप में बतलाइये।
2. तारा प्रकाश जोशी के गीतों के भाव पक्ष पर प्रकाश डालिये।
3. तारा प्रकाश जोशी के गीतों के रचना विधान की विशेषताएँ बतलाइये।
4. तारा प्रकाश जोशी के गीतों की भाषा की विशेषताओं को प्रकट कीजिए।
5. सिद्ध कीजिये कि तारा प्रकाश जोशी एक सफल गीतकार हैं।

खण्ड 5 का परिचय

इस खंड में हिन्दी की चुनिंदा गद्य विधाओं का संकलन किया गया है। साहित्य का निर्माण पद्य के अलावा गद्य में भी किया जाता है। गद्य की रचनाएँ अनेक रूपों में की जाती हैं जिन्हें गद्य की विविध विधाएँ कहा जाता है। गद्य में कविता की तरह भावुकता, संगीतात्मकता और लय का निर्वाह नहीं किया जाता है। इनके स्थान पर निबन्ध में विचारों व तर्कों की अभिव्यक्ति प्रमुखता से होती है। कहानी, उपन्यास जैसी गद्य विधाओं में कथातत्व के साथ-साथ पात्रों के चरित्रों की विशेषताओं को प्रस्तुत किया जाता है। संस्मरण - रेखाचित्र आदि में जीवन के बीते हुए क्षणों को साहित्यिक दृष्टि से प्रस्तुत किया जाता है। आत्मकथा में लेखक स्वयं के जीवन का इतिहास प्रस्तुत करता है तो जीवनी में दूसरों के जीवन के इतिहास को लिखा जाता है। रंगमंच पर प्रस्तुत किए जाने वाले नाटक/एकांकी जैसे नाट्यरूपों में अभिनेता को आधार बनाकर नाटकों की रचना की जाती है। इसी भांति डायरी, फीचर, रिपोतीज, इंटरव्यू गद्दगीत भी अन्य गद्य विधाएं हैं। इनमें से कुछ विधाओं की रचनाएं आपके संकलन में रखी गई हैं। इनके आधार पर आप हिन्दी गद्य के कुछ रूपों को आसानी से समझ सकते हैं।

इस खण्ड में कुछ पाँच इकाईयाँ हैं। इसकी पहली इकाई कहानी से संबंधित है। इसमें हिन्दी साहित्य की कालजयी कहानी 'आकाशदीप' आपके वाचन के लिए रखी गई है। उसे पढ़कर आप कहानी के स्वरूप को अच्छी तरह से समझ सकेंगे। प्रेम के लिए त्याग के आदर्श को निरूपित करने वाली यह कहानी अपनी विशिष्ट अभिव्यक्ति कौशल, कथावस्तु तथा नायिका चम्पा के श्रेष्ठ चरित्र को पाठकों के अंतर्मन को प्रभावित करने में पर्याप्त समर्थ रहती है।

दूसरी इकाई निबन्ध से संबंधित है। निबन्ध गद्य साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है। इसमें किसी एक विषय पर सर्वांगीण तरीके से लेखक अपने विचार प्रकट करता है। एक आदर्श निबन्ध में लेखक के व्यक्तित्व की छाप उसकी शैली पर विद्यमान रहती है। आपके वाचन के लिए अध्यापक पूर्णसिंह का ''सच्ची वीरता'' नामक निबन्ध रखा गया है। इसमें सच्चे वीरों के लक्षण और कर्मों को उदाहरणों से प्रस्तुत करते हुए लेखक हमें सच्ची वीरता और नकली वीरता के अंतर से परिचित करवा देता है। वीरता को इस रूप में निरूपित किया गया है कि पाठक भी उत्साह से भर कर देश और समाज के हित के लिए समर्पित हो जाने की प्रेरणा प्राप्त कर लेते हैं।

इस खंड की तीसरी इकाई महात्मा गाँधी की आत्मकथा का एक अंश है। गाँधी जी ने 'सत्य के प्रयोग' शीर्षक से संबंधित अपनी आत्मकथा में अपने बाल्यकाल के अनेक प्रसंगों को अत्यन्त सरल किन्तु रोचक ढंग से प्रकट किया है। उनके स्कूली जीवन के कुछ प्रसंग यहाँ पर प्रकट किए गए हैं। इस अंश को पढ़कर एक ओर आप आत्मकथा के स्वरूप से परिचित हो सकेंगे वहीं दूसरी और स्वयं गाँधी जी के चरित्र की भी अनेक खूबियों की जानकारी आपको प्राप्त हो सकेगी।

इस खंड की अंतिम इकाई संस्मरण संबंधी है। संस्मरण में लेखक किसी विशिष्ट व्यक्ति के जीवन प्रसंगों को काव्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया करता है। हिन्दी की प्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा ने अनेक संस्मरण लिखकर हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। प्रस्तुत संस्मरण में उन्होंने राष्ट्रीयता के भावों को प्रकट करने वाली प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के व्यक्तित्व की विशेषताओं को प्रस्तुत किया है।

इकाई - 16 कहानी- आकाशदीप (जयशंकर प्रसाद)

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य
16.1 प्रस्तावना
16.2 कहानी का वाचन
16.3 संदर्भ सहित व्याख्या
16.4 कथावस्तु
16.5 चरित्र चित्रण
16.6 वातावरण (परिवेश)
16.7 संरचना शिल्प (भाषा शैली)
16.8 सारांश
16.9 संदर्भ ग्रन्थ
16.10 बोध प्रश्न/अभ्यास प्रश्न एवं उनके उत्तर

16.0 उद्देश्य

बीसवीं शताब्दी की कहानी 'आकाशदीप' प्रकृति की भौतिक सत्ता से जुड़कर रूढ़ियों और अंधविश्वासों का विरोध करती है। यह कहानी व्यक्तिगत स्वाधीनता का उद्घोष करती है। देवताओं, राजाओं भूतों आदि मिथकों से परे बुद्धिवाद से परिचालित, परन्तु भावनात्मक स्तर पर तार्किक परिणति का आभास कराती है। प्रसाद जी ने इस कहानी में मानव-मस्तिष्क की व्यापक सत्ता का बोध कराया है। प्रेमचन्द ने जिस मानव चरित्र को सर्वोपरि बताया है, वहीं मानव चरित्र प्रसाद की इस कहानी में अपनी सम्पूर्ण नाटकीयता के साथ प्रस्तुत है। इस संसार में मनुष्य अपने मन के वशीभूत होकर अनेक तर्क-वितर्क करता है, सागर की लहरों की तरह तरंगित होता है अन्तर्द्वद्वों में फँसता है और फिर उन्हीं में से निकलकर अपने निर्णय लेता है।

आकाशदीप मानव मन की महत्त्वाकांक्षा का प्रतीक भी है और स्वाभिमान की ऊंचाई का भी। मन के विकार भरे अंधेरों को दूर करने वाला प्रकाश भी है और एकान्त जीवट का प्रतीक भी। 'आकाशदीप' सेवा और त्याग का चिह्न भी है और अपनी महत्ता का पोषक भी। इस कहानी में नायक के बल, बुद्धि और भावना का सम्मिश्रण भी है तो नायिका के भावनात्मक अन्तर्द्व्द्व के पार जाकर स्वाभिमान की घोषणा भी है। स्त्री और पुरुष के प्रेम के उदात्त स्वरूप में घृणा, प्रतिशोध जैसे सारे भाव वह जाते हैं।

16.1 प्रस्तावना

'आकाशदीप' प्रसाद जी की प्रसिद्ध कहानी है। वह वातावरण प्रधान, नाटकीय कहानी है। इसका आरम्भ छोटे-छोटे संवादों द्वारा होता है। इन संवादों या कथोपकथनों में जिज्ञासा या कौतूहल का तत्त्व विद्यमान है। पूरी कहानी में प्राकृतिक वातावरण का चित्रण किया

गया है। मणिभद्र अपने पोत पर चम्पा और बुद्धगुप्त को बन्दी बना लेता है। बुद्धगुप्त स्वयं को और चम्पा को स्वतन्त्र कर लेता है। दोनों प्रसन्नतापूर्वक एक द्वीप पर रहने लगते हैं। बुद्धगुप्त का व्यापार बढ़ जाता है। चम्पा के मन में बुद्धगुप्त के प्रति प्रेम विकसित होने लगता है, परन्तु जब उसे यह ज्ञात होता है कि यह व्यक्ति ही उसके पिता की मृत्यु का कारण है तो उसके मन में बुद्धगुप्त के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार चम्पा प्रेम एवं पितृ शोक जनित घृणा के अन्तर्द्वद्व से युक्त रहती है। वह बुद्धगुप्त के साथ भारत नहीं लौटती, बल्कि चम्पाद्वीप पर ही रह जाती है। भटके हुए लोगों को रहा दिखाने के लिए, सर्वसाधारण की सेवा के लिए, वह अकेला जीवन स्वीकार कर लेती है। चम्पा का पिता के प्रति प्रेम और स्वाभिमान अपने निजी सुख का बलिदान कर सबके लिए प्रेम का वरदान बन जाता है। प्रसाद जी ने चम्पा के मनोविज्ञान का मार्मिक चित्रण किया है।

16.2 कहानी का वाचन

“बंदी।’’

“क्या है? सोने दो।"

‘’मुक्त होना चाहते हो?"

“अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।"

“फिर अवसर न मिलेगा।"

“बड़ा शीत है, कहीं से एक कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।"

"आँधी की संभावना है। यही अवसर है। आज मेरे बंधन शिथिल हैं।"

“तो क्या तुम भी बंदी हो?"

“हाँ, धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी हैं।"

"शस्त्र मिलेगा?"

“मिल जायेगा! पोत सेसम्बद्ध रज्जू काट सकोगे?"

“हाँ’’

समुद्र में हिलोरे उठने लगीं। दोनों बंदी आपस में टकराने लगे। पहले बंदी ने अपने को स्वतंत्र कर लिया। दूसरे का बंधन खोलने का प्रयत्न करने लगा। लहरों के धक्के एक-दूसरे को स्पर्श से पुलकित कर रहे थे। मुक्ति की आशा - स्नेह का असंभावित आलिंगन। दोनों ही अंधकार में मुक्त हो गए। दूसरे बंदी ने हर्षातिरेक से उसको गले से लगा लिया। सहसा उस बंदी ने कहा -

“यह क्या? तुम स्त्री हो?"

“क्या स्त्री होना कोई पाप है?" अपने को अलग करते हुए स्त्री ने कहा।

“शस्त्र कहाँ है - तुम्हारा नाम?"

“चंपा।”

तारक-खचित नील अंबर और समुद्र के अवकाश में पवन ऊधम मचा रहा था। अंधकार से मिलकर पवन दुष्ट हो रहा था। समुद्र में आंदोलन था। नौका लहरों में विकल थी। स्त्री सतर्कता से लुढ़क्ने लगी। एक मतवाले नाविक के शरीर से टकराती हुई सावधानी से उसका कृपाण निकालकर, फिर लुढ़कते हुए बंदी के समीप पहुँच गई। सहसा पोत के पथ प्रदर्शक ने चिल्लाकर कहा - "आँधी"।

आपत्ति-सूचक तूर्य बजने लगा। सब सावधान होने लगे। बंदी युवक उसी तरह पड़ा रहा। किसी ने रस्सी पकड़ी, कोई पाल खोल रहा था। पर युवक बंदी लुढ़क कर उस रज्जू के पास पहुँचा, जो पोत से संलग्न थी। तारे ढक गए। तरंगें उद्वेलित हुईं, समुद्र गरजने लगा। भीषण आँधी, पिशाचनी के समान नाव को अपने हाथों में लेकर कंदुक-क्रीड़ा और अट्टहास करने लगी।

अनंद जननिधि में उषा का मधुर आलोक फूट उठा। सुनहरी किरणों और लहरों की कोमल सृष्टि मुस्कराने लगी। सागर शांत था। नाविकों ने देखा, पोत का पता नहीं। बंदी मुक्त है।

नायक ने कहा - 'बुद्धगुप्त। तुमको मुक्त किसने किया?'

कृपाण दिखाकर बुद्धगुप्त ने कहा - 'इसने।'

नायक ने कहा - तो तुम्हें फिर बंदी बनाऊंगा।

'किसके लिए? पोताध्यक्ष मणिभद्र अतल जल में होगा नायक। अब इस नौका का स्वामी मै हूँ।'

"तुम? जलदस्यु बुद्धगुप्त? कदापि नहीं।" - चौंककर नायक ने कहा और अपना कृपाण टटोलने लगा। चंपा ने इसके पहले उस पर अधिकार कर लिया था। वह क्रोध से उछल पड़ा।

"तो तुम द्वद्व युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाओ, जो विजयी होगा, वही स्वामी होगा - "इतना कहकर बुद्धगुप्त ने कृपाण देने का संकेत किया। चंपा ने कृपाण नायक के हाथ में दे दिया।"

भीषण घात-प्रतिघात आरम्भ हुआ। दोनों कुशल, दोनों त्वरित गति वाले थे। बड़ी निपुणता से बुद्धगुप्त ने अपना कृपाण दाँतों से पकड़ कर अपने दोनों हाथ स्वतंत्र कर लिए। चंपा भय और विस्मय से देखने लगी। नाविक प्रसन्न हो गए, परन्तु बुद्धगुप्त ने लाघव से नायक का कृपाण वाला हाथ पकड़ लिया और विकट हुंकार से दूसरा हाथ कीट में डाल, उसे गिरा दिया। दूसरे ही क्षण प्रभात की किरणों में बुद्धगुप्त का विजयी कृपाण उसके हाथों में चमक उठा। नायक की कातर आँखे प्राण-भिक्षा माँगने लगी।

बुद्धगुन्त ने कहा - ''बोलो अब स्वीकार है कि नहीं?"

"मैं अनुचर हूँ वरूण देव की शपथ। मैं विश्वासघात नहीं करूँगा।" बुद्धगुप्त ने उसे छोड़ दिया। चंपा ने युवक जलदस्यु के समीप आकर उसके क्षतों को अपनी स्निग्ध दृष्टि और कोमल करों से वेदना विहीन कर दिया। बुद्धगुप्त के सुगठित शरीर पर रक्त बिन्दु विजय तिलक कर रहे थे।

विश्राम लेकर बुद्धगुप्त ने पूछा - हम लोग कहाँ होंगे?

“बाली द्वीप से बहुत दूर, संभवत: एक नवीन द्वीप के पास जिसमें अभी हम लोगों का बहुत कम आना-जाना होता है। सिंहल के वणिकों का वहाँ प्राधान्य है। "

“कितने दिनों में हम वहाँ पहुँचेंगे?"

"अनुकूल पवन मिलने पर दो दिन में। तब तक के लिए खाद्द का अभाव न होगा।"

“सहसा नायक ने नाविको को डाँडा लगाने की आज्ञा दी, और स्वयं पतवार पकड़ कर बैठ गया। बुद्धगुप्त के पूछने पर उसने कहा - यहाँ एक जलमग्र शैलखण्ड है। सावधान न रहने से नाव के टकराने का भय है।"

जाहनवी के तट पर, चंपा नगरी की एक क्षत्रिय बालिका हूँ। पिता इसी मणिभद्र के यहाँ प्रहरी का काम करते थे। माता का देहावसान हो जाने पर मैं भी पिता के साथ नाव पर ही रहने लगी। आठ बरस से समुद्र ही मेरा घर है। तुम्हारे आक्रमण के समय मेरे पिता ने ही सात दस्युओं को मार कर जल-समाधि ली। एक मास हुआ, मैं इस नील नभ के नीचे, नील जलनिधि के ऊपर, एक भयानक अननंता में निस्सहाय हूँ - अनाथ हूँ। मणिभद्र ने मुझसे एक दिन घृणित प्रस्ताव किया। मैंने उसे गालियाँ सुनाई। उसी दिन से बंदी बना दी गयी। चंपा रोष से जल रही थी। "मैं भी ताम्रलिप्ति का एक क्षत्रिय हूँ चम्पा। परन्तु दुर्भाग्य से जलदस्यु बनकर जीवन बिताता हूँ। अब तुम क्या करोगी?'

“मैं अपने अदृष्ट को अनिर्दिष्ट ही रहने दूंगी। वह जहाँ ले जाए।" चंपा की आँखें निस्सीम प्रदेश में निरुद्देश्य थी।

.... दुर्दान्त दस्यु ने देखा, अपनी महिमा से अलौकिक एक तरूण बालिका। वह विस्मय से अपने हृदय को टटोलने लगा। उसे एक नई वस्तु का पता चला। वह थी - कोमलता।

पाँच बरस बाद

चंपा के एक उच्च सौध पर बैठी हुई तरुणी चंपा दीपक जला रही थी। बड़े यत्न से अभ्रक की मंजूषा में दीप धर कर उसने अपनी सुकुमार उंगलियों से डोरी खींची। वह दीपाधार ऊपर चढ़ने लगा। भोली-भोली आँखें उसे ऊपर चढ़ते बड़े हर्ष से देख रही थी। डोरी धीरे-धीरे खींची गई। चंपा की कामना थी कि उसका आकाश-दीप नक्षत्रों से हिलमिल जाये, किन्तु वैसा होना असंभव था। उसने आशा भरी आँखें फिरा लीं।

"मुझे इस बंदीगृह से मुक्त करो। अब तो बाली, जावा और सुमात्रा का वाणिज्य केवल तुम्हारे ही अधिकार में है महानाविका परन्तु मुझे उन दिनों की स्मृति सुहावनी लगती है, जब तुम्हारे पास एक ही नाव थी और चंपा के उपकूल में पण्य लाद कर हम लोग सुखी जीवन बिताते थे - इस जल में अणित बार हम लोगों की तरी आलोकमय प्रभात में तारिकाओं की मधुरज्योति में - थिरकती थी। बुद्धगुप्त उस विजन अनन्त में जब माँझी सो जाते थे, दीपक बुझ जाते थे, हम तुम परिश्रम से थक कर पालों में शरीर लपेट कर एक दूसरे का मुँह क्यों देखते थे। वह नक्षत्रों की मधुर छाया....’’

"तो चंपा! अब उससे भी अच्छे ढंग से हम लोग विचर सकते है। तुम मेरी प्राण दात्री हो, मेरी सर्वस्व हो।"

"नहीं-नहीं तुमने दस्युवृत्ति छोड़ दी है परन्तु हृदय वैसा ही अकरूण, सतृष्ण और ज्वलनशील है। तुम भगवान के नाम पर हँसी उड़ाते हो। मेरे आकाश दीप पर व्यंग्य कर रहे हो। नाविक! उस प्रचंड आँधी में प्रकाश की एक एक किरण के लिए हम लोग कितने व्याकुल थे। मुझे स्मरण है, जब मैं छोटी थी, मेरे पिता नौकरी पर समुद्र में जाते थे - मेरी माता, मिट्टी का दीपक बाँस की पिटारी में भागीरथी के तट पर बाँस के साथ ऊंचे टाँग देती थी। उस समय वह प्रार्थना करती - भगवान्! मेरे पथ-भ्रष्ट नाविक को अंधकार में ठीक पथ पर ले चलना। " और जब मेरे पिता बरसों पर लौटते तो कहते - 'साध्वी। तेरी प्रार्थना से भगवान ने भयानक संकटों से मेरी रक्षा की है। वह गद्गद हो जाती। मेरी माँ? आह नाविक! वह उसी की पुण्य-स्मृति है। मेरे पिता, वीर पिता की मृत्यु के निठुर कारण जलदस्यु। हट जाओ। ' - सहसा चंपा का मुख क्रोध से भीषण होकर रंग बदलने लगा। महानाविक ने कभी वह रूप न देखा था। वह ठठा कर हँस पड़ा।

"इतना जल! इतनी शीतलता। हृदय की प्यास न बुझी। पी सकूँगी? नहीं। तो जैसा वेला से चोट खाकर सिन्धु चिल्ला उठता है, उसी के समान रोदन करूँ या जलते हुए स्वर्ण-गोलक सदृश अनंत जल में डूब कर बुझ जाऊं?" चंपा के देखते-देखते पीड़ा और ज्वलन से आरक्त बिम्ब धीरे- धीरे सिंधु में चौथाई-आधा फिर सम्पूर्ण विलीन हो गया। एक दीर्घ विश्वास लेकर चंपा ने मुँह फेर लिया। देखा तो महानाविक का बजरा उसके पास है।

आह चंपा, तुम कितनी निर्दय हो। बुद्धगुप्त को आज्ञा देकर देखो तो, वह क्या नहीं कर सकता। जो तुम्हारे लिए नये द्वीप की सृष्टि कर सकता है, नयी प्रजा खोल सकता है, नये राज्य बना सकता है, उसकी परीक्षा लेकर देखो तो...। कहो चंपा। वह कृपाण से अपना हृदय-पिंड निकाल अपने हाथों अतल जल में विसर्जन कर दें। महानाविक - जिसके नाम से बाली, जावा और चंपा का आकाश गूंजता था, पवन थर्राता था घुटनों के बल चंपा के सामने छलछलाई आँखों से बैठा था।

सामने शैलमाला की चोटी पर, हरियाली में विस्तृत जलदेश में, नील पिंगल संध्या, प्रकृति की सहृदय कल्पना, विश्राम की शीतल छाया, स्वप्न लोक का सृजन करने लगी। उस मोहिनी के रहस्यपूर्ण नील जाल का कुहक स्फुट हो उठा। जैसे मदिरा से सारा अंतरिक्ष सित् हो गया। सृष्टि नील कमलों से भर उठी।

बुद्धगुप्त। आज मैं अपने प्रतिशोध का कृपाण अतल जल में डुबा देती हूँ। हृदय ने छल किया, बार- बार धोखा दिया। चमक कर वह कृपाण समुद्र का हृदय बेधता हुआ विलीन हो गया।

मैं तुम्हें घृणा करती हूँ? फिर भी तुम्हारे लिए मर सकती हूँ। अंधेर है जलदस्यु। तुम्हें प्यार करती हूँ।

"वह स्वप्नों की रंगीन संध्या, तुम से अपनी आँखे बन्द करने लगी थी। दीर्घ विश्वास लेकर महानाविक ने कहा - इस जीवन की पुण्यतम घड़ी की स्मृति में एक प्रकाश गृह

बनाऊँगा, चंपा। यही उस पहाड़ी पर। संभव है कि मेरे जीवन की धुंधली संध्या उससे आलोक पूर्ण हो जाए। "

"चंपा। मैं ईश्वर को नहीं मानता, मैं पाप को नहीं मानता, मैं दया को नहीं समझ सकता, मैं उस लोक में विश्वास नहीं करता। पर मुझे अपने हृदय के एक दुर्बल अंश पर श्रद्धा हो चली है। तुम न जाने कैसे एक बहली हुई तारिका के समान मेरे शून्य में उदित हो गई हो। आलोक की एक कोमल रेखा इस निविड़तम में मुस्कराने लगी। पशु-बल और धन के उपासक के मन में किसी शांत और एकान्त की कामना की हँसी खिलखिलाने लगी, पर मैं न हँस सका।"

सहसा चैतन्य होकर चंपा ने कहा - "बुद्धगुप्त! मेरे लिए सब भूमि मिट्टी है, सब जल तरल है, सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में आई के समान प्रज्ज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है। प्रिय नाविक तुम स्वदेश लौट जाओ, विभवों का सुख भोगने के लिए और मुझे छोड़ दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुःख की सहानुभूति और सेवा के लिए।'

कठिन शब्दों के अर्थ :

रज्जू-रस्सी, तारक खचित नील अंबर-तारों से भरा नीला आकाश, आपत्ति-मुसीबत, तूर्य-नगाड़ा, कंदुक-क्रीड़ा-गेंद का खेल, कृपाण-कटार, लाघव-चतुराई, विकट-भयंकर, कटि-कमर, वरूणदेव-समुद्र देवता, विश्वासघात- धोखा देना, क्षत-जख्म, सिंहल-लंका, वणिक-व्यापारी, शैलखण्ड-चट्टान, सौध-भवन, पण्य-सामान, तरी-नौका, विजन-एकान्त, वेला-तट, स्वर्ण-गोलक-सुनहरी गोला-सूजर, आलोकपूर्ण-रोशनी से पूर्ण, निविडतम-घना अंधेरा।

16.3 संदर्भ सहित व्याख्या

1. **"इतना जल। इतनी शीतलताहृदय की प्यास न बुझी। पी सकूंगी !? नहीं। तो जैसे बेला से चोट खाकर सिन्धु चिल्ला उठता है, उसी को समान रोदन करूँ? या जलते हुए स्वर्ण गोलक सदृश अनन्त में डूब कर बुझ जाऊँ?"**

संदर्भ : - ये पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित " आकाशदीप' कहानी से उद्धृत हैं। वणिक मणिभद्र के बन्धन से मुक्त जब चम्पा बुद्धगुप्त के साथ चम्पाद्वीप में रहने लगती है, तब वह बुद्धगुप्त के प्रति प्रेमभाव रखकर भी, उसे अपने पिता का हत्यारा समझती है। मन के अन्तर्द्वद्व को प्रकट करती हुई वह जया से कहती है -

व्याख्या : -

चम्पा नाव में बैठी समुद्र की अपार जलराशि को देखकर अपने मन की पीड़ा को व्यक्त करती है। समुद्र का इतना अगाध जल और शीतल जल भी उसकी प्यास को बुझाने में असमर्थ है। यह उसके प्रेम की कैसी विडम्बना है। अपने प्रेमी के पास रहकर भी वह उसके प्रेम को स्वीकार नहीं कर पाती। एक ओर मन की दुर्बलता है, दूसरी ओर पिता के प्रति कर्त्तव्य भाव। वह पानी में रहकर भी प्यासी मछली के समान तड़पती है। चंपा का कर्त्तव्य बोध बुद्धगुप्त के प्रति प्रेम भाव के मार्ग में बाधा बन जाता है।

अपनी इसी भाव को प्रकट करने के लिए वह बार-बार समुद्र से अपनी तुलना करती है। उसे लगता है, शान्त दिखने वाला वह समुद्र भी जब किनारे से टकराता है तो उसकी लहरें पछाड़ें खाकर लौट पड़ती है और रूदन करती प्रतीत होती हैं, ठीक उसी प्रकार उसकी भावनाएं बुद्धगुप्त के पास संतुष्टि के लिए जाती हैं किन्तु प्रतिशोध की भावना के जागते ही तड़प कर लौट आती है, वह न तो समर्पित हो पाती है, न ही प्रतिशोध ले पाती है। यही उसकी नियति है। उसका मन जलते हुए सूरज की तरह निरन्तर आत्मदग्ध है। जिस तरह सूरज शाम ढले अस्ताचल में डूब जाता है, उसी प्रकार वह भी एक दिन इसी तरह जलते हुए समाप्त हो जायेगी। अर्थात् उसे आजीवन इसी तरह दग्ध होना पड़ेगा।

विशेष : -

प्रसाद जी ने प्रेम और कर्त्तव्य के द्वंद्व में सदा कर्त्तव्य की विजय दिखाई है।

प्रकृति के माध्यम से विशेष रूप से समुद्र की व्याप्ति और जल की शीतलता के विपरीत हृदय की जलन को प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। समुद्र के अनन्त शीतल जल की समता, प्रेम की अगाधता और शीतलता से करके लेखक ने जहाँ प्रेम की गहनता और गम्भीरता को व्यक्त किया है वहीं सूर्य की दाहकता को और अनन्त में विलीन हो जाने की प्रक्रिया को हृदय की दाहकता की विवशता को स्पष्ट किया है। अन्तर्द्वद्व की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति प्रभावी है।

2. **"सामने शैलमाला की चोटी पर, हरियाली में, विस्तृत जल-प्रदेश में नील पिंगल संध्या, प्रकृति की एक सहृदय कल्पना, विश्राम की शतल छाया, स्वप्न लोक का सृजन करने लगी। उस मोहिनी के रहस्यपूर्ण नील जाल का कुहक स्फुट हो उठा। जैसे मदिरा से सारा अन्तरिक्ष सिक्त हो गया। सृष्टि नील कमलों से भर उठी।"**

सदंर्भ : -

उपर्युक्त अवतरण 'आकाशदीप' कहानी से उद्धृत है। इन पंक्तियों ने चम्पा और बुद्धगुप्त एक बजरे में बैठे वार्तालाप में व्यस्त हैं। प्रसाद जी ने बुद्धगुप्त के प्रणय निवेदन को प्रकृति की पृष्ठभूमि दी है। हृदय की भावुकता प्रकृति के रंग में रंगकर अत्यधिक मार्मिक हो उठी है।

व्याख्या -

संध्या का समय है। पहाड़ियों के शिखर पर चारों ओर की हरियाली पर और विस्तृत सागर की नीली पीली आ पर ऐसा लग रहा था, मानो प्रकृति अत्यन्त उदारतापूर्वक विश्राम की मुद्रा में किसी सुन्दर सृष्टि की रचना कर रही थी। संध्या का वह वातावरण अत्यन्त आकर्षक था, प्रकृति मोहिनी रूप धारणा कर एक रहस्यमय सा पर्दा उठा रही थी, क्योंकि चाँदनी की आभा चारों ओर फैलने लगी थी। मनमोहक संध्या वह गहन नीलिमा युक्त संध्या गगन धीरे- धीरे चन्द्रोदय के कारण मधुर- प्रकाश से झिलमिलाने लगा और अंधकार दूर होने लगा। चाँदनी से खिला आकाश इतना आकर्षक लग रहा था और इतना सम्मोहक था, मानों प्रकृति ने वातावरण में मदिरा ही उंडेल दी हो। सारा

संसार भी नीली आभा से युक्त आकाश की विस्तृति से ढका हुआ नील कमलों से सजा हुआ सा प्रतीत हो रहा था। अभिप्राय यह कि मन की कोमल कल्पनाओं और भावनाओं के परिप्रेक्ष्य में प्रकृति का यह रहस्यमय और आकर्षक रूप बहुत ही प्रभावशाली प्रतीत हो रहा था।

विशेष : -

जयशंकर प्रसाद मन की अनुभूतियों को प्रकृति के सादर्य के माध्यम से प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त हैं। संध्या में चंद्रोदय के समय का एकान्त विस्तृत शैलमाला हो, सागर की विशालता हो या चारों ओर की हरियाली इस प्रकार का एकान्त वातावरण सृष्टि में अनूठा सौंदर्य उत्पन्न करता है और व्यक्ति मन की भावनाएं प्रकृति से एकाकार हो उठती है। प्रसाद जी काव्यात्मक और अलंकृत भाषा के प्रयोग से प्रकृति के माध्यम से वह मनुष्य मन की आन्तरिक भावनाओं को मुखरित करने में सफल हुए हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में ऐसे मोहक प्राकृतिक वातावरण में चम्पा और बुद्धगुप्त की प्रणय भावना को भी मार्मिक अभिव्यक्ति मिली है।

16.4 कथावस्तु

'आकाशदीप' कहानी का वस्तु विन्यास अत्यन्त सुगठित है। कथानक में भरपूर नाकीयता है जिससे कहानी में गत्यात्मकता के साथ कोतूहल और रोचकता बनी रही है। भावों की तीव्रता और अन्तर्विरोधों की प्रस्तुति कहानी की संवेदना को प्रभावशाली बनाती है। एक ओर गहन प्रेम है तो दूसरी और कर्त्तव्य बोध की तीव्रता से लगातार अन्तर्द्वह की स्थिति कहानी को गति प्रदान करती है। चम्पा और बुद्धगुप्त के मानसिक द्वंद्र को अत्यन्त सूक्ष्मता से चित्रित किया गया है। रोमानियत में स्वतन्त्रता होते हुए भी एक आदर्श और मर्यादा का निर्वाह सर्वत्र किया गया है।

कहानी का आरम्भ बेहद नाटक्य है। एक नाव पर रात के घने अंधकार में आधी तूफान के बीच दो बंदी, एक स्त्री, एक पुरुष टकराते हैं, एक नये द्वीप पर पहुँचते हैं। पुरुष व्यापारी है, स्त्री उसकी प्रेमिका। मगर अन्तर्द्वद्व के चलते, उनका विवाह नहीं होता और पुरुष धन सम्पत्ति के साथ स्वदेश लौट आता है, सी निरीह जनों की सेवा का संकल्प लेकर वहीं रह जाती है।

इस घटनाक्रम को जयशंकर प्रसाद ने अपनी अद्भुत काव्यात्मक शैली और प्रकृति के उन्मुक्त सानिध्य में गढ़ा है। चम्पा की उत्सर्गवृति और बुद्धगुप्त के हृदय की कोमलता ने कहानी के अन्त को कान्तियुक्त बना दिया है। पूरी कथा आरम्भ से उत्सर्ग तक पहुँचती है और उत्कर्ष से नाटकीय वेदनायुक्त अंत तक। रचना पूरी यात्रा में रोचकता बनाये रखता है।

16.5 चरित्र चित्रण

कहानी में प्रमुख पात्र दो ही हैं - चम्पा और बुद्धगुप्त। दो विपरीत प्रकृति के इन्सान परिस्थितिवश एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। चंपा का निश्छल सौंदर्य बुद्ध गुप्त के निष्करूण हृदय को पिघला कर कोमल बनाता है तो बुद्धगुप्त की निर्भीकता, साहस,

युद्धकौशल और आकर्षण उसे जलदस्यु से एक सफल व्यापारी, स्वामी और उत्कृष्ट प्रेमी बना देते हैं। चम्पा के मन में उसके प्रति अतीव अनुराग हैं, वे एक-दूसरे से मिलते हैं, सुख्-दुःख बाँटते हैं मगर चम्पा के मन में यह धारणा दृढ़ है कि बुद्धगुप्त उसके पिता का हत्यारा है, अत: इस अन्तर्द्वंद्व में वह उससे विवाह नहीं कर सकती। मन की कोमता उसके स्वाभिमान से बाधित होती है। अत: उसके वैयक्तिक प्रेम पर कर्त्तव्य बोध की भावना विजय प्राप्त करती है। अकेले रहने का निर्णय और सबकी सेवा करने का संकल्प उसके चरित्र को उच्च भूमि पर अवस्थित करता है।

चम्पा जितनी भावुक और कोमल हैं, उतनी तनी ही साहसी और प्रकृति प्रेमी भी है। प्रसाद जी की नायिकाएँ चाहे किसी भी वर्ग की हों, मन और बुद्धि से बेहद सम्पन्न और गरिमामय होती है। एक अभिजात सौंदर्य उनके चरित्र में झलकता है, यौवन और सौंदर्य की स्वामिनी चम्पा भी स्वाभिमानी निर्भीक और दृढ़ इच्छाशक्ति वाली है। एक पोत के प्रहरी की बेटी होकर भी वह बुद्धगुप्त जैसे जलदस्यु का हृदय जीत लेती है। प्रसाद जी नारी शक्ति का बेहद उदात्त अंकन करते हैं।

बुद्धगुप्त का व्यक्तित्व भी पुरुष सौंदर्य का प्रतीक है। बलिष्ठ, निर्भीक, साहसी, वीरता तथा भव्य पौरूष बल से परिपूर्ण बुद्धगुप्त चम्पा का हृदय जीतने के लिए संयम और त्याग का परिचय देता है। वह उससे विवाह करना चाहता है, नये द्वीप का नामकरण भी वह उसी के नाम पर 'चम्पा द्वीप' कर देता है। वह धन, यश अर्जित करके भी चम्पा का प्रेम प्राप्त न कर पाने के कारण स्वयं को कंगाल अनुभव करता है। चम्पा के मना कर देने पर वह उसकी सहमति से भारत लौट आता है।

बुद्धगुप्त पाप-पुण्य, ईश्वर- अनीश्वर आदि की तर्कनाओं से ऊपर उठकर चम्पा को सम्पूर्ण मन से प्रेम करता है। चम्पा का प्रेम उस कठोर जलदस्यु को कोमल हृदय और सदाशय सम्पन्न व्यक्तित्व वाला व्यक्ति बना देता है। स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की नूतन व्याख्या प्रसाद जी ने यहाँ की है। स्त्री प्रेम की उदात्तता की शक्ति यहाँ दिखलाई देती है, साथ ही स्त्री के सेवा भाव की संकल्प शक्ति भी उसे महनीय बना देती है। प्रसाद जी का सौंदर्य बोध केवल बाहरी नहीं, आत्मिक और व्यावहारिक भी है। यथार्थ धरातल की कठोरताओं से परे यहाँ एकान्तिमक और आन्तरिक धरातल पर स्त्री और पुरुष अपनी नयी भूमिकाओं के साथ नये धरातल पर अवस्थित है।

16.6 वातावरण

'आकाशदीप' कहानी वातावरण प्रधान, इतिहास बोध से युक्त व रोमांस से सम्बन्धित कहानी है। प्रसाद जी वातावरण को पात्रों की मनोभूमि में गूँथ देते हैं। छायावादी कवि होने के कारण प्रकृति का सूक्ष्म, विस्तृत और उन्मुक्त चित्रण पाठक को भी वहाँ ले जाता है। पात्रों की वैयक्तिकता को ऐसे वातावरण में स्वच्छन्दता प्राप्त होती है।

कला की दृष्टि से वातावरण प्रधान कहानियों का महत्व सबसे अधिक है। वातावरण के चित्रण से कहानी की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है, पात्रों की मनःस्थितियों और अन्तर्द्वद्व को आकार मिल सकता है, पाठक की कल्पना एक नये संसार में विचरण

करने लगती है। प्रसाद जी तो कवित्वपूर्ण वातावरण की सृष्टि करने में निपुण है। एक उदाहरण दृष्टव्य है - 'सामने शैलमाला की चोटी पर, हरियाली में, विस्तृत जलप्रदेश में, नील पिंगल संध्या, प्रकृति की एक सहृदय कल्पना, विभुल की शतल छाया, स्वप्न लोक का सृजन करने लगी। ' कवित्वपूर्ण वातावरण, कवित्वपूर्ण भावना और नाटकीय तथा आदर्शवादी परिस्थितियों की सृष्टि करने में जयशंकर 'प्रसाद' अद्वितीय है।

'आकाशदीप' कहानी की पूरी परिकल्पना प्रकृति के वातावरण में रची बसी है। समुद्र का विस्तार, गगन की नीलिमा और समुद्री यात्रियों को राह दिखाता ' आकाशदीप' मानवीय अर्थवता, वैयक्तिक सत्ता और समष्टि को प्रति समर्पणशीलता - इस कहानी के मुख्य बिन्दु है।

16.7 संरचना शिल्प : भाषा शैली

प्रसाद जी की काव्यात्मक, संस्कृतनिष्ठ और चित्रोपम भाषा शैली एक सांस्कृतिक, ऐतिहासिक वातावरण गढ़ने में अनुपम है। वे प्राकृतिक दृश्यों का चित्रांकन इतने सुन्दर शब्दों में करते हैं कि साक्षात् सजीव चित्र ही जान पड़ते हैं। उनका शब्द कोष इतना सक्षम और सशक्त और समृद्ध है कि शब्द स्वत: प्रवाहपूर्ण और रत्नजडित से प्रतीत होते हैं। यथा -'तारक-खचित नील अम्बर और नील समुद्र के अवकाश में पवन ऊधम मचा रहा था। अंधकार से मिलकर पवन दुष्ट हो रहा था। समुद्र में आंदोलन था। नाका लहरों में विकल थी।'

प्रसाद जी की भाव प्रवण भाषा सांस्कृतिक वातावरण की गम्भीरता को मुखरित करने में सक्षम है। लक्षणा-व्यंजना से युक्त चित्रोपम भाषा से दृश्य और मनोजगत दोनों सजीव हो उठते हैं।

डॉ. इन्द्रनाथ मदान का मानना है - 'आकाशदीप' से नाट्यात्मक पद्धति कहानी की संश्लिष्टता में दरारें डाल देती है। कहानी की भी अपनी लय हो सकती है, परन्तु कविता या नाटक की लय को कहानी पर आरोपित करना इसमें विषय स्वर को लगाने के समान है। प्रसाद प्राय: कहानी पर काव्य की लय और नाटक की संरचना को आरोपित करते हैं। कई बार वातावरण की सृष्टि भी रचना प्रक्रिया का अभिन्न अंग होने की बजाय स्वतंत्र अस्तित्व रखने लगती है। छायावादी बिम्ब विधान का उपयोग अलंकृत शैली का ही उदाहरण है।

यह एक आलोचक का दृष्टिकोण है क्योंकि प्रत्येक लेखक की अपनी शैली, भावभंगिमा और अपना स्वतन्त्र बोधहोता है। प्रसाद जी की 'आकाशदीप' कहानी भी रोमांटिक बोध की कहानी है और व्यक्तिनिष्ठ जीवन दृष्टि है।

इसी जीवन दृषि और हृदय परिवर्तन की उच्च भूमि पर लेखक ने बुद्धगुप्त की मन: स्थिति को कवूत्मक और आवेगपूर्ण शब्दों में प्रकट किया है। उनकी अभिव्यक्ति का यह उदाहरण उल्लेखनीय हैं-

"चम्पा! मैं ईश्वर को नहीं मानता, मैं पाप को नहीं मानता, मैं दया को नहीं समझ सकता, मैं उस लोक में विश्वास नहीं करता। पर मुझे अपने हृदय के एक दुर्बल अंग पर

श्रद्धा हो चली है। तुम न जाने कैसे एक बहकी हुई तारिका के समान मेरे शून्य में उदित हो गई हो। आलोक की एक कोमल रेखा इस निविड़ तम में मुसकराने लगी।"

ऐसी भाषा शैली के कारण प्रसाद जी के पात्र उनके ही व्यक्तित्व के भव्य प्रतिरूप प्रतीत होते हैं।

16.8 सारांश

जयशंकर प्रसाद भारतीय संस्कृति के पोषक गुणों करूणा, त्याग, बलिदान, प्रेम आदि का निर्वाह बखूबी करते हैं। अतीत और कल्पना उनकी कहानी की पीडिका है। सौन्दर्य और शिवत्व उनकी प्रेरणा है गतिशील सांस्कृतिक आस्था के कारण वर्ग भेद का निषेध करते हैं। कई बार वे धार्मिक मान्यताओं का चुनौती देते प्रतीत होते हैं - क्योंकि उनका लक्ष्य सामाजिक कल्याण से जुड़ा होता है। त्याग और बलिदान के कारण ही वेदना का स्वर मुखरित होता है। 'आकाशदीप' कहानी भी व्यक्तिनिष्ठ मगर सामाजिक कल्याण से जुड़ी है। त्याग, बलिदान के कारण चम्पा और बुद्धगुप्त के वियोग में वेदना बस गई है। चम्पा ओर बुद्धगुप्त में किसी सामाजिक वर्ग का द्वद्व नहीं है। किन्तु ईश्वर सम्बन्धी मान्यताओं को बुद्धगुप्त चुनौती देता प्रतीत होता है। कल्पना और भावुकता का आधिक्य है, इतिवृत्त का अभाव, संवेदना की अधिकता और भावनाओं का उमड़ता ज्वार है। अनेक दृश्यबिम्बों का समन्वय और सांकेतिक अभिव्यंजना है। 'आकाशदीप' - एक प्रतीक है - भटके हुए को राह दिखाने का। ऐसे में यदि कोई स्त्री यह दायित्व ओढ़ ले तो उद्देश्य और प्रतीक भव्य हो उठते हैं। 'आकाशदीप' प्राचीन संस्कृति का पोषक है और समुद्री यात्रा और व्यापार - हमारे इतिहास बोध की एक पहचान है।

"अकाशदीप' कहानी की मूल संवेदना वैयक्तिक प्रेम और कुल जनित मर्यादा के कर्त्तव्यबोध के बीच द्वंद्व की प्रस्तुति है। प्रसाद की प्राय: सभी कहानियों में प्रेम पर कर्त्तव्य की विजय दिखलाई देती है। इस कहानी में भी चम्पा अपने समस्त सुखों को तिलांजलि देकर कर्त्तव्य मार्ग का चुनाव करती है। यह अंत कहानी की नाटकीयता भी है और सफलता भी। निष्कर्षत: 'आकाशदीप' प्रसाद जी की वस्तु और शिल्प की दृष्टि से एक श्रेष्ठ कहानी है जिसमें विषयवस्तु की भाव-प्रवणता, गहन प्रेम कीं पावन निष्ठा मनोवैज्ञानिक सूक्ष्म चरित्रांकन, मार्मिक अन्तर्द्वंद्व, चित्रोपम भाषा शैली आदि के गुण विद्यमान है।

16.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ. इन्द्रनाथ मदान - हिन्दी कहानी: पहचान और परख
2. डॉ. रामेश्वर खंडेलवाल - जयशंकर प्रसाद: वस्तु और कला
3. डॉ. रघुवरदयाल वार्ष्णेय - हिन्दी कहानी: बदलते प्रतिमान
4. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल-हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास

16.10 बोध प्रश्न/अभ्यास प्रश्न एवं उनके उत्तर

नीचे लिखे प्रश्नों का उत्तर दीजिए और अपने उत्तरों को इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से मिलाइए।

1. बंदी युवती का नाम क्या था?

उत्तर चम्पा।

2. नाव पोत से अलग कैसे हो गयी?

(क) आँधी के कारण

(ख) नाविकों ने उसे पोत से अलग किया।

(ग) युवक बंदी ने पोत से जुड़ी रस्सी काट दी।

(घ) नाव पोत से अलग थी। (ग)

3. बंदी युवक का नाम क्या था?

उत्तर बुद्धगुप्त

4. बुद्धगुप्त ने नाव पर अधिकार कैसे किया?

(क) नाव के नायक को द्वंद्व युद्ध में परास्त कर

(ख) पोत के अध्यक्ष मणिभद्र को मार कर

(ग) सारे नाविकों को युद्ध में हरा कर

(घ) नाव के नाविक को रिश्वत देकर (क)

5. नाव किस ओर आगे बढ़ी?

(क) भारत की ओर

(ख) बाली द्वीप की ओर

(ग) दक्षिण पूर्व में एक नये द्वीप की ओर

(घ) सिंहल द्वीप की ओर (ग)

6. चंपा के पिता की मृत्यु कैसे हुई?

(क) समुद्र में गिर जाने से

(ख) दस्युओं से युद्ध करते हुए

(ग) मणिभद्र के द्वारा धोखे से

(घ) स्वाभाविक मृत्यु से (ख)

7. चंपा बंदी कैसे बनायी गयी?

(क) जलदस्युओं द्वारा

(ख) बुद्धगुप्त के विवाह प्रस्ताव को ठुकरा कर

(ग) मणिभद्र के घृणित प्रस्ताव को ठुकरा कर

(घ) जलदस्यु होने के कारण (ग)

8. दुर्दान्त दस्यु अपने हृदय को क्यों टटोलने लगा?

(क) चंपा का साहस देखकर

(ख) चंपा का अलौकिक भक्तिभाव देखकर

(ग) हीनता के कारण

(घ) चंपा के प्रति प्रेम भाव के उदय होने पर (ग)

9. आकाशदीप का प्रयोजन क्या है?

(क) दीप में रोशनी करना

(ख) ईश्वर के प्रति भक्ति की अभिव्यक्ति

(ग) समुद्र में भटके राहियों को राह दिखाना

(घ) घर में रोशनी करना (ख)

10. पाँच वर्षों में चम्पा बुद्धगुप्त की स्थिति क्या रही?

(क) एक ही नाव में दोनों पण्य लाद कर सुखी थे

(ख) बुद्धगुप्त बड़ा व्यापारी बन गया

(ग) दोनों ने परस्पर विवाह कर लिया

(घ) चम्पा बुद्धगुप्त से घृणा करने लगी (ख)

11. दस्युवृत्ति छोड़ने पर भी बुद्धगुप्त वैसा ही अकरूण क्यों है?

(क) वह अधिक धनार्जन चाहता है।

(ख) वह चम्पा पर अधिकार चाहता है।

(ग) वह ईश्वर पर विश्वास नहीं करता।

(घ) वह दस्युवृति को छोड़ना नहीं चाहता। (ख)

12. कहानी की कौनसी पंक्ति चम्पा के अन्तर्द्वद्व को प्रकट करने वाली सर्वाधिक मार्मिक पंक्ति बन पड़ी है?

(क) जब इसका कोई नाम नहीं है तो हम लोग इसे चम्पा द्वीप कहेंगे।

(ख) मेरे पिता, वीर पिता की मृत्यु के निष्ठुर कारण जलदस्यु। हट जाओ।

(ग) मैं तुमसे घृणा करती हूँ। अंधेर है जलदस्यु। तुम्हे प्यार करती हूँ।

(घ) मुझे छोड़ दो, इन निरीह भोले-भाले प्राणीयो के दुःख की सहानुभूमि और सेवा के लिए। (ग)

13. चंपा अपने पास कृपाण क्यों रखती थी -

(क) स्वरक्षा के लिए

(ख) मणिभद्र से रक्षा के लिए

(ग) बुद्धगुप्त से बदला लेने के लिए (ग)

14. चंपा बुद्धगुप्त से बदला क्यों लेना चाहती थी?

(क) बुद्धगुप्त ने उसे बंदी बना रखा था।

(ख) बुद्धगुप्त उसके पिता का हत्यारा था।

(ग) बुद्धगुप्त जलदस्यु था। (ख)

15. चंपा के हृदय ने उसे धोखा दिया -

(क) चंपा बुद्धगुप्त से घृणा करने लगी थी।

(ख) चंपा बुद्धगुप्त के प्रित समर्पित थी।

(ग) न चाहते हुए भी वह बुद्धगुप्त से प्रेम करने लगी थी। (ग)

16. "इतना महत्व प्राप्त करने पर भी मैं कंगाल हूँ"। बुद्धगुप्त के इस कथन का क्या तात्पर्य है?

(क) बुद्धगुप्त के पास धन का अभाव था

(ख) बुद्धगुप्त को चंपा का प्यार नहीं प्राप्त हो सका था।

(ग) वह यश के साथ अधिक धन की कामना करता था। (ख)

17. "कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है"। चंपा के इस कथन में उसकी कौनसी भावना व्यक्त हुई है-

(क) उदासीनता

(ख) उपेक्षा

(ग) वैराग्य (ग)

18. आकाश दीप का भावार्थ क्या है?

(क) ईश्वर के प्रति भक्ति भाव

(ख) दूसरों को राह दिखाना

(ग) स्वयं कष्ट सहते हुए दूसरों की सेवा करना (ख)

19. नीचे दिए गए कथन किसके हैं, बताइए -

(क) "भगवान मेरे पथ- भ्रष्ट नाविक को अंधकार में ठीक पथ पर ले चलना।"
उत्तर चंपा की माँ

(ख) मुझे भी इसी में जलना होगा जैसे आकाशदीप
उत्तर चंपा

(ग) पर मुझे अपने हृदय के एक दुर्बल अंश पर श्रद्धा हो चली है।
उत्तर बुद्धगुप्त

इकाई - 17 निबन्ध- : सच्ची वीरता (अध्यापक पूर्णसिंह)

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य
17.1 प्रस्तावना
17.2 जीवन एवं साहित्य परिचय
17.3 निबन्ध का वाचन
17.4 निबन्ध का सार
17.5 प्रमुख स्थलों की व्याख्या
17.6 निबन्ध की अन्तर्वस्तु
17.7 भाव पक्ष
17.8 संरचना शिल
 17.8.1 भाषा
 17.8.2 शैली
17.9 प्रतिपाद्य
17.10 सारांश
17.11 संदर्भ ग्रन्थ
17.12 बोध प्रश्न/अभ्यास प्रश्न एवं उत्तर

17.0 उद्देश्य

इस इकाई में आपको हिंदी साहित्य का प्रसिद्ध निबंध 'सच्ची वीरता' अध्ययन के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- निबंध नामक साहित्यिक विधा को समझा सकेंगे।
- निबंध में विचारों का प्रकट किए जाने की कला सीख सकेंगे।
- अध्यापक पूर्णसिंह के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के बारे जान सकेंगे।
- 'सच्ची वीरता' के स्वरूप को समझ सकेंगे।।
- निबंध में व्यक्त लेखकीय व्यक्तित्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- निबंध की भाषा और शैली की विशेषताएँ बना सकेंगे।
- निबंध के प्रतिपाद्य की व्याख्या कर सकेंगे।

17.1 प्रस्तावना

इस इकाई में अध्यापक पूर्णसिंह के निबंध 'सच्ची वीरता' का वाचन करेंगे। आप पहली इकाई में कहानी का वाचन कर चुके हैं। उसके आधार पर आपको कहानी के स्वरूप की भी जानकारी प्राप्त हो चुकी है। कहानी में जीवन में किसी पात्र से सम्बंधित घटना या प्रसंगों को कथा के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। इसके विपरीत निबंध में विचारों की अभिव्यक्ति की जाती है, निबंध वह रचना होती है जिसमें विचारों को विशेष रूप से

गठित कर प्रस्तुत किया जाता है। किसी एक दिए गए विषय पर सिलसिलेवार ढंग से विचारों का प्रकट किया जाता है। निबंध शब्द संस्कृत का है जो 'बन्ध' शब्द में 'नि' उपसर्ग जोड़कर बनाया गया है। हिंदी में यह शब्द अंग्रेजी में 'ऐसे' से बनाया गया है। ' हिंदी में यह शब्द अंग्रेजी में 'ऐसे' (Essey) शब्द के अनुवाद के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। 'ऐसे' के अर्थ है किसी भाव या विचार को अभिव्यक्त करने की कोशिश करना। निबंध के स्वरूप को भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टियों के आधार पर इन बिन्दुओं में समझाया जा सकता है : -

- निबंध गद्य की प्रसिद्ध विधा है।
- निबंध में विचारों को बौद्धिक ढंग से प्रस्तुत किया जाता है।
- निबंध में लेखक के व्यक्तित्व की उपस्थिति अनिवार्य होती है।
- निबंध में विचारों की अभिव्यक्ति में' वैयक्तिकता रहती है।
- निबंध में भाषा की प्रौढ़ता और शैली में लालित्य का भाव अधिक होता है।
- चिंतन के धरातल पर निबंध में दार्शनिक अंदाज अधिक रहता है।

हिंदी में निबंध की परम्परा का सूत्रपात उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ। हिंदी साहित्य मे आधुनिक काल में भारतेन्दु युग में पहली बार निबंध लेखन शुरू हुआ। हिंदी निबंध का विकास अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से संभव हो सका। भारतेन्दु युग तक आते आते खड़ीबोली का हिंदी भाषा के रूप में विकास हो चुका था। इसी समय अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी शुरु हो गया। इनके लिए निबंधों की अत्यधिक आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इन्हीं कारणों से हिंदी निबंध का तेजी से विकास हुआ। भारतेन्दु युग के प्राय: सभी लेखकों ने निबंध लिखे। इनके निबन्धों में हास्य-व्यंग्य की प्रधानता होती थी। ये निबंध अधिकांशत: भाव प्रधान होते थे। आवश्यकतानुसार कहीं कहीं विचार प्रधान निबंधों की भी रचना की गई। द्विवेदी युग के निबंधों में विषय की विविधता के दर्शन हुए। भौंह, बातचीत जैसे सामान्य से विषयों से लेकर 'शिवशंम्भू के चिट्ठे' जैसे राजनीति पर व्यंग करने वाले विविध विषयों पर निबंध लिखे गए। हिंदी निबंध को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने प्रौढ़ता तक पहुँचाया। उन्होंने मनोविकारों सम्बन्धी निबंधों के द्वारा हिंदी निबंध साहित्य को गरिमा प्रदान की। शुक्ल जी की लीक से हटकर बाद में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ललित निबंधों के रूप में नई निबंध शैली का विकास किया। आजादी के बाद भी विसंगत राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक आचारशीलता पर प्रहार करने के लिए व्यंग्यात्मक निबंधो की नई शैली का विकास हुआ।

हिंदी निबंधों को शुक्लजी का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हिंदी निबंध परंपरा के वे केन्द्रीय व्यक्तित्व हैं। उन्होंने सैद्धान्तिक, आलोचनात्मक और मनोविकार सम्बन्धी निबंध अपनी प्रसद्धि पुस्तक 'चिंतामणि' में प्रस्तुत किए। 'चिंतामणि' दो भागों में लिखी गई है। इधर उनके अन्य स्फुट निबंधों को 'चिंतामणि' भाग तीन के रूप में संकलित का प्रकाशित किया गया है। आपके पाठयक्रम में द्विवेदी युग के प्रसिद्ध निबंधकार अध्यापक पूर्णसिंह का 'सच्ची वीरता' शीर्षक निबंध रखा गया है। इसका विस्तृत अध्ययन और विवेचन क्रमश: किया जा रहा है।

17.2 जीवन एवं साहित्य परिचय

अध्यापक पूर्णसिंह की चर्चा एक श्रेष्ठ आत्मव्यंजक निबंधकार के रूप में की जाती है। आपका जन्म सन् 1881 ई में एक सम्पन्न सिख परिवार में हुआ था। सन् 1981 ई. में आपकी मृत्यु हुई। पेशे से आप अध्यापक थे। इसी कारण हिंदी साहित्य में आपको अध्यापक पूर्णसिंह के नाम से जाना जाता हैं।

रचनाएं :- अध्यापक पूर्णसिंह एक श्रेष्ठ निबन्धकार थे। आपके निकन्धों की संख्या लगभग एक दर्जन है। इतने से निबन्धों से इन्होंने हिंदी के निबंध साहित्य में अपनी अमिट छाप छोड़ी है। 'आचरण की सभ्यता', 'मजदूरी और प्रेम', सच्ची वीरता इनके श्रेष्ठ निबंध है। हिंदी में इन्होंने निबंध के क्षेत्र में जो भी लिखा उसने अपनी विशिष्ट पहिचान बना ली है। बाद में आपने हिंदी की जगह अंग्रेजी में लिखना शुरु कर दिया।

इनके निबंधों में स्वाधीन चिंतन, निर्भयता पूर्वक विचारों का प्रकाशन तथा प्रगतिशीलता के तत्व मिलते हैं। यद्दपि ये द्विवेदीकाल के निबंध लेखक थे परन्तु इनके निबंधों में उस युग की नीरसता तथा इतिवृत्तात्मकता के दर्शन नहीं होते हैं। इनके निबंधों में आदर्श भावना और सामाजिक कल्याण को प्रोत्साहित किया गया है। इनके निबंधों में विषयगत विविधिता के दर्शन नहीं होते हैं। आपके निबन्धों में भावना का एक तीव्र आवेगा और कल्पना की विलक्षण उड़ान मिलती है। लगभग ये ही प्रवृत्तियाँ हिंदी साहित्य में आगे चलकर छायावाद के रूप में विकसित हुई। इनके निबंधों में स्वच्छदतावादी प्रवृत्ति में स्पष्ट दर्शन होते हैं। द्विवेदी युगीन उपदेशात्मकता की प्रवृत्ति भी इनकी निबंधों में प्रचुरता से विद्यमान है, लेकिन वह एक महत् मानवीय आदर्श से परिचालित है। आपके निबंधों में आध्यात्मिकता की एक ऐसी व्यापक, सूक्ष्म किन्तु गहन प्रवृत्ति विद्यमान है कि उसके आधार पर इनके निबंध सहज ही रोमांटिक धरातल का स्पर्श करते हुए दिखई देते हैं।

मशीनी सभ्यता की एकतानता और नीरसता स्वार्थीपन की जो प्रतिक्रिया गाँधी और अन्य विचारकों में दिखाई देती हैं वहीं पूर्णसिंह के निबन्धों की वास्तविक भूमिका है। पूंजीवाद के प्रारम्भ में ही श्रम और श्रमिक कोजो महत्व उन्होंने प्रदान किया, उसी को बाद में भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के एक प्रमुख मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया। इन्होंने मशीनी उत्पादन की जगह हाथ से बनी वस्तुओं, चरखा आदि को अधिक महत्व दिया। भौतिकवादी जीवन पद्धति के स्थान पर आध्यात्मिक जीवन पद्धति को अधिक महत्व देते थे। यही कारण है कि इन्होंने "विविध सम्प्रदायों के बाहरी विधि - विधान को हटाकर उन सबके भीतर, एक आत्मा का स्पंदन, एक सार्वभौम मानव धर्म का स्वरूप देखा और अपने पाठकों को दिखाना की चेष्टा की। इस चेष्टा में इन्होंने तार्किकता या बौद्धिकता का सहारा न लेकर मनुष्य के भावना जगत् का संस्पर्श करने का प्रयास किया। हिंदी साहित्य कोश के अनुसार अध्यापक पूर्णसिंह के निबंधों में विचारों का सूत्र अत्यंत क्षीण है और कहीं कहीं तो वह टूट जाता है। पर अपने भावनात्मक प्रवाह में निश्चित् रूप से पाठकों को बहा ले जाते हैं।'

17.3 निबंध का वाचन

सच्ची वीरता :

सच्चे वीर पुरुष धीर, गम्भीर और आजाद होते है। उनके मन की गम्भीरता और शांति समुद्र की तरह विशाल और गहरी, या आकाश की तरह स्थिर और अचल होती है। वे कभी चंचल नहीं होते। रामायण में वाल्मीकिजी ने कुम्भककर्ण की गाढ़ी नींद में वीरता का एक चिन्ह दिखलाया है। सच है, सच्चे वीरों की नींद आसानी से नहीं खुलती। वे सत्वगुण के क्षीर-समुद्र में ऐसे डूबे रहते हैं कि उनको दुनिया की खबर ही नहीं होती। वे संसार के सच्चे परोपकारी होते हैं। ऐसे लोग दुनिया के तख्ते को अपनी आँख की पलकों से हलचल में डाल देते हैं। जब ये शेर जागकर गर्जते हैं, तब सदियों तक इनकी आवाज की गूँज सुनाई देती रहती हैं और सब आवाजें बन्द हो जाती हैं। वीर की चाल की आहट कानों में आती रहती है, और कभी मुझे और कभी तुझे मदमत्त करती है। कभी किसी की और कभी किसी की प्राण-सारंगी वीर के हाथ से बजने लगती है।

देखो, हरा की कन्दरा में एक अनाथ, दुनिया से छिपकर, एक अजीब नींद सोता है। जैसे गली में पड़े हुए पत्थर की ओर कोई ध्यान नहीं देता, वैसे ही आम आदमियों की तरह इस अनाथ को कोई न जानता था। एक उदाहरण धन-सम्पन्नता स्त्री की वह नौकरी करता है। उसकी सांसारिक प्रतिष्ठा सिर्फ एक मामूली गुलाम की-सी है। पर ऐसा देवी कारण हुआ जिससे संसार में अज्ञात उस गुलाम की बारी आयी। उसकी निद्रा खुली। संसार में मानो हजारों बिजलियाँ गिरीं। अरब के रेगिस्तान में बारुद की सी भड़क उठी। उसी वीर की आँखों की ज्वाला इन्द्रप्रस्थ से लेकर स्पेन तक प्रज्वलित हुई। उस अजात और गुप्त हरा की कन्दरा में सोने वाले एक आवाज दी। सारी पृथ्वी भय से काँपने लगी। हाँ, जब पैगम्बर मुहम्मद ने " अल्ला हो अकबर' का गीत गाया तब कुल संसार चुप हो गया। और, कुछ देर बाद, प्राकृतिक उसकी आवाज की गूँज को सब दिशाओं में ले उड़ी। पक्षी "अल्लाह' गाने लगे और मुहम्मद के पैगाम को इधर-उधर ले उड़े। पर्वत उनकी वाणी को सुनकर पिघल पड़े और नदियाँ " अल्लाह, अल्लाह' का अलाप करती हुई पर्वतों से निकल पड़ी। जो लोग उसके सामने आये वे उसके दास बन गये। चन्द्र और सूर्य ने बारी-बारी से उठकर सलाम किया। उस वीर का बल देखिए कि सदियों के बाद भी संसार के लोगों का बहुतसा हिस्सा उसके पवित्र नाम पर जीता है और अपने छोटे-से जीवन को अति तुच्छ समझकर उस अनदेखे और अज्ञात पुरुष के, केवल सुने-सुनाये, नाम पर कुर्बान हो जाना अपने जीवन का सबसे उत्तम फल समझता है।

सत्त्वगुण के समुद्र में जिनका अन्तःकरण निमग्र हो गया वे ही महात्मा, साधु और वीर हैं। वे लोग अपने क्षुद्र जीवन को परित्याग कर ऐसा ईश्वरीय जीवन पाते हैं कि उनके लिए संसार के सब अगम्य मार्ग साफ हो जाते हैं। आकाश उनके ऊपर बादलों क छाने लगाता है। प्रकृति उनके मनोहर माथे पर राजतिलक लगाती है। हमारे असली और सच्चे राजा ये ही साधु पुरुष हैं। हीरे और लाल से जड़े हुए सोने और चाँदी से जर्क-बर्क

सिंहासन पर बैठने वाले दुनिया के राजाओं को तो, जो गरीब किसानों की कमाई हुई दौलत पर पिंडोपजीवी होते हैं, लोगों ने अपनी मूर्खता से वीर बना रखा है। ये जरी, मखमल और जेवरों से लदे हुए माँस के पुतले तो हरदम काँपते रहते हैं। इन्द्र के समान ऐश्वर्यवान् और बलवान् होने पर भी दुनिया के ये छोटे "जार्ज ' बड़े कायर होते हैं। क्यों न हों इनकी हुकूमत लोगों के दिलों पर नहीं होती। दुनियाँ के राजाओं के बल की दौड़ लोगों के शरीर तक है। हाँ, जब कभी किसी अकबर का राज लोगों के दिलों पर होता हैं तब इन कायरों की बस्ती में मानो एक सच्चा वीर पैदा होता है।

एक बागी गुलाम और एक बादशाह की बातचीत हुई। यह गुलाम कैदी दिल से आजाद था। बादशाह ने कहा - मैं तुमको अभी जान से मार डालूँगा। तुम क्या कर सकते हो? गुलाम बोला- "हाँ, मैं फाँसी पर चढ़ जाऊंगा पर तुम्हारा तिरस्कार तब भी कर सकता हूँ।' बस, इस गुलाम ने दुनिया के बादशाहों के बल की हद दिखला दी। बस, इतने ही जोर और इतनी ही शेखी पर ये झूठे राजा शरीर को दुःख देते और मार-पीटकर अनजान लोगों को डराते हैं। भोले लोग उनसे डरते रहते हैं। चूँकि सब लोग शरीर को अपने जीवन का केन्द्र समझते हैं, इसीलिए जहाँ किसी ने उनके शरीर पर जरा जोर से हाथ लगाया वहीं वे मारे डर के अधमरे हो जाते हैं, केवल शरीर-रक्षा के निमित्त ये न इन राजाओं की ऊपरी मन से पूजा करते हैं। जैसे ये राजा वैसा उनका सत्कार। जिनका बल शरीर को जरा-सी रस्सी से लटकाकर मार देने भर का ही है, भला, उनका और उन बलवान और सच्चे राजाओं का क्या मुकाबला जिनका सिंहासन लोगों के हृदय-कमल की पंखडियों पर है? सच्चे राजा अपने प्रेम के जोर से लोगों के दिलों को सदा के लिए बाँध देते हैं। दिलों पर हुकूमत करने वाली फौज, तोप, बन्दूक आदि के बिना ही वे शाहंशाह जमाना होते हैं। मंसूर ने अपनी मौज् में आकर कहा - "मैं खुदा हूँ। 'दुनिया के बादशाह ने कहा- "यह काफिर है।' मगर मंसूर ने अपने कलाम को बन्द न किया।

पत्थर मार-मारकर दुनिया ने उसके शरीर की बुरी दशा की, परन्तु उस मर्द के हर बाल से ये ही शब्द निकले- "अनलहक' - "अहं ब्रह्मास्मि" 'मैं ही ब्रह्म हूँ।' सूली पर चढ़ना मंसूर के लिए सिर्फ खेल था। बादशाह ने समझा कि मंसूर मारा गया।

शम्स तबरेज को भी ऐसा ही काफिर समझकर बादशाह ने हुक्म दिया कि इसकी खाल उतार दो। शम्स ने खाल उतारी और बादशाह को, दरवाजे पर आये हुए कुत्ते की तरह भिखारी समझकर, वह खाल खाने के लिए दे दी। देकर वह अपनी यह गजल बराबर गाता रहा - "भीख माँगने वाला तेरे दरवाजे पर आया है, ऐ शाहेदिल! कुछ इसको दे दो।' खाल उतारकर फेंक दी। वाह रे सत्पुरुष।

भगवान् शंकर जब गुजरात की तरफ यात्रा कर रहे थे तब एक कापालिक हाथ जोड़े सामने आकर खड़ा हुआ। भगवान् ने कहा- "माँग, क्या माँगता है? 'उसने कहा- "भगवान्! आजकल के राजा बड़े कंगाल हैं। उनसे अब हमें दान नहीं मिलता। आप ब्रह्मज्ञानी और सबसे बड़े दानी हैं। इसलिए मैं आपके पास आया हूँ। आप कृपया करके

मुझे सिर दान करें, जिसकी भेंट चढ़ाकर मैं अपनी देवी को प्रसन्न करूँगा और अपना यज्ञ पूरा करूँगा।'

भगवान ने मौजू में आकर कहा- "अच्छा, कल यह सिर उतारकर ले जाना और काम सिद्ध कर लेना।"

एक दफे दो वीर पुरुष अकबर के दरबार में आये। वे लोग रोजगार की तलाश में थे। अकबर ने कहा- "अपनी-अपनी वीरता का सबूत दो।' बादशाह ने कैसी मूर्खता की। वीरता का भला वे क्या सबूत देते? परन्तु दोनों ने तलवारें निकाल लीं और एक दूसरे के सामने कर उनकी तेज धार पर दौड़ गये और वहीं राजा सामने क्षणभर में अपने खून में ढेर हो गये।

ऐसे दैवी वीर रुपया, पैसा, माल, धन का दान नहीं दिया करते। जब वे दान देने की इच्छा करते हैं तब अपने आपको हवन कर देते हैं। बुद्ध महाराज ने जब एक राजा को मुग मारते देखा तब अपना शरीर आगे कर दिया जिससे मृग बच जाय, बुद्ध का शरीर चाहे चला जाये। ऐसे लोग कभी बड़े मौकों का इन्तजार नहीं करते, छोटे मौकों को ही बड़ा बना देते हैं।

जब किसी का भाग्योदय हुआ और उसे जोश आया है तब जान लो कि संसार में एक तूफान आ गया। उसकी चाल के सामने फिर कोई रुकावट नहीं आ सकती। पहाड़ों की पसलियाँ तोड़कर ये लोग हवा के बगोले की तरह निकल जाते हैं, उनके बल का इशारा भूचाल देता है और उनके दिल की हरकत का निशान समुद्र का तूफान देता है। कुदरत की और कोई ताकत उसके सामने फटक नहीं सकती। सब चीजें थम जाती हैं। विधाता भी साँस रोककर उनकी राह को देखता है। योरूप में जब रोम के पोप का जोर बहुत बढ़ गया था तब उसका मुकाबला कोई भी बादशाह न कर सकता था। पोप की आँखों के इशारे से योरुप के बादशाह तख्त से तख्त से तउर दिये जा सकते थे। पोप कासिक्का यौरुप के लोगों पर ऐसा बैठ गया था कि उसकी बात को लते ब्रह्म वाक्य से भी बढ़कर समझते थे और पोप को ईश्वर का प्रतिनिधि मानते थे। लाखों ईसाई, साधु संन्यासी और योरुप के तमाम गिर्जे पोप के हुक्म की पाबन्दी करते थे। जिस तरह चूहे की जान बिल्ली के हाथ में होती है उसी तरह पोप ने योरुपवासियों की जान अपने हाथ में कर ली थी। इस पोप का बल और आंतक बड़ा भयानक था। मगर जर्मनी के एक छोटे-से मन्दिर के एक कंगाल पादरी की आत्मा जल उठी। पोप ने इतनी लीला फैलायी थी कि योयप में स्वर्ग और नरक के टिकट बड़े-बड़े दामों पर बिकते थे। टिकट बेच- बेचकर यह पोप बड़ा विषयी हो गया था। लूथर के पास जब टिकट बिक्री होने को पहुँचे तब उसने पहले एक चिट्ठी लिखकर भेजी कि ऐसे काम झूठे तथा पापमय हैं और बन्द होने चाहिए। पोप ने इसका जवाब दिया- "लूथर! तुम इस गुस्ताखी के बदले आग में जिन्दा जला दिये जाओगे।' इस जवाब से लूथर की आत्मा की आग और भी भड़की। उसने लिखा- " अब मैंने अपने दिल में निश्चय कर लिया है कि तुम ईश्वर के तो नहीं, किन्तु शैतान के प्रतिनिधि हो। अपने आपको ईश्वर के प्रतिनिधि कहने वाले मिथ्यावादी। जब मैंने तुम्हारे

पास सत्यार्थ का संदेश भेजा तब तुमने आग और जल्लाद के नामों से जवाब दिया। इससे साफ प्रतीत होता है कि तुम शैतान की दलदल पर खड़े हो न कि सत्य की चट्टान पर। यह लो तुम्हारे टिकटों के गट्टे मैंने आग में फेंके। जो मुझे करना था मैंने कर दिया, जो अब तुम्हारी इच्छा हो, करो। मैं सत्य की चट्टान पर खड़ा हूँ। इस छोटे-से संन्यासी ने वह तूफान योरुप में पैदा कर दिया जिसकी एक लहर से पोप कासारा जंगी बेड़ा चकनाचूर हो गया। तूफान में एक तिनके की तरह वह न मालूम कहाँ उड़ गया।

महाराज रणजीतसिंह ने फौज से कहा- "अटक के पार जाओ।" अटक चढ़ी हुई थी और भयंकर लहरें उठी हुई थीं। जब फौज ने कुछ उत्साह प्रकट न किया तब उस वीर को जरा जोश आया। महाराज ने अपना घोड़ा दरिया में डाल दिया। कहा जाता है कि अटक सूख गयी और सब पार निकल गये।

दुनिया में जंग के सब सामान जमा हैं। लाखों आदमी मरने-मारने को तैयार हो रहे हैं। गोलियाँ पानी की बूँदों की तरह मूसलाधार बरस रही हैं। यह देखो, वीर को जोश आया। उसने कहा- "हाल्ट' (ठहरो) तमाम फौज नि:स्तब्ध होकर सकते की हालत में खड़ी हो गयी। आलप्स के पहाड़ी पर फौज ने चढ़ना ज्योंही असंभव समझा त्योंही वीर ने कहा- आलप्स है ही नहीं। फौज को निश्चय हो गया कि आलप्स नहीं है और सब लोग पार हो गये।

एक भेड़ चराने वाले और सतोगुण में डूबी हुई युवती कन्या के दिल में जोश आते ही कुल फ्रांस एक भारी शकस्त से बचाया।

अपने आपको हर घड़ी और हर पल महान् से भी महान् बनने का नाम वीरता है। वीरता के कारनामे तो एक गौण बात है। असल वीर तो इन कारनामों को अपनी दिनचर्या में लिखते भी नहीं। पेड़ तो जमीन से रस-ग्रहण करने में लगा रहता है। उसे यह ख्याल ही नहीं होता कि मुझमें कितने फल या फूल लगेंगे और कब लगेंगे। उसका काम तो अपने आपको सत्य में रखना है- सत्य को अपने अन्दर कूट-कूटकर भरना है अन्दर ही अन्दर बढ़ना है। इस चिन्ता से क्या मतलब कि कौन मेरे फल खायेगा या मैंने कितने फल लोगों को दिये।

वीरता का विकास नाना प्रकार से होता है। कभी तो उसका विकास लड़ने मरने में, खून बहाने में तलवार-तोप के सामने जान गँवाने में होता है, कभी प्रेम के मैदान में उसका झण्डा खड़ा होता है। कभी जीवन के गूढ़ तत्त्व और सत्य की तलाश में बुद्ध जैसे राज-विरक्त होकर वीर हो जाते हैं। कभी किसी आदर्श पर और कभी किसी पर वीरता अपना फरहरा लहराती है। परन्तु वीरता एक प्रकार का इलहाम या दैवी प्रेरणा है। जब कभी इसका विकास हुआ तभी एक नया कमाल नजर आया, एक नया जलाल पैदा हुआ, एक नयी रौनक, एक नया रंग, एक नयी बहार, एक नयी प्रभूता संसार में छा गयी। वीरता हमेशा निराली और नई होती है। नयापन की वीरता का एक खास रंग है। हिन्दुओं के पुराणों की वह आलंकारिक कल्पना जिससे पुराणकारों ने ईश्वरावतारों को अजीब-अजीब और भिन्न-भिन्न वेश दिए हैं, सच्ची मालूम होती है, क्योंकि वीरता का एक विकास

दूसरे विकास से कभी किसी तरह मिल नहीं सकता। वीरता की कभी नकल नहीं हो सकती, जैसे मन की प्रसन्नता कभी कोई उधार नहीं ले सकता। वीरता देश-काल के अनुसार संसार में जब कभी प्रकट हुई तभी एक नया स्वरूप लेकर आयी जिसके दर्शन करते ही सब लोग चकित हो गये-कुछ बन न पड़ा और वीरता के आगे सिर झुका दिया।

जापानी वीरता की मूर्ति पूजते हैं। इस मूर्ति का दर्शन वेचेरी के फूल की शान्त हँसी में करते हैं। क्या यही सच्ची और कौशलमयी पूजा है। वीरता सदा जोर से भरा हुआ ही उपदेश नहीं करती। वीरता कभी-कभी हृदय की कोमलता का भी दर्शन कराती है।ऐसी कोमलता देखकर सारी प्रकृति कोमल हो जाती है।ऐसी सुन्दरता देखकर लोग मोहित हो जाते हैं। जहाँ कोमलता और सुन्दरता के रूप में वह दर्शन देती है तब चेरी-फूल से भी ज्यादा नाजुक और मनोहर होती है। जिस शख्स ने योरुप को क्रूसेडेज के लिए हिला दिया वह उन सबसे बड़ा वीर था जो लड़ाई में लड़े थे। इस पुरुष में वीरता ने आँसूओं और आहों का लिबास लिया। देखो, एक छोटा-सा मामूली पुरुष युरुप में जाकर रोता है कि हाय, हमारे तीर्थ हमारे वास्ते खुले नहीं और यूहद के राजा योरुप के यात्रियों को दिक करते हैं। इस आँसू-भरी अपील को सुनकर मारा योरुप उसके साथ रो उठा। यह आला दरजे की वीरता है।

बुलबुल की छाया को बीमार लोग सब दवाइयों से बढ़कर समझते थे। उसके दर्शनों से ही कितने बीमार अच्छे हो जाते हैं। वह अव्वल दर्जे का सच्चा पक्षी है जो बीमारों के सिरहाने खड़ा होकर दिन-रात गरीबों की निष्काम सेवा करता है और गन्दे जख्मों को जरूरत के वक्त अपने मुँह से चूसकर साफ करता है। लोगों के दिलों पर ऐसा प्रेम का राज अटल है। यह वीरता पर्दानशील हिन्दुस्तानी औरत की तरह चाहे कभी दुनिया के सामने न आये, इतिहास के वर्कों के काले हर्फो में न आये, तो भी संसार ऐसे ही बल से जीता है।

वीर पुरुष का दिल सबका दिल हो जाता है। उसका मन सब का मन ही जाता है।उसके ख्याल सबके ख्याल हो जाते हैं। सबके संकल्प उसके संकल्प हो जाते हैं। उसका बल सब का बल हो जाता ह। वह सब का और सब उसके हो जाते हैं।

वीरों के बनाने के कारखाने कायम नहीं हो सकते। वे तोदेवदार के दरख्तों की तरह जीवन के अरण्य में खुद-बखुद पैदा होते हैं। और बिना किसी के पानी दिये, बिना किसी के दूध पिलाये, बिना किसी के हाथ लगाये, तैयार होते हैं। दुनिया के मैदान में अचानक ही सामने आकर वे खड़े हो जाते हैं उनका सारा जीवन भीतर ही भीतर होता है। बाहर तो जवाहिरात की खानों की ऊपरी जमीन की तरह कुछ भी दृष्टि में नहीं आता। वीर की जिन्दगी मुश्किल से कभी-कभी बाहर नजर आती है। उसका स्वभाव तो छिपे रहने का है। वह लाल गुदडियों के भीतर छिपा रहता है। कंदराओं में, गौरों में, छोटी झोंपड़ियों में, बड़े-बड़े वीर महात्मा छिपे रहते हैं। पुस्तकों और अखबारों को पढ़ने से या विद्वानों के व्याख्यानों को सुनने से तो बस ड्राइंग-हाल के वीर पैदा होते हैं, उनकी वीरता अनजान

लोगों से अपनी स्मृति सुनने तक खतम हो जाती है। असली वीर तोदुनिया की बनावट और लिखावट क् मखौलों के लिए नहीं जीते।

हर बार दिखावे और नाम की खातिरदाती ठोंककर आगे बढ़ना और फिर पीछे हटना पहले दरजे की बुद्‌जिली है। वीर तो वह समझता है कि मनुष्य का जीवन एक जरा-सी चीज है, वह सिर्फ एक बार के लिए काफी है। मानो इस बन्दूक में एक ही गोली है। हाँ, कायर पुरुष इसकी बड़ा ही कीमती और कभी न टूटने वाला हथियार समझते हैं। हर घड़ी आगे बढ़कर और यह दिखाकर कि हम बड़े हैं, वे फिर पीछे इस तरह से हट जाते हैं कि उनका अनमोल जीवन किसी और अधिक बड़े काम के लिए बच जाय। बादल गरज-गरज कर ऐसे ही चले जाते हैं, परन्तु बरसने वाले बादल जरा ढेर में बारह इंच तक बरस जाते हैं।

कायर पुरुष कहते हैं- "आगे बढ़े चलो।' वीर कहते हैं- "पीछे हटे चलो। ' कायर कहते हैं- "उठाओ तलवार।' वीर कहते हैं- "सिर आगे करो।' वीर का जीवन प्रकृति ने अपनी शक्तियों को फजूल खो देने के लिए नहीं बनाया है। वीर पुरुष का शरीर कुदरत की कुल ताकतों का भंडार है। कुदरत का यह मरकज हिल नहीं सकता। सूर्य का चक्कर हिल जाय तो हिल जाय, परन्तु वीर के दिल में जो दैवी केन्द्र है वह अचल है। कुदरत के और पदार्था की पालिसी चाहे आगे बढ़ने की हो, अर्थात् अपने बल को नष्ट करने की हो, मगर वीरों की पालिसी बल को हर तरह इक्ट्ठा करने और बढ़ाने की होती है। वीर तो अपने अन्दर ही मार्च करते हैं, क्योंकि हृदयाकाश के केन्द्र में खड़े होकर वे कुल संसार को हिला सकते हैं।

बेचारी मरियम का लाडला, खूबसूरत जवान, अपने मद में मतवाला और अपने आपको शहंशाह कहने वाला ईसामसीह क्या उस समय कमजोर मालूम होता है जब भारी सलीब पर उठकर कभी गिरता, कभी जख्मी होता और कभी बेहोश हो जाता है? कोई पत्थर मारता है, कोई ढेला मारता कोई थूकता है, मगर उस मर्द का दिल नहीं हिलता। कोई क्षुद्रहृदय और कायर होता तो अपनी बादशहत के बल की गुत्थियाँ खोल देता, अपनी ताकत को नष्ट कर देता, और सम्भव है कि एक निगाह से उस सल्लनत के तख्ते उलट देता और मुसीबत को टाल देता, परन्तु जिसको हम मुसीबत जानते। उसको वह मखौल समझता था। "सूबी मुझे है सेज पिया की, सोने दो मीठी नहींद है आती। 'अमर ईसा को भला दुनिया के विषय-विकार में डूबे लोग क्या जान कसते थे? अगर चार चिड़ियाँ मिलकर मुझे फाँसी का हुक्म सुना दें और मैं उसे सुनकर रो दूँ या डर जाऊं तो मेरा गौरव चिड़ियों से भी कम हो जाय। जैसे चिड़ियाँ मुझे फाँसी देकर उड़ गई हैं वैसे ही बादशाह और बादशाहतें आज खाक में मिल गई हैं। सचमुच ही वह छोटा-सा बाबा लोगों का सच्चा बादशाह है। चिड़ियों और जानवरों की कचहरियों के फैसलों से जो डरते या मरते हैं वे मनुष्य नहीं हो सकते। रानाजी ने जहर के प्याले से मीराबाई को डराना चाहा। मगर वाह रे प्रेम। मीरा ने उस जहर को भी अमृत मानकर पी लिया। वह शेर और हाथों के सामने की गयी, मगर वाह रे प्रेम। मस्त हाथी और शेर ने देवी के चरणों की धूलि

को अपने मस्तक पर मला ओर अपना रास्ता लिया। इस वास्ते वीर पुरुष आगे नहीं, पीछे जाते हैं। भीतर ध्यान करते हैं। मारते नहीं, मरते हैं।

वह वीर क्या है जो टीन के बरतन की तरह झट गरम और झट ठंडा हो जाता है। सदियों नीचे आग जलती रहे तो भी शायद ही वीर गरम हो और हजारों वर्ष बर्फ उस पर जमती रहे तो भी क्या मजाल जो उसकी वाणी तक ठंडी हो। उसे खुद गरम और सर्द होने से क्या मतलब? कारलायल को जो आजकल की सभ्यता पर गुस्सा आया तो दुनिया में एक नयी शक्ति और नयी जवान पैदा हुई। कारलायल अंग्रेज जरुर हैं, पर उसकी बोली सबसे निराली है। उसके शबद मानो आग की चिनगारियाँ हैं जो आदमी के दिलों में आग-सी लगा देती हैं। सब कुछ बदल जाय मगर कारालायल की गरमी कभी कम न होगी। यदि हजार वर्ष संसार में दुखड़े ओर दर्द रोये जायँ तो भी बुद्धि की शान्ति और दिल की ठंडक एक दर्जा भी इधर-उधर न होगी। यहाँ आकर भौतिक विज्ञान के नियम रो देते हैं। लजारों वर्ष आग जलती रहे तो भी थर्मामीटर जैसा का तैसा ही रहेगा।

बराबर के सिपाहियों ने और लोगों के साथ गुदा नानक को भी बेगार में पकड़ लिया। उनके सिर बोझ रखा और कहा- "चलो।' आप चल पड़े। दौड़- धूप, बोझ, मुसीबत, बेगार में पकड़ी हुई स्त्रियों का रोना, शरीफ लोगों का दुःख गाँव-के-गाँव का जलना, सब किस्म की दुःखदायी बातें ही हो रही हैं। मगर किसी का कुछ असर नहीं हुआ। गुरु नानक ने अपने साथी मर्दाना से कहा- "सारंगी बजाओ, हम गाते हैं। ' उस भीड़ में सारंगी बज रही है और आप गा रहे हैं। वाह री शान्ति।

अगर कोई छोटा-सा बच्चा नेपोलियन के कंधे पर चढ़कर उसके सिर के बाल खींचे तो क्या नेपोलियन इसको अपनी बेइज्जती समझकर उस बालक को जमीन पर पटक देगा। जिसमें लोग उसको बड़ा वीर कहें? इसी तरह सच्चे वीर जब उनके बाल दुनिया की चिड़ियाँ नोचती हैं, तब कुछपरवाह नहीं करते। क्योंकि उनका जीवन आस-पास वालों के जीवन से निहायत ही बढ़चढ़ कर ऊँचा और बलवान् होता है। ऐसी बातों परवीर कब हिलते हैं। जब उनकी मौज आयी तभी मैदान उनके हाथर है।

जापान के एक छोटे-से गाँव की एक झोंपड़ी में छोटे कद का एक जापानी रहता था। उसका नाम ओशियों था। वह पुरुष बड़ा अनुभवी और ज्ञानी था। बड़े कड़े मिजाज का, स्थिर, धीर और अपने खयालात के समुद्र में डूबा रहने वाला पुरुष था। आस-पास के रहने वाले लोगों के लड़के इस साधु के पास आया जाया करते थे और वह उनको मुक्त पढ़ाया करता था। जो कुछ मिल जाता वही खा लेता था। दुनिया की व्यावहारिक दृष्टि से वह एक किस्म का निखट्टू था। क्योंकि इस पुरुष ने संसार का कोई बड़ा काम नहीं किया था। उसकी सारी उम्र शान्ति और सत्वगुण में गुजर गई थी। लोग समझते थे कि वह एक माली आदमी है। एक दफा इत्तिफाक से दो-तीन फसलों के न होने से फकीर के आसपास के मुल्क में दुर्भिक्ष पड़ गया। दुर्भिक्ष बड़ा भयनक था। लोग बडे दुखी हुए। लाचार होकर इस नंगे, कंगाल फकीर के पास मदद माँगने आये। उसके दिल में कुछ खयाल आया। उनकी मदद करने को वह तैयार हो गया। पहले वह ओसाकी नामक शहर

के बड़े -बड़े धनाढय और भद्र पुरुषों के पास गया और उनसे मदद माँगी। इन भलेमानसी ने तो वादा किया, पर उसे पूरा न किया। ओशियों फिर उनके पास कभी नहीं गया। उसने बादशाह और वजीरों को पत्र लिखे कि इन किसानों को मददउ देनी चाहिए। परन्तु बहुत दिन गुजर जाने पर भी जवाब न आया। ओशियों ने अपने कपड़े और किताबें नीलाम कर दीं। जो कुछ मिला, मुट्टी भरकर उन आदमियों की तरफ फेंक दिया। भला इससे क्या हो सकता था। परन्तु ओशियों का दिल इससे पूर्ण शिवरूप हो गया। यहाँ इतना जिक्र कर देना काफी होगा कि जापान के लोग अपने बादशाह को पिता की तरह पूजते हैं। उन्हें हृदय की यह एक वासना है। ऐसी कौम के हजारों आदमी इस वीर के पास जमा हैं। ओशियों ने कहा- "सब लोग हाथ में बाँस लेकर तैयार हो जाओ और बगावत का झण्डा खड़ा कर दो।' कोई भी चूँवा चाँ न कर सका। बगावत का झण्डा खड़ा हो गया। ओशियों एक बाँस पकड़ कर सबके आगे किओटो जाकर बादशाह के किले पर हमला करने के लिए चला। इस फकीर जनरल की फौज की चाल को कौन रोक सकता था? जब शाही किले के सरदार ने देखा तब उसने रिपोर्ट की और आज्ञा माँगी कि ओशियों और उनकी बागी फौज पर बच्चों की बाढ़ छोड़ी जाय? हुक्म हुआ कि" नहीं, ओशियाओं तो कुदरत के सब्ज तर्को को पढ़ने वाला है। वह किसी खास बात के लिए चढ़ाई करने आया होगा। उसको हमला करने दो और आने दो।' जब ओशियों, किले में दाखिल हुआ तब वह सरदार इस मस्त जनरल को पकड़कर बादशाह के पास ले गया। उस वक्त ओशियाओं ने कहा - "वे राजभण्डार, जो अनाज से भरे हुए हैं, गरीबों की मदद के लिए क्यों नहीं खोल दिये जाते?'

जापान के राजा को डर-सा लगा। एक वीर उसके सामने खड़ा था, जिसकी आवाज में दैवीशक्ति थी। हुक्म हुआ कि शाही भण्डार खोल दिये जायें और सारा अन्न दरिद्र किसानों में बाँटा जाय। सब सेना और पुलिस धरी की धरी रह गई। मन्त्रियों के दफ्तर लगे के लगे रहे। ओशियों ने जिस काम पर कमर बाँधी उसको कर दिखाया। लोगों की विपत्ति कुछ दिनों के लिए दूर हो गयी। ओशियो के हृदय की सफाई, सचाई और द्दढ़ता के सामने भला कौन ठहर सकता था? सत्य की सदा जीत होती है। यह भी वीरता का एक चिह्न है। रूस के जार ने सब लोगों को फाँसी दे दी। किन्तु टाल्सटाय को वह दिल से प्रणाम करता थ, उनकी बातों का आदर करता था। जय वहीं होती है जहाँ कि पवित्रता और प्रेम है। दुनिया किसी कूड़े के ढेर पर नहीं खड़ी है कि जिस मुर्गे ने बाँग दी वहीं सिद्ध हो गया। दुनिया धर्म और अटल आध्यात्मिक नियमों पर खड़ी है जो अपने आपको उन नियमों के साथ अभिन्नता करके खड़ा हुआ वह विजयी हो गया। आजकल लोग कहते हैं कि काम करो। पर हमें तो ये बातें निरर्थक मालूम होती हैं। पहले काम करने को बल पैदा करो। अपने अन्दर वृक्ष की तरह बढ़ो। आजकल भारतवर्ष में परोपकार का बुखार फैल रहा है। जिसको 105 डिग्री का यह बुखार चढ़ा वह आजकल के भारतवर्ष का ऋषि हो गया। आजकल भारतवर्ष में अखबारों की टकसाल में गढ़े हुए वीर दर्जनों मिलते ही। जहाँ किसी ने एक-दो काम किये और आगे बढ़कर छाती दिखाई वहाँ हिन्दुस्तान के

सारे अखबारों में 'हीरो' और 'महात्मा' की पुकार मचायी। बस, एक नया वीर तैयार हो गया। ये तो पागलपन की लहरें हैं। अखबार लिखने वाले मामूली सिक्के के मनुष्य होते हैं। उनकी स्तुति और निन्दा पर क्यों मर जाते हो? क्या यह सच नहीं कि हमारे आजकल के वीरों की जान अखबारों के लेखों में है। जहाँ उन्होंने रंग बदला कि हमारे वीरों के रंग बदले, ओठ सूखे और वीरता की आशाएं टूट गयीं।

प्यारे, अन्दर के केन्द्र की और अपनी चाल उलटी और इस दिखावटी और बनावटी जीवन की चंचलता में अपने आपको न खो दो। वीर नहीं तो वीरों के अनुगामी हो और वीरता के काम नहीं तो धीरे-धीरे अपने अन्दर वीरता के परमाणुओं को जमा करो।

जब हम कभी वीरों का हाल सुनते हैं तब हमारे अन्दर भी वीरता की लहरें उठती हैं और वीरता का रंग चढ़ जाता है। परन्तु वह चिरस्थायी नहीं होता। इसका कारण सिर्फ यही है कि हमारे भीतर वीरता का मसाला तो होता नहीं। हम सिर्फ खाली महल उसके दिखलाने क लिए बनाना चाहते हैं। टीन के बरतन का स्वभाव छोड़कर अपने जीवन के केन्द्र में निवास करो और सचाई की चट्टान पर दृढ़ता से खड़े हो जाओ। अपनी जिन्दगी किसी और के हवाले करो ताकि जिन्दगी के बचाने की कोशिश में कुछ भी वक्त जाया न हो। इसीलिए बाहर की सतह को छोड़कर जीवन के अन्दर की तहों में घुस जाओ, तब नए रंग खुलेंगे। द्वेष और भेद-दृष्टि छोड़ो, रोना छूट जाएगा। प्रेम और आनन्द से काम लो, शान्ति की वर्षा होने लगेगी और दुखड़े दूर हो जायेंगे। जीवन के तत्व का अनुभव करके चुप हो जाओ, धीर और गम्भीर हो जाओगे। वीरों की, फकीरों की, पीरों की यह कूक है- हटो पीछे, अपने अन्दर जाओ, अपने आपको देखो, दुनिया और की और हो जायगी, अपनी आत्मिक उन्नति करो।

कठिन शब्द :- क्षीर-समुद्र - दूध का सागर, मदमत्त-नशा चढ़ना, प्राण-सारंगी-प्राणों की धड़कन, उदार-हृदया-विशाल हृदय, जर्कबर्क-मढा हुआ, पिडोपजीवी-शरीर का पालन करने वाले, हुकूमत- शासन, अनहलक-मैं ही ईश्वर हूँ कापालिक-एक विशेष प्रकार का साधु, बगोला- झौंका, विषय-काम भावना से ओतप्रोत, मिथ्यावादी-झूठ बोलने वाला, जंगी बेड़ा-विशाल जहाज, अटक-एक नदी का नाम, दरिया-नदी, वर्क-पन्ने (पृष्ठ) हर्फ-अक्षर। दरशन्त-पेड़, अरण्य- जंगल, मखोल-मजाक, बुजदिली-कायरता, हृदयाकाश-हृदय रूपी आकाश।

17.4 निबंध का सार

आपने इस 'सच्ची वीरता' निबंध को ध्यान पूर्वक पढ़ा होगा। इसे पढ़कर आप भली प्रकार से समझ गए होंगे कि अध्यापक पूर्णसिंह ने अपने इस निबंध में क्या कहा है? इस निबंध में लेखक ने सच्ची वीरता किसे कहा जाना चाहिए इसको समझाने का प्रयास किया है। वीरता एक ऐसा भाव है जिसका आधार उत्साह होता है। सामान्यत: वीरता को युद्धवीर, दानवीर, दयावीर आदि के रूप में समझाया जाता है। बड़े से बड़े यौद्धा युद्ध भूमि में हँसते हँसते अपने प्राणों को न्यौछावर कर देते हैं। युद्ध से डरना या कायरों की तरह भाग खड़े होना वीर लोग नहीं जानते हैं। लेकिन पूर्णसिंह जी ने अपने निबंध में वीरता

के इस सर्वमान्य स्वरूप को नहीं अपनाया है। उन्होंने मानवीय व्यवहारों की छोटी से छोटी बातों में किसी भीत रह की हानि की परवाह किए बिना अपने आपको कर्म क्षेत्र में झौंक देने या पूर्ण तरह से समर्पित कर देने को सच्ची वीरता के रूप में प्रकट किया है।
सच्चे वीर पुरुष दिखावे के लिए या सामाजिक प्रतिष्ठा पाने के लिए वीरता का प्रदर्शन कभी नहीं करते हैं। सच्चे वीर पुरुष धैर्यवान, गम्भीर और आजाद होते हैं। वे कभी चंचलता का प्रदशन नहीं करते हैं क्योंकि उनका मन समुद्र की तरह विशाल और आकाश की तरह स्थिर रहता है। सामान्य दुनिया से बेखबर रहते हुए सच्चे वीर सत्वगुण के समुद्र में सदैव डूबे रहते हैं। वे अपने लिए नहीं जीते हैं वरन् समाज के लिए संसार के हित के लिए जीवन यापन करते हैं। वे सच्चे अर्थों में परोपकारी होते हैं। स्वार्थ के लिए भाग दौड़ करना उन्हें नहीं सुहाता है। इसी कारण ऊपरी तौर पर वे कुम्भकर्ण की तरह सदैव गहरी नींद में सोए हुए से रहते हैं। लेकिन जब इनके कर्त्तव्य की संसार को जरूरत महसूस होती है तब वे शेर की तरह जागकर ऐसा गर्जते हैं कि सदियों तक समाज में इनकी दहाड़ की गूँज सुनाई देती रहती है।
सच्चे वीरों का मन सदैव सात्विक भाषा से भरा रहता है। ये लोग अपने क्षुद्र जीवन का परित्याग कर ऐसा ईश्वरीय जीवन पाते हैं कि उनके लिए संसार के सारे मुश्किल से मुश्किल काम आसान हो जाते हैं। सच्चा वीर पुरुष रुपया-पैसा, धन-दौल्ल का दान नहीं करते बल्कि वे तो अपने आपको ही दान में दे देते हैं। ये लोग कभी भी बड़े अवसरों की प्रतीक्षा नहीं करते हैं वरन् अपने त्याग से छोटे अवसरों को ही बड़ा बना देते हैं। ये लोग हर बार छाती ठोक कर आगे नहीं बढ़ते हैं, न एक बार आगे बढ़ जाने पर कायरों की तरह पीछे ही हटते हैं। सबा वीर जानता है कि उनके जीवन रूपी बन्दूक में सिर्फ एक ही गोली है। इसलिए वह अपने जीवन को जरा सी बात मानते हैं। इनकी दृष्टि में जीवन कंजूस में धन की तरह दबाकर सुरक्षित रखने की चीज न होकर सिर्फ एक बार के लिए मर मिट जाने की चीज है। जैसे बरसने वाले गरजते नहीं हैं वैसे ही सच्चे वीर भी नकली दिखावा नहीं करते हैं। अवसर आने पर बिना किसी भय के अपने आपको पूरी तरह से समर्पित कर देते हैं।
वीर पुरुष दूसरों को मर मिटाने के लिए उकसाते नहीं हैं वे तो दूसरों को पीछे हटाते हुए अपना सिर आगे कर देते हैं। वीरों का जीवन प्रकृति का अनमोल खजाना होता है। वह कुदरत की सम्पूर्ण ताकतों के भण्डार की तरह है। सूर्य भले ही अपने चक्कर से हिल जाए पर सच्चे वीरों का दिल कभी नहीं हिल सकता है। वीर अपनी ताकत को फालतू बातों में खर्च नहीं करता है वरन् हर तरह से अपनी ताकत को वह इकट्ठा किए रहता है। वे दिखावटी ढंग से बाहर की ओर मार्च नहीं करते हैं। वरन् अपने अन्दर ही मार्च करते हैं, क्योंकि अपने हृदय रूपी आकाश में खड़े होकर वे सारे संसार को हिला सकते हैं।
सच्चा वीर टीन के बरतन की तरह झट से गरम और झट से ठंडा नहीं हो जाता है। सदियों तक नीचे आग जलती रहे तब भी शायद ही वीर गरम हो और हजारों वर्ष उस पर बर्फ जमती रहे तब भी क्या मजाल की उसकी वाणी तक भी ठंडी हो जाए। उनका जीवन आस पास की बातों से बहुत ऊपर होता है। वे अखबारों की खबरें बनना पसंद ही

करते हैं लेकिन जब समाज को सचमुच उनकी आवश्यकता होती है तब वे आकाश-पातल को हिलाकर रख देते हैं। इनके प्रहारों से पहाड़ भी चकनाचूर हो जाते हैं।

पूर्णसिंह जी के अनुसार जब हम वीरों का हाल सुनते हैं तो हमारे अन्दर भी वीरता की लहरे उठने लगती है। लेकिन हमारी वीरता स्थायी नहीं होती है क्योंकि असल में हमारे अन्दर वीरता का कोई मसाला नहीं होता है। इसलिये लेखक अन्त में यह कहता है कि ' 'प्यारे अन्दर के केन्द्र की ओर अपनी चाल उलटो। इस दिखावटी और बनावटी जीवन की चंचलता में अपने आपको न खो दो। वीर नहीं तो वीरों के अनुगामी ही बनो। वीरता के काम नहीं कर सकते तो धीरे- धीरे अपने अन्दर वीरता के परमाणुओं को जमा करो।'

17.5 प्रमुख स्थलों की व्याख्या

पहली व्याख्या : - सच्चे वीर पुरुष धीर...... व जने लगती है।

संदर्भ : - प्रस्तुत पंक्तियाँ हिंदी साहित्य के अनूठे निबंधकार अध्यापक पूर्णसिंह के प्रसिद्ध निबंध 'सच्ची वीरता' से उद्धृत हैं। इसमें लेखक ने वीरों और वीरता के सच्चे स्वरूप को समझाने का प्रयास किया है। वीरता के लक्षणों को बतलाते हुए उन्होंने नकली वीरों और असली वीरों क अन्तर को प्रकट किया है। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने सच्चे वीर पुरुषों के व्यक्तित्व की विशेषताओं को पाठकों के समक्ष उपस्थित किया हैं।

व्याख्या : - लेखक के अनुसार सच्चे वीर सदैव धैर्य को बनाए रखते हैं। विकट से विकट परिस्थिति में भी वे कभी अधीर नहीं होते हैं। उनमें इतनी गंभीरता होती है कि किसी भी दशा में उनका मन विचलित नहीं होता है। जिस तरह आकाश सदैव स्थिर और अचल रहता है उसी तरह वीर पुरुषों का मन भी कभी विचलित नहीं होता है। कुम्भकर्ण की तरह सच्चे वीरों की नींद आसानी से नहीं खुलती क्योंकि उनका मन सदैव सत्त्वगुण में डूबा रहता है। लेकिन सदैव दूसरों का उपकार करते चले जाना ही उनका स्वभाव होता है। ऐसे वीर जब जाग जाते हैं तो अपने कर्मो से बड़े से बड़े बादशाह का तख्त भी हिला देते हैं। ये वे शेर हैं जिनकी सिंह गर्जना सदियों तक सुनाई पड़ती रहती है। इनकी प्रेरणा पाकर और के हृदयों में भी जोश भर जाता है। इनके कदमों की आहट से कभी का मन मदमत्त हो जाता है।

दूसरी व्याख्या : - सत्त्वगुण के समुद्र में..... राजा से ही साधु पुरुष होते हैं।

संदर्भ :-

प्रस्तुत पंक्तियाँ हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध निबंधकार अध्यापक पूर्णसिंह के अत्यंत लोकप्रिय निबंध 'सच्ची वीरता' में से ली गई हैं। इन पंक्तियों में लेखक ने सच्चे वीरों की उन खूबियों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। जिनके आधार पर वे दूसरे सामान्य व्यक्तियों से अलग हो जाते है। वीर व्यक्ति अकारण ही अपनी वीरता का प्रदर्शन नहीं करती हैं। न वे किसी तरह का दिखावा ही करते हैं। बल्कि सांसारिक लाभों से दूर वे सदैव अपने आप में डूबे रहते हैं। यहाँ लेखक ने इसी क्रम में सच्ची वीरता के लक्षण बतलाते हुए उनके महत्त्व को प्रकट करने का प्रयास किया है।

व्याख्या :- अध्यापक पूर्णसिंह के अनुसार वीर व्यक्ति राजसिक या तामसिक वृत्तियों वाले नहीं होते हैं उनका मन तो सदैव प्रेम, दया, करुणा, सेवा, सम्र्पण जैसे सात्त्विक भावों से ही सदैव भरा रहता है। उनका लक्ष्य संसार का भला करना होने के कारण वे कभी अपने स्वार्थ के लिए या केवल दिखावे के लिए परोपकार में आगे नहीं बढ़ते हैं। उनका मन तो साधुओं महात्माओं की तरह हमेशा पवित्र भावों से भरा रहता है। उनके जीवन में स्वार्थ और क्षुद्रता नहीं होती। उनमें तो ईश्वरीय गुणों का समावेश रहता है। उनका जीवन सरल और पारदर्शी होता है कि वह सदैव दूसरों के लिए प्रेरणा का स्रोत बना रहता है। इन्हीं खूबइयों के कारण उनके मार्ग की बाधाएं छत्र की तरह बनकर उनके लिए छया कर देते हैं और संसार के सारे कठिनतम मार्ग इनके लिए आसानी से खुल जाते हैं। दूसरे राजा तो सिर्फ कुछ लोगों पर ही शासन करते हैं किंतु सच्चे वीर इस दुनिया के असली राजा होते हैं, क्योंकि ये लोग ही सबके दिलों पर राज करते हैं। दूसरे राजा तो लोगों के शरीर पर ही शासन करते हैं जबकि असली वीर लोगों के मन और आत्मा पर राज्य करने में समर्थ रहते हैं।

17.6 निबन्ध की अंतर्वस्तु

"सच्ची वीरता निबन्ध के सार को समझ लेने के बाद अब हम इस भाग में इस निबंध की अन्तर्वस्तु की व्याख्या करेंगे। किसी भी निबन्ध की अन्तर्वस्तु के दो भाग होते हैं - भाव पक्ष और विचार पक्ष। यहाँ 'सच्ची वीरता' निबंध के दोनों पक्षों को स्पष्ट किया जा रहा है।"

उन्होंने टीन के बर्तन की उपमा देते हुए दोनों के अन्तर को समझाया है जैसे टीन का बर्तन थोड़ी सी आँच में ही गर्म हो जाता है और थोड़ी सी शीतलता में ही ठंडा हो जाता है उसी प्रकार नकली या दिखावटी वीर छोटी-छोटी बातों में अपने उत्साह को प्रकट कर वीरता का ढौंग किया करते हैं। वे लोग अखबारों में खबर बनने के लिए छोटी मोमटी बातों के लिए मरते-पचते नहीं' हैं। ऊपरी तौर पर वे अपने में खोए रहने वाले निखट्टू लोग दिखाई देते हैं। लेकिन जब अवसर आता है तब वे किसी भी दशा में पीछे नहीं हटते हैं। वे खुद के लिए नहीं बल्कि और के लिए मर मिटते हैं। इनका तेज शेर की तरह अवसर आने पर ही टपकता है।

वीरता का भाव एक ऐसा सात्विक भाव है जिसकी तुलना आसानी से नहीं की जाती है। पूर्णसिंह जी का विचार है कि वीरता समर्पण के लिए प्रेरित करती है। वीरता का कायरता से कोई संबंध नहीं है। वीर पुरुष कुदरत की ताकतों का अनमोल खजाना होता है। वे अपनी शक्तियों को फिजूल की बातों में खर्च नहीं करते हैं।

वीरता पर मिटने के लिए तनिक भी देरी नहीं लगाती है। एक बार बादशाह अकबर ने दो सच्चे वीरों से वीरता का सबूत देने के लिए कह दिया। लेखक के अनुसार बादशाह ने कैसी मूर्खता की। वीरता का वे क्या सबूत देते। बस तुरन्त ही दोनों ने अपनी तलवारें निकाल ली और एक दूसरे को मार कर वहीं उसी क्षण वे मर गए।

वीरता का विकास कई तरह से होता है। कभी तो उसका विकास लड़ने मारने में, खून बहाने में, तलवार तोप के सामने जान गँवाने में होता है तो कभी प्रेम के मैदान में उसका झण्डा खड़ा होता है। कभी जीवन के गूढ़ तत्वों को खोज निकालने में होता है जैसे बुद्ध ने संसार को छोड़ कर परमतत्व पाने के रूप में किया।

इस निबन्ध के भावपक्ष की सबसे बड़ी विशेषता तार्किकता या बौद्धिकता का सहारा न लेकर उसके भाव जगत को स्पष्ट करता है। वीरता के सच्चे भाव को लेखक समझाने में पूर्ण सफल रहा है।

17.7 भाव पक्ष

पूर्ण सिंह जी ने इस निबंध में सच्ची वीरता के भाव को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। लेखक दिखावटी या नकली वीरता और सच्ची वीरता के अंतर को समझाने में सफल रहा है। उन्होंने टीन के बर्तन की उपमा देते हुए दोनों के अन्तर को समझाया है।

वीरता का शास्त्रीय ढंग से वर्णन करने पर उसका संबंध उत्साह नामक भाव से बतलाया जाता है। भारतीय रस सिद्धान्त की दृष्टि से वीररस का वर्णन इसी आधार पर उत्साह नाम स्थायी भाव के आधार पर किया जाता है। इसके चार भेद बतलाए जाते हैं -

1. युद्धवीर - जो युद्ध में वीरता या उत्साह प्रकट करते हैं।
2. दानवीर - जो दान देने में वीरता या उत्साह प्रकट करते हैं।
3. दयावीर - जो दीनों पर दया करने में उत्साह प्रकट करते हैं।
4. कर्मवीर - जो कर्त्तव्य का क्षेत्र में कर्म जगत् में उत्साह दिखलाते हैं।

अध्यापक पूर्णसिंह ने लेकिन उत्साह मनोभव के आधार पर अपने उत्साह को प्रकट करने वाले वीरों का वर्णन नहीं किया है। लेखक ने सच्ची वीरता का वर्णन मनोवैज्ञानिक या साहित्यिक ढंग से न करके शुद्ध सामाजिक व्यवहार की दृष्टि से किया है। हालांकि इस विचार विश्लेषण में वीरों के व्यवहार का मनोविज्ञान की दृष्टि से भी विवेचन किया गया है।

पूर्णसिंह जी मानते हैं कि असली वीरता और दिखावटी वीरता में पर्याप्त अन्तर होता है। सच्चे वीर व्यक्ति साधनहीन, अति धारण से दिखाई देने वाले व्यक्ति होते हैं, लेकिन जब जीवन की चुनौतियाँ, उनके सामने आती हैं तब वे उनसे बिल्कुल नहीं घबराते हैं। वे संकल्प के बड़े पके होते हैं। एक बार जब कोई विचार मन में ले आते हैं तो फिर उसे पूरा करने के लिए पूरे मनोयोग से जुट जाते हैं। फिर तो चाहे जितनी मुश्किलें क्यों न आ जाएं वे कभी पीछे नहीं हटते हैं। जरूरत पडने पर वे दुनिया को हिलाकर रख देते हैं। सच्चे वीरों का मन सदैव सात्विक गुणों में डूबा रहता है। उनको दुनिया की सामान्य बातों से कोई मतलब नहीं रहता है। अवसर आने पर ये वीर शेर की तरह जागकर अपने कर्मों से ऐसी गर्जना करते हैं कि उससे सारा वातावरण हिल उठता है।

पूर्णसिंह जी ने सच्चे वीरों के त्याग के आदर्श को भी स्पष्ट किया है। दूसरे लोग तो धन दौलत का दान करके दानी बनना चाहते हैं पर सच्ची वीरता रुपयों-पैसों के दान पर नहीं

बल्कि अपने जीवन का ही दान करने पर टिकी रहती है। ये लोग बड़े मौकों का इन्तजार नहीं करते बल्कि छोटे मौकों को ही बड़ा बना देने हैं।

लेखक का विचार है कि सच्चे वीरों के मार्ग में बड़ी से बड़ी बाधा भी कोई मायने नहीं रखती है। जब उनका जोश तूफान के रूप में प्रकट होने लगता है तब उनकी चाल के सामने फिर कोई रूकावट नहीं आ सकती है। ये लोग पहाड़ों की पसलियाँ तोड़कर हवा के बगोले की तरह निकल जाते हैं। इनके बल का इशारा भूचाल ले आता है। प्रकृति की कोई ताकत सच्चे वीरों के जोश के सामने टिक नहीं पता है।

सच्ची वीरता को परिभाषित करते हुए लेखक का कहना है कि " अपने आपको हर घड़ी और हर पल महान् से महान् बनाने का नाम ही वीरता है। वीर लोग कभी अपने कारनामों का लेखा जोखा नहीं रखते हैं। यहाँ तक की असल वीर तो अपने कारनामों को अपनी दिनचर्या में कभी लिखते भी नहीं हैं। जैसे एक पेड़ जमीन से सिर्फ रस खींचने में ही जुटा रहता है। वह कभी इस बात का ख्याल ही नहीं करता कि मुझे में कितने फल या फूल लगेंगे। उसका काम तो सिर्फ अपने आपको सत्य में रखना है-सत्य को अपने अन्दर कूट कूट कर भरना है, अंदर ही अंदर बढ़ना है। पेड़ का कभी इस बात से कोई मतलब नहीं रहता कि कौन मेरे फल खायेगा? या मैने अब तक कितने फल लोगों को दे दिए हैं। इसी तरह सच्चे वीर भी इन बातों की कभी गणना नहीं करते कि उन्होंने समाज के लिए क्या-क्या किया है।"

सच्ची वीरता को प्रकट करने वाले वीरों को कभी पैदा नहीं किया जा सकता है। पूर्णसिंह जी के अनुसार वीरों को कारखानों में नहीं बनाया जा सकता है। वे तो खुद ब खुद पैदा होते हैं। दूसरों की देखभाल या सहायता के बिना वे अपने आप तैयार हो जाते हैं। जैसे हीरे जवाहरातों की खानों की ऊपरी जमीन बिल्कुल साधारण सी दिखाई देती है, ऊपर से देखने पर उन खानों में कुछ भी दिखाई नहीं देता है लेकिन जैसे उन्हें खोदने पर उनमें से ये मँहगे हीरे-माणक निकल आते है वैसे ही सच्चे वीर भी समाज में छुपे ही रहते हैं। उनका स्वभाव दिखावे का नहीं छिपे रहने का होता है। उनकी जिन्दगी मुश्किल से ही कभी कभी बाहर नजर आती है। लेखक के अनुसार सबे वीर गुदडियों में छुपे हुए लाल की तरह होते हैं।

सच्ची वीरता कभी दिखावा नहीं करती हैं वे दिखावे के लिए या कोई नाम के लिए छाती ठोककर आगे आने और फिर पीछे हटने की कायरता नहीं करते हैं। ये कभी न तो गरजते हैं, न अपने आपको बड़े दिखलाने की चेष्टा ही करते हैं। ये तो बस अवसर आने पर तेजी से आगे आकर मर मिट जाते हैं। ये टीन के बर्तन की तरह शीघ्र ही ठण्डे या गरम नहीं हो जाते हैं। हर समय अपनी ही मस्त में बने रहना इनका स्वभाव है।

इस प्रकार सच्चे वीरों के लक्षण, उनका स्वभाव, उनके कार्य कलापों के विधि पक्षों को स्पष्ट करते हुए लेखक ने सच्ची वीरता को परिभाषित किया है यह निबन्ध पाठकों के मन में ऐसी वैचारिक क्रान्ति पैदा कर देता है कि फिर वे भी वीरता के सच्चे आदर्श पथ पर आगे बढ़ने को तैयार हो जाता है। सधी वीरता के स्वरूप को समझकर पाठक सांसारिक हित के लिए समर्पित हो जाने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

17.8 संरचना शिल्प

निबंध के भाव पक्ष एवं विचार पक्ष से परिचित हो जाने के बाद अब हम अध्यापक पूर्णसिंह की भाषा- शैली की विशेषताओं की जानकारी प्राप्त करते हैं।

17.8.1 भाषा

पूर्णसिंह जी स्वयं एक पंजाबी सिख परिवार से आए थे अत: इनकी भाषा में पंजाबी का स्पष्ट प्रभाव साफ दिखाई देता है। भाषा में मस्तीपन और फक्कड़ाना अंदाज अधिक दिखाई देता है। लेकिन इनकी भाषा पूरी तरह से पंजाबी के बंधनों में जकड़ी हुई दिखाई नहीं देती है। उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का भी उचित अवसरों पर प्रयोग दिखाई देता है। ये हद्व समासों से या उपमाओं - रूपकों से अपने बात कहने में ये अत्यंत प्रवीण हैं।

इनकी भाषा में विदेशी भाषाओं के शब्दों का भी सार्थक प्रयोग हुआ है। इनमें अरबी, फारसी और उर्दू के शब्द सबसे अधिक हैं। इसके अलावा हिंदी तद्भव शब्दों का भी सुन्दरता से प्रयोग किया गया है। भाषा में कहीं मुहावरों, लोकोक्तियों, का सा अंदाज है। जैसे- गुदड़ी के लाल, वीर पुरुष का दिल सब का दिल होता है, नाम की खातिर छाती ठोंककर आगे बढ़ना, कीमती और कभी न टूटने वाला हथियार आदि। इन खूबियों के कारण इनकी भाषा में प्रवाह, गतिशीलता है। एक अजीब प्रकार के भाषायी तिलस्म से ये पाठकों को जैसे संयोजित कर देते हैं।

उदाहरण : -

संस्कृत तत्सव शब्द :- चिरस्थायी, दैवीशक्ति, सत्त्व, अन्तःकरण, पिंदोपंजीवी, मिथ्यावादी, क्षुद्र हृदय, अदष्य

उर्दू के शब्द :- (अरबी, फारसी सहित) :- पैगाम, मुकाबला, अनहलक, जर्क बर्क, बादशाह, शाहंशाह, गुस्ताखी, इलहाम, शख्स।

अंग्रेजी के शब्द :- जाज, हाल्ट, ड्राईंग हॉल, मार्च

इस प्रकार पूर्णसिंह जी की भाषा का अनूठापन ही उनकी शैली की मौलिक विशेषताओं को प्रकट करता है।

17.8.2 शैली

पूर्णसिंह जी के निबंधों की भाषा शैली में अनूठी लाक्षणिकता और अपूर्व व्यंग्य मिलता है। इनके निबंधों में एक विशिष्ट प्रकार की शैली अपनाई गई है। अपनी विलक्षण शैली के कारण ये हिंदी निबंध साहित्य में अपनी अलग पहचान रखते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने पूर्णसिंह जी की शैली के विषय में लिखा है कि "उनकी लाक्षणिकता हिंदी गद्य साहित्य में नयी चीज थी। भाषा और भाव की एक नयी विभूति उन्होंने सामने रखी।' (हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ. 480)। अपने निबन्धों में इन्होंने तार्किकता या बौद्धिकता का सहारा न लेकर मानव के भावजगत् का सहारा लिया है। इनकी शैली में भावात्मकता

अधिक है। अपने विचारों के व्यक्त करते हुए ये प्राय: अपनी भावनाओं में इतने अधिक वह जाते हैं कि कई स्थानों पर विचारों की एक सूत्रता भी टूट सी जाती है। लेकिन दूसरी ओर इनकी शैली की व्यक्तिनिष्ठता पाठकों से सीधा अन्तरंग रिश्ता जोड़ने में समर्थ रहती है। यही कारण है कि इनके निबंधों में शुष्क वैचारिकता के स्थान पर भावुकता के दर्शन अधिक होते हैं। पाठकों के मन में सीधा असर करने की ताकत इनके निबंधों में दिखाई देती हैं।

पूर्णसिंह के निबंध एक प्रकार की अनूठी वार्तालाप शैली में लिखे गए हैं। ऐसा लगता है जैसे लेखक निबंध नहीं लिख रहे हैं वरन् एक सिद्धहस्त कुशल वक्ता की तरह दिए गए विषय पर भाषण दे रहे हैं। वक्तृत्वकला ओज एवं प्रवाहशीलता इनके निबंधों की शैली की मौलिक विशेषता हैं। प्रसंगानुरूप बात को असरकारी बनाने के लिए ये व्यंग्य करने से भी परहेज नहीं करते हैं। इससे इनकी भाषा में असरकार में भारत क्षमता उत्पन्न हो जाती है। प्रभावशीलता के साथ-साथ इनकी भाषा में चित्र खड़े करने की अद्भुत शक्ति भी दिखाई देती हैं। अपने विचारों को पुष्ट करने के लिए ये बीच-बीच में रोचक प्रसंगों, घटनाओं, किस्सों को भी जोड़ देते हैं। सच्ची वीरता में ही शुरू से लेकर अन्त तक विषय से संबंधित अनेक कहानियाँ या रोचक किस्से समेटे गए हैं। इस उदाहरणों से इनके निबन्ध नीरस बौद्धिकता के बोझ से दबे नहीं रहते और पाठकों की उत्सुकता को बनाए रखते हैं।

इन्हीं समस्त खूबियों के कारण पूर्णसिंह के निबन्धों की शैली हिंदी में अनूठी बन पड़ी है और वह अधिकतर प्रभावशाली बन पड़ी है। प्रभावाभिव्यंजकता के कारण इनकी शैली में सहजता बनी रहती है उनमें व्यक्ति निष्ठता का भाव अधिक रहता है। ऐसा नहीं है कि इनकी शैली में विषयनिष्ठता पूरी तरह से तिरोहित हो गई हो, बल्कि वह इनके व्यक्तित्व की छाप के नीचे दबी रहती है। एक कुशल निबंधकार के निबंधों की सबसे बड़ी शर्त यह रहती है उनमें लेखक के व्यक्तित्व छाप स्पष्ट दिखाई देती है। पेशे से ये अध्यापक थे अत: अपने पेशे के अनुसार ये अपने निबंधों में भी अध्यापकीय अंदाज लिए दिखाई देते हैं। विषय को उदाहरण देकर रोचक बनाते हुए समझाना, आवेश पैदा करने की चेष्टा करना, विवेचन की जगह विवरणात्मकता पर अधिक बल देना आदि बातें इनके लेखकीय व्यक्तित्व को पाठकों के सामने आसानी से उजागर कर देती हैं।

17.9 प्रतिपाद्य

अध्यापक पूर्णसिंह के इस निबंध को पढ़ने से हमें सच्ची वीरता की जानकारी मिलती है। इस निबन्ध का मूल प्रतिपाद्य समाज के सच्चे वीरों को स्पष्ट करना है। वीरता पैदा नहीं की जा सकती है। स्वयं पैदा होती है। देवदारू के वृक्ष की तरह सच्चा वीर जीवन की विषमताओं से जुझते हुए आकाश में ऊँचा ही ऊँचा बढ़ा चला जाता है। सच्चे वीरों और नकली वीरों के अन्तर को भी इसमें प्रकट किया गया है।

17.10 सारांश

संक्षेप में निबंध के आधार पर हमें सच्ची वीरता की निम्नलिखित विशेषताएँ दिखाई देती है. -

- सच्चे वीर पुरुष धीर, गंभीर और आजाद होते हैं।
- सच्चे वीर कभी चंचल नहीं होते, समुद्र की तरह गंभीर होते हैं।
- यों तो सच्चे वीर कुंभकर्ण की तरह सोए रहते हैं लेकिन जब अवसर आता है तब शेर की तरह दहाड़ कर सारे संसार में हलचल पैदा कर देते हैं।
- वीरों काहृदय सदैव सत्त्वगुण में निमग्र रहता है।
- वीरों का स्वभाव टीन की तरह शीघ्र गरम या ठंडा नहीं होता है।
- वीरों को बनाने के कोई कारखाने नहीं होते हैं।
- वीरों के मन में दैवीय गुण होते हैं जिन पर वे अडिग रहते हैं।
- वीरता जिस तरह युद्ध भूमि में दिखाई देती है उसी तरह प्रेम के क्षेत्र में भी दिखाई देती हैं।

17.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हिंदी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द शुक्ल
2. हिंदी साहित्य का इतिहास -संपादक डा. नगेन्द्र

17.12 बोध प्रश्न

प्रश्न 1 सच्ची वीरता किसे कहते है? समझाइये।

प्रश्न 2 असली वीरों और नकली वीरों के अन्तर को स्पष्ट कीजिये।

प्रश्न 3 सच्चे वीरों की किन्ही तीन विशेषताओं को बतलाइये।

प्रश्न 4 निबंध में उद्धृत किए गए किन्ही तीन वीरों की कहानियों को संक्षेप में बतलाइये।

प्रश्न 5 वीरता के कारखाने नहीं होते, क्यों? स्पष्ट कीजिये।

इकाई - 18 आत्मकथा (अंश) : महात्मा गाँधी

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य
18.1 प्रस्तावना
18.2 आत्मकथा का वाचन
18.3 आत्मकथा की अंतर्वस्तु
18.4 चरित्र विश्लेषण
18.5 परिवेश
16.6 संरचना शिल्प
18.7 भाषा की विशेषताएँ
18.8 प्रतिपाद्य
18.9 सारांश
18.10 संदर्भ ग्रन्थ
18.11 बोध प्रश्न/अभ्यास

18.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम महात्मा गाँधी की प्रसिद्ध आत्मकथा के कुछ अंश आपको पढाने जा रहे हैं। इस इकाई का मूल उद्देश्य आपके लिए आत्मकथा के स्वरूप को स्पष्ट करना है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- आत्मकथा नामक गद्य की विधा के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- आत्मकथा में अपने जीवन की सच्ची घटनाओं को ईमानदारी से कैसे प्रकट किया जाता है इसे समझ सकेंगे।
- आत्मकथा के आधार पर महात्मा गाँधी के चरित्र की विशेषताओं को स्पष्ट कर सकेंगे।
- आत्मकथा में चरित्र की विशेषताएँ या कमजोरियाँ कैसे प्रकट की जाती हैं उसे समझ सकेंगे।
- आत्मकथा के संरचना शिल्प को समझ सकेंगे।

18.1 प्रस्तावना

"आत्मकथा" जीवनी की ही अन्य विधा मानी जाती है। यह गद्य की एक महत्वपूर्ण विधा है। जीवनी में लेखक किसी अन्य व्यक्ति के चरित्र को पाठकों के सामने लाता है। इसके विपरित जब लेखक अपने ही बारे में लिखता है तब उस लेखन को आत्मकथा कहा जाता है। कई मायनों में 'आत्मकथा' का स्वरूप जीवनी से अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय होता है। क्योंकि अन्य व्यक्ति से संबंधित होने के कारण जीवनी के लेखक को अनुसंधान और अनुमान का सहारा लेना पड़ता है। इसके विपरीत आत्मकथाकार को

अपने संबंध में किसी प्रकार के अनुमान या अनुसंधान की आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि उसे अपने जीवन का इतिहास पूरी तरह से ज्ञात होता है।

आत्मकथा का लेखक सामान्य व्यक्ति से कुछ ऊपर उठा हुआ और लोकप्रिय होना चाहिए। समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति की आत्मकथा का महत्व होता है क्योंकि मनुष्य का यह स्वभाव होता है कि वे अपने से उब और महान व्यक्ति के प्रति ही कुतूहल का अनुभव करते है। समाज में, राष्ट्र में या जो व्यक्ति अपनी विशिष्ट योग्यताओं से, अपने उदात्त चरित्र से बड़ा बन जाता है ऐसे ही किसी व्यक्ति की आत्मकथा को पाठक पढ़ना चाहते हैं।

आत्मकथा स्वयं व्यक्ति के लिए उतनी महत्वपूर्ण नहीं होती है जितनी कि उसके पाठकों के लिए हुआ करती है। समाज में महान् व्यक्तियों के जीवन के प्रति लोगों में पर्याप्त उत्सुकता रहती है। वे उनके जीवन प्रसंगों के प्रति कुतूहल का भाव रखते हैं। लोग यह जानना चाहते हैं कि और की तरह सामान्य मनुष्य होते हुए भी कोई महान् व्यक्ति महान् कैसे बन जाता है? जीवन के संघर्षो से वह व्यक्ति कैसे जूझा? विपरीत परिस्थितियों में भी उसने अपने ध्यैर्य को बनाए रखते हुए जीवन में इतनी सफलताएं कैसे प्राप्त कर लीं। लोग इसी तरह ही महान् व्यक्तियों के जीवन को पढ़ना चाहते हैं। महान् व्यक्तियों की आत्मकथाएं और के लिए पथ प्रदर्शक का कार्य करती हैं। उनसे प्रेरणा ले कर लोग अपने जीवन को भी ऊंचाइयों की ओर ले जाने का प्रसार? करते है। इस संबंध में डॉ.राधाकृष्णन का कहना है कि "किसी भी आदमी की राम कहानी अगर वह सच्चाई से लिखी गई हो तो उसमें दूसरों को अवश्य रूचि होती है। रंगमंच चाहे जितना छोटा हो, भूमि चाहे जितनी नगण्य हो, फिर भी व्यक्ति के भाग्य को पढ़ने वाले संयोगों और परिस्थितियों का तथा मानवीय आकांक्षाओं और आदर्शो और घात-प्रतिघात सभी मानावों को कुछ न कुछ रूचिकर अवश्य ही लगते हैं।

आत्मकथा को लिखना सरल नहीं है। आत्मकथा में लेखक के लिए सबसे बड़ी मुश्किल यह रहती है कि अपने बारे में लिखते हुए उसे अपने जीवन की घटनाओं-प्रसंगों से संबंधित दूसरे व्यक्तियों के बारे में भी बहुत कुछ लिखना पड़ता है इससे उसके संपर्क में आने वाले व्यक्तियों की भी अच्छी- बुरी भद्दी बातों को भी उसे प्रकट करना पड़ता है। इस कारण दूसरों के चरित्र की भी खरी-खोटी बातें लोगों में से लोग परिचित हो सकते हैं। इसलिए अपने से संबद्ध व्यक्तियों के जीवन-यथार्थ का उद्घाटन करने में आत्मकथा लेखक को पर्याप्त सावधानी रखनी पड़ती है। पूर्ण संयम से ही वह और के प्रसंगों को प्रकट कर सकता हैं।

गाँधीजी की आत्मकथा का परिचय : -

हिंदी में अनेक महापुरूषों की आत्मकथाएँ उपलब्ध हैं। प्रस्तुत आत्मकथा अंश महात्मा गाँधी की आत्मकथा से लिया गया है। अपनी आत्मकथा को गाँधीजी ने सत्य के प्रयोग कहा था। गाँधीजी का जन्म 1869 में तथा देहान्त 1948 में हुआ था। पोरबंदर में पैदा हुए गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका से अपने व्यक्तित्व का विकास शुरू किया। भारत लौटकर

वे असहयोग आन्दोलन के प्रणेता बने। अहिंसा एवं आत्मबल के सहारे उन्होंने देश को आजादी प्रदान करवाई।

गाँधीजी के जीवन से आप भली प्रकार से परिचित हैं। उनके अद्‌वितीय योगदान के कारण ही लोग उन्हें बापू कहा करते थे और देश ने उन्हें राष्ट्रपति की उपाधि प्रदान की है। 1925 के आस - पास गाँधीजी ने अपनी आत्मकथा लिखी थी। शीर्षक के अनुरूप ही उन्होंने अपने जीवन को पूरी सत्यनिष्ठा से प्रकट किया गया। आत्मकथा के इस अंश में उन्होंने अपने विवाह और स्कूल के जीवन प्रसंगों को प्रस्तुत किया है। अपनी अनेक कमजोरियों (जैसे खराब, हस्तलेख, भाषा की कमजोरी) को भी गाँधीजी ने निस्संकोच भाव से प्रकट किया है। गाँधीजी की आत्मकथा का यह अंश जहाँ उनके दृढ चरित्र को हमारे सामने लाता है वही यह रचना आत्मकथा के लेखक की ईमानदारी को भी प्रकट करती है। गाँधीजी ने अपनी दुर्बलताओं को भी पूरी सच्चाई और निर्भयता से प्रकट किया है। इस अंश से हमें यह भी ज्ञात होता है कि जीवन में साधारण सी प्रतीत होने वाली घटनाएं भी व्यक्ति व समाज के लिए कितनी महत्वपूर्ण हो सकती हैं। यह अंश पाठकों के मर्म का स्पर्श करते हुए उन्हें अनेक रूपों में प्रेरित करता है।

18.2 आत्मकथा (अंश) का वाचन

ब्याह के समय मैं हाईस्कूल में पढ़ता था। उस समय हम तीनों भाई एक ही स्कूल में पढ़ते थे। ज्येष्ठ भाई कई दर्जा ऊपर थे और जिस भाई का ब्याह मेरे साथ हुआ वह मुझसे एक दर्जा आगे थे। विवाह के परिणामस्वरूप हम दोनों भाइयों का एक साल बेकार हो गया। मेरे भाई के लिए परिणाम इससे भी बुरा रहा, ब्याह के बाद वे स्कूल में पढ ही न सके। ऐसा अनिष्ट परिणाम कितने युवकों को भोगना पड़ता होगा। विद्याभ्यास और विवाह, दोनों साथ-साथ हिन्दू समाज में ही चल सकते हैं।

मेरी पढ़ाई जारी रही। हाईस्कूल में मैं मंदबुद्धि विद्‌यार्थी नहीं माना जाता था। शिक्षकों का प्रेम तो मैंने सदा प्राप्त किया। हर साल माता-पिता के विद्‌यार्थी को पढ़ाई के साथ-साथ चाल-चलन के बारे में भी प्रमाण-पत्र भेजा जाता था। इसमें कभी मेरे चाल-चलन या पढ़ाई खराब होने की शिकायत नहीं गयी। दूसरे दर्जे के बाद मैंने इनाम भी पाये और पाँचवें, छठें दर्जे में क्रमश: चार तथा दस रूपये की मासिक छात्रवृत्ति भी मिली थी। इस सफलता में मेरी होशियारी की अपेक्षा भाग्य का हिस्सा ज्यादा था। ये वृत्तियाँ सब विद्‌यार्थियों के लिए नहीं, बल्कि सौराष्ट्र प्रान्त के विद्‌यार्थियों में प्रथम आने वाले के लिए थी। चालीस-पचास विद्‌यार्थियों के दर्जे में उस समय सौराष्ट्र प्राप्त के विद्‌यार्थी हो ही कितने सकते थे?

मेरी निजी स्मृति यह है कि मुझे अपनी होशियारी का कोई गर्व नहीं था, इनाम या छात्रवृत्ति पाने पर मुझे आश्चर्य होता था, लेकिन अपने चाल-चलन की मुझे बड़ी चिन्ता रहती थी। आचरण में दोष आने से मुझे रूलाई ही आ जाती थी। मेरे हाथों कोई ऐसी बात हो या शिक्षकों को ऐसा मालूम हो कि उन्हें मेरी भर्त्सना करनी पड़े यह मेरे लिए असह्य था। मुझे याद है कि एक बार मुझे मार खानी पड़ी थी। मार का दुःख नहीं था,

पर मैं दंड का पात्र माना गया, इस बात का बड़ा दुःख था। मैं खूब रोया। यह बात पहले या दूसरे दर्जे की है। दूसरा प्रसंग सातवे दर्जे का है। उस समय दोराब जी एदल जी गीमी हेडमास्टर थे। वह विद्यार्थी-प्रिय थे, क्योंकि वह नियमों की पाबंदी कराते थे, बाकायदा काम करते और लेते थे, और पढ़ाते अच्छा थे। ऊपर के दर्जो के विद्यार्थियों के लिए उन्होंने कसरत, क्रिकेट अनिवार्य कर दिया था। मुझे इन चीजों से अरुचि थी। अनिवार्य होने के पहले तो मैं कभी कसरत, क्रिकेट या फुटबाल में गया ही न था। न जाने में, मेरा झेंपू स्वभाव भी एक कारण था। आज इस अरुचि में मैं अपनी गलती देखता हूँ। उस समय मेरी यह गलत धारणा थी कि कसरत का शिक्षण के साथ कोई संबंध नहीं है। बाद में समझ में आया कि विद्याभ्यास में व्यायाम अर्थात् शारीरिक शिक्षा का मानसिक शिक्षा के बराबर ही स्थान होना चाहिए। फिर भी मैं कहना चाहता हूँ कि कसरत में शामिल होने से मेरी हानि हुई। कारण यह कि पुस्तकों में मैंने खुली हवा में घूमने की सलाह पढ़ी थी और वह मुझे रुचती थी और इससे हाईस्कूल के ऊँचे दर्जो से ही मुझे घूमने की आदत पड़ गयी थी। वह अन्त तक बनी रही। घूमना भी व्यायाम तो है ही, इससे मेरे शरीर में थोडा कसाव आ गया।

व्यायाम की अरुचि का दूसरा कारण था पिताजी की सेवा करने की तीव्र इच्छा। स्कूल बन्द होते ही तुरंत घर जाकर उनकी सेवा में लग जाता। कसरत अनिवार्य हो जाने से इस सेवा में विघ्न पड़ने लगा। पिताजी की सेवा के लिए कसरत से माफी पाने की दरख्यास्त दी। पर गीमी साहब कब माफी देने वाले थे? एक शनिवार को स्कूल सवेरे का था। शाम को चार बजे कसरत में जाना था। मेरे पास घड़ी न थी। आकाश में बादल थे, इससे समय का कुछ पता न चला। बादलों से धोखा हो गया। कसरत के लिए जब पहुँचा तो सब जा चुके थे। दूसरे दिन जब गीमी साहब ने हाजिरी देखी तो मैं गैर हाज़िर निकला। मुझसे वजह पूछी गयी मैंने जो बात थी बता दी। उन्होंने उसे सही नहीं माना और मुझ पर एक या दो आना (ठीक याद नहीं कितना) जुर्माना हुआ। मैं झूठा बना। मुझे भारी दुःख हुआ। मैं झूठा नहीं हूँ यह कैसे साबित करूँ? कोई उपाय नहीं था। मन मसोस कर रह गया। रोया। पीछे ध्यान में आया कि सही बोलने और सही करने वाले को गाफिल भी नहीं रहना चाहिए। इस तरह की गफलत मेरे अध्ययन-काल में यही पहली और आखिरी भी थी। मुझे कुछ-कुछ ख्याल है कि अन्त में मैंने यह जुर्माना माफ करा लिया था।

अन्त में कसरत से मैंने मुक्ति पा ली, पर तब जबकि पिताजी ने हैडमास्टर को पत्र लिखा कि स्कूल के समय के बाद वह मेरी उपस्थिति अपनी सेवा के लिए चाहते थे।

कसरत के बदले घूमना जारी रखने की वजह से शरीर का व्यायाम न करने की ग़लती के लिए तो मुझे सजा नहीं भोगनी पड़ी, पर दूसरी एक भूल की सजा में आज तक भोग रहा हूँ। पता नहीं, कहाँ से यह गलत ख्याल मेरे दिमाग में धँस गया था कि पढ़ाई में सुन्दर लिखावट की जरूरत नहीं है जो विलायत जाने तक बना रहा। बाद को और खासकर दक्षिण अफ्रीका में, जब वकीलों के, और दक्षिण अफ्रीका में जन्मे और पड़े हुए

नवयुवकों के, मोती के दानों के - से अक्षर देख तब मैं लजाया और पछताया। मैंने समझा कि खराब अक्षर अधूरी शिक्षा की निशानी माने जाने चाहिए। पीछे मैंने अपने अक्षर सुधारने की कोशिश, की, पर पके घड़े पर कहीं गला जुडता है? युवावस्था में जिसकी अवहेलना की, उसे आज तक न कर पाया। प्रत्येक युवक और युवती को मेरे उदाहरण से यह सबक लेना चाहिए कि अच्छे अक्षर लिखना विद्या का आवश्यक अंग है। सुन्दर लिखावट सीखनें के लिए चित्रकला का ज्ञान आवश्यक है। मैं तो इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि बालकों को चित्रकला पहले सिखलानी चाहिए। जैसे पक्षी, वस्तु आदि को देखकर बालक उन्हें याद रखती और सहज की पहचान सकता है वैसे ही अक्षर पहचानना भी सीखें और चित्रकला सीख कर चित्र आदि बनाना सीख लेने के बाद अक्षर लिखना सीखेगा तो उसके अक्षर छापे जैसे होंगे।

इस समय की पढ़ाई के दूसरे दो संस्मरण उल्लेखनीय है। विवाह के कारण जो एक साल खराब हो गया था, दूसरे दर्जे में मास्टर ने उसे बचा लेने का मुझसे उद्योग कराया। परिश्रमी विद्यार्थी को इसकी इजाजत उन दिनों मिल जाती थी। इससे तीसरे दर्जे में छः महीने रहा और गर्मी की छुट्टियों के पहले के इम्तहान के बाद मैं चौथे दर्जे में ले लिया गया। यहाँ से कई विषयों की पढ़ाई अंग्रेजी, के द्वारा शुरू होती थी। मैं कुछ समझ ही न सकता था। अंग्रेजी में पढाये जाने की वजह से मैं उसे बिलकुल ही न समझ पाता था। रेखागणित के अध्यापक समझाने वाले अच्छे थे, पर मेरे दिमाग में कुछ घुसता ही न था। अक्सर मैं निराश हो जाता। कभी-कभी सोचता कि दो दर्जे साल भर में पास करने का इरादा छोड़ दूँ और तीसरे दर्जे में लौट जाऊँ, पर इसमें मेरी लाज जाने के साथ ही जिस शिक्षक ने मेरी श्रम- शीलता पर विश्वास करके दर्जा चढ़ाने की सिफारिश की थी, उसकी भी लाज जाती। इस डर से नीचे उतरने का विचार त्याग दिया। कोशिश करते-करते जब मैं रेखागणित की तेरहवीं प्रमेय तक पहुँचा तो यकाकयक मुझे जान पड़ा कि यह तो आसान-से- आसान विषय है। जिसमें केवल बुद्धि का सीधा और सरल प्रयोग ही करना है, उसमें कठिनाई की क्या बात है? इसके बाद तो हमेशा रेखागणित मेरे लिए आसान और रोचक विषय रहा।

संस्कृत मेरे लिए रेखागणित की अपेक्षा अधिक कठिन सिद्ध हुई। रेखागणित में कुछ रटना नहीं पड़ता, पर संस्कृत में तो मेरी दृष्टि से अधिक काम रटने का ही था। यह भी चौथी कक्षा से चली थी। छठे दर्जे में मैं हिम्मत हार गया। संस्कृत के अध्यापक बद्ध सख्त थे। उन्हें विद्यार्थियों को बहुत सा पढ़ा देने का लोभ था। संस्कृत और फारसी के दर्जो में एक प्रकार की प्रतिद्वंद्विता-सी थी। फारसी के मौलवी साहब नरम थे। विद्यार्थी आपस में बातें किया करते कि फारसी तो बहुत सहज है और उसके अध्यापक बड़े सज्जन हैं। विद्यार्थी जितना काम कर लाते हैं उतने से ही निबाह लेते हैं। आसान सुनकर मैं भी ललचाया और एक दिन फारसी के दर्जे में जा बैठा। संस्कृत-शिक्षक को यह अखरा। उन्होंने मुझे बुलाकर कहा, "तुम सोचो तो कि तुम किसके लड़के हो। अपने धर्म की भाषा नहीं सीखोगे? अपने कठिनाई मुझसे कहा। मैं तो चाहता हूँ कि सभी विद्यार्थी

अच्छी संस्कृत सीख लें। आगे चलने पर तो उसमें रस-ही-रस है। तुम्हें इस तरह हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। तुम फिर मेरे दर्जे में आ जाओ।' मैं शर्माया। शिक्षक के प्रेम की अवहेलना न कर सका। आज मेरी आत्मा कृष्णशंकर मास्टर की कृतज्ञ हैं, क्योंकि जितनी संस्कृत उस समय मैंने पढ़ी उतनी भी न पढ़ी होती तो आज मैं संस्कृत शास्त्रों में जो रस ले सकता हूँ वह न ले पाता। मुझे तो संस्कृत न पढ़ सकने का पछतावा होता है, क्योंकि आगे चलकर मेरे ध्यान में यह बात आई कि किसी भी हिन्दू बालक को संस्कृत के अच्छे अभ्यास से वंचित नहीं रहना चाहिए।

आज तो मैं यह मानता हूँ कि भारत वर्ष के उच्च शिक्षण क्रम में अपनी भाषा के सिवा राष्ट्रभाषा हिन्दी, संस्कृत, फारसी, अरबी और अंग्रेजी को स्थान मिलना चाहिए। इतनी भाषाओं की संख्या से डरने का कारण नहीं है। यदि भाषाएँ ढंग से सिखाई जाएँ और सब विषय अंग्रेजी द्वारा ही पढ़ने समझने का बोझ हम पर न हो तो उपर्युक्त भाषाओं की शिक्षा भार रूप न होगी, बल्कि उनमें बहुत रस मिलेगा।

उसके सिवा एक भाषा शास्त्रीय पद्धति से सीख लेने वाले के लिए दूसरी भाषा का ज्ञान सुलभ हो जाता है। सच पूछिए तो हिन्दी, गुजराती और संस्कृत की एक भाषा में गणना की जा सकती है। उसी प्रकार फारसी और अरबी को एक माना जा सकता है। फारसी यद्यपि संस्कृत के निकट है और अरबी हिब्रू के, फिर भी दोनों इस्लाम के उदय के बाद विकसित हुई है। इससे दोनों में निकट का संबंध है। उर्दू को मैंने अलग भाषा नहीं माना है, क्योंकि उसके व्याकरण का समावेश हिन्दी में हो जाता है। उसके शब्द तो फारसी और अरबी के ही हैं। अच्छी उर्दू जानने वाले के लिए अरबी और फारसी जानना जरूरी है, वैसे ही जैसे अच्छी गुजराती, हिन्दी, बंगला, मराठी जानने वाले के लिए संस्कृत जानना।

18.3 आत्मकथा की अंतर्वस्तु

अभी अपने गाँधीजी भी आत्मकथा का एक अंश पढ़ा है। आत्मकथा उसके लेखक के जीवन का दर्पण होता है जिसमें वह अपने आप का प्रतिबिंब देखता है। आत्मकथा का महत्त्व इस बात को लेकर होता है कि उसे पढ़कर पाठकों के हृदय में जीवन में कुछ कर गुजरने की प्रेरणा पैदा हो सके। गाँधीजी की आत्मकथा का महत्त्व इस बात को लेकर अधिक है कि यह उस व्यक्ति के जीवन से हमें रूबरू खड़ा करती है जिसने भारत में तो क्या सारे विश्व में अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ी है। उनके कार्यों और आदर्शों से सारा संसार प्रभावित हुआ है उनके व्यक्तित्व में जो आत्मबल और दृढ़ता का भाव विद्यमान उसी के बल पर उन्होंने इतनी उन्नति की थी।

गाँधी के जीवन के किशोरावस्था के प्रसंगों पर अंश में प्रकाश डाला गया है। स्कूली शिक्षा के समय के अपने जीवन के प्रसंगों करे प्रकट करते समय गाँधीजी ने कहीं अपनी कमजोरियों को छुपाया नहीं है। वे अपनी भूलों से लगातार सीखते जाते हैं और उन्हें निरन्तर सुधारते जाते हैं। ये सारे प्रसंग साधारण से लग सकते हैं, लेकिन उससे स्वयं गाँधीजी ने जो सीख उनसे व्यक्तित्व के जिस पहलू पर ये प्रसंग गाँधीजी का विवाह उस समय कर दिया गया था, जब वे स्कूल में पढ़ रहे थे। नतीजा यह हुआ कि उनकी एक

साल की पढ़ाई खराब हो गयी। बाल विवाह के कारण उनके भाई की शिक्षा पर और भी बुरा असर हुआ। इस तरह जीवन का यह "प्रसंग उन्हें यह सिखा गया कि छोटी उम्र में किया गया विवाह न तो व्यक्ति के लिए न ही समाज के हित हितकर है।'

स्कूल में शिक्षा के साथ-साथ शारीरिक व्यायाम पर भी पूरा ध्यान दिया जाता था। उस समय गाँधीजी की धारणा थी कि शारीरिक व्यायाम का मानसिक विकास से कोई सम्बन्ध नहीं है। गाँधीजी ने अपने साचें की इस गलती को स्वीकार किया है और इस बात पर बल दिया है कि मानसिक विकास के साथ शारीरिक विकास पर भी पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए क्योंकि दोनों एक दूसरे पर निर्भर है। लेकिन इस प्रसंग का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है, गलत समझे जाने की पीड़ा।

एक बार वे समय पर व्यायाम की कक्षा में उपस्थित नहीं हो सके। उन्होंने देरी का कारण सही-सही बता दिया लेकिन गाँधी जी की बात पर विश्वास नहीं किया गया और उन पर जुर्माना कर दिया गया। गांधीजी को इसररे मानसिक वेदना हुई। दुःख उन्हें जुर्माने का नहीं था, दुःख था उन्हें झूठा समझे जाने का। गांधीजी ने अपनी उस समय की मानसिक स्थिति का अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन किया है।

"कसरत के लिए जब पहुँचा तो सब जा चुके थे। दूसरे दिन जब गीमी साहब ने हाजिरी देखी तो मैं गैर हाजिर निकला। मुझसे वजह पूछी गयी। मैंने जो बात थी बात दी। उन्होंने उसे सही नहीं माना और मुण् पर एक या दो आना (ठीक याद नहीं कितना) जुर्माना हुआ। मैं झूठा बना। मुझे भारी दुःख हुआ।मैं झूठा नहीं हूँ यह कैसे साबित करूँ? कोई उपाय नहीं था। मन मसोस कर रह गया। रोया।"

यह छोटा-सा प्रसंग गांधीजी के व्यक्तित्व को समझने में हमारी काफी मदद करता है। सच्चाई के प्रति ऐसी सच्ची ललक और वह भी इतनी छोटी उम्र में कितना मुश्किल है। गांधीजी ने सच्चाई को अपने जीवन में जो ऊंचा स्थान दिया, उसका कारण हम बचपन की इन घटनाओं से समझ सकते हैं। इस सच्चाई ने उन्हें इतनी ताकत दी कि वे शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य से बेखौफ होकर लड़ सके।

रेखागणित वाला प्रसंग गांधीजी के व्यक्तित्व के एक और पहलू पर प्रकाश डालता है। जब चौथे दर्जे में अंग्रेजी माध्यम से कई विषयों की पढ़ाई में मेधावी छात्र समझे जाते थे, इसलिए एक अध्यापक की सिफारिश पर उन्हें तीसरे दर्जे में छह महिने तक पढ़ने के बाद चौथी कक्षा में प्रवेश मिल गया था। उन्हें उम्मीद थी कि वे सफलतापूर्वक चौथा दर्जा पास कर लेंगे। लेकिन रेखागणित ने उनकी कड़ी परीक्षा ली। वे इतना निराश हुए कि उनकी इच्छा पुन: तीसरे दर्जे में चले जाने की हुई। लेकिन अध्यापक के विश्वास को बनाये रखने तथा दूसरों के सामने लज्जित होने के डर ने उन्हें लगातार प्रयत्न के लिए प्रेरित किया और इस कोशिश का सुखद परिणाम निकला। आखिरकार उन्होंने रेखागणित को समझने की कुंजी पा ली। यह घटना बताती है कि गांधीजी में अदम्य संकल्प शक्ति थी। इसलिए वे निराशा के बावजूद साहस नहीं छोड़ते थे। जीवन में सफलता के लिए संकल्प, साहब और प्रयत्न का कितना महत्त्व है, हम इस घटना से समझ सकते है।

संस्कृत वाली घटना उनके उदारतावादी दृष्टिकोण पर प्रकाश डालती है। संस्कृत को पढ़ने में आने वाली कठिनाइयों के बावजूद वे संस्कृत पढ़ते रहे। संस्कृत और दूसरी भाषाओं के महत्व को वे स्वीकार करते थे और उनका विचार था कि अधिक से अधिक भाषाएं सीखी जानी चाहिए।

गांधीजी के जीवन की इन घटनाओं से स्पष्ट है कि अपने जीवन के प्रसंगों को लिखते हुए कहीं भी वे ईमानदारी और सच्चाई को नहीं त्यागते। अगर किसी घटना के वर्णन से उनके जीवन का नकारात्मक पक्ष उजागर होता है तो उसे भी कहने में संकोच नहीं करते थे। गाँधीजी की आत्मकथा पूरी पढ़ने से हम इस बात को और अधिक सही ढंग से समझ सकते हैं। गाँधीजी आत्मकथा द्वारा न तो आत्म प्रशंसा करते हैं न आत्मदया उपजाते है। उन्होंने अपने जीवन को भी इस ढंग से लिखा है जैसे किसी और के बारे में लिख रहे हो। छोटी से छोटी घटना वर्णन करते हुए भी उसमें निहित सामाजिक और नैतिक पक्ष उनकी आँखों से ओझल नहीं होते। इसी कारण से वे सुन्दर लिखावट और व्यायाम पर इतना जोर देते है। गांधीजी की आत्मकथा के इन प्रसंगों से स्पष्ट है कि आत्मकथा में महत्वपूर्ण उसके वर्णित प्रसंग नहीं होते, उन प्रसंगों में निहित लेखकीय दृष्टि होती है जो उस प्रसंग के सामाजिक अर्थ को खोलती है।

18.4 चरित्र विश्लेषण

'आत्मकथा' लिखना सरल कार्य नहीं हैं। लेखक द्वारा अपने चरित्र का विश्लेषण करना अत्यंत दुष्कर कार्य है। इसके लिए अत्यधिक साहस की आवश्यकता होती है। मानव का यह स्वभाव है कि वह सदैव अपनी अच्छाईयों को दूसरों के सामने लाना चाहता है और कमजोरियों को छुपाना चाहता है। इसलिए आत्मकथा लिखते समय उसे पूरी तरह से संयमित और निष्पक्ष बने रहना पड़ता है। वस्तुत: आत्मकथा स्वयं के बारे में ईमानदारी से लिख गया प्रामाणिक विवरण होता है। वह न तो अपनी अच्छाईयों को अति रंजना पूर्ण ढंग से प्रकट कर सकता है न अपनी कमजोरियों, दुर्बलताओं को छुपा भी सकता है। आत्मकथा का लेखक वस्तुत: अपने गुण-दोषों से पूरी तरह से तटस्थ रहता है। वह अपने जीवन की दुर्बलताओं का भी उसी बेबाकी से चित्रण करता है जितना अपनी खूबियों को वह पाठकों के सामने लाने का प्रयास करता है। आत्मकथाकार के लिए यह जरुरी होता है कि वह अपने चरित्र का ईमानदारी से सच्चा चित्रण करें। अगर वह ऐसा नहीं करता है तो उसकी आत्मकथा बिल्कुल प्रभावहीन हो जाती है। चरित्र चित्रण में अच्छाईयों और कमजोरियों को दोनों को समान रूप से प्रकट किया जाना जरुरी है। गाँधीजी की आत्मकथा को पढ़ने से हमें ज्ञात होता है कि उन्होंने अपने चरित्र की किसी बात को छुपाने की कोई चेष्टा नहीं की है। उनकी आत्मकथा में अनेक ऐसे प्रसंग देखे जा सकते हैं जो उनकी दुर्बलताओं को प्रकट करते हैं। लेकिन उन्होंने उन्हें छुपाने की कुछ भी कोशिश नहीं की है। बड़े तटस्थ भाव से अपनी उन कमजोरियों का भी वर्णन किया है जिन्हें यदि वे चाहते तो आसानी से छुपा सकते थे।

गाँधी जी की आत्मकथा के इस अंग के आधार पर उनके चरित्र की विशेषताओं को इन बिन्दुओं में देखा जा सकता है

1. जीवन से सीख लेना :

गाँधीजी की आत्मकथा से यह स्पष्ट है कि उन्होंने अपने ही जीवन की भूलों से बहुत कुछ सीखा था यह बात नहीं कि उन्होंने किसी तरह की गलतियाँ नहीं की थी बल्कि गलतियों से ही उन्होंने बहुत कुछ सीखा। रेखागणित के कठिन प्रश्नों से या संस्कृत भाषा से शुरा- शुक में उन्हें बहुत डर लगता था लेकिन एक बार जब उन्होंने उनमें अपना मन रमा लिया तो फिर उनको उन विषयों से संबंधित कोई कठिनाई नहीं हुई।

2. अपने चाल चलने के प्रति सजगता :

गाँधीजी के मन में अपने चाल चलन के प्रति सजगता का भाव विद्‌यमान था। बचपन से ही उनकी यह भावना थी कि उन्हें झूठा न समझा जाय। उनके चाल चलन को लेकर ऊंगली न उठाए पाए इसके लिए वे सदैव बहुत सजग रहते थे। वे स्वयं कहते है कि मुझे अपनी होशियारी का कोई गर्व न था लेकिन अपने चाल-चलन की मुझे बड़ी चिन्ता रहती थी। आचरण में दोष आ जाने पर मुझे रूलाई आ जाती थी। मेरे हाथ कोई ऐसी बात हो कि उसके कारण कोई मेरी भर्त्सना करे यह मेरे लिए असहय था। एक बार उन्हें मार पड़ी थी। उन्हें मार से ज्यादा इस बात का दुःख अधिक हुआ कि उन्हें दण्ड का भागी माना गया।

3. बाल विवाह का विरोध :

गाँधीजी का विवाह उनके बडे भाई के साथ जब वे हाई स्कूल में पढ़ रहे थे तभी हो गया था। इसका नुकसान यह हुआ कि दोनों भाईयों के एक साल का नुकसान हो गया। उनके बड़े भाई तो उसके बाद आगे पढ़ाई नहीं कर पाए। अपने जीवन के इस कडुवे अनुभव के कारण उनका यह विश्वास हो गया कि पढ़ाई और विवाह दोनों साथ-साथ नहीं चल सकते। अपने इस विचार को वे सम्पूर्ण हिंदू समाज को भी प्रेरणा देना चाहते हैं।

4. व्यायाम के प्रति दृष्टिकोण :

व्यायाम के प्रति गाँधीजी की गहरी अरुचि थी। स्कूल में क्रिकेट खेलने या व्यायाम करने को अनिवार्य कर दिया गया तो वे उनमें लोग लेने से कतराते रहे। उस समय उनकी यह गलत धारण थी कि कसरत का पढ़ाई से कोई संबंध नहीं है। लेकिन बाद में उन्हें यह बात समझ में आई कि विद्‌वाभ्यास में व्यायाम या शारीरिक शिक्षा का मानसिक शिक्षा के बराबर ही स्थान होना चाहिए।

5. सुन्दर लिखावट का महत्त्व :

गाँधीजी के हस्ताक्षर बहुत खराब थे। वे कहते है कि पता नहीं कहाँ से यह गलत ख्याल मेरे दिमाग में धँस गया था कि पढाई में सुन्दर लिखावट की जरूरत नहीं है। लेकिन विलायत जाने पर वे वहाँ के नवयुवकों के मोती के दानों जैसे सुन्दर अक्षर देखकर अत्यंत लज्जित हुए। बाद में तो गाँधीजी का यह दृढ विचार बन गया कि प्रत्येक विद्‌यार्थी के लिए सुन्दर लिखावट का अभ्यास करवाया जाना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए।

6. भाषाओं के प्रति उदारवादी दृष्टिकोण :

गाँधीजी का यह दृढ़ विश्वास था कि भारत में उच्च शिक्षण में अपनी भाषा के सिवा राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा संस्कृत, फारसी, अरबी, अंग्रेजी सभी को स्थान मिलना चाहिए। "उनका विश्वास था कि इन भाषाओं पर अधिकार कर लेने से सब विषयों को अंग्रेजी से पढने समझने का बोझ नहीं रहेगा।"

7. सेवा भावना :

गाँधीजी को सेवा भावना संस्कारों के रूप में प्राप्त हुई थी। रोज शाम को अपने पिता की सेवा करना वे अपना कर्तव्य मानते थे। इसके लिए उन्होंने बाकायदा स्कूल में व्यायाम की अनिवार्य कक्षाओं में जाने की छुट्टी ले रखी थी। इसी सेवा सरकार ने बाद में गाँधीजी को दरिद्रों का सच्चा सेवक बना दिया। इस प्रकार गाँधीजी की आत्मकथा के उपयुक्त अंश से उनके चरित्र की अनेक विशेषताओं की हमें जानकारी प्राप्त होती है।

18.5 परिवेश

प्रत्येक रचना किसी न किसी सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में लिखी जाती है। जब कोई लेखक अपनी आत्मकथा लिखता है तब वह अनायास ही उसमें वर्णित प्रसंगों या घटनाओं की पृष्ठभूमि के रूप में उस समय के देशकाल का भी निरूपण कर देता है। गाँधी जी की इस आत्मकथा के अंश में भी परिवेश के रूप में उस समय के भारतीय समाज की अनेक प्रकार की बातों की जानकारी हमें मिलती है।

उस समय का हिन्दू समाज बाल या किशोर विवाह करने में रूचि लेता था। तब इस बात को सामाजिक स्वीकृति मिली हुई थी कि शिक्षा और विवाह दोनों साथ-साथ चल सकते हैं। हालांकि स्वयं गाँधीजी के जीवन में इस कुरीति के कारण पढ़ाई के पूरे एक वर्ष का नुकसान हुआ। उनके भाई की तो विवाह के बाद पढ़ाई ही पूरी तरह से रूक गई थी।

उस समय स्कूलों में बहुत कड़े अनुशासन की व्यवस्था थीं। दूसरी कक्षा से तो प्रत्येक बालक को शाम को शारीरिक शिक्षा या व्यायाम में भाग लेना अनिवार्य था। ऐसा न करने पर दण्डित किया जाता था। विद्यार्थियों में अनुशासन की भावना भरने के लिए दोष करने पर सजा देने की परिपाटी प्रचलित थी। इसके लिए विद्यार्थी को पूरी तरह से अपने पक्ष में सफाई देने तक की व्यवस्था न थी।

उस समय पारिवारिक संस्कारों में बच्चों का पालन पोषण किया जाता था। बच्चों को माता-पिता की सेवा का संस्कार दिया जाता था। गाँधीजी भी अपने पिता की प्रतिदिन नियमित सेवा किया करते थे। उस समय की शिक्षा व्यवस्था एवं शैक्षिक परिवेश पर भी उपर्युक्त आत्मकथा अंश में पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। उस समय शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी था। विद्यार्थियों को अंग्रेजी के अलावा संस्कृत या फारसी भाषा में से किसी एक की शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती थी। शिक्षक लोग ज्यादा से ज्यादा विद्यार्थियों को अपने विषय में पढ़ने के लिए प्रेरित करते थे। इसी भाँति अध्यापकों के व्यवहार आदि की भी यहाँ पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार गाँधीजी की आत्मकथा से सिर्फ उनके जीवन

की ही जानकारी नहीं मिलती है वरन् उस समय के परिवेश एवं हालात की भी सजीव जानकारी प्राप्त होती है।

18.6 संरचना शिल्प

धीजी की आत्मकथा लेखन की ये विशेषताएँ आसानी से देखी जा सकती है-

1. प्रसंगों का सूक्ष्मतम निरूपण :

गाँधीजी की यह आत्मकथा रोचक प्रथम पुरुष शैली में लिखी गई है। इस शैली में लेखक घटनाओं का वर्णन एक दर्शन की तरह न करके स्वयं भोक्ता की तरह करता है। गाँधीजी ने आत्मकथा इसी शैली में लिखी है इन्होंने घटनाओं का विस्तार से वर्णन तो नहीं किया है लेकिन प्रसंग से संबंधित कोई भी बात उन्होंने छोड़ी नहीं हे।

2. **सामाजिक सोद्देश्यता** :

आत्मकथा की रचना उन्होंने आत्मश्लाघा के लिए नहीं की है वरन् सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर की है। इसी कारण प्रत्येक प्रसंग का वर्णन करने के बाद उनको किसी न किसी रूप में सामाजिक दशाओं से जोड़ने का प्रयास भी किया गया है। जैसे अपने हस्ताक्षरों की दुर्बलता को आखिरकार गाँधीजी ने विद्‌यार्थियों के लिए हस्ताक्षरों और चित्रकला की अनिवार्यता से जोड़ा है। भाषा को लेकर भी लेखकर ने अधिकाधिक भाषाओं की जानकारी प्राप्त करना विद्‌यार्थियों के लिए जरूरी माना है। विवाह संबंधी हिंदू समाज की कुरीति के नुकसानों को बतलाते हुए यह स्थापित करने का प्रयास किया है कि शिक्षा और विवाह साथ साथ नहीं चलने चाहिए। इस प्रकार छोटी से छोटी बात का वर्णन करते समय भी गाँधी जी की शैली की यह विशेषता है कि वे उसको किसी न किसी रूप में सामाजिक पक्ष से जरूर जोड़ने की चेष्टा करते हैं।

3. विषय का सर्वांगीण चित्रण :

गाँधीजी की आत्मकथा में घटनाओं का वर्णन विषय से संबंधित सभी पक्षों को समेटकर किया गया है। भले ही उन्होंने प्रसंगों को अधिकार विस्तार से प्रस्तुत नहीं किया है। फिर भी घटना का कोई भी ऐसा पक्ष छूटने नहीं पाया है जो जरूरी हो। इसी कारण इनके द्‌वारा वर्णित समस्त घटना-प्रसंग पाठकों के सामने पूरी प्रामाणिकता के साथ प्रकट होते हैं।

4. विश्लेषणात्मकता :

आत्मकथा में गाँधीजी ने अपने जीवन की घटनाओं का निरूपण करने के साथ-साथ उनका विविध कोणों से विश्लेषण भी किया है और अन्त में वे जिन निष्कर्षों पर पहुँचे हैं उनको भी बिना संकोच उन्होंने आत्मकथा में प्रस्तुत किया है।

18.7 भाषा की विशेषताएँ :

गाँधीजी की आत्मकथा गुजराती भाषा में लिखी गई थी। यह उसका हिन्दी अनुवाद है। इस कारण गाँधीजी की आत्मकथा की भाषा की खूबियों को स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। अनुवाद होने के कारण यह अंश गाँधीजी की भाषा में न लिखा जाकर अनुवादक की

भाषा में लिखा गया है। फिर भी इतना जरूर स्पष्ट होता है कि गाँधीजी ने आलंकारिक भाषा में न लिखकर सहजता से सरल भाषा में, आत्मीयता भरे वर्णनों के साथ यह आत्मकथा लिखी है।

18.8 प्रतिपाद्य

किसी भी रचना को लिखे जाने का कोई न कोई सुनिश्चित उद्देश्य हुआ करता है। गाँधीजी ने अपनी आत्मकथा की भूमिका में उसे लिखने के उद्देश्य को इन शब्दों में व्यक्त किया है - "आत्मा की दृष्टि से पाली गई नीति धर्म है। इसलिए जिन वस्तुओं का निर्णय बालक, नौजवान और बूढ़े करते हैं और कर सकते हैं इस कथन में उन्हीं वस्तुओं का समावेश होगा। अगर ऐसी कथा में तटस्थ भाव से, निरभिमान रह कर लिख सकूँ तो, उससे दूसरे प्रयोग करने वालों को कुछ सामग्री मिलेगी। 'गाँधी जी की इन पंक्तियों से आत्मकथा लिखे जाने का उद्देश्य देखा जा सकता है।

गाँधीजी नैतिकता और आत्मा के धर्म को प्रचारित करना चाहते थे। संसार में मनुष्य के सामने हर घड़ी कोई न कोई समस्या उपस्थित रहती है। मनुष्य परिस्थितियों से जूझते हुए जीवन में जो कुछ भी प्राप्त करता है वह उसकी सत्यनिष्ठता और आत्मशक्ति से ही संभव है। गाँधीजी ने अपनी आत्मकथा को सत्य के प्रयोग की संज्ञा दी थी। उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि ने यह सिद्ध करना चाहते थे कि नैतिकता में वह शक्ति है जो हर तरह के अन्याय, अत्याचार और उत्पीड़न का विरोध कर सके। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए गाँधीजी ने सत्य और अहिंसा के बल पर इतनी उपलब्धियाँ प्राप्त की थी। आत्मकथा के दिए गए अंश में भी गाँधीजी के इसी प्रयोजन को उपस्थित देखा जा सकता है। एक दिन जब बादलों के कारण समय का अनुमान नहीं लगा पाए और समय पर व्यायाम की कक्षा में उपस्थित नहीं हो पाए तो उन्हें सजा दी गई। सजा से उन्हें शिकायत नहीं थी, उन्हें इस बात का दुःख था कि उन्हें झूठा समझा गया। अपनी इसी दृढ़ता से आखिरकार वे गुरूजी के सामने अपनी सच्चाई को प्रमाणित करने में सफल रहे थे।

गाँधीजी की आत्मकथा को पढ़कर पाठक सत्य के महत्व को समझ सकता है। यह सत्य किन्ही बड़ी बातों में विद्‌यमान नहीं रहता है वरन् वह जीवन की छोटी मोटी बातों में ही छुपा रहता है। अत: सफलता का मूलमन्त्र यह है कि व्यक्ति साधारण सी दिखाई देने वाली बातों को कभी नजर अंदाज न करें।

कोई भी विद्‌यार्थी गाँधीजी की आत्मकथा को पढ़कर यह सीख सकता है कि कड़ी मेहनत और लगन से पढ़ने से कठिन से कठिन विषय भी आसानी से समझा जा सकता है। मेहनती व्यक्ति के लिए कोई बात कठिन नहीं रह जाती है। इसके अलावा जीवन में सफलता पाने के लिए अधिकाधिक भाषाओं की जानकारी प्राप्त करना भी जरुरी है। सुन्दर लिखावट का अभ्यास करना भी आवश्यक है क्योंकि मोती जैसे सुन्दर अक्षरों में लिखी गई बात औरों के दिलों पर विशेष प्रभाव अंकित कर सकती है। जीवन में स्वस्थ रहने के लिए व्यायाम के महत्व की जानकारी भी हमें इस अंश से मिलती है।

18.9 सारांश

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि महात्मा गाँधी की आत्मकथा को पढ्ने से हमें एक और उनके जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं की जानकारी मिलती है वहीं दूसरी ओर इससे हमें अनेक रूपों में प्रेरणा भी प्राप्त होती है। गाँधीजी के व्यक्तित्व से प्रेरणा लेते हुए हम भी उनके आदर्शों को अपने जीवन में ढालने का प्रयास कर सकते हैं। हमारे जीवन की सफलता किन बातों पर निर्भर करती है इसे समझ कर हम भी अपने आपको दृढ़ चरित्रवान बना सकते हैं। विषमताओं, बाधाओं से जूझते हुए अपने जीवन को ऊँचा उठा सकते। कुल मिलाकर इस आत्मकथा अंश को पढ़कर हमें इन बातों की जानकारी मिलती है -

- आत्मकथा के स्वरूप को हम समझ कर हम उसकी विशेषताओं को बतला सकते हैं।
- इस आत्मकथा अंश के आधार पर हम गाँधीजी के व्यक्तित्व की विशेषताओं को स्पष्ट कर करते हैं।
- पठित अंश विद्यार्थियों को आत्मानुशासन के महत्व को भी समझाने में समर्थ रहा है।

18.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

सत्य के प्रयोग (आत्मकथा) - मोहनदास कर्मचन्द गाँधी

18.11 प्रश्न एवं अभ्यास

1. पठित आत्मकथा अंश के आधार पर गाँधीजी के चरित्र की विशेषताओं को बतलाइये।
2. व्यायाम के सम्बन्ध में गाँधीजी के विचारों को प्रकट कीजिये।
3. भाषाओं और सुन्दर लेखन के सम्बन्ध में गाँधीजी ने क्या कहा है? स्पष्ट कीजिये।
4. पिताजी के सेवा करना आत्म विकास के लिए क्यों जरूरी है बतलाइये।
5. गाँधीजी की आत्मकथा के इस अंश के आधार पर गाँधीजी के स्कूली जीवन की प्रमुख घटनाओं को बतलाइये।

इकाई - 19 संस्मरण - सुभद्रा (महादेवी वर्मा)

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य
19.1 प्रस्तावना
19.2 महादेवी वर्मा का परिचय
19.3 संस्मरण का वाचन
19.4 व्याख्याएँ
19.5 संस्मरण की अंतर्वस्तु
19.6 चरित्र विश्लेषण
19.7 परिवेश
19.8 संरचना शिल्प
19.9 प्रतिपाद्य
19.10 सारांश
19.11 सन्दर्भ ग्रन्थ
19.12 बोध प्रश्न/अभ्यास

19.0 उद्देश्य

इस इकाई में आपको आधुनिक हिन्दी साहित्य की राष्ट्रीय धारा की प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के बारे में महादेवी वर्मा का संस्मरण पढ्ने को दिया जा रहा है।

इस इकाई को पढ्ने के बाद आप -

- संस्मरण नामक गद्य विधा के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- संस्मरण के तत्वों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- संस्मरण और रेखाचित्र के अन्तर को समझ सकेंगे।
- सुभद्राकुमारी चौहान के व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे।
- संस्मरण लेखन की कला को सीख सकेंगे।

19.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम सुभद्राकुमारी चौहान के बारे में महादेवी वर्मा द्वारा लिखित संस्मरण का वाचन करेंगे। साहित्य की गद्य रचनाओं में अब तक आप कहानी और निबन्ध के बारे में पढ़ चुके हैं। कहानी में लेखक नायक के चरित्र को केन्द्र में रखकर उसके जीवन प्रसंगों को कथानक के माध्यम से रोचक ढंग से प्रस्तुत करता है। इसके विपरीत निबन्ध विचार प्रधान रचना होती है। निबन्ध में किसी एक् विषय पर लेखक सर्वांगीण ढंग से अपने विचार व्यक्त करता है। कहानी और निबन्ध को अलग संस्मरण एक् अलग प्रकार की साहित्य विधा होती है। हिन्दी साहित्य में रेखाचित्र की ही भाँति संस्मरण लिखने की परम्परा आधुनिककाल में पश्चिमी साहित्य के प्रभाव से शुरु हुई।

संस्मरण का स्वरूप :

संस्मरण का अर्थ है सम्यक् या पूर्णरूपेण स्मरण करना। इसमें लेखक अत्यंत गम्भीरता पूर्वक अपने या दूसरों के जीवन की किसी घटना या प्रसंग को बड़ी आत्मीयता पूर्वक स्मरण करते हुए उसका वर्णन करता है। व्यापक रूप में संस्मरण को आत्मचरित के अन्तर्गत रखा जा सकता है। क्योंकि इसमें लेखक अपने निजी अनुभवों को अधिक महत्त्व देता है। संस्मरण लिखते समय लेखक किन्हीं विशिष्ट व्यक्तियों, उनके जीवन व्यवहारों अथवा उनसे संबंधित घटनाओं का रोचक साहित्यिक ढंग से निरूपण करता है।

हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार "स्मृति के आधार पर किसी व्यक्ति या विषय के संबंध में लिखित लेख या ग्रन्थ को संस्मरण कह सकते हैं। ' जब संस्मरण लेखक अपने संबंध में लिखता है तो उसे अंग्रेजी में ' 'रेमिनिसेंसेज' कहते हैं और जब लेखक औरों के बारे में लिखता है तब उसे " मेम्बायर्स' कहते हैं। संस्मरण जब अपने संबंध में लिखा जाता है तब उसकी रचना आत्मकथा के निकट होता है लेकिन जब संस्मरण लेखक दूसरों के बारे में लिखता है तब उसकी रचना जीवनी के निकट होती है।

संस्मरण में लेखक चयनित विषय के समय के इतिहास को लिखना चहता है परन्तु इसमें इतिहास की तरह की नीरसता और वस्तु परकता नहीं रहती है। इसमें लेखक की निजी अनुभवों का आत्मीयता भरा संस्पर्श रहता है। लेखक जो कुछ देखता है या अनुभव करता है उसी को स्मरण करते हुए वर्णन करता है। इतिहासकार की तरह वह विवरण नहीं देता है वरन् वर्णित विषय के साथ अपनी अनुभूति तथा संवेदनाओं का निरूपण भी करता जाता है। इस तरह संस्मरण का लेखक एक दर्शक, एक साक्षी, एक प्रत्यक्षदर्शी होता है। वह भावुक कलाकार होता है। अपनी भावुकता के सहारे वह अतीत की स्मृतियों में से कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण प्रसंगों को चुनकर उन्हें पाठकों के सामने ले आता है। डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत के अनुसार " भावुक कलाकार जब अतीत की अनन्त स्मृतियों में से कुछ रमणीय अनुभूतियों को अपनी कोमल कल्पना से अनुरंजित करव्यंजनामूलक शैली में अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं से विशिष्ट कर रोचक ढंग से यथार्थ में व्यक्त कर देता है, तब उसे संस्मरण कहते हैं।'

संस्मरण और रेखाचित्र प्राय: एक् समान विधाएँ मानी जाती है। किन्तु सूक्ष्मता से देखने पर दोनों में पर्याप्त अन्तर दिखाई देता है। रेखाचित्र को अंग्रेजी में ' 'स्कैच' कहते हैं। इसमें लेखक किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को शब्दों की रेखाओं से उसी तरह प्रकट करता है जैसे कोई चित्रकार पेंसिल से रेखाएं खींचकर किसी का चित्र अंकित कर देता है। इसी आधार पर संस्मरण और रेखाचित्र में अन्तर किया जाता है। देखा चित्रकार व्यक्ति के बाहरी व्यक्तित्व का अंकन करता है तो संस्मरण लेखक उस व्यक्ति के बाहरी के साथ साथ आतीरक व्यक्तित्व का अंकन भी करता है तो संस्मरण व्यक्तित्व का अंकन भी करता है। संस्मरण लेखक उस व्यक्ति के बाहरी के साथ साथ आंतरिक व्यक्तित्व का अंकन भी करता है तो संस्मरण व्यक्तित्व का अंकन भी करता है। संस्मरण लेखक व्यक्ति या घटना से स्वयं जुड़कर अपनी रचना करता है जबकि रेखा चित्रकार ऐसा नहीं

करता है। रेखाचित्र में भावुकता का स्पर्श नहीं होता है जबकि संस्मरण के लिए भावुकता का होना अनिवार्यता है। ने

19.2 महादेवी वर्मा का परिचय

छायावाद के प्रमुख आधार स्तंभों में गिनी जाने वाली महादेवी वर्मा का जन्म फर्रूखाबाद (उत्तर प्रदेश) में 1907 ई. को हुआ। इनका जन्म एक् सम्पन्न परिवार में हुआ था। इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. करने के बाद संस्कृत में एम.ए. किया। उन्होंने प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाचार्य के पद पर का कार्य किया। वे छायावादी दौर की प्रमुख कवयित्री थी। इनके गीतों में नारी सुलभ वेदना, पीड़ा की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। इनके पाँच काव्य साग्रह है - "नीहार', "रश्मि', "नीरजा', "सांध्यगीत' और "दीपशिखा' है।

कवि के अतिरिक्त महादेवी वर्मा ने गद्य लेखिका के रूप में पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की थी। संस्मरण और रेखाचित्र विधाओं के विकास में महादेवी वर्मा का महत्वपूर्ण योगदान है। इन्होंने अपने आस पास के व्यक्तियों के जीवन प्रसंगों को अत्यन्त रोचक संस्मरणों के रूप में चित्रित किया है। यहाँ तक कि गिलहरी व अन्य जीव-जन्तुओं तक को इन्होंने अपनी संस्मरणात्मक रचनाओं का आधार बनाया है। घीसा, रामा, बिट्टो, सकिया जैसे अति साधारण स्थिति के पात्रों को इन्होंने अपनी रचनाओं का आधार बनाया है। महादेवी जी के संस्मरणों में विषय चयन का यह निरालापन उन्हें दूसरे संस्मरणकारों से अलग कर देता है। दूसरे रचनाकारों ने लोक विख्यात चरित्रों से सम्बन्धित संस्मरण लिखें है जबकि महादेवी ने आम आदमी को संस्मरणों का नायक बनाकर उन्हें महानता प्रदान की है। यही कारण है कि महादेवी जी का सस्मरण साहित्य सम्पूर्ण हिन्दी गद्द साहित्य की अक्षय निधि बन गया है। " अतीत के चलचित्र', ' 'स्मृति की रेखाएं', पथ के निधि बन गया है। " अतीत के चलचित्र, ' 'स्मृति की रेखाएं ', पथ के साथी' इत्यादि उनकी प्रमुख संस्मरणात्मक कृतियाँ हैं। इन सब में संस्मरण साहित्य का पूर्ण उत्कर्ष स्पष्ट दिखाई देता है। इनके संस्मरणों में स्मरण किए गए प्रसंगों का सन्दर्भ अपने आप पाठकों के सामने उद्वासित हो जाता है। मूलत: कवि हृदय रखने वाली महादेवी वर्मा के संस्मरणों में भी कविता की सी कोमलता, भावुकता और मधुरता दिखाई देती है। इनके संस्मरणों की भाषा में चित्र सा अंकित कर देने की सामर्थ्य है। उन्हें पढ़कर पाठकों का हृदय भी उनमें आकंठ डूब जाता है।

19.3 संस्मरण का वाचन

सुभद्रा :

हमारे शैशवकालीन अतीत और प्रत्यक्ष वर्तमान के बीच में समय-प्रवाह का पाठ ज्यों-ज्यों चौड़ा होता जाता है त्यों-त्यों हमारी स्मृति में अनजाने ही एक परिवर्तन लक्षित होने लगता है। शैशव की चित्रशाला के जिन चित्रों से हमारा रागात्मक सम्बन्ध गहरा होता है, उनकी रेखाएँ और रंग इतने स्पष्ट और चटकीले होते चलते हैं कि हम वार्धक्य की धुंधली आँखों से भी उन्हें प्रत्यक्ष देखते रह सकते हैं। पर जिनसे ऐसा सम्बन्ध नहीं होता

वे फीके होते-होते इस प्रकार स्मृति से पुल जाते हैं कि दूसरों के स्मरण दिलाने पर भी उनका स्मरण कठिन हो जाता है।

मेरे अतीत की चित्रशाला में बहिन सुभद्रा से मेरे सख्य का चित्र पहली कोटि में ही रखा जा सकता है, क्योंकि इतने वर्षों के उपरान्त भी उनकी सब रंग-रेखायें अपनी सजीवता में स्पष्ट हैं।

एक सातवीं कक्षा की विद्यार्थिनी, एक पांचवीं कक्षा की विद्यार्थिनी से प्रश्न करती है, ' 'क्या तुम कविता लिखती हो? " दूसरी ने सिर हिला कर ऐसी अस्वीकृति दी जिसमें ही और नहीं तरल होकर एक हो गये थे। प्रश्न करने वाली ने इस स्वीकृति- अस्वीकृति की सन्धि से खीझ कर कहा, 'तुम्हारी क्लास की लड़कियां तो कहती हैं कि तुम गणित की कापी तक में कविता लिखती हो! दिखाओ अपनी कापी और उत्तर की प्रतीक्षा में समय नष्ट न कर वह कविता लिखने की अपराधिनी को हाथ पकड़ कर खींचती हुई उसके कमरे में डेस्क के पास ले गई। नित्य व्यवहार में आने वाली गणित की कापी को छिपाना सम्भव नहीं था, अत: उसके साथ अंकों के बीच में अनधिकार सिकुड़कर बैठी हुई तुकबदियां अनायास पकड़ में आ गई। इतना दंड ही पर्याप्त था। पर इसमें संतुष्ट न होकर अपराध की अन्वेषिका ने एक हाथ में वह चित्र-विचित्र कापी थामी और दूसरे में अभियुक्ता की उंगलियां कस कर पकड़ी और वह हर कमरे में जा-जाकर इस अपराध की सार्वजनिक घोषणा करने लगी।

उस युग में कविता रचना अपराधों की सूची में थी। कोई तुक जोड़ता है, यह सुनकर ही सुनने वालों के मुख की रेखायें इस प्रकार वक्रकुंचित हो जाती थीं मानों उन्हें कोई कटु-तिक्त पेय पीना पड़ा हो।

ऐसी स्थिति में गणित जैसे गंभीर महत्त्वपूर्ण विषय के लिए निश्चित गृहों पर तुक जोड़ना अक्षमय अपराध था। इससे बढ़कर कागज का दुरुपयोग और विषय का निरादर और हो ही क्या सकता था। फिर जिस विद्यार्थी की बुद्धि अंकों के बीहड़ वन में पग-पग पर उलझती है उससे तो गुर। यही आशा रखता है कि वह हर सांस को अंक जोड़ने-घटाने की क्रिया बना रहा होगा। यदि वह सारी धरती को कशज बना कर प्रश्नों को हल करने के प्रयास से नहीं भर सकता तो उसे कम से कम सौ-पचास पृह, सही न सही तो गलत प्रश्न-उत्तरों से भर लेना चाहिए। तब उसकी भ्रंत बुद्धि को प्रकृतिदत्त मलकर उसे क्षमा-दान का पात्र समझा जा सकता है, पर जो तुकबन्दी जैसे कार्य से बुद्धि की धार गोंठिल कर रहा है वह तो पूरी शक्ति से दुर्बल होने की मूर्खता क्रता है, अत: उसके लिए न सहानुभूति का प्रश्न उठता है, न क्षमा का।

मैंने होंठ भींचकर न रोने का जो निश्चय किया वह न टूटा तो न टूटा। अन्त में मुझे शक्ति-परीक्षा में उत्तीर्ण देख सुभद्रा जी ने उत्फुल्ल भाव से कहा, ' अच्छी तो लिखती हो। भला सवाल हल करने में एक् दो तीन जोड़ लेना कोई बड़ा काम है! ' मेरी चोट अभी दुख रही थी, परन्तु उनकी सहानुभूति और आत्मीय भाव का परिचय पाकर आँखें सजल

हो आई। 'तुमने सबरने क्यों बताया' का सहारा उत्तर मिला 'हमें भी तो सहना पड़ता है। अच्छा हुआ अब दो साथी हो गए!

बहिन सुभद्रा का चित्र बनाना कुछ सहज नहीं है, क्योंकि चित्र की साधारण जान पड़ने वाला प्रत्येक रेखा के लिए उनकी भावना की दीप्ति 'संचारिणी दीपशिखेव' बनकर उसे असाधारण कर देती है। एक् एक करके देखने से कुछ भी विशेष नहीं कहा जाएगा, परन्तु सबकी समग्रता में जो उद्राषित होता था, उसे दृष्टि से अधिक हृदय ग्रहण करता था।

मझोले कद तथा उस समय की कृश देहयष्टि में ऐसा कुछ उग्र या रौद्र नहीं था जिसकी हम वीर गीतों की कवयित्री में कल्पना करते हैं। कुछ गोल मुख, चौड़ा माथा, सरल मृकुटियां, बड़ी और भावस्नात आखें, छोटी सुडौल नासिक, हँसी को जमाकर गढ़े हुए से ओंठ और दृढ़ता सूचक ठुढ्डी... सब कुछ मिलाकर एक अत्यन्त निश्छल, कोमल, उदार व्यक्तित्व वाली भारतीय नारी का ही पता देते थे। पर उस व्यक्ति के भीतर जो बिजली का छन्द था, उसका पता तो तब मिलता था, उनके और उनके निश्चित लक्ष्य के बीच में कोई बाधा आ उपस्थित होती थी। 'मैंने हँसना सीखा है, मैं नहीं जानती रोना' कहने वाली की हंसी निश्चय ही असाधारण थी। माता की गोद में दूध पीता बालक जब अचानक हँस पड़ता हैं, तब उसकी दूध से धुली हँसी में जैसी निश्चित तृप्ति और सरल विश्वास रहता है, बहुत कुछ वैसा ही भाव सुभद्रा जी की हंसी में मिलता था। वह संक्रामक भी कम नहीं थीं, क्योंकि दूसरे भी उनके समान बात करने से अधिक हँसने को महत्त्व देने लगते थे।

वे अपने बचपन की एक् घटना सुनाती थीं। कृष्ण और गोपियों की कथा सुनकर एक दिन बालिका सुभद्रा ने निश्चय किया कि वह गोपी बन कर ग्वालों के साथ कृष्ण को ढूँढने जायगी।

दूसरे दिन वह लकुटी लेकर गायों और ग्वालों के झुंड के साथ कीकर और बबूल से भरे जंगल में पहुच गई। गोधूली वेला में चरवाहे और गायें तो घर की ओर लौट गए पर गोपी बनने की साथ वाली बालिका कृष्ण को खोजती रह गई। उसके पैरों में कांटे चुभ गए, कंटीली झाड़ियों में कपड़े उलझकर फट गए, प्यास से कंठ सूख गया और परनीने पर धूल की पर्त जम गई पर वह धुन वाली बालिका लौटने को प्रस्तुत नहीं हुई। रात होते देख घर वालों ने उन्हें खाजना आरंभ किया और ग्वालों से पूछते-पूछते अंधेरे करील वन में उन्हें पाया।

अपने निश्चित लक्ष्य-पथ पर अडिग रहना और सब-कुछ हँसते- हँसते सहना उनका स्वभाव जात गुण था। क्रास्थवेट गर्ल्स कालेज में जब वे आठवीं कक्षा की विद्यार्थिनी थीं, तभी उनका विवाह हुआ ओर उन्होंने पतिगृह के लिए प्रस्थान किया। स्वतन्त्रता के युद्ध के लिए सन्नद्ध सेनानी गति को वे विवाह से पहले देख भी चुकी थीं और उनके विचारों से भी परिचित थीं। उनसे यह छिपा नहीं था कि नववधू के रूप में उनका जो प्राप्य है उसे देने का न पति को अवकाश है, न लेने का रत्रनदें।वस्तुत: जिस विवाह में मंगल-कंकण ही रण कंकण बन गया, उसकी गृहस्थी भी कारागार में ही बसाई जा सकती थी।

और उन्होंने कराई भी वहीं। पर इस साधना की मर्म -व्यि को वही नारी जान सकती है जिसने अपनी देहली पर खड़े होकर भीतर के मंगल चौक पर रखे मंगल कलश, तुलसी चौरे पर जलते हुए घी के दीपक और हर कोने से स्नेह भरी बाहें फैलाए हुए अपने घर पर दृष्टि डाली हो और फिर बाहर के अन्धकार, आँधी और तूफान हो और तब घर की सुरक्षित सीमा पार कर, उसके सुन्दर मधुर आहवान की ओर पीठ फेर कर अंधेरे रास्ते पर काँटों से उलझती चल पड़ी हो। उन्होंने हँसते-हँसते ही बताया था कि जेल जाते समय उन्हें इतनी फूल मालाएं मिल जाती थी कि वे उन्हीं का तकिया बना लेते थीं और लेटकर पुष्प शैया के सुख का अनुभव करती थीं।

एक बार भाई लक्ष्मणसिंह जी ने मुझसे सुभद्रा जी की स्नेह भरी शिकायत की, ' इन्होंने मुझसे कभी कुछ नहीं मांगा। ' सुभद्रा जी ने अर्थ भरी हंसी में उत्तर दिया था, ' इन्होंने पहले ही दिन मुझसे कुछ मांगने का अधिकार मांग लिया था महादेवी! यह ऐसे ही होशियार हैं, मांगती तो वचन- भंग का दोष मेरे सर पड़ता, नहीं मना तो इनके अहंकार को ठेस लगती है। '

घर और कारागार के बीच में जीवन का जो क्रम विवाह के साथ आरम्भ हुआ था, वह अन्त तक चलता ही रहा। छोटे बच्चों को जेल के भीतर और बड़ों को बाहर रखकर वे अपने मन को कैसे संवत रख पाती थी, यह सोचकर विस्मय होता है। कारागार में जो सम्पन्न परिवारों की सत्याग्रही मातायें थीं, उनके बचो के लिए बाहर से न जाने कितना मेवा मिहान्न आता रहा था। सुभद्रा जी की आर्थिक परिस्थितियों में जेल जीवत को ए और सी क्लास समान ही था। एक बार जब भूख से रोती बालिका को बहलाने के लिए कुछ नहीं मिल सका तब उन्होंने अरहर दल ने वाली महिला-कैदियों से थोड़ी सी अरहर की दाल ली और उसे तवे पर भून कर बालिका को खलाया। घर आने पर भी उनकी दशाद्ररोणाचार्य जैसी हो जाती थी, जिन्हें दूध के लिए मचलते हुए बालक अश्वन्यामा को चावल के घोल के सफेद पानी देकर बहनाना पड़ा था। पर इन परीक्षाओं से उनका मन न कभी हारा, न उसने परिस्थितियों को अनुकूल बनाने के लिए कोई समझौता स्वीकार।

उनके मानसिक जगत में हीनता की किसी ग्रन्थि के लिए कभी अवकाश नहीं रहा, घर से बाहर बैठकर वे कोमल और ओज भरे छन्द लिखने वाले हाथों से गोकर के कंडे पाथती थीं। घर के भीतर तन्मयता से आगन लीपती थ। बर्तन मांजती थीं। आँगन लीपने की कला में मेरा भी कुछ प्रवेश था अत: प्राय: हम दोनों प्रतियोगिता के लिए आँगन के भिन्न-भिन्न छोरों से लीपना आरम्भ करते थे। लीपने में हमें अपने से बड़ा कोई विशेषज्ञ मध्यस्थ नहीं प्राप्त हो सका, अत: प्रतियोप्तीता का परिणाम सदा अघोषित ही रह गया। पर आज मैं स्वीकार करती हूं कि ऐसे कार्य में एकान्त तन्मयता केवल उसी गृहिणी में सम्भव है जो अपने घर की धरती को समस्त हृदय से चाहती हो और सुभद्रा ऐसी ही गृहिणी थीं। उस छोटे से अधबने घर की छोटी-सी सीमा में उन्होंने क्या नहीं संगृहीत किया।

छोटे-बड़े पेड़ रंग-बिरंगे फूलों के पौधों की क्यारियाँ, ऋतु के अनुसार तरकारियाँ, गाय, बछड़े आदि- आदि बड़ी गृहस्थी की सब सज्जा वहाँ विराट दृश्य के छोटे चित्र के समान उपस्थित थी। अपने इस आकार में छोटे साम्राज्य को उन्होंने अपनी ममता के जादू से इतना विशाल बना रखा था कि उसके द्वार पर न कोई अनाहूत रहा और न निराश लौटा। जिन संघर्षों के बीच से उन्हें मार्ग बनाना पड़ा, वे किसी भी व्यक्ति को अनुदार और कटु बनाने में समर्थ थे। पर सुभद्रा के भीतर बैठी सृजनशीला नारी जानती थी कि कांटों का स्थान जब चरणों के नीचे रहता है तभी वे टूटकर दुसरों को बेधने की शक्ति खोते हैं। परीक्षाएँ जब मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य को क्षत-विक्षत कर डालती हैं तब उनमें उत्तीर्ण होने-न-होने का कोई मूल्य नहीं रह जाता।

नारी के हृदय में जो गम्भीर ममता-सजल वीर-भाव उत्पन्न होता है वह पुरुष के उग्र शौर्य से अधिक उदात्त और दिव्य रहता है। पुरुष अपने व्यक्तिगत या समूहगत रागद्वेष के लिए भी वीर धर्म अपना सकता है और अहंकार की तृप्ति-मात्र के लिए भी। पर नारी अपने सृजन की बाधायें दूर करने के लिए या अपनी कल्याणी सृष्टि की रक्षा के लिए ही रुद्र बनती है। अत: उसकी वीरता के समकक्ष रखने योग्य प्रेरणाएँ संसार के कोश में कम हैं। मातृशक्ति का दिव्य रक्षक उद्धारक रूप होने के कारण ही भूमिकृति चंडी, वत्सला अम्बा भी है, जो हिंसात्मक पाशविक शक्तियों को चरणों के नीचे दबाकर अपनी सृष्टि के मंगल की साधना करती है।

सुभद्रा जो महिमामय माँ थी, उसकी वीरता का उतर भी वात्सल्य ही कहा जा सकता है। न उनका जीवन किसी क्षणिक उत्तेजना लीक पर हुआ न उनकी ओज भरी कविता वीर-रस की घिसी-पिटी लीक पर चली। उनके जीवन में जो एक निरन्तर निखरता हुआ कर्म का तारतम्य है, वह ऐसी अंतर-व्यापिनी निष्ठा से जुड़ा हुआ है जो क्षणिक उत्तेजना का दान नहीं मानी जा सकती। इसी से जहां दूसरों को यात्रा का अन्त दिखाई दिया वहीं उन्हें नई मंजिल का बोध हुआ।

थक कर बैठने वाला अपने न चलने की सफाई खोजते-खोजते लक्ष्य पा लेने की कल्पना कर सकता है, पर चलने वाले को इसका अवकाश कहां।

जीवन के प्रति ममता भरा विश्वास ही उनके काव्य का प्राण है :

सुख भरे सुनहले बादल
रहते हैं मुझको घेरे।
विश्वास प्रेम साहस हैं
जीवन के साथी मेरे।

मधुमक्षिका जैसे कमल से लेकर भटकटैया तक और रसाल से लेकर आक तक, सब मधुर-तिक्त एकत्र करके उसे अपनी शक्ति से एक मधु बनाकर लौटाती, बहुत कुछ वैसा ही आदान-सम्प्रदान सुभद्रा जी का था। सभी कोमल-कठिन, सह्य-असह्य अनुभवों का परिपाक दूसरी के लिए एक ही होता था। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उनमें विवेचन की तीक्ष्ण दृष्टि का अभाव था। उनकी कहानियाँ प्रमाणित करती है कि उन्होंने जीवन

और समाज की अनेक समस्याओं पर विचार किया और कभी अपने निष्कर्ष के साथ और कभी दूसरों के निष्कर्ष के लिए उन्हें बड़े चमत्कारिक ढंग से उपस्थित किया।

जब स्त्री का व्यक्तित्व उसके पति से स्वतंत्र नहीं माना जाता था तब वे कहती हैं, 'मनुष्य की आत्मा स्वतन्त्र है। फिर चाहे वह स्त्री शरीर के अन्दर निवास करती हो चाहे पुरुष- शरीर के अन्दर। इसी से पुरुष और स्त्री का अपना-अपना व्यक्तित्व अलग रहता है।' जब समाज और परिवार की सत्ता के विराद्ध कुछ कहना अधर्म माना जाता था तब वे कहती हैं, 'समाज और परिवार व्यक्ति को बन्धन में बाँधकर रखते हैं। ये बन्धन देशकालानुसार बदलते रहते हैं और बदलते रहना चाहिए वरना वे व्यक्तित्व के विकास में सहायता करने के बदले बाधा पहुंचाने लगते हैं। बन्धन कितने ही अच्छे उद्देश्य से क्यों न नियत किए गए हों, हैं बन्धन ही, और जहाँ बन्धन है वहाँ असन्तोष है तथा क्रान्ति हैं।'

परम्परा का पालन ही जब स्त्री का परम कर्तव्य समझा जाता था तब वे उसे तोड़ने की भूमिका बाँधती है, 'चिर-प्रचलित रूढ़ियों और चिर-संचित विश्वासों को आघात पहुँचाने वाली हलचलों को हम देखना-सुनना नहीं चाहते। हम ऐसी हलचलों को अधर्म समझकर उनके प्रति आंख भींच लेना उचित समझते हैं g किन्तु ऐसा करने से काम नहीं चलता। वह हलचल और क्रान्ति हमें बरबस झकझोरती है और बिना होश में लाए नहीं छोड़ती।'

अनेक समस्याओं की ओर उनकी दृष्टि इतनी पैनी है कि सहज भाव से कहीं सरल कहानी का अन्त भी हमें झकझोर डालता है।

वे राजनीतिक जीवन में ही विद्रोह को सफलतापूर्वक उतार कर उसे सृजन का रूप दिया था।

सुभद्रा जी के अध्ययन का क्रम असमय ही भंग हो जाने के कारण उन्हें विश्वविद्यालय की शिक्षा तो नहीं मिल सकी, पर अनुभव की पुस्तक से उन्होंने जो सीखा उसे उनकी प्रतिभा ने सर्वथा निजी विशेषता दे दी हैं।

भाषा, भाव, छन्द की दृष्टि से नये, 'झाँसी की रानी' जैसे वीर गीत तथा सरल स्पष्टता में मधुर प्रगति मुक्त, यथार्थवादिनी मार्मिक कहानियाँ आदि उनकी मौलिक प्रतिभा के भी सृजन हैं।

ऐसी प्रतिभा व्यावहारिक जीवन को अछूता छोड़ देती तो आश्चर्य की बात होती।

पत्नी की अनुगामिनी, अर्धागिनी आदि विशेषताओं को अस्वीकार कर उन्होंने भाई लक्ष्मण सिंह जी की पत्नी के रूप में ऐसा अभिन्न मंत्र दिया जिसकी बुद्धि और शक्ति पर निर्भर रह कर अनुगमन किया जा सके।

अजगर की कुंडली के समान, स्त्री के व्यक्तित्व को कस कर चूर-चूर कर देने वाले अनेक सामाजिक बन्धनों को तोड़ फेंकने में उनका जो प्रयास लगा होगे, उसका मूल्यांकन आज सम्भव नहीं है।

उस समय बच्चों के लालन-पालन में मनोविज्ञान को इतना महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं मिला था और प्राय: सभी माता-पिता बच्चों को शिष्टता सिखाने में स्वयं अशिष्टता की सीमा

तक पहुँच जाते थे। सुभद्रा जी का कव्हिृदय यह विधान कैसे स्वीकार कर सकता था! अत: उनके बच्चों को विकास का जो मुक्त वातावरण मिला उसे देखकर सब समझदार निराशा से सिर हिलाने लगे। पर जिस प्रकार यह सत्य है कि सुभद्रा जी ने अपने किसी बच्चे को उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ करने के लिए बाध्य नहीं किया, उसी प्रकार यह भी सत्य है कि किसी बच्चे ने ऐसा कोई कार्य नहीं किया जिससे उसकी महीयसी माँ को किंचित् भी क्षुब्ध होने का कारण मिला हो। उनके वात्सल्य का विधान ऐसा ही अलिखित और अटूट था।

अपनी सन्तान के भविष्य को सुखमय बनाने के लिए उनके निकट कोई भी त्याग अनुकरणीय नहीं रहा। पुत्री के विवाह के विषय में तो उन्हें परिवार से भी संघर्ष करना पड़ा।

उन्होंने एक क्षण के लिए भी इस असत्य को स्वीकार नहीं किया कि जातिवाद की संकीर्ण तुला पर ही वर की योग्यता तोली जा सकती है। इतना ही नहीं, जिस कन्यादान की प्रथा का सब मूक-भाव से पालन करते आ रहे थे उसी के विराद्ध उन्होंने घोषणा की, 'मैं कन्यादान नहीं करूंगी। क्या मनुष्य मनुष्य को दान करने का अधकारी है? क्या विवाह के उपरान्त मेरी बेटी नहीं रहेगी?' उस समय तक किसी ने, और विशेषत: किसी स्त्री ने, ऐसी विचित्र और परम्परा-विरुद्ध बात नहीं कही थी।

देश की जिस स्वतन्त्रता के लिए उन्होंने अपने जीवन के वासन्ती सपने अंगारों पर रख दिये थे, उसकी प्राप्ति के उपरान्त भी जब उन्हें सब ओर अभाव और पीड़ा दिखाई दी तब उन्होंने अपने संघर्षकालीन साथियों से भी विद्रोह किया। उनकी उग्रता का अंतिम परिचय तो विश्ववद्द बापू की अस्थि विसर्जन के दिन प्राप्त हुआ। वे कई सौ हरिजन महिलाओं के जुलूस के साथ-साथ सात मील पैदल चलकर नर्मदा किनारे पहुंचीं। पर अन्य सम्पन्न परिवारों की सदस्यायें मोटरों पर ही जा सकी। जब अस्थि प्रवाह के उपरान्त संयोजित सभा के घेरे में इन पैदल आने वालों को स्थान नहीं दिया गया तब सुभद्रा जी का क्षुब्ध हो जाना स्वाभाविक ही था। उनकी क्षात्रधर्म तो किसी प्रकार के अन्याय के प्रति क्षमाशील हो नहीं सकता था। जब उन हरिजनों को उनका प्राप्य दिला सकीं तभी वे स्वयं सभा में सम्मिलित हुई।

सातवीं और पाँचवीं कक्षा की विद्यार्थिनी के सख्य को सुभद्रा जी के सरल स्नेह ने ऐसी अमिट लक्ष्मण-रेखा से घेर कर सुरक्षित रखा कि समय उस पर कोई रेखा नहीं खींच सका। अपने भाई- बहनों में सबसे बड़ी होने के कारण मैं अनायास ही सबकी देखरेख और चिन्ता की अधिकारिणी बन गई थी। परिवार में जो मुझसे बड़े थे उन्होंने भी मुझे ब्रह्मसूत्र की मोटी पोथी में आंख गड़ाये देख कर अपनी चिन्ता की परिधि से बाहर समझ लिया था। पर केवल सुभद्रा पर न मेरी मोटी पोथियों का प्रभाव पड़ा न मेरी समझदारी का। अपने व्यक्तिगत सम्बन्धों में हम कभी कुतूहली बाल- भाव से मुक्त नहीं हो सके। सुभद्रा के मेरे घर आने पर भक्तिन तक मुझ पर रौब जमाने लगती। क्लास में पहुंचकर वह आगमन की सूचना इतने ऊंचे स्वर में झर प्रकार देती कि मेरी स्थिति ही विचित्र हो जाती 'ऊ सहोदरा विचरि अऊ तो इनका देखै बरे आइ के अकेली सूने घर माँ बैठी हैं।

अउर इनका कितबियन से फुरसत नाहिन बा'। एम.ए., बी.ए. के विद्यार्थियों के सामने जब एक देहातिन बुढ़िया गुरु पर कर्त्तव्य-उल्लंघन का ऐसा आरोप लगाने लगे तो बेचारे गुरु की सारी प्रतिष्ठा किरकिरी हो सकती थी। पर इस अनाचार को रोकने का कोई उपाय नहीं था। सुभद्रा जी के सामने न भक्तिन को डाँटना सम्भव था, न उसके कथन की उपेक्षा करना। बंगले में आकर देखती कि सुभद्रा जी रसोई घर में या बरामदे में भानमती का पिटारा खोल बैठी हैं और उसमें से अद्भुत वस्तुएं निकल रही हैं। छोटी- छोटी पत्थर या शीशे की प्यालियाँ, मिर्च का अचार, बासी पूरी, पेड़े, रंगीन चकला-बेलन, चुटीली, नीली-सुनहली चूड़ियाँ आदि- आदि सब कुछ मेरे लिए आया है, इस पर कौन विश्वास करेगा! पर वह आत्मीय उपहार मेरे निमित्त ही आता था।

ऐसे भी अवसर आ जाते थे जब वे किसी कवि-सम्मेलन में आते-जाते प्रयाग उतर नहीं पाती थीं और मुझे स्टेशन जाकर ही उनसे मिलना पड़ता था। ऐसी कुछ क्षणों की भेंट में भी एक दृश्य की अनेक आवृत्तियां होती ही रहती थीं। वे अपने थैले से दो चमकीली चुड़ियाँ निकालकर हंसती हुई पूछतीं, 'पसन्द हैं? मैंने दो तुम्हारे लिए, दो अपने लिए खरीदी थीं। तुम पहनने में तोड़ डालोगी। लाओ अपना हाथ, मैं पहना देती हूं। ' पहन लेने पर वे बच्चों के समान प्रसन्न हो उठतीं।

हम दोनों जब साथ रहती थीं तब बात एक मिनिट और हँसी पाँच मिनिट का अनुपात रहता था। इसी से प्राय: किसी सभा-समिति मे जाने के पहले न हंसने का निश्चय करना पड़ता था। एक दूसरे की ओर बिना देखे गम्भीर भाव से बैठे रहने की, प्रतिज्ञा करके भी वहां पहुंचते ही एक न-एक वस्तु या दृश्य सुभद्रा के कुतूहली मन को आकर्षित कर लेता और मुझे दिखाने के लिए वे चिकोटी तक काटने से नहीं चूकतीं। तब हमारी शोभा-सदस्यता की जो स्थिति हो जाती थी, उसका अनुमान सहज है।

अनेक कवि-सम्मेलनों में हमने साथ भाग लिया था, पर जिस दिन मैंने अपने न जाने का निश्चय और उसका औचित्य उन्हें बता दिया उस दिन से अन्त तक कभी उन्होंने मेरे निश्चय के विरुद्ध कोई आग्रह नहीं किया। आर्थिक स्थितियाँ उन्हें ऐसे निमंत्रण स्वीकार करने के लिए विवश कर देती थीं, परन्तु मेरा प्रश्न उठते ही वे कह देती थीं, ' मैं तो विवशता से जाती हूँ र पर महादेवी नहीं जायेगी, नहीं जायेगी।'

साहित्य-जगत् में आज जिस सीमा तक व्यक्तिगत स्पर्द्धा, ईर्षा-द्वेष है, उस सीमा तक तब नहीं था, यह सत्य है। पर एक दूसरे के साहित्य चरित्र-स्वभाव सब्लधी निन्दा-पुराण तो सब युगों में नानी की कथा के समान लोकप्रियता पा लेता है। अपने किसी भी परिचित- अपरिचित साहित्य- साथी की त्रुटियों के प्रति सहिष्णु रहना और उसके गुणों के मूल्यांकन में उदारता से काम लेना सुभद्रा जी की निजी विशेषता थी। अपने को बड़ा बनाने के लिए दूसरों को छोटा प्रमाणित करने की दुर्बलता उनमें असम्भव थी।

बसन्त पंचमी को पुष्पाभरणा, आलोकवसना धरती की छवि आंखों में भरकर सुभद्रा ने विदा ली। उनके लिए किसी अन्य विदा की कल्पना ही कठिन थी।

एक बार बात करते-करते मृत्यु की चर्चा चल पड़ी थी। मैंने कहा, 'मुझे तो उस लहर की-सी मृत्यु चाहिए जो तट पर दूर तक आकर चुपचाप समुद्र बन जाती है। ' सुभद्रा बोली, मेरे मन में तो मरने के बाद भी धरती छोड़ने की कल्पना नहीं है। मैं चाहती हू ं र मेरी एक समाधि हो, जिसके चारों ओर नित्य मेला लगता रहे, बच्चे खेलते रहें, और कोलाहल होता रहे। अब बताओ तुम्हारी नामधाम रहित लहर से यह आनन्द अच्छा है या नहीं।'

उस दिन जब उनके पार्थिक अवशेष को त्रिवेणी ने अपने श्यामल-उज्जवल अंचल में समेट लिया तब नीलम-फलक पर श्वेत कदन से बने उस चित्र की रेखाओं में बहु त वर्षों पहले देखा एक किशोर- मुख मुस्कराता जान पड़ा।

'यहीं कहीं पर बिखर गई
वह छिन्न विजय-माला-सी।'

19.4 व्याख्याएँ

व्याख्या - 1

"जिस विवाह में मंगल कंकण ही..... काँटों से अलझती चल पड़ी हो।"

सन्दर्भ :

प्रस्तुत पंक्तियाँ महादेवी वर्मा के द्वारा महान् राष्ट्रीयतावादी कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान के जीवन प्रसंगों पर आधारित संस्मरण ' 'सुभद्रा' से ली गई है। महादेवी वर्मा छायावाद की प्रसिद्ध कवयित्री थी' लेकिन उन्होंने अपने अत्यन्त रोचक संस्मरणों से हिन्दी गद्य साहित्य को भी समृद्ध किया था। उन्होंने ' 'स्मृति की रेखाएं ', " अतीत के चलचित्र ' जैसी अपनी रचनाओं में हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों के जीवन से सम्बन्धित संस्मरण लिखे थे। इस संस्मरण में इन्होंने आदर्श पत्नी, आदर्श देश सेविका, आदर्श माँ के साथ-साथ श्रेह वीररस की कवियित्री की भूमिका निभाने वाली तथा हिन्दी की राष्ट्रीयतावादी धारा की प्रमुख कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान के जीवन प्रसंगों को बड़ी श्रद्धा के साथ स्मरण किया है।

सुभद्राकुमारी चौहान के राष्ट्रीयता के भावों तथा देश के लिए अपनी गृहस्थी का बलिदान करने की आदर्श भावना को इन पंक्तियों में अलंकारित ढंग से प्रस्तुत गया है। लेखिका कहती हैं कि सुभद्रा कुमारी चौलान के भावी पति लक्ष्मण सिंह स्वतन्त्रता सेनानी थे। यह बात सुभद्रा जी विवाह से पहले से ही जानती थी। फिर भी उन्होंने ऐसे देशप्रेमी व्यक्ति से विवाह किया। उनके इसी त्याग को तथा आदर्श देश प्रेम को प्रकट करते हु ए महादेवी वर्मा इन पंक्तियों में प्रकट कर रही है।

व्याख्या : महादेवी जी के अनुसार सुभद्रा कुमारी चौहान के लिए विवाह का मांगलिक कंगन दूसरी वधुओं की तरह नहीं था। दूसरी स्त्रियाँ के लिए विवाह बंधन सुख, समृद्धि और आनन्द का कारण बनता है। लेकिन सुभद्रा कुमारी जी के लिए ऐसा नहीं बन सका। उनके पति देश की आजादी के लिए संघर्षरत थे। इसी कारण उन्हें बार-बार जेल जाना पड़ता था और सुभद्राजी को तो मानो जेल में ही अपनी गृहस्थी बसानी थी। अत: सुभद्रा

जी के लिए विवाह का कगन मांगलिकता को लेकर नहीं आया था वरन् स्वतन्त्रता संग्राम के युद्ध का न्यौता देने वाला कंगन था। इस बात को प्रतीकात्मक ढंग से स्पष्ट करते हुए महादेवी जी कहती है कि सुभद्रा जी के ऐसे अनुपम त्याग की तुलना उस नारी से ही की जा सकती है जो पहले तो अपने घर के आँगन में मंगल कलश और तूलसी के चौरे पर घी का दीपक जलाए, फिर उससे पीठ फेर कर वह स्वयं बाहर के अंधेरे को तोलने के लिए संघर्ष पथ पर बढ जाना अधिक पसंद करती हो। घर के लिए स्नेह का भाव रखते हुए भी जो घर की मांगलिक भावना से अधिक समाज और राष्ट्र की कल्याण भावना को अधिक महत्त्व देती हो वैसी किसी तेजस्विनी नारी से ही सुभद्रा जी के त्याग की तुलना की जा सकती है। सुभद्राजी ने भी ऐसा ही महान् त्याग किया था। उन्होंने घर की सुरक्षित सीमा को पार कर उसके मधुर आकर्षणों तो तोड़कर अंधेरे में काँटों से भरे रास्ते पर कदम बढ़ाना अधिक पसंद किया था। इस प्रकार इन पंक्तियों में लेखिका में नारी के लिए घर की देहरी के भीतर की सुरक्षा भावना तथा देश प्रेम के त्याग की कठिनाइयों को सुन्दर ढंग से प्रकट किया है।

विशेष : 1. सुभद्रा कुमारी जी के देश के लिए किए गए अनुपम त्याग को प्रकट किया गया है।

2. अलंकारित भाषा में काव्यात्मक कल्पनाओं के साथ विचारों को प्रकट किया गया है ।

3. देश भक्ति की भावना को निराले अंदाज में प्रस्तुत किया गया है।

व्याख्या- 2

"नारी के हृदय में जो गंभीर...... मंगल साधना करती है "

सन्दर्भ :

प्रस्तुत पंक्तियाँ महादेवी वर्मा द्वारा रचित ' 'सुभद्रा' शीर्षक संस्मरण में ले ली गई है। इस संस्मरण में लेखिका ने हिन्दी की राष्ट्रीय धारा की प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के जीवन के प्रेरणादायक व्यक्तित्व को संस्मरण के रूप में प्रस्तुत किया है। महादेवी जी मूलत: कवयित्री थी लेकिन उन्होंने अपनी ' 'स्मृति की रेखाएं ', " अतीत के चलचित्र' जैसे प्रसिद्ध रचनाओं के द्वारा हिन्दी संस्मरण- रेखाचित्र साहित्य में भी उल्लेखनीय रचनाएं भी हैं। इस संस्मरण में उन्होंने सुभद्रा कुमारी चौहान के व्यक्तित्व के उन पहलुओं का पावन स्मरण किया है जो उन्हें आदर्श पत्नी, आदर्श माँ तथा आदर्श देश सेविका सिद्ध करते हैं। राष्ट्र सेवा में समर्पित पति के साथ गृहस्थी बसाने वाली सुभद्राजी विवाह से पूर्व ही यह बात भली प्रकार से जानती थी कि उनका वैवाहिक जीवन घर और जेल के बीच ही कट जाने वाला है। इसलिए उन्होंने अपनी संतति के प्रति अपनी वात्सल्य भावना को वीरता एवं ममता के मिले जुले भावों से भर लिया था। महादेवी वर्मा इन पंक्तियों में सुभद्रा जी के मन के दो परस्पर विरोधी भावों को आलंकारिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

व्याख्या :

इन पंक्तियों में महादेवी वर्मा ने नारी हृदय की वीर भावना की तुलना पुरुषों की संकीर्ण वीर भावना से करते हुए नारी के व्यक्तित्व की विशेषताओं को बतलाया है। लेखिका के अनुसार सामान्यत: पुरुषों की वीर भावना की ही चारों ओर प्रशंसा की जाती है। लेकिन पुरुषों की शौर्य भावना उग्रता तो लिए रहती है लेकिन उसमें उतनी उदात्त भावना और दिव्य भाव नहीं रहता जितनी नारी की वीर भावना में होता है। पुरुषों की तरह नारी हर बात में अपनी वीरता का प्रदर्शन नहीं करती है। उनका हृदय में उत्पन्न भाव ममता की तरलता और गम्भीरता लिए रहता है। इसी ममत्व भाव के कारण जब कभी नारी का वीरत्व भाव जाग्रत होता है तब उसमें पुरुषों के वीर भावना से कहीं अधिक उदात्त भावना दिखाई देती है। क्योंकि पुरुषों की वीर भावना स्र्वा या व्यक्तिगत राग-द्वेष के कारण भी प्रकट हो जाती है। कभी-कभी तो पुरुष सिर्फ अपने अहंकार की पूर्ति के लिए ही वीर धर्म अपना सकता है। लेकिन नारी का आवेश इतनी सी क्षुद्र बातों के लिए कभी प्रकट नहीं होता है। नारी का रौद्र रूप तभी प्रकट होता है जब उसके सृजन पर संकट आता है। अपनी संतानों की रक्षा का भाव जब अनिवार्य हो जाता है तभी नारी मन में रौद्र का संचार होता है। इसके अतिरिक्त जब कभी समाज के कल्याण का भाव संकट में पड़ता है तब कल्याणी सृष्टि की रक्षा के लिए चुप नहीं बैठ सकती है। नारी की मातृशक्ति वाला रूप ही उसके शौर्य का प्रेरणा स्रोत होता है। तब नारी साधारण अबला नहीं नहीं रह जाती है वरन् भयानक रूपधारिणी चंडी बन जाती है। लेकिन नारी के वीरत्व भाव की यह खूबी है कि चंउ बन जाने पर भी उसका ममतालु रूप विरोहित नहीं हो जाता है। उस दशा में भी वह वात्सल्य भाव भरी हुई अम्बा या माँ ही बनी रहती है। नारी का तेजस्वी रूप कारण ही प्रकट नहीं हो जाता है। वरन् वह तभी प्रकट होता है जब उसे समाज या संतति की रक्षा करनी होती है। नारी का दुर्गा रूप पुरुषों की तरह अपने अहंकार को संतुष्ट करने के लिए प्रकट नहीं होता है वरन् वह तभी प्रकट होता है जब समाज में पाशविक शक्तियाँ प्रबल हो जाती है और वे मानव जाति का अहित करने लगती हैं। ऐसी अवस्था में ही नारी रोद्र रूप धारण करके समस्त प्रकार की राक्षती ताकतों को अपने चरणों के नीचे कुचल देती है। नारी का दुर्गा रूप सारी सृष्टि के कल्याण के लिए प्रकट होता है। उसका दुर्गा के रूप में या चंडी का रूप सबके लिए मंगलकारी बन जाता है। इसी कारण सारा संसार उसकी पूजा-उपासना करता है।

विशेष :

1. नारी और पुरुष के रौद्र रूपों, की सुन्दर तुलना करते हुए नारी के चंडी रूप के महत्त्व को बतलाया गया है।
2. काव्यात्मक ढंग से रोचक रूपकों के सहारे बात कही गई हैं।
3. भाषा में गंभीरता, दार्शनिकता के साथ विकास की सी सरसता हैं।

19.5 संस्मरण की अंतर्वस्तु

महादेवी वर्मा के इस संस्मरण में भारतीय राष्ट्रीयता संग्राम में सक्रिय सहयोग लेने वाली तथा वीर एवं वात्सल्य रस की प्रमुख कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के जीवन को अत्यंत भावुकता के साथ स्मरण किया गया है। सुभद्रा कुमारी चौहान ने कवि और

स्वतंत्रता सेनानी दोनों रूपों में देश की सेवा की थी। उनका जन्म 1904 ई. में इलाहाबाद में हुआ था। इसका विद्यार्थी जीवन इलाहाबाद में ही व्यतीत हुआ। आपकी शिक्षा इलाहाबाद के ही कान्वेंट कॉलेज में हुई। जब वे आठवीं कक्षा की विद्यार्थिनी थीं, तभी उनका विवाह नवलपुर के सुप्रसिद्ध वकील डॉ. लक्ष्मण सिंह के साथ हो गया। इस कारण अपनी शिक्षा अधूरी छोड़कर उन्होंने पतिगृह के लिए प्रस्थान किया। उनके पति स्वतन्त्रता के युद्ध के सेनानी थे। सुभद्रा कुमारी विवाह से पहले ही अपने पति को देख चुकी थी और उनके विचारों से भलीभाँति परिचित थी। इसलिए नववधु के रूप में किसी भी वधु का जो प्राप्य हो सकता है उसे देने का न तो उनके पति को अवकाश था और न उसे लेने का न तो उनके पति को अवकाश था। इस संबंध में महादेवी जी कहती है 'वस्तुत: जिस विवाह में मंगल-कंकण ही रण- कंकण बन गया, उसकी गृहस्थी भी कारागार में ही बसाई जा सकती थी और उन्होंने बसाई भी वहीं। पर इस साधना की मर्म व्यथा वही नारी जान सकती है जिसने अपनी देहली पर खड़े होकर भीतर के मंगल चौक पर रखे मंगल कलश, तुलसी के धीरे पर जुलते हुए घी के दीपक और घर के हर कौने से सनेह भरी बाँहें फैलाएं हुए अपने घर पर दृष्टि डाली हो और फिर बाहर के अन्धकार, आँधी और तूफान को तौला हो, और तब घर की सुरक्षित सीमा पार कर, उसके सुन्दर मधुर आह्वान की ओर पीठ फेर कर अंधेरे रास्ते पर काँटो से उलझती चली हो।'

सुभद्रा कुमारी जी का जीवन घर की देहरी में सीमित नहीं हुआ वरन् घर और कारावास के बीच विभाजित रहा। जेल जाने पर उन्हें इतनी फूल मालाए मिल जाती थीं कि कारागार में वे उनका तकिया बनाकर लेट जाती थी और पुष्पशैया के सुख का अनुभव करती थी। घर और जेल के बीच में जीवन का यह क्रम सुभद्रा जी के लिए विवाह के साथ ही शुरू हो गया और अन्त तक चलता रहा। ऐसे में न हो वे अपने बच्चों की ठीक तरह से पर वरिश कर सकीं न अपनी गृहस्थी को ही ठीक तरह से बसा सकीं।

सुभद्रा जी का जीवन विषमताओं और संघर्षों के मध्य से होकर गुजरा। ऐसे में अर्थाभाव उनके लिए कई तरह से संकटमय स्थितियाँ पैदा किए रहे लेकिन वे कभी भी नहीं घबराई। बल्कि ऐसी कठिनाईयाँ के समय में भी उन्होंने अपने विश्वास, प्रेम और साहस को जीवन के साथ के रूप में सदैव अपने साथ रखा।

सुभद्रा कुमारी जी मूलत: एक कवि थी। उनकी कविताओं की दो दिशाएं दिखाई देती है - इनमें से पहली वीर रस की राष्ट्रीयतावादी कविताओं की है। इसके अंतर्गत झाँसी की रानी जैसी हिंदी की अति लोकप्रिय वीरसात्मक कविता देखी जा सकती है। उनकी कविताओं की दूसरी दिशा परिवार के परिवेश के मध्य से निकलने वाली वात्सल्य भाव की कविताएं हैं। मेरा बचपन जैसी कविताएं इसी श्रेणी की कविताएं हैं। वीर रस की कविताओं में भी सुभद्राजी घिसी - पिटी लीक पर नहीं चली जीवन के जिस मार्ग पर वे चल रही थीं उसी के अनुरूप वे निरंतर वीर भावों का निरूपण करती रहीं।

साहित्यकार के रूप में उनके विचार क्रान्तिकारी भावों से भरे हुए थे। उनके विचार थे कि समाज और परिवार व्यक्ति को बंधन में बाँधकर रखते हैं। ये बन्धन देशकालानुसार बदलते रहते हैं। इनको निरन्तर बदलते रहना चाहिए वरना ये व्यक्तितत्व के विकास में

बाधा पहुँचने लगते हैं। वे स्त्रियों के लिए परम्परा पालन की अनिवार्यता को भी पसदा नहीं करती थी। अपनी कहानियों में सुभद्रा जी ने समाज की, अनेक समस्याओं को उठाया है। इनके उनकी दृष्टि इतनी पैनी है कि पाठकों के हृदयों को झकझोर देती है। राजनीतिक जीवन की ही भाँति उन्होंने पारिवारिक जीवन में भी सफलतापूर्वक विद्रोह कर उसे सृजन का रूप दिया था।

आठवीं कक्षा में ही विवाह हो जाने के कारण सुभद्राजी का अध्ययन का क्रम आगे नहीं बढ़ पाया किन्तु अपने अनुभावों से जो कुछ उन्होंने सीखा जो उनकी प्रतिभा को निखारने में पूरी तरह से समर्थ रहा।

अपने बच्चों के लालन-पालन में उन्होंने किसी तरह के कोई बन्धन नहीं रखे। उन्होंने अपने बच्चों की इच्छा के विरूद्ध उन्हें कुछ भी करने के लिए बाध्य नहीं किया। अपनी संतान के भविष्य को सुखमय बनाने के लिए उन्होंने सब प्रकार के त्याग किए। पुत्री के विवाह के समय तो उन्होंने परिवार से भी संघर्ष किया। उस समय उन्होंने जातिवाद का भी विरोध किया तथा कन्यादान करने से भी मना कर दिया। उनका विश्वास था कि कोई भी मनुष्य दूसरे मनुष्य को दान करने का अधिकारी नहीं है।

देश की आजादी के लिए वे जीवन भर संघर्ष करती रही। लेकिन जब देश आजाद हो गया फिर भी जब जनता के अभाव दूर नहीं हुए तब उन्होंने अपने ही साथियों से विद्रोह किया। गाँधीजी के अस्थि विसर्जन के समय वे सैकड़ों हरिजनों को लेकर सात मील पैदल चलकर नर्मदा किनारे पहुँची। लेकिन हरिजनों के उपेक्षा देखकर वे तब तक सभा में सम्मिलित नहीं हुई जब तक कि हरिजनों को उनका अधिकार नहीं मिल गया।

इस प्रकार सुभद्राकुमारी चौहान के व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं को महादेवी वर्मा के उनसे संबंधित इस संस्मरण में समेटा गया हैं।

19.6 चरित्र विश्लेषण

महादेवी वर्मा के इस संस्मरण के आधार पर सुभद्रा कुमारी चौहान के चरित्र की अनेक विशेषताएँ प्रकट होती है जिन्हें इन बिन्दुओं में देखा जा सकता है -

1. **कोमल उदार व्यक्तित्व वाली भारतीय नारी :**
   सुभद्रा जी का व्यक्तित्व अत्यंत प्रभावशाली था। वे दुबली पतली और उग्रता या रौद्रभाव से बिल्कुल परे थी। उन्हें देखकर ऐसा नहीं लगता था कि वे वीररस की आवेशपूर्ण कविताएं लिखने वाली कवयित्री है। महादेवी जी ने उनके व्यक्तित्व की रूपरेखा इस रूप में पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है 'कुछ गोल मुख, चौडा माथा, सरल भृकुटियाँ, बड़ी और भावस्तात आँखें, छोटी -सुडौल नासिका, हँसी कौ जमाकर पड़े हुए रन ओंठ और दृढ़ता सूचक्। ठुड्डी सब कुल मिलाकर एक अत्यंत निश्छल, कोमल, उदार व्यक्तित्व वाली भारतीय नारी का ही पता देते थे। लेकिन जब कभी कोई उनके तथा उनके लक्ष्य के बीच आ जाता था जब पता चलता था कि ऐसे साधारण से दिखाई देने वाले व्यक्तित्व में भी बिजली का छंद विद्दमान हैं।'

2. **सदैव हँसते रहने की कला :**

यद्यपि सुभद्राजी का जीवन अनेक प्रकार की आर्थिक कठिनाईयों के बीच से होकर गुजरा था फिर भी उनके चेहरे पर सदैव निश्छल हँसी विद्दमान रहती थी। माँ की गोद में बैठे हुए एक दूध पीते बच्चे की हँसी में जिस तरह की निश्चित तृप्ति और सरल विश्वास रहता है, बहुत कुछ वैसा ही भाव सुभद्राजी की हँसी में था। अपने लक्ष्य पर अडिग रहना और हँसते हँसते सब कुछ सह जाना उनका रचभाव जात गुण था। अपने इस भाव को रचय सुभद्राजी ने अपनी इस कविता में भी प्रकट किया है - "मैंने हँसना सीखा हैं। मैं नहीं जानती रोना। "

3. समझौते न करने वाली :

सुभद्रा कुमारी जी जीवन की कठिन से कठिन परीक्षाओं में भी कभी विचलित हुई। विषमताओं और संघर्षो से उनका मन न तो कभी हारा न उन्होंने परिस्थितियों को अनुकूल बनाने के लिए तरह का कोई समझौता नहीं स्वीकार किया। उनका विवाह एक् स्वतंत्रता सेनानी से हुआ था। उनके विवाह का मंगल कंकण ही उनके लिए रण-कंकण साबित हुआ। घर और कारागार के बीच जीन का जो क्रम विवाह के साथ ही आरम्भ हुआ वह अन्त तक चलता ही रहा। जेल में रहने पर वे फूलों की माला का तकिया बनाते हुए उस विपत्ति में भी पुष्प शैया पर लेटने का आनन्द लिया करती थीं। जेल मानते समय वे छोटे बच्चों को अपने साथ जेल के भीतर तथा बड़ों को बाहर रखकर अपने मन को संयत कर लेती थी। जेल में भूख से व्याकुल बचे को अरहर की दाल के दाने भूनकर खिलाकर ही संतुष्ट हो जाती थी। इतने अभावों के बाद भी वे देश सेवा के लिए आजीवन संघर्ष करती रही।

4. कुशल साहित्यकार :

सुभद्रा कुमारी चौहान वीर रस की कवयित्री थी। जब वे स्कूल में सातवीं कक्षा में पड़ती थी तभी से कविताएँ करने लगीं थी। उन्होंने कविता के लिए दो विषयों को ही चुना था। उनकी पहली प्रकार की कविताएं वीररस की कविताएं थी। लेकिन उनकी ओजभरी कविताएं वीररस की घिरनी-पिटी लीक पर चलकर नहीं रची गई। भाषा, भाव, छंद की दृष्टि से नये नये प्रयोग उन्होंने अपनी कविताओं में किए। 'झाँसी की रानी' जैसे वीरगीतों को भी उन्होंने अत्यंत सरलता और प्रभावशाली ढंग से प्रकट किया। उनकी कविताओं की दूसरी दिशा परिवा१? और वात्सल्य स्नेह में भीगी हुई रचनाओं की है। इनमें उनकी ममता, स्नेह और नारी हृदय की कोमल भावनाए अंकित हुई हैं। उन्होंने कहानियों की भी रचना की थीं। इनकी कहानियाँ यथार्थवादी धरातल पर रची गई अत्यंत मार्मिक कहानियाँ हैं।

5. आदर्श पत्नी और ममतामयी माँ :

सुभद्राजी आदर्श पत्नी थी। लेकिन उन्होंने अनुगामिनी, अर्द्धागिनी आदि के रूप में पत्नी के आदर्शो को नहीं अपनाया। वे अपने पति लक्ष्मणसिंह जी की पत्नी के रूप में ऐसा अभिन्न मित्रवत् थीं जिसका बुद्धि और शक्ति पर निर्भर रह कर अनुगमन किया जा सके। इसी तरह बच्चों के लालन-पालन में उन्होंने कभी अपने किसी बच्चों को उसकी इच्छा के बिना कुछ भी करने के लिए बाध्य नहीं किया। बबों के

स्वाभाविक विकास के लिए उन्होंने उनके लिए सदैव मुक्त वातावरण उपलब्ध करवाया। अपनी बच्ची के विवाह के लिए तो उन्होंने अपने परिवार तक से दृढ़तापूर्वक संघर्ष किया।

6. आदर्श मैत्री भाव :

सुभद्राजी में आदर्श मैश्री का भाव छूट कूटकर भरा हुआ था। स्कूल के समय से ही जब उनकी महादेवी वर्मा के साथ मैत्री का संबंध स्थापित हो गया तो उसको उन्होंने पूरी निष्ठा से जीवन भर निभाया। लेकिन अपने साथ महादेवी जी के लिए सुभद्राजी कोई न कोई भेंट अवश्य लेकर आती। लेखिका के अनुसारबगले में आकर देखती कि सुभद्रा जी रसोईघर या बरामदे में भानमती का पिटारा खोले बैठी है और उनमें से अद्भुत वस्तुएँ निकल रही हैं। कौन विश्वास करेगा। पर वह आत्मीय उपहार मेरे निमित्त ही आता था। अपने हाथों से महादेवी जी को चूड़ियाँ पहनाकर वे बच्चों के समान प्रसन्न हो उठती थीं। वे दूसरों की निंदा-पुराण में व्यस्त रहना उनके स्वभाव में न था। अपने किसी भी परिचित-अपरिचित साहित्य-साथी की त्रुटियों के प्रति सहिष्णु रहना और उनके गुणों के मूल्यांकन में उदारता से काम लेना सुभद्रा जी की निजी विशेषता थी। अपने को बड़ा बनाने के लिए दूसरों को छोटा प्रमाणित करने की दुर्बलता उनमें नहीं थी।

7. सामाजिक बंधनों के प्रति विद्रोह का भाव :

अजगर की कुंडली के समान स्त्री के व्यक्तित्व को कस कर चूर-चूर कर देने वाले अनेक सामाजिक बंधनों को तोड़ फेंकना का उन्होंने जीवन भर प्रयास किया। पुत्री के विवाह के समय उन्होंने जातीयता की भावना को तोड़ फेंका। एक क्षण के लिए भी इस असत्य को उन्होंने स्वीकार नहीं किया कि जातिवाद की संकीर्ण तुला पर ही वर की योग्यता तोली जा सकती है। उनका कहना था कि ' मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है। फिर चाहे वह स्त्री के शरीर में निवास करती हो या चाहे पुरुष के शरीर के अंदर।' वे सिर्फ स्त्री के लिए ही परम्परा पालन की बात को भी अस्वीकार करती थीं। उनका विचार था कि 'चिर-परिचित रूढ़ियों और चिर-संचित विश्वासों को आघात पहुँचाने को अधर्म समझकर उनके प्रति आँख भींच लेना उचित समझते हैं, किंतु ऐसा करने से काम नहीं चलता। वह हलचल और क्रान्ति हमें बर बस झकझोरती है और बिना होश में लाए नहीं छोड़ती हैं। ' इस प्रकार महादेवी वर्मा के शब्दों में कहा जा सकता है क् 'सुभद्राजी अपने राजनीतिक जीवन में ही विद्रोहिणी नहीं रही, अपने पारिवारिक जीवन में भी उन्होंने विद्रोह को सफलतापूर्वक्। उतार कर उसे सृजन का रूप दिया था।'

8. शहीद की मृत्यु की लालसा :

सुभद्रा जी उस लहर की सी मृत्यु नहीं चाहती थी जो दूर तक आकर चुपचाप समुद्र बन जाती है। वे तो मरने के बाद भी धरती को छोड़ना नहीं चाहती थीं। 'मैं चाहती हूँ मेरी एक् समाधि हो, जिसेक चारों ओर नित्य मेला लगता रहे। बचे खलते रहें

और कोलाहल होता रहे। ' सचमुच ही अपने इसी महान व्यक्तित्व की भाँति ही सुभद्रा जी 'यही नहीं पर बिखर गई, वह छिन्न विजय माला सी।'

19.7 परिवेश

महादेवीजी के इस संस्मरण से आजादी से पूर्व के भारत के परिवेश के बारे में भी थोड़ी सी जानकारी मिलती है। उस समय के समाज में स्त्री शिक्षा का सूत्रपात हो चुका था और कन्याओं को शिक्षा प्राप्त करने के लिए स्कूल भेजा जाना शुरू हो चुका था। परिवारों में बच्चों को कृष्ण और गोपियों की कथा सुनाई जाती थी। सुभद्राकुमारी चौहान तो बचपन में यह कथा सुनकर एक् दिन ग्वालाओं के साथ सचमुच ही वन में कृष्ण को ढूँढने के लिए निकल पड़ी थी।

बालिकाओं का विवाह छोटी उम्र में ही कर दिया जाता था। सुभद्रा जी का विवाह भी जब वे आठवीं कक्षा की विद्‍यार्थिनी थी तभी कर दिया गया था। विवाह के उपरान्त स्त्री शिक्षा एक प्रकार से समाप्त हो जाती थी। सुभद्राजी की पढ़ाई भी विवाह के बाद अपने आप रूक गई थी।

वह युग देश की आजादी के लिए समर्पित नौजवानों के उत्साह का युग था। सुभद्रा जी के पति लक्ष्मणसिंह भी स्वतन्त्रता संग्राम में जुटे रहने वाले सेनानी थी। कुछ स्त्रियों ने भी देश की आजादी की इस लड़ाई में आगे बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेना शुरू कर दिया था। सुभद्राकुमारी चौहान भी पति की ही भाँति राष्ट्रीयता के इसी काँटों भरे रास्ते पर चल पड़ी।

ऐसे स्वतन्त्रता सेनानियों का जीवन आसान नहीं होता था। उनका सारा जीवन घर और कारागार के बीच ही व्यतीत हो जाता था। सुभद्रा जी का जीवन भी विवाह के साथ ही घर और कारागार के बीच शुरू हुआ और अन्त तक चलता ही रहा। ऐसे स्वतन्त्रता के पथ पर अग्रसर महिलाएं छोटे बच्चों को तो अपने साथ जेल में रखती थी और बड़ों बच्चों को उन्हें जेल के बाहर रिश्तेदारों के भरोसे छोड़ देना पड़ता था। जेल में भी अमीरों और गरीबों के जीवन स्तर में भेदभाव बरता जाता था। सम्पन्न घरों की सत्याग्रही माताएं तो अपने बचो के लिए बाहर से सभी तरह की वस्तुएं मंगवा लेती थी लेकिन सुभद्रा जी जैसी कमजोर स्थिति की औरतों के लिए तो 'ए' श्रेणी की जेल भी 'सी' श्रेणी जैसी ही होती थी। सुभद्रा जी को अरहर की दाल को तवे पर भून कर बालिका को खिलाना पड़ा था।

उस समय परम्परा का पालन करना ही स्त्री का परम कर्त्तव्य समझा जाता था। स्त्री का व्यक्तित्व उसके पति से अलग नहीं समझा जाता था। पत्नी को अर्द्धांगिनी, अनुगामिनी मात्र समझा जाता था। घर परिवार और समाज में स्त्रियों के लिए अनेक प्रकार के बंधन थे।

उस समय बच्चों के लालन-पालन में मनोविज्ञान को इतना महत्त्व नहीं दिया जाता था। प्राय: माता-पिता अपने बच्चों को शिष्टता का पाठ पढ़ाने के लिए स्वयं अशिष्टता की सीमा तक पहुँच जाते थे।

विवाह के लिए जातीय भावना की प्रधानता थी। जाति से बाहर विवाह करने पर समाज एवं परिवार में प्रबल विरोधी का सामना करना पड़ता था। कन्यादान की प्रथा का सब आ भाव से पालन करते आ रहे थे।

साहित्यकारों में भी आपस में व्यक्तिगत स्पर्द्धा, ईर्ष्या-द्वेष विद्यमान था। दूसरे साहित्यकारों नर चरित्र -स्वभाव संबंधी निंदा-पुराण नानी की कथा की तरह लोकप्रिय था। कवि सम्मेलनों का आयोजन किया जाता था और आर्थिक कारणों से सुभद्रा जी जैसे साहित्यकार ऐसे निमन्त्रणों अस्वीकार नहीं कर पाते थे।

19.8 संरचना शिल्प

संस्मरण में व्यक्ति के जीवन की विगत किन्तु मार्मिक घटनाओं को श्रद्धापूर्वक स्मरण किया जाता दे! महादेवीजी ने संस्मरण साहित्य में अद्वितीय योगदान दिया है। उनके इस संस्मरण में शिल्प की अनेक खूबियाँ दिखाई देती हैं।

चित्रोपमता :

इस संस्मरण में महादेवी जी ने अनेक स्थलों का ऐसा रोचक व प्रभावशाली वर्णन किया है। पाठकों के सामने वर्णित घटनाओं और प्रसंगों का चित्र सा खड़ा हो जाता है। ऐसा लगता है जैसे पाठक स्वयं उन दृश्यों को प्रत्यक्ष देख रहे हैं।

काव्यात्मकता :

महादेवीजी स्वयं एक कवयित्री हैं। उन्होंने इस संस्मरण को भी काव्यात्मक सौन्दर्य से सजाकर प्रस्तुत किया है। संरमरण को कहने का ढंग गद्य की नीरसता से युक्त न होकर खूबी को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। शैशव की चित्रशाखाएं जिन चित्रों से हमारा रागात्मक संबंध गहरा होता है, उसकी रेखाएं और रग इतने स्पष्ट और चटकीले होते चलते हैं कि हम वार्धक्य की धुँधली आँखों से भी उन्हें प्रत्यक्ष देखते रह सकते हैं। पर जिनसे ऐसा संबंध नहीं होता वे फीके होते होते इस प्रकार स्मृति से धुल जाते हैं कि दूसरों के स्मरण दिलाने पर भी उनका स्मरण कठिन हो जाता है।

वर्णन कला :

महादेवी जी ने संस्मरण में प्रसंगानुरूप वर्णनों को भी सहारा लिया है। छोटी छोटी घटनाओं प्रसंगों का उल्लेख कर लेखिका ने सुभद्रा जी के जीवन की महनीयता को प्रकट करने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की है।

दार्शनिक विवेचन :

महादेवीजी के इस संस्मरण की खूबी यह है कि इसमें लेखिका ने प्रत्येक प्रसंग को आखिरकार किसी न किसी प्रकार के दार्शनिक चिंतन से अवश्य जोड़ दिया है। जैसे - पुरुष अपने व्यक्तिगत या समूह गत राग-द्वेष के लिए भी वीर धर्म अपना सकता है और अहंकार की तृप्ति मात्र के लिए भी। पर नारी अपने सृजन की बाधाएं दूर करने के लिए या अपनी कल्याणी सृष्टि की रक्षा के लिए ही रूद्र बनती है। अथवा 'दूसरी को जहाँ यात्रा का अन्त दिखाई दिया वहीं उन्हें नई मंजिल का बोध हु आ। '

सूक्तियाँ :

महादेवी जी की गद्य शैली की यह विशेषता है कि भावों एवं विचारों को इतनी अंतरंगता से एक मेक कर देती है कि पाठक उसे पढ़कर अभिभूत हो जाता है। कहीं वे अपनी बात भावुकता भरे प्रसंग से शुरू करती है और अन्त तक पहुँचते पहुँचते इतनी गंभीर हो जाती हैं कि पूरी दार्शनिकता को ही ओढ लेती हैं। इसके विपरीत कहीं वे सीधे ही सूक्तियाँ की तरह काव्यात्मकता और वैचारिकता को घुला मिला देती है। जैसे ' 'जीवन के प्रति ममता भरा विश्वास ही उसके काव्य का प्राण है।'

भाषा की प्रवाहशीलता :

महादेवी जी के इस संस्मरण में भाषा का प्रवाह बड़ी सहजता से निरन्तर आगे बढ़ता जाता है। उसमें कहीं भी किसी प्रकार की कृत्रिमता के दर्शन नहीं होते हैं। छायावाद के दौर में हिन्दी भाषा में तत्सम शब्दों की भरमार है। लेकिन शब्द कहीं भी विचारों की अभिव्यक्ति में रोड़े अटकाते हुए नहीं दिखाई देते हैं। इसके अलावा कहीं उपमाओं के सहारे बात को गहराई प्रदान की गई है तो कहीं प्रतीकों-बिवों के सहारे ऐसा किया गया है। इन्हीं विशेषताओं के कारण महादेवी जी की भाषा की अत्यन्त स्वाभाविक और प्रभावोत्पादक हो गई है।

19.9 प्रतिपाद्य

महादेवी जी के इस संस्मरण का मूल उद्देश्य सुभद्रा कुमारी के चरित्र की उन विशेषताओं का निरूपण करना है जो उनके व्यक्तित्व को दूसरों से अलग किए हुए थी। महादेवी जी स्वयं एक नारी थी। इसीलिए वे सुभद्राजी के नारी व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण सभी पहलुओं को प्रकट करने में समर्थ रही है। एक अव्यक्त सी पीड़ा जैसे महादेवीजी के गीतों में दिखाई देती है वैसी पीड़ा सुभद्रा जी के निधन पर महसूस करते हुए उन्होंने इस संस्मरण के रूप में उसे अभिव्यक्ति प्रदान की। सुभद्राजी ने जैसे विषमताओं और विपरीत परिस्थितियों से भी हार नहीं मानी और वे अपने अडिग संकल्प के साथ देश की स्वाधीनता के लिए संघर्ष करती रही। इसे साकार करना ही इस रचना का उद्देश्य है। स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौर में नारी जाति में जो मुक्ति की छटपटाहट प्रकट हो रही थी उसका स्पष्ट आभास महादेवी जी ने सुभद्राजी के व्यक्तित्व में दर्शाने का सफल प्रयास किया है। इसी सन्दर्भ में देखने पर महादेवी जी के इस संस्मरण का महत्त्व समझ सकते हैं।

19.10 सारांश

आपने सुभद्राकुमारी के चरित्र को पुष्ट करने वाला यह संस्मरण पढ़ा इसके अन्तर्गत निम्नलिखित बिन्दुओं की चर्चा की गई है

- संस्मरण का स्वरूप तथा उसका रचना विधान।
- सुभद्राकुमारी जी के बहुआयामी व्यक्तित्व की विशेषताएँ।
- स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय का भारतीय परिवेश और उसमें सुभद्राजी जैसी नारियों की भूमिका।

- संस्मरण में सुभद्राजी के परिवेश की स्थिति तथा घर पर और कारागार के बीच कैसे अपनी गृहस्थी का संचालन किया।
- संस्मरण की भाषा शैली।

19.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - सम्पादक डॉ. नगेन्द्र
2. हिन्दी साहित्य युग और प्रवृतियाँ - शिवकुमार शर्मा
3. संस्मरण व रेखाचित्र - सं. उर्मिला चौधरी

19.12 प्रश्न / अभ्यास

1. संस्मरण किसे कहते है? समझाइये।
2. सुभद्राकुमारी जी के चरित्र की विशेषताएँ बतलाइये।
3. सुभद्राजी राजनीति और परिवार दोनों में विद्रोहिणी थी। स्पष्ट कीजिये।
4. सुभद्राजी के काव्य की विशेषताएँ बतलाइये।
5. सुभद्राजी के कारागार के अनुभवों को प्रकट कीजिये।

ISBN : 13/978-81-8496-046-4